रचनानुवादकौमुदी

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी

...ालय प्रकाशन, वाराणसी

रचनानुवादकौमुदी

(नवीनतम वैज्ञानिक पद्धति से लिखी गई संस्कृत-व्याकरण, अनुवाद और निबन्ध की पुस्तक)

[संशोधित और परिवर्धित नवम संस्करण]

लेखक

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी आचार्य

एम. ए. (संस्कृत, हिन्दी), एम. ओ. एल., डी. फिल्. (प्रयाग), पी. ई. एस.,
विद्याभास्कर, साहित्यरत्न, व्याकरणाचार्य,
अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग,
गवर्नमेण्ट कॉलेज, ज्ञानपुर (वाराणसी)।

प्रणेता—'अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन' (उ० प्र० शासन द्वारा सम्मानित पुस्तक), अथर्ववेदकालीन संस्कृति, 'प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी', 'संस्कृत-व्याकरण' आदि।

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

रचनानुवादकौमुदी

(नवीनतम वैज्ञानिक पद्धति से लिखी गई संस्कृत-व्याकरण,
अनुवाद और निबन्ध की पुस्तक)

[संशोधित और परिवर्धित नवम संस्करण]

लेखक

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी आचार्य

एम. ए. (संस्कृत, हिन्दी), एम. ओ. एल., डी. फिल्. (प्रयाग), पी. ई. एस.,
विद्याभास्कर, साहित्यरत्न, व्याकरणाचार्य,
अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग,
गवर्नमेण्ट कॉलेज, ज्ञानपुर (वाराणसी)।

प्रणेता—'अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन' (उ० प्र० शासन द्वारा
सम्मानित पुस्तक), अथर्ववेदकालीन संस्कृति,
'प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी', 'संस्कृत-व्याकरण' आदि।

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य: चार रुपए पचास पैसे

नवम संस्करण : ११,००० प्रतियाँ

सन् १९७२ ई०

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी–१

मुद्रक : भार्गव [illegible], वाराणसी

समर्पण

पितरौ वन्दे

पूज्य पिता

श्री बलरामदास जी

तथा

पूजनीया माता

श्रीमती वसुमतीदेवी जी

के चरणों में

सादर समर्पित ।

—कपिलदेव द्विवेदी

विषय-सूची

विवरण

अभ्यास	शब्द	धातु	कारक, प्रत्यय	गणपरिचयादि	सन्धि	पृष्ठ
१	राम	लट् प्र० पु०	—	सामान्य नियम	—	२
२	फल	लट् म० पु०	कारक-परिचय	पुरुष, वचन	—	४
३	रमा	लट् उ० पु०	—	वर्णमाला	—	६
४	संख्या १-१०	कृ, अस् लट्	—	प्रत्याहार	—	८
५	राम	लट् पर०	प्रथमा, द्वितीया	—	—	१०
६	गृह	लोट् ,,	द्वितीया	—	—	१२
७	रमा	लृट् ,,	,, द्विकर्मक	—	—	१४
८	हरि	लङ् ,,	तृतीया	—	—	१६
९	गुरु	विधिलिङ् ,,	,,	—	अनुस्वार-सन्धि	१८
१०	९ सर्वनाम पुं०	—	चतुर्थी	—	यण् ,,	२०
११	,, ,, नपुं०	—	,,	—	अयादि ,,	२२
१२	,, ,, स्त्री०	—	पंचमी	—	गुण ,,	२४
१३	इदम्, अदस् पुं०	—	,,	—	वृद्धि ,,	२६
१४	,, ,, नपुं०	—	षष्ठी	—	पूर्वरूप ,,	२८
१५	,, ,, स्त्री०	—	,,	—	दीर्घ ,,	३०
१६	युष्मद्	लट् आ०	सप्तमी	—	श्चुत्व ,,	३२
१७	अस्मद्	लोट् ,,	,,	—	ष्टुत्व ,,	३४
१८	एक	लृट् ,,	—	एकवचनान्तशब्द	जश्त्व ,,	३६
१९	द्वि	लङ् ,,	—	द्वि ,, ,,	,, ,,	३८
२०	त्रि	विधिलिङ् ,,	—	बहु ,, ,,	चर्त्व ,,	४०
२१	चतुर्	नी, हृ	—	भ्वादि गण	विसर्ग ,,	४२
२२	संख्या ५-१०	कृ	—	अदादि ,,	उत्व ,,	४४
२३	,, ११-१००	अद्	—	जुहोत्यादि ,,	,, ,,	४६
२४	,, महाशंख तक	अस्	—	दिवादि ,,	यत्व ,,	४८
२५	सखि	ब्रू	—	स्वादि ,,	सुलोप ,,	५०
२६	कर्तृ	रुद्	कर्म-भाववाच्य	तुदादि ,,	— ,,	५२
२७	पितृ	दुह्	,, ,,	रुधादि ,,	—	५४
२८	गो	स्वप्	णिच् प्रत्यय	चुरादि ,,	—	५६
२९	भगवत्	हन्	,, ,,	तनादि ,,	—	५८
३०	भूभृत्	इ	सन् ,,	क्र्यादि ,,	—	६०

अभ्यास	शब्द	धातु	कारक, समासादि	प्रत्यय	शब्दवर्ग	पृष्ठ
३१	करिन्	चुरादिगणी	—	क्त	—	६२
३२	आत्मन्	,,	—	,,	—	६४
३३	राजन्, नदी	,,	—	क्तवतु	—	६६
३४	मति, पठत्	—	द्वितीया	शतृ	—	६८
३५	नदी	—	,,	शानच्	—	७०
३६	धेनु	आस्	तृतीया	तुमुन्	विद्यालयवर्ग	७२
३७	वधू	शी	,,	क्त्वा	प्राणिवर्ग	७४
३८	वाच्	हु	चतुर्थी	ल्यप्	पक्षिवर्ग	७६
३९	सरित्	भी	,,	तव्य, अनीय	शरीरवर्ग	७८
४०	वारि	दा, धा	पंचमी	यत्, अच्	,, ,,	८०
४१	दधि	दिव्	,,	घञ्	जलवर्ग	८२
४२	मधु	नृत्	षष्ठी	तृच्	—	८४
४३	पयस्	नश्	,,	ल्युट्, ण्वुल्	—	८६
४४	शर्मन्	भ्रम्	सप्तमी	क, खल्	—	८८
४५	जगत्	युध्	,,	क्तिन्, अण्	—	९०
४६	नामन्	जन्	अव्ययीभाव स०	—	—	९२
४७	मनस्, हविष्	सु	तत्पुरुष ,,	—	—	९४
४८	—	आप्	कर्मधारय, द्विगु	—	जातिवर्ग	९६
४९	—	शक्	बहुव्रीहि	—	,, ,,	९८
५०	—	मृ	द्वन्द्व	—	संबन्धिवर्ग	१००
५१	—	मुच्	एकशेष, नञ्, अलुक् समास		खाद्यवर्ग	१०२
५२	—	रुध्	तद्धित	मतुप्	भक्ष्यवर्ग	१०४
५३	—	भुज्	,,	इनि, ठन्, इतच्	—	१०६
५४	—	तन्	,,	अपत्यार्थक	फलवर्ग	१०८
५५	—	क्री	,,	अण्, इक आदि	वस्त्रवर्ग	११०
५६	—	ग्रह्	,,	त्व, ता, ष्यञ्, इमनिच्	आभूषणवर्ग	११२
५७	—	ज्ञा	,,	तः, त्र, था, दा, धा, मात्र	संकीर्णवर्ग	११४
५८	विशेषणशब्द	—	,,	तरप्, तमप्	ऋतुवर्ग	११६
५९	,, ,,	—	,,	ईयस्, इष्ठ	दिनमासवर्ग	११८
६०	स्त्रीलिंग ,,	—	स्त्रीप्रत्यय	स्त्रीप्रत्यय	—	१२०

परिशिष्ट

व्याकरण पृष्ठ

(१) शब्दरूप-संग्रह १२२–१३८

१. राम, २. हरि, ३. सखि, ४. गुरु, ५. कर्तृ, ६. पितृ, ७. गो, ८. भूभृत्, ९. भगवत्, १०. करिन्, ११. आत्मन्, १२. राजन्, १३. रमा, १४. मति, १५. नदी, १६. धेनु, १७. वधू, १८. वाच्, १९. सरित्, २०. गृह, २१. वारि, २२. दधि, २३. मधु, २४. पयस्, २५. शर्मन्, २६. जगत्, २७. नामन्, २८. (क) मनस्, २८. (ख) हविष्, २९. सर्व, ३०. पूर्व, ३१. तत्, ३२. एतत्, ३३. यत्, ३४. किम्, ३५. युष्मद्, ३६. अस्मद्, ३७. इदम्, ३८. अदस्, ३९. एक, ४०. द्वि, ४१. त्रि, ४२. चतुर्, ४३. पञ्चन्, ४४. षष्, ४५. सप्तन्, ४६. अष्टन्, ४७. नवन्, ४८. दशन्, ४९. कति, ५०. उभ, ५१. पति, ५२. भूपति, ५३. विद्वस्, ५४. चन्द्रमस्, ५५. श्वन्, ५६. युवन्, ५७. लक्ष्मी, ५८. स्त्री, ५९. श्री, ६०. धनुष्, ६१. ब्रह्मन्, ६२. अप्, ६३. भवत्, ६४. यावत्।

(२) संख्याएँ १३९–१४०

गिनती—१ से १०० तक।

संख्याएँ—सहस्र से महाशंख तक।

(३) धातु-रूप-संग्रह (पूरे १० लकारों में) १४१–१८९

(१) **भ्वादिगण**—१. भू, २. हस्, ३. पठ्, ४. रक्ष्, ५. वद्, ६. पच्, ७. नम्, ८. गम्, ९. दृश्, १०. सद्, ११. स्था, १२. पा, १३. घ्रा, १४. स्मृ, १५. जि, १६. श्रु, १७. वस्, १८. सेव्, १९. लभ्, २०. वृध्, २१. मुद्, २२. सह्, २३. याच्, २४. नी, २५. हृ।

(२) **अदादिगण**—२६. अद्, २७. अस्, २८. ब्रू, २९. दुह्, ३०. रुद्, ३१. स्वप्, ३२. हन्, ३३. इ, ३४. आस्, ३५. शी।

(३) **जुहोत्यादिगण**—३६. हु, ३७. भी, ३८. दा, ३९. धा।

(४) **दिवादिगण**—४०. दिव्, ४१. नृत्, ४२. नश्, ४३. भ्रम् ४४. युध्, ४५. जन्।

(५) **स्वादिगण**—४६. सु, ४७. आप्, ४८ शक्।

(६) **तुदादिगण**—४९. तुद्, ५०. इष्, ५१. स्पृश्, ५२. प्रच्छ्, ५३. लिख्, ५४. मृ, ५५. मुच्।

(७) **रुधादिगण**—५६. रुध्, ५७. भुज्।

(८) **तनादिगण**—५८. तन्, ५९. कृ।

(९) **क्र्यादिगण**—६०. क्री, ६१. ग्रह्, ६२. ज्ञा।

(१०) **चुरादिगण**—६३. चुर्, ६४. चिन्त्, ६५. कथ, ६६. भक्ष।

पृष्ठ

(४) संक्षिप्त-धातुकोष ११०–२००

पुस्तक में प्रयुक्त सभी धातुओं के ५ लकारों में रूप।

(१) अकर्मक धातुएँ। (२) अनिट् धातुओं का संग्रह।

(५) प्रत्यय-विचार २०१–२१४

निम्नलिखित प्रत्ययों के सभी उपयोगी रूपों का संग्रह :—

१. क्त, २. क्तवतु, ३. शतृ, ४. शानच्, ५. तुमुन्, ६. तव्यत्, ७. तृच्, ८. क्त्वा, ९. ल्यप्, १०. ल्युट्, ११. अनीयर्, १२. घञ्, १३. ण्वुल्, १४. क्तिन्, १५. यत्।

(६) सन्धि-विचार २१५–२२१

२८ मुख्य सन्धियों का सोदाहरण विवेचन।

(७) पत्रादि लेखन-प्रकार २२२–२२५

१. संस्कृत में पत्र लिखने का प्रकार। २. संस्कृत में प्रार्थना-पत्र लिखना। ३. पुस्तकादि के लिए आदेश भेजना। ४. निमन्त्रणपत्र भेजना। ५. परिषद् की सूचना। ६. प्रस्ताव, अनुमोदनादि। ७. व्याख्यान।

(८) निबन्ध-माला २२६–२४६

निबन्ध-लेखन का प्रकार तथा उदाहरणार्थ २० निबन्ध।

१. विद्याविहीनः पशुः।
२. सत्यमेव जयते नानृतम्।
३. अहिंसा परमो धर्मः।
४. परोपकाराय सतां विभूतयः।
५. उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः।
६. धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्।
७. आचारः परमो धर्मः।
८. सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।
९. संघे शक्तिः कलौ युगे।
१०. जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।
११. संस्कृतभाषाया महत्त्वम्।
१२. आर्याणां संस्कृतिः।
१३. गीताया उपदेशामृतम्।
१४. स्त्रीशिक्षाया आवश्यकता।
१५. शठे शाठ्यं समाचरेत्।
१६. मानवजीवनस्योद्देश्यम्।
१७. आचार्यदेवो भव।
१८. मम महाविद्यालयः।
१९. सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति।
२०. सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम्।

(९) अनुवादार्थ गद्य-संग्रह २४७–२५६

(१०) छन्दः-परिचय, प्रत्यय-परिचय, संस्कृत कैसे लिखें ?

पारिभाषिक शब्द २५७–२७२

———

आत्मनिवेदन

(१) पुस्तक-लेखन का उद्देश्य :—पुस्तक को पढ़ने के साथ ही पाठकों के हृदय में प्रश्न होगा कि अनुवाद और व्याकरण की अनेक पुस्तकों के होते हुए इस पुस्तक की क्या आवश्यकता है ? प्रश्न का संक्षेप में उत्तर यही दिया जा सकता है कि यह पुस्तक उस आवश्यकता की पूर्ति के लिए लिखी गयी है, जिसकी पूर्ति अब तक प्रकाशित पुस्तकों से नहीं हो सकी है। पुस्तक-लेखन का उद्देश्य है :—

(१) संस्कृत भाषा को सरल, सुबोध और सर्वप्रिय बनाना। (२) संस्कृत-व्याकरण की कठिनाइयों को दूर कर सुगम मार्ग-प्रदर्शन करना। (३) 'संस्कृत-भाषा अतिक्लिष्ट भाषा है' इस लोकापवाद का समूल खण्डन करना। (४) किस प्रकार से संस्कृत भाषा से अपरिचित एक हिन्दी-भाषा जाननेवाला व्यक्ति ४ या ६ मास में सुन्दर, स्पष्ट और शुद्ध संस्कृत लिख और बोल सकता है। (५) संस्कृत भाषा के व्याकरण और अनुवाद-सम्बन्धी सभी अत्यावश्यक बातों का एक स्थान पर संग्रह करना तथा अनावश्यक सभी बातों का परित्याग करना। (६) अनुवाद और वाक्य-रचना द्वारा सभी व्याकरण के नियमों का पूर्ण अभ्यास करना। व्याकरण को रटने की क्रिया को न्यूनतम करना। (७) संस्कृत के प्रत्ययों के द्वारा सैकड़ों शब्दों का स्वयं निर्माण करना सीखना, जिनका प्रयोग हिन्दी आदि भाषाओं में प्रचलित है।

इस पुस्तक के लेखन में लेखक का उद्देश्य यह भी है कि यह पुस्तक तीन भागों में पूर्ण हो। यह द्वितीय भाग है, जो कि संस्कृत भाषा के ज्ञान के लिए प्रारम्भिक संस्कृत-प्रेमियों को लक्ष्य में रखकर लिखा गया है। इसमें अत्यावश्यक विषयों का ही संग्रह किया गया है। सरल और शुद्ध संस्कृत किस प्रकार सरलतापूर्वक निःसंकोच लिखी और बोली जा सकती है, इसका ही इसमें ध्यान रखा गया है। अत्यावश्यक व्याकरण का ही इसमें संग्रह है, जो प्रारम्भकर्ताओं के लिए जानना अनिवार्य है। तृतीय भाग में उच्च व्याकरण तथा प्रौढ़ संस्कृत के लेखन के प्रकार का संग्रह रहेगा। अभी तक बी० ए०, एम० ए० तथा शास्त्री और आचार्य के छात्रों के लिए अनुवाद और निबन्ध की उत्तम पुस्तकें नहीं हैं। तृतीय भाग के द्वारा इस आवश्यकता की पूर्ति करना लेखक का लक्ष्य है।

(**विशेष**—इस पुस्तक का प्रथम भाग 'प्रारम्भिक रचनानुवादकौमुदी' नाम से और तृतीय भाग 'प्रौढ़-रचनानुवादकौमुदी' नाम से प्रकाशित हो चुका है।)

(२) **पुस्तक की शैली** :—पुस्तक कतिपय नवीनतम विशेषताओं के साथ प्रस्तुत की गयी है। हिन्दी, संस्कृत, इंग्लिश, फारसी और अरबी में अभी तक इस

पद्धति पर लिखी गयी कोई पुस्तक नहीं है। जर्मन और फ्रेंच भाषाओं में इस शैली पर कुछ पुस्तकें जर्मन और फ्रेंच भाषाएँ सिखाने के लिए लिखी गयी हैं, विशेष रूप से प्रो० ओटो जीपमान (Otto Siepmann) की जर्मन और फ्रेंच भाषा की पुस्तकें। मुझे विशेष प्रेरणा प्रो० जीपमान की मनोरम शैली से मिली है। मैंने कतिपय और नवीनताओं का इसमें समावेश किया है, जैसे प्रत्येक अभ्यास में नवीन शब्दों की संख्या समान ही हो। इस पुस्तक में प्रत्येक अभ्यास में गिनकर २५ नए शब्द दिए गये हैं। हिन्दी और संस्कृत के अतिरिक्त इंग्लिश और रूसी भाषा में अनुवाद और निबन्ध के विषय में जो नवीनतम वैज्ञानिक पद्धति अपनाई गयी है, उसका भी मैंने यथासम्भव और यथाशक्ति पूर्ण उपयोग किया है।

(३) **अभ्यास** :—पुस्तक में केवल ६० अभ्यास दिए गए हैं। प्रत्येक अभ्यास दो भागों में विभक्त है। बायीं ओर प्रारम्भ में शब्दकोष है, जिसमें २५ नए शब्द हैं। तत्पश्चात् शब्दरूप, धातुरूप, कारक, समास, कृत् प्रत्यय आदि व्याकरण सम्बन्धी अंश दिया गया है। नियमों के उदाहरण आदि भी साथ ही दिए गए हैं। दायीं ओर प्रारम्भ में संस्कृत में उदाहरण-वाक्य हैं। तत्पश्चात् संस्कृत में अनुवाद के लिए हिन्दी के वाक्य हैं। बाद में अनुवाद में होनेवाली विशेष त्रुटियों का निर्देश करके उनका शुद्धरूप दे दिया गया है। तत्पश्चात् अभ्यास के लिए कार्य दिया गया है, जैसे—एकवचन को बहुवचन बनाना, वर्तमानकाल को अन्य कालों में परिवर्तित करना आदि। वाक्य-रचना, रिक्त-स्थानों की पूर्ति आदि का उसके बाद अभ्यास कराया गया है। प्रत्येक अभ्यास में दोनों ओर की पंक्तियाँ गिनकर रखी गयी हैं। प्रत्येक अभ्यास उसी पृष्ठ पर समाप्त होता है। किसी अभ्यास की एक भी पंक्ति दूसरे पृष्ठ पर नहीं जाती है।

(४) **शब्दकोष** :—विद्यार्थियों की सुविधा के लिए शब्दकोष को ४ भागों में बाँटा गया है। शब्दकोष के अन्तर्गत (क) संकेत का अर्थ है कि ये 'संज्ञा या सर्वनाम शब्द' हैं। सर्वनाम शब्दों के अन्त में (सर्वनाम) यह संकेत भी किया गया है। (ख) चिह्न का अर्थ है कि ये 'धातु या क्रिया-शब्द' हैं। (ग) का अर्थ है कि ये 'अव्यय' हैं, इनका रूप नहीं चलता है। (घ) का अर्थ है कि ये 'विशेषण' शब्द हैं, इनके रूप विशेष्य के तुल्य चलेंगे। इन शब्दों के तीनों लिंगों में रूप चलेंगे। सुविधा के लिए प्रत्येक विभाग के अन्त में शब्दों की संख्या गिनकर रख दी गयी है, अर्थात् इस अभ्यास में इतने संज्ञा-शब्दों का प्रयोग सिखाया गया है, इतनी धातुओं का, इतने अव्ययों या विशेषणों का।

शब्दकोष के विषय में यह भी ध्यान रखने का प्रयत्न किया गया है कि जिस शब्द या धातु का प्रयोग उस अभ्यास में सिखाया गया है, उस प्रकार के अन्य शब्द या धातु भी उसी पाठ में रखे जाएँ और उसका भी अभ्यास कराया जाय। शब्दकोष के ऊपर स्पष्ट रूप से निर्देश किया गया है कि विद्यार्थी अब तक कितने शब्द सीख चुका है तथा उसका शब्दकोष कितना हो गया है। शब्दकोष के अन्त में सूचना दी गयी है कि इस शब्द से लेकर इस शब्द तक के रूप इस प्रकार चलेंगे या इतनी धातुओं के रूप इस प्रकार चलेंगे। संक्षेप के लिए सर्वत्र यह नहीं लिखा गया है कि इस शब्द से इस शब्द तक के रूप ऐसे चलेंगे, अपितु—(डैश) चिह्न का प्रयोग किया गया है। 'तुल्य रूप चलेंगे' के लिए 'वत्' का प्रयोग किया है। जैसे—(क) राम–विद्यालय, रामवत्। इसका अर्थ हुआ कि (क) भाग में दिए हुए राम शब्द से विद्यालय शब्द तक के सारे शब्दों के रूप राम शब्द के तुल्य चलेंगे। इसी प्रकार (ख) भाग के लिए संकेत है।

कई स्थानों पर शब्दकोष में (क) (ख) (ग) (घ) में से (क) (ख) (ग) या (घ) नहीं मिलेगा। इसका अभिप्राय यह है कि उस विभाग या उस श्रेणी का शब्द उस शब्दकोष में नहीं है। जैसे—अभ्यास ४ का शब्दकोष (ख) से प्रारम्भ होता है, इसका अर्थ है कि यहाँ पर (क) अर्थात् कोई संज्ञा शब्द नहीं है। (ख) न होने का अर्थ है, क्रिया-शब्द नहीं है। (ग) नहीं का अर्थ है कि 'अव्यय' नहीं है। (घ) नहीं का अर्थ है कि कोई विशेषण शब्द इस शब्दकोष में नहीं है। यह भी स्मरण रखें कि (क) भाग में दो-तीन अभ्यासों में कुछ विशेषण शब्द हैं, जिनका प्रयोग संज्ञा शब्द और विशेषण शब्द दोनों के तुल्य होता है। उनका उल्लेख (क) भाग में इसलिए किया गया है कि उसके रूप उस भाग के मुख्य शब्द के तुल्य चलते हैं।

प्रत्येक अभ्यास में २५ नए शब्द हैं, अतः ६० अभ्यासों में १५०० शब्दों का शब्दकोष हो जाता है। प्रायः इतने ही शब्द कृत् प्रत्ययों आदि के द्वारा विद्यार्थी स्वयं भी बना लेता है, अतः प्रायः ३००० शब्दों का ज्ञान छात्र को हो जाता है। शब्दकोष के शब्दों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से है :—

(क) अर्थात् संज्ञा या सर्वनाम शब्द	**८२४**
(ख) अर्थात् धातु या क्रिया-शब्द	**३४९**
(ग) अव्यय शब्द ...	**१३७**
(घ) विशेषण शब्द ...	**१९०**
पठित एवं अभ्यस्त शब्दों का योग	**१५०० (शब्दकोष)**

५. पुस्तक की विशेषताएँ

संक्षेप में पुस्तक की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :—

(१) इंग्लिश् , जर्मन, फ्रेंच और रूसी भाषाओं में अपनाई गयी नवीनतम वैज्ञानिक पद्धति इस पुस्तक में अपनाई गयी है ।

(२) संस्कृत भाषा के ज्ञान के लिए अनिवार्य सम्पूर्ण व्याकरण अनुवाद और अभ्यासों के द्वारा अति सरल और सुबोध रूप में समझाया गया है ।

(३) ६० अभ्यासों में सम्पूर्ण आवश्यक व्याकरण समाप्त किया गया है । प्रत्येक अभ्यास में व्याकरण के कुछ विशेष नियमों का अभ्यास कराया गया है । नियमों को पूर्ण रूप से स्पष्ट करने के लिए उदाहरण-वाक्य दिये गए हैं । प्रत्येक अभ्यास में छात्रों से जो त्रुटियाँ प्रायः होती हैं, उनका निर्देश करके शुद्ध वाक्य बताया गया है । साथ ही नियम भी बताया गया है ।

(४) अभ्यास-प्रश्नों के द्वारा सैकड़ों नए वाक्य बनाने का अभ्यास कराया गया है । रिक्त-स्थलों की पूर्ति का अभ्यास, नए शब्दों से वाक्य-रचना का अभ्यास, अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध करने का अभ्यास, सन्धि, समास तथा कृत् प्रत्ययों से रूप बनाने आदि का विशेष अभ्यास कराया गया है ।

(५) प्रत्येक अभ्यास की विशेषता यह है कि एक अभ्यास के लिए केवल दो पृष्ठ दिए गए हैं । प्रत्येक अभ्यास की पंक्तियाँ गिनकर रखी गयी हैं । एक भी पंक्ति एक अभ्यास की दूसरे पृष्ठ पर नहीं जाती है । प्रत्येक अभ्यास दो भागों में विभक्त है । बायीं ओर :—(१) शब्दकोष, (२) व्याकरण के नियम, (३) शब्दरूप, (४) धातुरूप, (५) सन्धि या समास आदि, (६) कृत् प्रत्ययों से शब्द बनाने के नियम आदि हैं । दायीं ओर :—(१) उदाहरण-वाक्य, (२) अनुवादार्थ हिन्दी-वाक्य, (३) अशुद्ध वाक्यों के शुद्ध-वाक्य, (४) अभ्यास (वचन-परिवर्तन, काल-परिवर्तन आदि), (५) वाक्य-रचना, (६) रिक्त-स्थलों की पूर्ति का अभ्यास आदि ।

(६) प्रत्येक अभ्यास में गिनकर २५ नए शब्द दिए गए हैं । उनका विशेष-रूप से प्रयोग सिखाया गया है ।

(७) अभ्यासों के पश्चात् (१) सभी आवश्यक शब्दों तथा धातुओं के रूप दिए गए हैं । (२) १ से १०० तक की पूरी गिनती तथा महाशंख तक की संख्याएँ हैं । (३) संक्षिप्त धातुकोष है, इसमें पुस्तक में प्रयुक्त सभी धातुओं के ५ लकारों के रूप हैं । (४) कृत् प्रत्ययों से बने हुए रूपों का संग्रह । (५) आवश्यक सन्धि-नियमों का संग्रह है ।

(८) संस्कृत में पत्र लिखना, प्रस्ताव, अनुमोदन आदि करना, व्याख्यान का प्रारम्भ करना, इसका ढंग उदाहरणों द्वारा बताया गया है।

(९) पुस्तक के अन्त में संस्कृत में निबन्ध लिखने के लिए आवश्यक-निर्देश तथा उदाहरणरूप में २० निबन्ध अत्युपयोगी विषयों पर लिखे गये हैं। २८ विषयों पर अनुवादार्थ हिन्दी-सन्दर्भ भी दिये गये हैं इन सन्दर्भों के कठिन शब्दों की संस्कृत नीचे संकेत में दी गयी है। अन्त में छन्दः-परिचय, प्रत्यय-परिचय तथा संस्कृत कैसे लिखें भी दिया है।

(१०) पुस्तक बी० ए० और मध्यमा कक्षा तक के छात्रों के लिए संस्कृत अनुवाद, व्याकरण और निबन्ध के लिए सर्वथा पर्याप्त है।

६. अध्यापकों से

(१) प्रत्येक अभ्यास में दिये शब्दकोष और व्याकरण के अंश को छात्रों को अच्छी प्रकार से स्पष्ट कर दें और छात्रों को निर्देश दें कि वे उसको ठीक स्मरण कर लें। दूसरे दिन उदाहरण-वाक्यों का हिन्दी में अर्थ करावें और नियमों के प्रयोग को स्पष्ट कर दें। तत्पश्चात् कक्षा में ही प्रत्येक छात्र से मौखिक संस्कृत में अनुवाद करावें। एक छात्र की त्रुटि को दूसरे छात्र से शुद्ध करावें। छात्रों को अपनी त्रुटि स्वयं शुद्ध करने का अधिक अवकाश दें।

(२) संस्कृत में मौखिक अनुवाद या संस्कृत-भाषण के प्रति छात्रों के संकोच को सर्वथा दूर करें। छात्र निर्भीक होकर अनुवाद करें और संस्कृत बोलें।

(३) छात्रों के उच्चारण की शुद्धता पर विशेष ध्यान दें और उच्चारण की त्रुटि को प्रारम्भ से ही दूर करें।

(४) प्रत्येक अभ्यास को एक या दो बार में समाप्त करें। प्रत्येक पाठ के अन्त में दिये गये अभ्यास को मौखिक और लिखित दोनों प्रकार से करावें। छात्रों की लेख-सम्बन्धी त्रुटि को भी दूर करें।

(५) प्रत्येक अभ्यास में दिये गये नये शब्दों और धातुओं के द्वारा स्वयं भी वाक्य बनाकर उनका संस्कृत में अनुवाद करावें। छात्रों को संस्कृत-संभाषण के लिए विशेषरूप से प्रेरित करें। कक्षा में भी अधिक वार्तालाप संस्कृत में करें।

(६) पूर्व-पठित शब्दों, धातुओं और व्याकरण के नियमों को छात्र न भूलें, अतः उनका भी अभ्यास बार-बार कराते रहें। निबन्ध-लेखन का भी अभ्यास करावें।

(७) छात्रों के हृदय में संस्कृत भाषा के प्रति विशेष अनुराग उत्पन्न करें। उनके हृदय से यह भाव निकाल दें कि संस्कृत भाषा कठिन भाषा है। छात्रों से अनुवाद आदि का अभ्यास कराकर सिद्ध करें कि संस्कृत भाषा अन्य भाषाओं की अपेक्षा अधिक सरलता से सीखी जा सकती है और सरलता से लिखी या बोली जा सकती है।

७. विद्यार्थियों से

(१) संस्कृत भाषा को अति सरल, सुबोध और सुगम बनाने के लिए यह पुस्तक प्रस्तुत की गयी है। अतः अदम्य उत्साह के साथ पुस्तक के पठन में प्रवृत्त हों। प्रत्येक भाषा में शुद्ध बोलना या लिखना निरन्तर अभ्यास के बाद ही आता है। मातृभाषा हिन्दी में शुद्ध बोलना या लिखना वर्षों के निरन्तर अभ्यास के बाद ही आता है। यह स्मरण रखें कि बिना अभ्यास के कोई विद्या नहीं आती है। अतः संकोच छोड़कर संस्कृत में बोलने और लिखने का अभ्यास करें।

(२) पुस्तक में ६० अभ्यास हैं। संस्कृत-भाषा से अपरिचित कोई भी हिन्दी जाननेवाला व्यक्ति १ अभ्यास को १ या २ घण्टा प्रतिदिन समय देने पर सरलता से २ दिन में पूरा कर सकता है। इस प्रकार ५ मास में यह पुस्तक सरलता से समाप्त हो सकती है। बहुत अल्प आयुवाले छात्र ४ दिन में एक अभ्यास समाप्त कर सकते हैं, इस प्रकार वे भी ८ मास में पुस्तक पूरी कर सकते हैं।

(३) संस्कृत भाषा के ज्ञान के लिए जितने शब्दों, धातुओं और नियमों के जानने की अत्यन्त आवश्यकता होती है, वे सभी बातें इस पुस्तक में हैं। इस पुस्तक का ठीक अभ्यास हो जाने पर छात्र निःसंकोच शुद्ध संस्कृत लिख और बोल सकता है। बी० ए० कक्षा तक के लिए इतने व्याकरण का ज्ञान पर्याप्त है।

(४) **शब्दकोष**—शब्दकोष में एक प्रकार से रूप चलनेवाले शब्द या धातु प्रायः एक ही स्थान पर दिये गये हैं। अति प्रसिद्ध शब्द या धातु ही प्रायः दिये गये हैं, कठिन शब्दों को छोड़ दिया गया है। किस शब्द या धातु के रूप किस प्रकार चलेंगे, यह भी अन्त में सूचना द्वारा स्पष्ट कर दिया गया है। (क) (ख) (ग) (घ) संकेतों का अर्थ संज्ञा, क्रिया आदि स्मरण रखें। आगे के अभ्यासों में पूर्व-पठित शब्दा-वली का निःसंकोच प्रयोग किया गया है, अतः प्रत्येक पाठ की शब्दावली को ठीक स्मरण करें।

(५) **व्याकरण**—(क) व्याकरण में कुछ विशेष शब्दों या धातुओं का प्रयोग सिखाया गया है। उस अभ्यास में उस शब्द और धातु को ठीक स्मरण कर लें। उसी प्रकार से रूप चलनेवाले शब्द या धातु भी उसी पाठ में दिये गये हैं। उनके रूप भी उसी प्रकार चलावें। शब्दों और धातुओं के 'संक्षिप्तरूप' भी दिये गये हैं, उस प्रकार से चलनेवाले सभी शब्दों या धातुओं के अन्त में वह अंश रहेगा।

(ख) नियमों के साथ पाणिनि के प्रामाणिक सूत्र भी कोष्ठ में दिये हैं। उन्हें न स्मरण करना चाहें तो छोड़ सकते हैं। हिन्दी में दिये पूरे नियम की अपेक्षा संस्कृत का छोटा सूत्र स्मरण करना सरल है। केवल २०० नियम पूरी पुस्तक में हैं।

(ग) व्याकरण के नियमों के उदाहरण भी साथ ही दिये गये हैं। कुछ नियमों के उदाहरण उदाहरण-वाक्यों में मिलेंगे। उन्हें ध्यानपूर्वक समझ लें।

(घ) संक्षेप के लिए कतिपय संकेतों का उपयोग किया गया है। उनका यथा-स्थान निर्देश किया गया है। जैसे—प्रथमा, द्वितीया आदि के लिए प्र०, द्वि० आदि। चिह्न >का प्रयोग 'का रूप बनता है' इस अर्थ में किया गया है, स्मरण रखें। जैसे भू>भवति, अर्थात् भू धातु का भवति रूप बनता है। इस पुस्तक में ह्रस्व ऋ और दीर्घ ऋ इस प्रकार से छपे हैं, स्मरण रखें। ह्रस्व ऋ, दीर्घ ॠ।

(६) **उदाहरण-वाक्य**—व्याकरण के जो नियम उस अभ्यास में दिये गये हैं तथा जो नये शब्द दिये गये हैं, उनका प्रयोग उदाहरण वाक्यों में किया गया है। उदाहरण वाक्यों को बहुत ध्यानपूर्वक समझ लें। प्रत्येक वाक्य में किसी विशेष नियम या शब्द का प्रयोग सिखाया गया है। उदाहरण-वाक्यों को ठीक समझ लेने से अनुवाद में कोई कठिनाई नहीं होती।

(७) **अनुवाद**—जो व्याकरण के नियम या नये शब्द उस अभ्यास में दिये गये हैं, उनका विशेष रूप से अभ्यास कराया गया है। अनुवाद बनाने में जहाँ भी कठिनाई हो, वहाँ उदाहरण-वाक्यों को देखें। उनसे आपकी कठिनाई दूर होगी। अशुद्ध वाक्यों के शुद्ध वाक्य जो दिये गये हैं, उनसे भी सहायता लीजिये।

(८) **शुद्ध-वाक्य**—अशुद्ध-वाक्यों के जो शुद्ध-वाक्य या शुद्ध रूप दिये गये हैं, उनको ध्यानपूर्वक स्मरण कर लें। प्रयत्न करें कि वह त्रुटि आगे न हो। जो त्रुटियाँ एक बार बता दी हैं; उनका बार-बार निर्देश नहीं किया गया है। शुद्ध-वाक्य के आगे नियम की संख्या दी है, उस नियम को व्याकरणवाले अंश में देखें।

(९) **अभ्यास**—अभ्यासों में काल-परिवर्तन, वचन-परिवर्तन आदि का अभ्यास कराया गया है। अभ्यास में जितने प्रश्न दिये गए हैं, उनको पूरा करने का पूर्ण यत्न करें। तभी अनुवाद और व्याकरण का अभ्यास परिपक्व होगा। वाक्य-रचना आदि के कार्य को भी न छोड़ें। कहीं कठिनाई प्रतीत हो तो अध्यापक की सहायता लें।

(१०) अभ्यासों के अन्त में १२२ पृष्ठ से सभी आवश्यक शब्दों और धातुओं के रूप दिये गए हैं। उनको शुद्ध रूप में स्मरण करें और उनका प्रयोग करें।

(११) पुस्तक में जितनी धातुओं का प्रयोग हुआ है, उन सबके पाँचों लकारों के रूप संक्षिप्त धातुकोष में हैं, उन्हें वहाँ देखें!

(१२) पत्र लिखने का प्रकार भी दिया गया है। अन्त में निबन्ध लिखने का प्रकार तथा उदाहरण-रूप में २० निबन्ध हैं, तदनुसार अन्य निबन्ध स्वयं लिखें।

८. कृतज्ञता-प्रकाशन

इस पुस्तक के लेखन में मुझे जिन महानुभावों से विशेष आवश्यक परामर्श, प्रेरणा और प्रोत्साहन मिला है, उनमें विशेष उल्लेखनीय निम्नलिखित हैं। परामर्शों, सुझावों आदि के लिए इन सभी का कृतज्ञ हूँ।

सर्वश्री माननीय डॉ० कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी (राज्यपाल उ० प्र०), डॉ० सम्पूर्णानन्द, डॉ० मंगलदेव शास्त्री (बनारस), डॉ० बाबूराम सक्सेना (प्रयाग), डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल (बनारस), आचार्य हरिदत्त शास्त्री (कानपुर), श्री रूपनारायण शास्त्री (हि० सा० सम्मेलन, प्रयाग), श्री पुरुषोत्तमदास मोदी एम० ए०।

अन्त में विद्वज्जन से निवेदन है कि वे पुस्तक के विषय में जो भी संशोधन, परिवर्तन, परिवर्धन का विचार भेजेंगे, वह बहुत कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया जायगा।

सेंट एण्ड्रयूज़ कॉलेज, गोरखपुर
दीपावली, २००९ वि०

कपिलदेव द्विवेदी

द्वितीय से षष्ठ संस्करण की भूमिका

जिन विद्वानों ने आवश्यक संशोधनादि के विचार भेजे हैं, उनको विशेष धन्यवाद देता हूँ। उनके संशोधनादि के विचारों का यथासम्भव पूर्ण पालन किया गया है। पुस्तक को और उपयोगी बनाने के लिए उच्च कक्षाओं में निर्धारित व्याकरण के अंश, सन्धि-नियम, शब्दरूप, धातुओं के पूरे १० लकारों के रूप, छन्दःपरिचय, प्रत्यय-परिचय, संस्कृत कैसे लिखें; अनुवादार्थ गद्य-संग्रह में टिप्पणी में कठिन शब्दों की संस्कृत आदि इन संस्करणों में बढ़ाए गए हैं। अनुवादार्थ गद्य-संग्रह भी अन्त में बढ़ाया गया है। आशा है, प्रस्तुत संस्करण विद्यार्थियों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

गवर्नमेंट कॉलेज, नैनीताल
ता० २०-१२-५५, २०-९-५९ ई०
१६-१-६५, १-५-६८ ई०

कपिलदेव द्विवेदी

सप्तम संस्करण की भूमिका

संस्कृत-प्रेमी अध्यापकों, छात्रों और जनता ने इस पुस्तक का जो हार्दिक स्वागत किया है, तदर्थ उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। छात्रों की सुविधा के लिए पारिभाषिक शब्दों के इंग्लिश नाम पुस्तक के अन्त में दिए गए हैं। यथास्थान आवश्यक सभी परिवर्तन, परिवर्धन और संशोधन किए गए हैं। आशा है, प्रस्तुत संस्करण छात्रों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

गवर्नमेंट कॉलेज, ज्ञानपुर, वाराणसी
ता० १-७-७० ई०

कपिलदेव द्विवेदी

आवश्यक निर्देश

१. 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है—शुद्ध, परिमार्जित, परिष्कृत। अतः संस्कृत भाषा का अर्थ है—शुद्ध एवं परिमार्जित भाषा।

२. संस्कृत में ३ वचन होते हैं—एकवचन (एक०), द्विवचन (द्वि०), बहुवचन (बहु०)। तीन पुरुष होते हैं—प्रथम या अन्य पुरुष (प्र० पु० या प्र०), मध्यमपुरुष (म० पु० या म०), उत्तमपुरुष (उ० पु० या उ०)। कारक ६ होते हैं। षष्ठी और सम्बोधन को लेकर आठ कारक (विभक्तियाँ) होते हैं। (विवरण के लिए देखें पृष्ठ ४)।

३. संस्कृत में धातु के १० लकार (वृत्तियाँ) होते हैं। ये दसों लकार इस पुस्तक में दिये गये हैं। इनके नाम तथा अर्थ ये हैं—(१) लट् (वर्तमानकाल), (२) लोट् (आज्ञा अर्थ), (३) लृट् (भविष्यत् काल), (४) लङ् (अनद्यतन भूत), (५) विधिलिङ् (आज्ञा या चाहिए अर्थ), (६) लिट् (अनद्यतन परोक्ष भूत), (७) लुट् (अनद्यतन भविष्यत्), (८) आशीर्लिङ् (आशीर्वाद), (९) लुङ् (सामान्य भूत), (१०) लृङ् (हेतुहेतुमद् भूत या भविष्यत्)।

४. धातुएँ ३ प्रकार की हैं, अतः धातुओं के तीन प्रकार से रूप चलते हैं:—परस्मैपदी–(प०; ति, तः, अन्ति आदि)। आत्मनेपदी (आ०; ते, एते, अन्ते आदि)। उभयपदी (उ०; दोनों प्रकार के रूप)।

५. संस्कृत में १० गण (धातुओं के विभाग) होते हैं। प्रत्येक धातु किसी एक गण में आती है। इसके लिए कोष्ठगत संकेत हैं। भ्वादिगण (१), अदादि० (२), जुहोत्यादि० (३), दिवादि० (४), स्वादि० (५), तुदादि० (६), रुधादि० (७), तनादि० (८), क्र्यादि० (९), चुरादि० (१०)। कोष्ठगत संकेतों के लिए यह श्लोक स्मरण कर लें।

भ्वाद्यदादिजुहोत्यादिर्दिवादिः स्वादिरेव च।
तुदादिश्च रुधादिश्च तनादिक्रीचुरादयः॥

६. इंग्लिश् के Tenses (लकारों) का अनुवाद कोष्ठ में दी विधि से कीजिए। १. Present Ind. (लट्), २. Pres. Cont. (लट् या धातु से शतृ प्रत्यय + अस्, लट्), ३. Pres. Perfect (लङ् या धातु से क्त प्रत्यय + अस्, लट्), ४. Pres. Per. Cont. (२ के तुल्य)। ५. Past Ind. (लङ्), ६. Past Cont. (लङ् या धातु से शतृ प्रत्यय + अस्, लङ्), ७. Past Perfect (लङ् या धातु से क्त प्रत्यय + अस्, लङ्), ८. Past Perfect Cont. (६ के तुल्य)। ९. Future Ind. (लृट्), १०. Future Cont. (लृट् या धातु से स्य, शतृ + अस्, लृट्), ११. Future Perfect (धातु से क्त प्रत्यय + अस्, लृट्), १२. Future Per. Cont. (१० के तुल्य)।

७. प्रत्येक अभ्यास को प्रारम्भ करने से पूर्व बाईं ओर के शब्दकोष और व्याकरण को ठीक स्मरण कर लें। उनका ही अभ्यास कराया गया है। * चिह्न वाले नियम अत्यावश्यक हैं। शब्दकोष में (क) में सर्वनाम शब्दों का संकेत कर दिया गया है, शेष संज्ञा-शब्द हैं।

शब्दकोष—२५) **अभ्यास १** (व्याकरण)

(क) सः (वह), तौ (वे दोनों), ते (वे सब), भवान् (आप, पुंलिंग), भवती (आप, स्त्रीलिंग), (सर्वनाम शब्द)। रामः (राम), ईश्वरः (ईश्वर या स्वामी), बालकः (बालक), मनुष्यः (मनुष्य), नरः (मनुष्य), ग्रामः (गाँव), नृपः (राजा), विद्यालयः (विद्यालय)। (१३)। (ख) भू (होना), पठ् (पढ़ना), लिख् (लिखना), हस् (हँसना), गम् (जाना), आगम् (आना)। (६)। (ग) अत्र (यहाँ), इह (यहाँ), यत्र (जहाँ), तत्र (वहाँ), कुत्र (कहाँ), क्व (कहाँ)। (६)

सूचनाः—१. शब्दकोष के लिए ये संकेत स्मरण कर लें:—

(क) = संज्ञा या सर्वनाम शब्द। (ख) = धातु या क्रिया-शब्द।
(ग) = अव्यय या क्रिया-विशेषण। (घ) = विशेषण शब्द।

२. (क) चिह्न—(अर्थात् लकीर) 'तक' अर्थ का बोधक है। जैसे, १—१० अर्थात् १ से १० तक। राम—विद्यालय, राम से विद्यालय तक के शब्द। (ख) 'वत्' अर्थात् तुल्य, सदृश। जैसे—'रामवत्' अर्थात् राम के तुल्य रूप चलेंगे। 'भवतिवत्' भवति के तुल्य रूप चलेंगे।

३. (क) राम—विद्यालय, रामवत् अर्थात् राम शब्द से विद्यालय शब्द तक के रूप राम शब्द के तुल्य चलेंगे। (ख) भू—आगम्, भवतिवत्।

व्याकरण (लट् परस्मैपद, कर्तृवाच्य)

१. रामः रामौ रामाः प्रथमा (कर्ता) | **संक्षिप्तरूप** अः औ आः प्र०
रामम् रामौ रामान् द्वितीया (कर्म) | (अकारान्त पुं०) अम् औ आन् द्वि०

संक्षिप्तरूप शब्द के अन्त में लगेंगे। जैसे, बालकः बालकौ बालकाः, बालकम् आदि।

२. 'भू' धातु 'लट्' लकार (वर्तमानकाल) **संक्षिप्तरूप**

भवति भवतः भवन्ति प्रथमपुरुष | अति अतः अन्ति प्र० पु०

संक्षिप्तरूप अन्त में लगाकर अन्य धातुओं के रूप बनाइए। जैसे—पठति, लिखति, हसति, गच्छति, आगच्छति आदि। लट् आदि में गम् को गच्छ् हो जाता है। लट् = वर्तमानकाल।

***नियम १—कर्ता के अनुसार क्रिया का वचन और पुरुष होता है। जैसे—सः पठति। कर्ता प्रथमपुरुष एकवचन है तो क्रिया भी प्रथमपुरुष एकवचन होगी।**

नियम २—'भवत्' (आप) शब्द के साथ सदा प्रथमपुरुष आता है।

नियम ३—तीनों लिंगों में धातु का रूप वही रहता है।

***नियम ४—कर्ता में प्रथमा होती है और कर्म में द्वितीया होती है।**

***नियम ५—(अपदं न प्रयुञ्जीत) बिना प्रत्यय लगाये शब्द या धातु का प्रयोग न करें। रामः पठति, प्रयोग होगा। राम पठ्, नहीं।**

नियम ६—एक अर्थवाले (पर्यायवाची) शब्दों में से एक शब्द का ही प्रयोग करें।

अभ्यास १

१. उदाहरण-वाक्यः—१. वह पढ़ता है—सः पठति। २. वे दो पढ़ते हैं (पढ़ रहे हैं)—तौ पठतः। ३. वे सब पढ़ते हैं—ते पठन्ति। ४. आप यहाँ आते हैं—भवान् अत्र आगच्छति। ५. आप दोनों हँसते हैं—भवन्तौ हसतः। ६. आप सब जाते हैं—भवन्तः गच्छन्ति। ७. आप लिखती हैं—भवती लिखति। ८. वहाँ क्या हो रहा है? तत्र किं भवति?

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. वह लिखता है। २. वह गाँव को जाता है। ३. वह आता है। ४. बालक पढ़ता है। ५. राम लिखता है। ६. मनुष्य हँसता है। ७. राजा यहाँ आता है। ८. राम विद्यालय जाता है। ९. आप वहाँ जाते हैं। १०. वह मनुष्य कहाँ जाता है?

(ख) ११. वे दोनों हँसते हैं। १२. वे दोनों कहाँ जाते हैं? १३. दो आदमी यहाँ आ रहे हैं। १४. दो राजा वहाँ जा रहे हैं। १५. वे दोनों जहाँ जाते है, वहाँ हँसते हैं। १६. आप दोनों आते हैं।

(ग) १७. वे सब यहाँ आते हैं। १८. सब बालक विद्यालय जा रहे हैं। १९. वे मनुष्य कहाँ जा रहे हैं? २० आप सब पढ़ रहे हैं।

३. **अशुद्धवाक्य**	**शुद्धवाक्य**	**नियम संख्या** (देखिए)
(१) रामं विद्यालयः गच्छति।	रामः विद्यालयं गच्छति।	४
(२) भवान् तत्र गच्छन्ति।	भवान् तत्र गच्छति।	१
(३) मनुष्यौ आगच्छन्ति।	मनुष्यौ आगच्छतः।	१
(४) यत्र गच्छतः तत्र हसन्ति।	यत्र गच्छतः तत्र हसतः।	२
(५) बालकाः विद्यालयं गच्छति।	बालकाः विद्यालयं गच्छन्ति।	५, १

४. शुद्ध करो तथा नियम बताओ—सः पठन्ति। तौ लिखति। ते आगच्छति। भवान् पठन्ति। भवती हसतः। बालकः भवन्ति। नराः पठति। नरौ आगच्छन्ति। विद्यालयः गच्छति। नृप गच्छति। नृप गच्छन्ति। बालक हसतः। नराः हसति।

५. अभ्यास (संस्कृत में)—(क) २ (क) के वाक्यों को **द्विवचन और बहुवचन** में बदलो। (ख) २ (ख) के वाक्यों को **एकवचन और बहुवचन** में बदलो। **(ग)** पठ्, लिख्, गम्, आगम् के प्रथमपुरुष के रूप लिखो। **(घ)** बालक, नर, नृप, विद्यालय के प्रथमा (कर्ता) और द्वितीया (कर्म) विभक्ति के रूप लिखो।

अभ्यास २

(व्याकरण)

शब्दकोष--२५ + २५=५०)

(क) त्वम् (तू), युवाम् (तुम दोनों), यूयम् (तुम सब) (सर्वनाम)। फलम् (फल), पुस्तकम् (पुस्तक), पुष्पम् (फूल), पत्रम् (चिट्ठी, पत्ता, भोजनम् (भोजन), जलम् (जल), राज्यम् (राज्य), सत्यम् (सत्य), गृहम् (घर), वनम् (वन)। (१३)। (ख) रक्ष् (रक्षा करना), वद् (बोलना), पच् (पकाना), पत् (गिरना), नम् (नमस्कार करना)। (५)। (ग) अद्य (आज), सम्प्रति (अब), इदानीम् (अब), अधुना (अब), यदा (जब), तदा (तब), कदा (कब)। (७)

सूचना—(क) फल—वन, फलवत्। (ख) रक्ष्—नम्, भवतिवत्।

व्याकरण (लट् मध्यमपुरुष, कारक-परिचय)

१. फलम् फले फलानि प्रथमा (कर्ता)
फलम् ,, ,, द्वितीया (कर्म)

संक्षिप्तरूप (अकारान्त नपुं०) अम् ए आनि प्र० ,, ,, ,, द्वि०

पुस्तक आदि के रूप इसी प्रकार चलेंगे। जैसे—पुस्तकम् पुस्तके पुस्तकानि। परन्तु पुष्प और पत्र में आनि के स्थान पर 'आणि' लगेगा—पुष्पाणि, पत्राणि।

२. 'भू' (लट्, मध्यमपुरुष)
भवसि भवथः भवथ म० पु०

संक्षिप्तरूप—असि अथः अथ म० पु० म० पु० एक० में असि, द्वि० में अथः, बहु० में अथ लगेगा।

रक्ष् आदि के रूप इसी प्रकार चलेंगे। जैसे—रक्षसि, वदसि, पचसि, पतसि, नमसि आदि।

३. संस्कृत में तीन वचन होते हैं—एकवचन, द्विवचन, बहुवचन। एक के लिए एकवचन (एक०), दो के लिए द्विवचन (द्वि०), तीन या अधिक के लिए बहुवचन (बहु०)।

४. तीन पुरुष होते हैं—(१) प्रथम (या अन्य) पुरुष (प्र० पु० या प्र०) अर्थात् वह, वे दोनों, वे सब, किसी व्यक्ति या वस्तु का नाम। (२) मध्यम पुरुष (म० पु० या म०) अर्थात् तू, तुम दोनों, तुम सब। (३) उत्तम पुरुष (उ० पु० या उ०) अर्थात् मैं, हम दोनों, हम सब। ये नाम स्मरण कर लें।

५. संस्कृत में संबोधनसहित ८ विभक्तियाँ (कारक) होती हैं। उनके नाम और चिह्न ये हैं:—(षष्ठी को कारक नहीं माना जाता है। संबोधन प्रथमा का ही भेद है)।

विभक्ति	कारक	चिह्न	विभक्ति	कारक	चिह्न
(१) प्रथमा (प्र०)	कर्ता	–, ने	(५) पंचमी (पं०)	अपादान	से
(२) द्वितीया (द्वि०)	कर्म	को	(६) षष्ठी (ष०)	संबन्ध	का, के, की
(३) तृतीया (तृ०)	करण	ने, से, द्वारा	(७) सप्तमी (स०)	अधिकरण	में, पर
(४) चतुर्थी (च०)	संप्रदान	के लिए	(८) संबोधन (सं०)	संबोधन	हे, अये, भोः

नियम ७—(अचूहीनं परेण संयोज्यम्) हल् व्यंजन आगे के स्वर से मिल जाता है। (यह नियम ऐच्छिक है)। जैसे—त्वम् + अद्य = त्वमद्य। यूयम् + इदानीम् = यूयमिदानीम्।

अभ्यास २

१. उदाहरण वाक्यः—१. तू कहता है—त्वं वदसि। २. तुम दोनों कहते हो—युवां वदथः। ३. तुम लोग कहते हो—यूयं वदथ। ४. त्वम् ईश्वरं नमसि। ५. युवां भोजनं पचथः। ६. यूयं पुस्तकानि पठथ। ७. त्वमद्य पुस्तकं पठसि। ८. यदा यूयं गच्छथ, तदा सः पत्रं लिखति। ९. त्वं राज्यं रक्षसि। १०. यूयं पुष्पाणि रक्षथ। ११. त्वं गृहं गच्छसि।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. तू पढ़ता है। २. तू पत्र लिखता है। ३. तू भोजन पकाता है। ४. तू राज्य की रक्षा करता है। ५. तू फल की रक्षा करता है। ६. तू सत्य बोलता है। ७. तू घर जाता है। ८. तू असत्य बोलता है। ९. तू राजा को प्रणाम करता है।

(ख) १०. तुम दोनों यहाँ आते हो। ११. तुम दोनों कब भोजन बनाते हो? १२. तुम दोनों अब गाँव जाते हो। १३. आप दोनों अब जा रहे हैं। १४. दो पत्ते गिर रहे हैं।

(ग) १५. तुम लोग राज्य की रक्षा करते हो। १६. तुम लोग ईश्वर को प्रणाम करते हो। १७. तुम लोग पुस्तक पढ़ते हो। १८. अब तुम लोग हँसते हो। १९. तुम लोग पाठ पढ़ रहे हो। २०. तुम लोग पत्र लिखते हो।

३.	अशुद्धवाक्य	शुद्धवाक्य	नियम
(१)	त्वं राज्यस्य रक्षसि।	त्वं राज्यं रक्षसि।	४
(२)	युवाम् आगच्छथ।	युवामागच्छथः।	१
(३)	भवन्तौ गच्छथः।	भवन्तौ गच्छतः।	३
(४)	पत्रानि पतथ।	पत्राणि पतन्ति।	शब्दरूप, १

४. शुद्ध करो तथा नियम बताओः—त्वं पठति। युवां गच्छतः। यूयं लिखन्ति। यूयं वदसि। युवां पतथ। त्वं भोजनः पचति। भवान् सत्यः वदति। भवान् रक्षसि। यूयं राज्यः रक्षथः। त्वं राज्यस्य रक्षसि।

५. अभ्यास (संस्कृत में)—**(क)** २ (क) के वाक्यों को द्विवचन और बहुवचन में बदलो। **(ख)** २ (ख) के वाक्यों को एकवचन और द्विवचन में बदलो। **(ग)** रक्ष्, वद्, पच्, पत्, गम्, लिख् के म० पु० के रूप लिखो। **(घ)** पुस्तक, पुष्प, पत्र, जल, राज्य के प्रथमा और द्वितीया में रूप लिखो।

६. वाक्य बनाओः—सत्यम्, राज्यम्, इदानीम्, कदा, तदा, यदा।

शब्दकोष—५० + २५ = ७५) **अभ्यास ३** (व्याकरण)

(क) अहम् (मैं), आवाम् (हम दोनों), वयम् (हम सब) (सर्वनाम)। रमा (लक्ष्मी), बाला (लड़की), कन्या (लड़की), लता (लता), कथा (कथा, कहानी), क्रीडा (खेल), पाठशाला (पाठशाला), विद्या (विद्या)। (११)। (ख) दृश् (देखना), स्था (रुकना), सद् (बैठना), पा (पीना), घ्रा (सूँघना), स्मृ (स्मरण करना), जि (जीतना)। (७)। (ग) इतः (यहाँ से), ततः (वहाँ से), यतः (जहाँ से), कुतः (कहाँ से), किम् (क्या), कथम् (क्यों, कैसे), न (नहीं)। (७)।

सूचना—(क) रमा—विद्या, रमावत्। (ख) दृश्—जि, भवतिवत्।

व्याकरण (लट्, उत्तमपुरुष, वर्णमाला)

१. रमा रमे रमाः प्रथमा (कर्ता) रमाम् ,, ,, द्वितीया (कर्म)	**संक्षिप्तरूप** आ ए आः प्र० आकारान्त स्त्री० आम् ,, ,, द्वि०

बाला आदि के रूप संक्षिप्तरूप लगाकर बनाइये। जैसे—बाला बाले बालाः, बालाम् आदि।

२. 'भू' (लट्, उत्तमपुरुष) भवामि भवावः भवामः उ० पु०	**संक्षिप्तरूप**—आमि आवः आमः उ० पु० उ० पु० एक० में आमि, द्वि० में आवः, बहु० में आमः लगेगा।

सूचना—(विशेष) लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में इन धातुओं के ये रूप होते हैं—दृश् > पश्य्, पश्यति, पश्यामि। स्था > तिष्ठ्, तिष्ठन्ति। सद् > सीद्, सीदति। पा > पिब्, पिबति। घ्रा > जिघ्र्, जिघ्रति आदि। गम् > गच्छ्, गच्छति। आगम् > आगच्छ्, आगच्छति। स्मृ का स्मरति आदि। जि का जयति।

३. वर्णमाला—कोष्ठ में पारिभाषिक नाम हैं, इन्हें शुद्ध स्मरण कर लें।

(क) स्वर—अ, इ, उ, ऋ, ऌ (ह्रस्व) ए, ऐ, ओ, औ (मिश्रित)
आ, ई, ऊ, ॠ (दीर्घ)

(ख) व्यंजन—क, ख, ग, घ, ङ (कवर्ग) च, छ, ज, झ, ञ (चवर्ग)
ट, ठ, ड, ढ, ण (टवर्ग) त, थ, द, ध, न (तवर्ग)
प, फ, ब, भ, म (पवर्ग) य, र, ल, व (अन्तःस्थ)
श, ष, स, ह (ऊष्म), ं (अनुस्वार) ँ (अनुनासिक) : (विसर्ग)

सूचना—वर्ग के प्रथम अक्षर का अर्थ है—क च ट त प। द्वितीय—ख छ ठ थ फ। तृतीय—ग ज ड द ब। चतुर्थ—घ झ ढ ध भ। पंचम—ङ ञ ण न म। सन्धि-नियमों में प्रथम आदि के स्थान पर क्रमशः १, २, ३, ४, ५ गिनती दी जाएगी।

नियम ८—'स्मृ' धातु के साथ साधारण स्मरण में द्वितीया होती है। खेदपूर्वक स्मरण में षष्ठी। (देखो अभ्यास १४)। जैसे—पाठं स्मरति, ईश्वरस्य स्मरति।

अभ्यास ३

१. उदाहरण-वाक्य—१. मैं पढ़ता हूँ—अहं पठामि। २. हम दोनों पढ़ते हैं—आवां पठावः। ३. हम लोग पढ़ते हैं—वयं पठामः। ४. वयं विद्यां पठामः। ५. अहं कन्यां पश्यामि। ६. आवां क्रीडां पश्यावः। ७. अहं पुष्पं जिघ्रामि। ८. वयं जलं पिबामः। ९. वयमत्र तिष्ठामः। १०. अहं कथां स्मरामि।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. मैं लिखता हूँ। २. मैं यहाँ बैठता हूँ। ३. मैं वहाँ से आता हूँ। ४. मैं जहाँ से आता हूँ, वहीं जाता हूँ। ५. मैं खेल देखता हूँ। ६. मैं विद्या पढ़ता हूँ। ७. मैं क्या देखता हूँ? ८. मैं लड़की को देखता हूँ। ९. मैं ईश्वर का स्मरण करता हूँ। १०. मैं राज्य जीतता हूँ। ११. मैं जल पीता हूँ। १२. मैं फूल सूँघता हूँ।

(ख) १३. हम दोनों पाठशाला जाते हैं। १४. हम दोनों लता देखते हैं। १५. हम लोग सत्य बोलते हैं। १६. हम लोग यहाँ क्यों बैठे हैं?

(ग) १७. वह क्या याद करता है? १८. वे लोग जल क्यों नहीं पीते हैं? १९. तुम कहाँ से आ रहे हो? २०. हम वहाँ से नहीं आ रहे हैं।

३.	अशुद्धवाक्य	शुद्धवाक्य	नियम
(१)	अहं स्थामि।	अहं तिष्ठामि।	धातुरूप
(२)	वयं दृश्यामः।	वयं पश्यामः।	,,
(३)	वयं घ्रावः।	वयं जिघ्रामः।	,,
(४)	अहं जलं पामि।	अहं जलं पिबामि।	,,
(५)	वयं सदामः।	वयं सीदामः।	,,

४. शुद्ध करो तथा नियम बताओ—अहं दृशामि। आवां स्थावः। वयं पामः। अहं सदामि। पाठशालायां गमामि। वयं पुष्पं घ्रामः। वयं जलं पामि।

५. अभ्यास—(क) २ (क) के वाक्यों को बहुवचन में बनाओ। (ख) २ (ख) को एकवचन में बनाओ। (ग) दृश्, सद्, स्था, पा, घ्रा के लट् के तीनों पुरुष के पूरे रूप बताओ। (घ) बाला, लता, विद्या, कथा, क्रीडा के प्र० और द्वि० के रूप बताओ।

६. वाक्य बनाओ—पश्यामि, तिष्ठामि, सीदामि, पिबामि, जिघ्रामि, इतः, ततः, कुतः।

७. रिक्त स्थानों में लट् उ० पु० का रूप रक्खो—१. अहं फलं (दृश्)। २. आवामत्र (सद्)। ३. वयं जलं (पा)। ४. आवां पुष्पाणि (घ्रा)। ५. वयमीश्वरं (स्मृ)।

शब्दकोष—७५ + २५ = १००) **अभ्यास ४** (व्याकरण)

(ख) कृ (करना), अस् (होना)। चुर् (चुराना), चिन्त् (चिन्तन करना, सोचना), कथ् (कहना), भक्ष् (खाना)। (६)। (ग) इत्थम् (ऐसे), तथा (वैसे), यथा (जैसे), कथम् (कैसे), अपि (भी), एव (ही), च (और), किन्तु (किंतु), परन्तु (परन्तु)। (९)। (घ) एकः (एक), द्वौ (दो), त्रयः (तीन), चत्वारः (चार), पञ्च (पाँच), षट् (छः), सप्त (सात), अष्ट (आठ), नव (नौ), दश (दस)। (१०)।

व्याकरण (कृ, अस्, लट्; प्रत्याहार बनाना)

१. कृ (करना) लट्

करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति	प्र० पु०
करोषि	कुरुथः	कुरुथ	म० पु०
करोमि	कुर्वः	कुर्मः	उ० पु०

२. अस् (होना) लट्

अस्ति	स्तः	सन्ति	प्र० पु०
असि	स्थः	स्थ	म० पु०
अस्मि	स्वः	स्मः	उ० पु०

३. चुर् आदि धातुओं के निम्नलिखित रूप बनाकर 'भवति' के तुल्य रूप चलेंगे—
चुर् > चोरयति, चिन्त् > चिन्तयति, कथ् > कथयति, भक्ष् > भक्षयति।

४. प्रत्याहार बनाने के लिए इन १४ माहेश्वर सूत्रों को शुद्ध स्मरण कर लें—

१. अइउण्। २. ऋलृक्। ३. एओङ्। ४. ऐऔच्। ५. हयवरट्। ६. लण्। ७. ञमङणनम्। ८. झभञ्। ९. घढधष्। १०. जबगडदश्। ११. खफछठथचटतव्। १२. कपय्। १३. शषसर्। १४. हल्।

इन सूत्रों में पूरी वर्णमाला इस प्रकार दी हुई है—पहले स्वर, फिर अन्तःस्थ, फिर क्रमशः वर्ग के पंचम, चतुर्थ, तृतीय, द्वितीय, प्रथम अक्षर और अन्त में ऊष्म है।

५. 'प्रत्याहार' का अर्थ है संक्षेप में कथन। इन सूत्रों से प्रत्याहार बनाने के नियम ये हैं—(क) सूत्रों के अन्तिम अक्षर (ण्, क् आदि) प्रत्याहार में नहीं गिने जाते हैं। अन्तिम अक्षर प्रत्याहार बनाने के साधन हैं। (ख) जो प्रत्याहार बनाना हो, उसके लिए प्रथम अक्षर सूत्र में जहाँ हो, वहाँ ढूँढ़ना चाहिए। अन्तिम अक्षर सूत्र के अन्तिम अक्षरों में ढूँढ़िए। बीच के सारे अक्षर उस प्रत्याहार में माने जाएँगे। जैसे—'अल्' प्रत्याहार—अ से लेकर अन्त तक। प्रारम्भ में अ है, अन्तिम सूत्र में ल् है। अल् = पूरी वर्णमाला। अच् = अ से ऐऔच् के च् तक, अर्थात् सारे स्वर। हल् = ह से हल् के ल् तक, अर्थात् सारे व्यंजन। अक् = अ इ उ ऋ लृ। इक् = इ उ ऋ लृ। यण् = य व र ल। शर् = श ष स।

नियम ९—'च' (और) का प्रयोग हिन्दी के प्रयोग से एक शब्द के बाद कीजिए। जैसे—फल और फूल—फलं पुष्पं च। फलं च पुष्पम्, अशुद्ध है।

अभ्यास ४

१. उदाहरण-वाक्यः—१. एकः मनुष्यः अस्ति। २. द्वौ बालकौ स्तः। ३. त्रयः नृपाः सन्ति। ४. चत्वारः ग्रामाः। ५. पञ्च पुष्पाणि। ६. षट् फलानि। ७. सप्त पुस्तकानि। ८. अष्ट बालाः। ९. स नव क्रीडाः करोति। १०. तत्र दश एव नराः सन्ति। ११. वयं कथां क्रीडां च कुर्मः। १२. स दश पुस्तकानि चोरयति। १३. स ईश्वरं चिन्तयति। १४. अत्र पुस्तकं फलं च स्तः।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. ईश्वर एक ही है। २. दो बालक फूल सूँघते हैं। ३. तीन आदमी खाना खाते हैं। ४. चार बालक क्रीड़ा करते हैं। ५. चोर पाँच पुस्तकें चुराते हैं। ६. रमा छः कहानियाँ कहती है। ७. वे सातों बालक ईश्वर का चिन्तन करते हैं। ८. यहाँ आठ लताएँ हैं। ९. वहाँ नौ आदमी भोजन करते हैं। १०. वहाँ दस पुस्तकें हैं।

(ख) ११. वह है। १२. तुम कैसे हो? १३. मैं इस प्रकार खाता हूँ। १४. वह क्या सोचता है? १५. जैसी कथा है, वह वैसी ही कहता है। १६. तुम कैसे पढ़ते हो?

(ग) १७. वे ऐसे सोचते हैं। १८. हम कथा कहते हैं। १९. हम खेल भी करते हैं और भोजन भी करते हैं। २०. तुम सब कथा ही कहते हो, परन्तु वे सोचते भी हैं।

३. अशुद्धवाक्य	शुद्धवाक्य	नियम
(१) द्वौ बालकाः।	द्वौ बालकौ।	१
(२) चत्वारः नरः।	चत्वारः नराः।	१
(३) अष्ट लताः अस्ति।	अष्ट लताः सन्ति।	१
(४) दश पुस्तकम् अस्ति।	दश पुस्तकानि सन्ति।	१
(५) च भोजनम् अपि०।	भोजनं च अपि०।	९

४. शुद्ध करो तथा नियम बताओ—ईश्वरः सन्ति। वयम् अस्मि। अह स्मः। त्वं स्थ। यूयम् असि। त्वं करोति। स कुर्वन्ति। अहं कुर्मः। वयं करोमि। रामः च कृष्णः पठति। पुष्पं च फलम्। स करोषि। आवां कुरुतः। यूयं कुरुथ।

५. अभ्यासः—(क) १ से १० तक गिनती के १० वाक्य बनाओ। (ख) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ग) २ (ग) को एकवचन बनाओ। (घ) अस् और कृ के लट् के रूप बताओ। (ङ) ये प्रत्याहार बनाओ—अक्, अच्, अट्, एङ्, एच्, ऐच्, यण्, हश्, झश्, झल्, जश्, छव्, चर्, शर्।

६. वाक्य बनाओः—त्रयः, चत्वारः, दश, अस्ति, सन्ति, अस्मि, स्मः, करोति, करोमि।

७. रिक्त स्थान भरोः—(लट् लकार)—१. अहमत्र (अस्)। २. ते तत्र (अस्)। ३. यूयमिह (अस्)। ४. ते किं (कृ)। ५. अहं भोजनं (कृ)। ६. त्वं तत्र किं (कृ)। ७. यूयं किं (कृ)।

शब्दकोश—१०० + २५ = १२५) **अभ्यास ५** (व्याकरण)

(क) जनकः (पिता), पुत्रः (पुत्र), सूर्यः (सूर्य), चन्द्रः (चन्द्रमा), सज्जनः (सज्जन), दुर्जनः (दुर्जन), प्राज्ञः (विद्वान्), लोकः (संसार, लोग), उपाध्यायः (गुरु), शिष्यः (शिष्य), प्रश्नः (प्रश्न), क्रोशः (कोस), धर्मः (धर्म), सागरः (समुद्र)। (१४)। (ख) तुद् (दुःख देना), इष् (चाहना), स्पृश् (छूना), प्रच्छ् (पूछना)। (४)। (ग) अभितः (दोनों ओर), परितः (चारों ओर), समया (समीप), निकषा (समीप), हा (दुःख, खेद), प्रति (ओर), अनु (ओर, पीछे) (७)।

सूचना—(क) जनक—सागर, रामवत्। (ख) तुद्—प्रच्छ्, भवतिवत्।

व्याकरण (राम, लट्, प्रथमा, संबोधन, द्वितीया)

१. शब्द रूप—राम शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्दरूप सं० १)। जनक आदि शब्दों में संक्षिप्त रूप लगाकर रूप बनावें। नियम १६ इन शब्दों में लगेगा—राम, पुत्र, सूर्य, चन्द्र, शिष्य, धर्म, सागर। सभी अकारान्त पुंलिग शब्द राम के तुल्य चलेंगे।

२. धातुरूप—'भू'—लट् (वर्तमान) संक्षिप्तरूप एक० द्वि० बहु०

भवति	भवतः	भवन्ति	प्र० पु०	अति	अतः	अन्ति	प्र० पु०
भवसि	भवथः	भवथ	म० पु०	असि	अथः	अथ	म० पु०
भवामि	भवावः	भवामः	उ० पु०	आमि	आवः	आमः	उ० पु०

सूचना—तुद् आदि के रूप भवति के तुल्य चलेंगे। जैसे—तुदति, इच्छति, स्पृशति, पृच्छति। लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में इष् > इच्छ् और प्रच्छ् > पृच्छ् हो जाते हैं।

कारक (प्रथमा, संबोधन, द्वितीया)

***नियम १०—कर्ता (व्यक्तिनाम, वस्तुनाम आदि) में प्रथमा होती है। जैसे—रामः पठति।**

नियम ११—किसी को संबोधन करने (पुकारने) में 'संबोधन' विभक्ति होती है। जैसे—हे राम! हे कृष्ण!

नियम १२—(कर्तुरीप्सिततमं कर्म) कर्ता जिसको (व्यक्ति, वस्तु या क्रिया को) बहुत चाहता है, उसे कर्म कहते हैं।

***नियम १३—(कर्मणि द्वितीया) कर्म में द्वितीया होती है। जैसे—रामः विद्यालयं गच्छति। स पुस्तकं पठति। स रामं पश्यति। स फलम् इच्छति। ते प्रश्नं पृच्छन्ति।**

***नियम १४—अभितः, परितः, समया, निकषा, हा, प्रति, अनु के साथ द्वितीया होती है। जैसे—ग्रामम् अभितः (गाँव के दोनों ओर)। वनं निकषा समया वा (वन के समीप)।**

***नियम १५—गति (चलना, हिलना, जाना) अर्थवाली धातुओं के साथ द्वितीय होती है। जैसे—ग्रामं गच्छति। वनं विचरति। तृप्तिं गच्छति। स्मृतिं गच्छति।**

अभ्यास ३

१. उदाहरण-वाक्यः—१. राम गाँव को जाता है—रामः ग्रामं गच्छति। २. ग्रामम् अभितः (गाँव के दोनों ओर) जलम् अस्ति। ३. ग्रामं परितः (गाँव के चारों ओर) वनम् अस्ति। ४. ग्रामं समया (गाँव के पास) पाठशाला अस्ति। ५. विद्यालयं निकषा (विद्यालय के पास) वनम् अस्ति। ६. दुर्जन के लिए खेद है—हा दुर्जनम्। ७. विद्यालयं प्रति (विद्यालय की ओर) गच्छति। ८. रामम् अनु (राम के पीछे) गच्छति। ९. गृहं गच्छति। १०. क्रोशं गच्छति। ११. जलं पिबति। १२. पुस्तकं पठति।

२. संस्कृत बनाओः—१. बालक विद्यालय जाता है। २. बालिका विद्यालय की ओर (प्रति) जाती है। ३. कन्या फल चाहती है। ४. गुरु प्रश्न पूछता है। ५. पुत्र फूल छूता है। ६. पिता सूर्य को देखता है। ७. पुत्र चन्द्रमा को चाहता है। ८. दुर्जन सज्जन को दुःख देता है। ९. पुत्र गाँव के पास बैठा है। १०. विद्वान् धर्म की ओर (अनु) जाता है। ११. गुरु के पास शिष्य बैठा है। १२. शिष्य समुद्र को (के विषय में) पूछता है। १३. संसार ईश्वर को नमस्कार करता है। १४. हे पुत्र! पिता कहाँ है? १५. हे दुर्जन! धर्म को क्यों नहीं स्मरण करता? १६. राम घर कब जाता है? १७. फूल के चारों ओर जल है। १८. विद्या धर्म की ओर जाती है। १९. विद्यालय के दोनों ओर फल और फूल हैं। २०. राजा दुर्जन को दुःख देता है।

३. अशुद्धवाक्य	शुद्धवाक्य	नियम
(१) विद्यालये गच्छति।	विद्यालयं गच्छति।	१५
(२) विद्यालयस्य प्रति।	विद्यालयं प्रति।	१४
(३) ग्रामस्य निकषा (समया०)	ग्रामं निकषा (समया०)।	१४
(४) धर्मस्य अनुगच्छति।	धर्मम् अनुगच्छति।	१४
(५) पुष्पस्य परितः।	पुष्पं परितः०।	१४

४. अभ्यास :—(क) २ के वाक्यों का बहुवचन बनाओ। (ख) तुद्, इष्, स्पृश्, प्रच्छ्, पठ्, लिख्, गम्, आगम् के लट् के पूरे रूप लिखो। (ग) राम के तुल्य १० नये शब्दों के रूप बनाओ।

५. वाक्य बनाओः—अभितः, परितः, समया, निकषा, प्रति, अनु, इच्छति, पृच्छति।

६. रिक्त स्थान भरोः—१. ग्रामम्...जलमस्ति। २. विद्यालयं...वनमस्ति। ३. जनकः सत्यम्...गच्छति। ४. त्वं धनम्...। ५. वयं प्रश्नं...। ६. ईश्वरः लोकं...।

शब्दकोष—१२५ + २५ = १५०) **अभ्यास ६** (व्याकरण)

(क) धनम् (धन), नगरम् (नगर), आसनम् (आसन), अध्ययनम् (पढ़ना), ज्ञानम् (ज्ञान), कार्यम् (कार्य), ओदनम् (चावल), वर्षम् (वर्ष), दिनम् (दिन)। (९)। (ख) खाद् (खाना), धाव् (दौड़ना), क्रीड् (खेलना), चल् (चलना)। अधिशी (सोना), अधिस्था (बैठना), अध्यास् (बैठना) (७)। (ग) उभयतः (दोनों ओर), सर्वतः (चारों ओर), धिक् (धिक्कार), उपरि (ऊपर), अधः (नीचे), अधि (अन्दर), अन्तरा (बीच में), अन्तरेण (बिना), विना (बिना)। (९)।

सूचना—(क) धन—दिन, गृहवत्। (ख) खाद्—चल्, भवतिवत्।

व्याकरण (गृह, लोट्, द्वितीया)

१. शब्दरूप—'गृह' शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्दरूप सं० २०)। संक्षिप्त रूप लगाकर धन आदि के रूप बनावें। सभी अकारान्त नपुंसक शब्द गृह के तुल्य चलेंगे।

नियम १६—र् और ष् के बाद न् को ण् हो जाता है, यदि अट् (स्वर, ह, य, व, र), कवर्ग, पवर्ग, आ, न्, बीच में हों तो भी। जैसे—इन शब्दों में यह नियम लगेगा—गृह, नगर, कार्य, वर्ष, पुष्प, पत्र। अतः इनमें प्र० और द्वि० बहु० में 'आणि', तृ० एक० में 'एण', ष० बहु० में 'आणाम्' लगेगा।

१. धातुरूप—'भू' लोट् (आज्ञा अर्थ)

भवतु	भवताम्	भवन्तु	प्र० पु०
भव	भवतम्	भवत	म० पु०
भवानि	भवाव	भवाम	उ० पु०

संक्षिप्तरूप एक०	द्वि०	बहु०	
अतु	अताम्	अन्तु	प्र० पु०
अ	अतम्	अत	म० पु०
आनि	आव	आम	उ० पु०

सूचना—खाद् आदि के रूप भवतु के तुल्य चलेंगे। जैसे—खादतु, धावतु, क्रीडतु, चलतु, कथयतु, भक्षयतु। लट् में अधिशी > अधिशेते, अधिस्था > अधितिष्ठति, अध्यास् > अध्यास्ते।

कारक (द्वितीया)

*नियम १७—उभयतः, सर्वतः, धिक्, उपर्युपरि, अधोऽधः और अध्यधि के साथ द्वितीया होती है। जैसे—ग्रामम् उभयतः। ग्रामं सर्वतः। धिक् नास्तिकम्।

*नियम १८—(अन्तरान्तरेण युक्ते) अन्तरा, अन्तरेण और विना के साथ द्वितीया होती है। जैसे—गङ्गां यमुनां च अन्तरा प्रयागः अस्ति (गंगा-यमुना के बीच में प्रयाग है)। ज्ञानमन्तरेण न सुखम्। श्रमं विना न धनम्।

*नियम १९—(अधिशीङ्स्थासां कर्म) अधिशी, अधिस्था और अध्यास् धातु के साथ द्वितीया होती है। जैसे—आसनम् अधिशेते, अधितिष्ठति, अध्यास्ते वा।

*नियम २०—(कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे) समय और स्थान के दूरवाची शब्दों में द्वितीया होती है। जैसे—दश दिनानि (१० दिन तक) लिखति। पञ्च वर्षाणि (५ वर्ष तक) पठति। क्रोशं (कोसभर) गच्छति।

अभ्यास ६

१. उदाहरण-वाक्य——१. वह पुस्तक पढ़े—सः पुस्तकं पठतु। २. तू गाँव को जा——त्वं ग्राम गच्छ। ३. मैं भोजन खाऊँ—अहं भोजनं खादानि। ४. आसन पर बैठता है—आसनम् अधितिष्ठति, अध्यास्ते वा। ५. घर में सोता है—गृहम् अधिशेते। ६. ग्रामम् उभयतः (गाँव के दोनों ओर) जलम् अस्ति। ७. विद्यालयं सर्वतः (विद्यालय के चारों ओर) पुष्पाणि सन्ति। ८. धिक् दुर्जनम्। ९. लोकम् उपर्युपरि (संसार के ऊपर-ऊपर), अधोऽधः (नीचे-नीचे), अध्यधि (अन्दर-अन्दर) ईश्वरः अस्ति। १०. क्रोशं चलतु।

२. संस्कृत बनाओ——(क) १. वह पुस्तक पढ़े। २. वह खाना खाये। ३. वह दौड़े। ४. वह खेले। ५. वह यहाँ से चले। (ख) ६. तू धन की इच्छा कर। ७. तू नगर को जा। ८. तू फूलों को देख। ९. तू ज्ञान की इच्छा कर। १०. तू घर के कार्य को ही देख। (ग) ११. मैं चावल पकाऊँ। १२. मैं दौड़ूँ। १३. मैं खेलूँ। १४. मैं चलूँ। १५. मैं फल खाऊँ। (घ) १६. नगर के दोनों ओर वन हैं। १७. घर के चारों ओर फल हैं। १८. दुर्जन को धिक्कार। १९. संसार के ऊपर-ऊपर सूर्य है। २०. गाँव के नीचे-नीचे जल है। २१. लोक के अन्दर-अन्दर राम हैं। २२. गाँव और विद्यालय के बीच में (अन्तरा) जल है। २३. धर्म के बिना (अन्तरेण, विना) सुख नहीं। २४. बालक आसन पर बैठता है। २५. पुत्र घर में सोता है। २६. वह दश वर्ष तक अध्ययन करता है। २७. वह पाँच दिन तक लिखता है। २८. वह कोस भर चलता है।

३.	अशुद्धवाक्य	शुद्धवाक्य	नियम
	(१) त्वं पुष्पानि पश्यतु।	त्वं पुष्पाणि पश्य।	१६, १
	(२) नगरस्य उभयतः०।	नगरम् उभयतः०।	१७
	(३) लोकस्य उपर्युपरि०।	लोकम् उपर्युपरि०।	१७
	(४) धर्मस्य अन्तरेण (विना)०।	धर्मम् अन्तरेण (विना)०।	१८
	(५) आसने अधितिष्ठति।	आसनम् अधितिष्ठति।	१९

४. अभ्यास——(क) २ (क) (ख) (ग) को बहुवचन बनाओ। (ख) पूरे रूप बताओ——ज्ञान, धन, कार्य, आसन, वर्ष, दिन, फल, पुस्तक, गृह। (ग) लोट् के पूरे रूप बताओ—पठ्, लिख्, गम्, वद्, दश्, स्था, पा, कथ्, भक्ष्, खाद्, धाव्, क्रीड्, चल्।

५. वाक्य बनाओ——उभयतः, सर्वतः, अन्तरा, अन्तरेण, अधिशेते, अधितिष्ठति, अध्यास्ते।

६. रिक्त स्थलों को भरो:——१. ···उभयतः जलम्। २. ···सर्वतः पुष्पाणि सन्ति। ३. ···अन्तरेण न सुखम्। ४. ···च अन्तरा प्रयागः। ५. ···अधिशेते। ६. ··· अध्यास्ते।

शब्दकोष—१५० + २५ = १७५) अभ्यास ७ (व्याकरण)

(क) अजा (बकरी), वसुधा (भूमि), सुधा (अमृत), जटा (जटा), क्षमा (क्षमा)। तण्डुलः (चावल) दुग्धम् (दूध), शतम् (सौ या सौ रु०)। (८)। (ख) भ्रम् (घूमना), रुह् (चढ़ना, उगना), त्यज् (छोड़ना), वस् (रहना), नी (ले जाना), हृ (ले जाना), कृष् (खोदना, खींचना), वह् (ले जाना, ढोना)। दुह् (दुहना), याच् (माँगना), दण्ड् (दंड देना), रुध् (रोकना), चि (चुनना), ब्रू (बोलना), शास् (बताना), मथ् (मथना), मुष् (चुराना)। (१७)।

सूचना—(क) अजा—क्षमा, रमावत्। तण्डुल—रामवत्। (ख) भ्रम्—वह्, भवतिवत्।

व्याकरण (रमा, लट्, द्वितीया द्विकर्मक)

१. शब्दरूप—'रमा' के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्दरूप सं० १३)। संक्षिप्तरूप लगाकर अजा आदि के रूप बनाओ। नियम १६ इन शब्दों में लगेगा—रमा, क्षमा। सभी आकारान्त स्त्रीलिंग शब्द रमा के तुल्य चलेंगे।

२. धातुरूप—'भू'—लृट् (भविष्यत्)				संक्षिप्तरूप एक०	द्वि०	बहु०	
भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति	प्र.पु.	(इ) स्यति	(इ) स्यतः	(इ) स्यन्ति	प्र.पु.
भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ	म.पु.	(इ) स्यसि	(इ) स्यथः	(इ) स्यथ	म.पु.
भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः	उ.पु.	(इ) स्यामि	(इ) स्यावः	(इ) स्यामः	उ.पु.

सूचना—१. (क) इन पूर्वोक्त धातुओं में 'इष्यति' ही लगाकर रूप बनावें—पठिष्यति, लेखिष्यति, गमिष्यति, हसिष्यति, आगमिष्यति, रक्षिष्यति, वदिष्यति, पतिष्यति, स्मृ > स्मरिष्यति, कृ > करिष्यति, अस् > भविष्यति, चुर् > चोरयिष्यति, चिन्त् > चिन्तयिष्यति, कथ् > कथयिष्यति, भक्ष् > भक्षयिष्यति, इष् > एषिष्यति, खाद् > खादिष्यति, धाविष्यति, क्रीडिष्यति, चलिष्यति, भ्रमिष्यति, हृ > हरिष्यति, ज्वलिष्यति, चरिष्यति, वृष् > वर्षिष्यति।

(ख) इनमें 'स्यति' लगेगा—पच् > पक्ष्यति, नम् > नंस्यति, दृश् > द्रक्ष्यति, सद् > सत्स्यति, स्था > स्थास्यति, पा > पास्यति, घ्रा > घ्रास्यति, जि > जेष्यति, तुद् > तोत्स्यति, स्पृश् > स्प्रक्ष्यति, प्रच्छ् > प्रक्ष्यति, रुह् > रोक्ष्यति, त्यज् > त्यक्ष्यति, वस् > वत्स्यति, नी > नेष्यति, कृष् > कर्क्ष्यति, वह् > वक्ष्यति, दह् > धक्ष्यति, तप् > तप्स्यति, गै > गास्यति।

२. 'नी' आदि के क्रमशः लट् में ऐसे रूप चलेंगे—नयति, हरति, कर्षति, वहति (भवतिवत्)। दोग्धि, याचते, दण्डयति, रुणद्धि, चिनोति, ब्रवीति, शास्ति, मथ्नाति, मुष्णाति।

नियम २१—ये धातुएँ द्विकर्मक हैं। (इन अर्थों की अन्य धातुएँ भी)। इनके साथ दो कर्म होते हैं—दुह्, याच्, पच्, दण्ड्, रुध्, प्रच्छ्, चि, ब्रू, शास्, जि, मथ्, मुष्, नी, हृ, कृष्, वह्।

अभ्यास ७

१. **उदाहरण-वाक्यः**—१. वह पढ़ेगा—सः पठिष्यति । २. तू जाएगा —त्वं गमिष्यसि । ३. मैं आऊँगा—अहम् आगमिष्यामि । ४. वह देखेगा—सः द्रक्ष्यति । ५. बकरी का दूध दुहता है—अजां दुग्धं दोग्धि । ६. राजा से क्षमा माँगता है—नृपं क्षमां याचते । ७. चावलों का भात पकाता है—तण्डुलान् ओदनं पचति । ८. राजा दुर्जन पर सौ रुपए दण्ड लगाता है—नृपः दुर्जनं शतं दण्डयति । ९. घर में बकरी को रोकता है—गृहम् अजां रुणद्धि । १०. गुरु से धर्म पूछता है—उपाध्यायं धर्मं पृच्छति । ११. लता से फूलों को चुनता है—लतां पुष्पाणि चिनोति । १२. पुत्र को धर्म बताता है—पुत्रं धर्मं ब्रवीति, शास्ति वा । १३. राम से सौ रुपए जीतता है—रामं शतं जयति । १४. समुद्र से अमृत को मथता है—सागरं सुधां मथ्नाति । १५. राम के सौ रुपए चुराता है—रामं शतं मुष्णाति । १६. बकरी को गाँव में ले जाता है—अजां ग्रामं नयति, हरति, कर्षति, वहति वा ।

२. **संस्कृत बनाओः**—(क) १. वह लिखेगा । २. वह पढ़ेगा । ३. वह हँसेगा । ४. वह ऊपर जायेगा । ५. वह नीचे जायेगा । ६. वह रक्षा करेगा । ७. वह बोलेगा । ८. वह पकायेगा । (ख) ९. तू गिरेगा । १०. तू नमस्कार करेगा । ११. तू देखेगा । १२. तू बैठेगा (स्था, सद्) । १३. तू जल पियेगा । १४. तू फूल सूँघेगा । १५. तू ईश्वर को स्मरण करेगा । १६. तू राज्य जीतेगा । (ग) १७. मैं धन नहीं चुराऊँगा । १८. मैं सोचूँगा । १९. मैं कथा कहूँगा (कथ्) । २०. मैं खाना खाऊँगा (भक्ष्) । २१. मैं धन चाहूँगा। २२. मैं फूल छूऊँगा । २३. मैं प्रश्न पूछूँगा । २४. मैं यहाँ रहूँगा । (घ) २५. वह राजा से भूमि माँगता है । २६. वह चावलों से भात पकायेगा । २७. वह पुत्र से प्रश्न पूछेगा । २८. वह शिष्य को सत्य बतायेगा (वद्) । २९. वह दुर्जन से सौ रुपए जीतेगा । ३०. वह नगर में बकरी को लायेगा । (नी, हृ, कृष्, वह्) ।

३. अशुद्धवाक्य	शुद्धवाक्य	नियम
(१) त्वं तिष्ठिष्यसि ।	त्वं स्थास्यसि ।	धातुरूप
(२) नृपात् वसुधां याचते ।	नृपं वसुधां याचते ।	२१
(३) नगरे अजां नेष्यति ।	नगरम् अजां नेष्यति ।	,,

४. **अभ्यासः**—(क) २ (क) (ख) (ग) को बहुवचन बनाओ । (ख) पूरे रूप लिखो—रमा, अजा, वसुधा, सुधा, गङ्गा, यमुना । (ग) लृट् के पूरे रूप लिखो—पठ्, लिख्, गम्, वद्, कृ, अस्, कथ्, भक्ष्, पच्, दृश्, स्था, पा, घ्रा, जि, प्रच्छ्, त्यज्, वस्, नी, वह् ।

५. **वाक्य बनाओ**—पास्यामि, द्रक्ष्यामि, स्थास्यामि, स्प्रक्ष्यति, प्रक्ष्यति, वत्स्यति, घ्रास्यति, जेष्यति, याचते, पचति, ब्रवीति, नयति ।

शब्दकोश—१७५ + २५ = २००) **अभ्यास ८** (व्याकरण)

(क) हरिः (विष्णु, सूर्य, किरण, सिंह, बन्दर), कविः (कवि), यतिः (संन्यासी), भूपतिः (राजा), सेनापतिः (सेनापति), प्रजापतिः (प्रजापति, ब्रह्मा), रविः (सूर्य), कपिः (बन्दर), मुनिः (मुनि), अग्निः (आग), गिरिः (पहाड़), मरीचिः (किरण)। मेघः (बादल), दण्डः (डंडा), कन्दुकः (गेंद)। (१५)। (ख) दह् (जलाना), ज्वल् (जलना), तप् (तपना, तपस्या करना), चर् (चलना, घूमना), वृष् (बरसना), गै (गाना)। (६)। (ग) सह, साकम्, सार्धम्, समम् (चारों का अर्थ है, साथ) (४)।

सूचना—(क) हरि—मरीचि, हरिवत्। मेघ—कन्दुक, रामवत्। (ख) दह—गै, भवतिवत्।

व्याकरण (हरि, लङ्, तृतीया)

१. शब्दरूप—हरि शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० २)। संक्षिप्तरूप लगाकर कवि आदि के रूप बनाओ। सभी इकारान्त पुलिंग शब्द हरिवत्। नियम १६ इन शब्दों में लगेगा—हरि, रवि, गिरि। जैसे—हरिणा, हरीणाम्।

***नियम २२—(पतिः समास एव) पति शब्द किसी शब्द के अन्त में समस्त होगा तो उसका रूप हरि के तुल्य चलेगा। जैसे—भूपतिना, भूपतये, भूपतेः आदि।**

२. धातुरूप 'भू' लङ् (भूतकाल)।

अभवत्	अभवताम्	अभवन्	प्र० पु०
अभवः	अभवतम्	अभवत	म० पु०
अभवम्	अभवाव	अभवाम	उ० पु०

संक्षिप्तरूप

	एक०	द्वि०	बहु०	
(धातु से	अत्	अताम्	अन्	प्र० पु०
पहले अ +)	अः	अतम्	अत	म० पु०
	अम्	आव	आम	उ० पु०

सूचना—लङ् में धातु से पहले 'अ' लगेगा, बाद में संक्षिप्तरूप। जैसे—अपठत्, अलिखत्, अदहत्, अज्वलत्, अपतत्, अचरत्, अवर्षत्, अगायत्। यदि धातु का प्रथम अक्षर स्वर होगा तो 'आ' लगेगा और वृद्धि होगी। जैसे—इष् > ऐच्छत्, आगम् > आगच्छत्, अस् > आसीत्।

कारक (तृतीया, करण)

***नियम २३—(साधकतमं करणम्) क्रिया की सिद्धि में सहायक को करण कहते हैं।**

***नियम २४—(कर्तृकरणयोस्तृतीया) करण में तृतीया होती है और कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में कर्ता में तृतीया होती है। जैसे—कन्दुकेन क्रीडति। दण्डेन चलति। रामेण गृहं गम्यते। रामेण भूयते।**

***नियम २५—(सहयुक्तेऽप्रधाने) सह, साकम्, सार्धम्, समम् (साथ अर्थ में) के साथ तृतीया ही होती है। जैसे—जनकेन सह, साकं सार्धं समं वा गृहं गच्छति।**

***नियम २६—(इत्थंभूतलक्षणे) जिस चिह्न से किसी व्यक्ति या वस्तु का बोध होता है, उसमें तृतीया होती है। जैसे—जटाभिः यतिः (जटा से संन्यासी ज्ञात होता है)।**

***नियम २७—(हेतौ) कारणबोधक शब्दों में तृतीया होती है। अध्ययनेन वसति।**

अभ्यास ८

१. उदाहरण-वाक्यः—१. उसने पढ़ा—सः अपठत्। २. तूने लिखा—त्वम् अलिखः। ३. मैंने कहा—अहम् अवदम्। ४. भूपतिना सह सेनापतिः चरति। ५. यतिना सार्धं कविः गायति। ६. मुनिः सत्येन लोकं जयति। ७. रविः मरीचिभिः अतपत्। ८. अग्निः ग्रामम् अदहत्। ९. अग्निः ज्वलति। १०. गिरिं निकषा कपयः चरन्ति। ११. मेघः वर्षति। १२. प्रजापतिः (हरिः) लोकं करोति। १३. अध्ययनेन (अध्ययन के उद्देश्य से) वसति। १४. विद्यया ज्ञानं भवति। १५. धर्मेण हरिमपश्यत्।

२. संस्कृत बनाओ—१. राम गेंद से खेला। २. मुनि डण्डे के द्वारा चला। ३. कवि ने गाया। ४. आग ने नगर को जलाया। ५. सूर्य ने किरणों से लोक को तपाया। ६. आग कब जली? ७. संन्यासी ने वहाँ तप किया। ८. राजा कवि के साथ घूमा। ९. राजा (भूपति) के साथ सेनापति यहाँ आया। १०. जटा से संन्यासी ज्ञात होता है। ११. कवि ने किस प्रकार गाया? १२. यति मुनि के साथ हरि के पास गया। १३. पहाड़ के ऊपर-ऊपर सूर्य तपा। १४. बालक बन्दरों के साथ खेला। १५. मुनि राजा के साथ बैठा। १६. मेघ बरसा। १७. कवि और मुनि ने पुस्तकें लिखीं। १८. राजा और सेनापति ने लोक की रक्षा की। १९. यति ने सूर्य को नमस्कार किया। २०. बन्दर बालकों के साथ खेला।

३.	अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१)	कविना अगायत्।	कविः अगायत्।	१०
(२)	अग्निना नगरम् अदहत्	अग्निः नगरम् अदहत्।	१०
(३)	भूपत्युः सह अगच्छत्।	भूपतिना सह अगच्छत्।	२२,२५
(४)	यतिः मुनेः सह०।	यतिः मुनिना सह०।	२५
(५)	०सेनापतिना च लोकस्य अरक्षत्।	०सेनापतिः च लोकम् अरक्षताम्	१०,१३,१

४. अभ्यास—(क) २ के वाक्यों को लट्, लोट् और लृट् में परिवर्तित करो। (ख) पूरे रूप लिखो—हरि, कवि, रवि, अग्नि, मुनि, भूपति, प्रजापति। (ग) लङ् के पूरे रूप लिखो—पठ्, लिख्, गम्, वद्, दृश्, स्था, पा, प्रच्छ्, दह्, ज्वल्, चर्।

५. वाक्य बनाओ:—सह, साकम्, सार्धम्, समम्। अदहत्, अतपत्, अचरत्, अगायत्।

६. रिक्त स्थान भरो—(लङ् लकार) १. रामः कन्दुकेन (क्रीड्)। २. यतिः सूर्यम् (नम्)। ३. कविः कथम् (गै)। ४. गिरिं निकषा कपिः (भ्रम्)। ५. कपिभिः सह बालः (क्रीड्)।

शब्दकोष——२०० + २५ = २२५) **अभ्यास ९** (व्याकरण)

(क) गुरुः (गुरु, विशेषण–भारी, बड़ा), भानुः (सूर्य), इन्दुः (चन्द्रमा), शत्रुः (शत्रु), शिशुः (बालक), वायुः (वायु), पशुः (पशु), तरुः (वृक्ष), साधुः (सज्जन, सरल, अच्छा, निपुण)। काणः (काना), कर्णः (कान), बधिरः (बहरा), पादः (पैर), खञ्जः (लँगड़ा), शब्दः (शब्द), अर्थः (१. अर्थ, २. धन, ३. प्रयोजन), विवादः (विवाद)। नेत्रम् (आँख), तृणम् (तिनका), सुखम् (सुख), दुःखम् (दुःख), प्रयोजनम् (प्रयोजन), हसितम् (हँसना)। प्रकृतिः (स्वभाव)। (२४)। (ग) अलम् (१. बस, २. पर्याप्त, समर्थ, शक्त)। (१)।

सूचना——(क) गुरु—साधु, गुरुवत्। काण—विवाद, रामवत्। नेत्र—हसित, गृहवत्। प्रकृति, मतिवत्।

व्याकरण (गुरु, विधिलिङ्, तृतीया, अनुस्वारसन्धि)

१. शब्दरूप—गुरु शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० ४)। संक्षिप्त-रूप लगाकर भानु आदि के रूप गुरुवत् बनावें। सभी उकारान्त पुंलिंग शब्द गुरु के तुल्य चलेंगे। नियम १६ इन शब्दों में लगेगा—गुरु, शत्रु, तरु। जैसे—गुरुणा, गुरूणाम्, शत्रुणा, शत्रूणाम्।

२. धातुरूप—**'भू' विधिलिङ्** (आज्ञा या चाहिए अर्थ)

भवेत्	भवेताम्	भवेयुः	प्र० पु०
भवेः	भवेतम्	भवेत	म० पु०
भवेयम्	भवेव	भवेम	उ० पु

संक्षिप्त	एक०	द्वि०	बहु०	
रूप	एत्	एताम्	एयुः	प्र० पु०
	एः	एतम्	एत	म० पु०
	एयम्	एव	एम	उ० पु०

संक्षिप्त रूप लगाकर पट् आदि के रूप बनावें। जैसे—पठेत्, लिखेत्, गच्छेत्, पश्येत्।

कारक (तृतीया, अनुस्वार सन्धि)

*नियम २८—किम्, कार्यम्, अर्थः और प्रयोजनम् (चारों प्रयोजन अर्थ में हों तो) के साथ तृतीया होती है—जैसे—मूर्खेण पुत्रेण किम्, किं कार्यम्, कोऽर्थः, किं प्रयोजनम्? (मूर्ख पुत्र से क्या लाभ या क्या प्रयोजन)। तृणेन अपि कार्यं भवति।

*नियम २९—अलम् (बस, मत) के साथ तृतीया होती है। जैसे—अलं हसितेन (मत हँसो)। अलं विवादेन (विवाद मत करो)।

*नियम ३०—(येनाङ्गविकारः) शरीर का जो अंग विकार से विकृत दिखाई पड़े, उसमें तृतीया होती है। जैसे—नेत्रेण काणः (एक आँख से काणा), कर्णेन बधिरः।

*नियम ३१—(प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्) प्रकृति (स्वभाव) आदि क्रिया-विशेषण शब्दों में तृतीया होती है। प्रकृत्या साधुः (स्वभाव से सरल)। सुखेन जीवति। दुःखेन जीवति। सरलतया लिखति।

*नियम ३२—(सन्धि)—(मोऽनुस्वारः) पदान्त (शब्द या धातुरूप के अन्तिम) म् के बाद कोई हल् (व्यंजन) हो तो म् को अनुस्वार (ं) हो जाता है, स्वर बाद में हो तो नहीं। रामम् + पश्यति = रामं पश्यति। रामम् + अपश्यत् = रामम-पश्यत्।

अभ्यास ९

१. उदाहरण-वाक्यः—१. उसे पढ़ना चाहिए (वह पढ़े)—सः पठेत् । २. तुझे लिखना चाहिए—त्वं लिखेः । ३. मैं गुरु को नमस्कार करूँ—अहं गुरुं नमेयम् । ४. दुर्जनेन कोऽर्थः, किं प्रयोजनम्, किं कार्यम् ? (दुर्जन से क्या लाभ ?) । ५. अलं भोजनेन (भोजन मत करो) । ६. पादेन खञ्जः । ७. गुरुः शिशुं प्रश्नं पृच्छेत् । ८. सूर्यः मरीचिभिः तपेत् । ९. इन्दुः सुधां वर्षेत् । १०. भूपतिः शत्रून् जयेत् । ११. साधुः पशुभिः सह चरेत् । १२. तरुः फलैः नमेत् । १३. सज्जनाः विद्यया सह नमेयुः । १४. प्रकृत्या साधुः ।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. दुर्जन शिष्य से क्या लाभ ? २. मत हँसो । ३. मत खाओ । ४. शत्रु आँख से काना है । ५. शिशु कान का बहरा है । ६. पशु पैर से लँगडा है । ७. गुरु स्वभाव से सज्जन है । ८. वायु सुख से बहती है । (ख) (विधिलिङ्) ९. शिशु गुरु को नमस्कार करे । १०. तू सूर्य को देख । ११. मैं चन्द्रमा को देखूँ । १२. वे शत्रुओं को जीतें । १३. हवा वहे (वह्) । १४. शिशु पशुओं के साथ पहाड़ पर जाये । १५. साधु वृक्षों के पास बसे । १६. तू घर जा । १७. मैं वृक्षों को देखूँ । १८. हम सूर्य को देखें । १९. वह चावल पकाये । २०. शिशु दूध पिये ।

३.	अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
	(१) अलं हसितस्य ।	अलं हसितेन ।	२९
	(२) नेत्रस्य काणः ।	नेत्रेण काणः ।	३०
	(३) सुखात् वहति ।	सुखेन वहति ।	३१
	(४) गिरौ गच्छेत् ।	गिरिं गच्छेत् ।	१५
	(५) दुग्धम् पिबेत् ।	दुग्धं पिबेत् ।	३२

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लट्, लोट् और लृट् में बदलो । (ख) पूरे रूप लिखो—गुरु, भानु, इन्दु, शिशु, शत्रु, वायु, साधु । (ग) विधिलिङ् के पूरे रूप लिखो—पठ्, लिख्, गम्, वद्, दृश्, स्था, पा, प्रच्छ्, चर्, त्यज्, खाद्, धाव् ।

५. वाक्य बनाओः—कोऽर्थः, किं प्रयोजनम्, अलम्, प्रकृत्या, काणः, खञ्जः । पठेत्, लिखेत्, गच्छेः, वदेः, पश्येत्, तिष्ठेत्, पिबेत्, पृच्छेत्, त्यजेयम्, खादेम ।

६. रिक्त स्थान भरोः—१. अलं··· । २. प्रकृत्या··· । ३. ···बधिरः । ४. ··कोऽर्थः । ५. ···पश्येत् । ६. ···पठेम । ७. ···गच्छेम । ८. ···नमेयम् ।

७. संधि करोः—किम् + कार्यम् + करोति । अहम् + गृहम् + गच्छामि । पुस्तकम् + पठति । गुरुम् + नमति । शिशुम् + प्रश्नम् + पृच्छति । जलम् + पिबति । त्वम् + पठसि । अहम् + लिखामि ।

शब्दकोष—२२५ + २५ = २५०) अभ्यास १० (व्याकरण)

(क) तत् (वह), यत् (जो), एतत् (यह), किम् (कौन), सर्व (सब), पूर्व (पहला), विश्व (१. सब, २. संसार), अन्य (और), इतर (और), (सर्वनाम)। विप्रः (ब्राह्मण), इन्द्रः (इन्द्र), दैत्यः (राक्षस)। प्रभुः (१. स्वामी, २. समर्थ), पितृ (१. पिता, २. पितरलोग)। (१४)। (ख) दा (यच्छ्) (देना), वितृ (देना), दा (देना)। (३)। (ग) नमः (नमस्कार, प्रणाम), स्वस्ति (आशीर्वाद), स्वाहा (देवताओं के लिए अग्नि में आहुति), स्वधा (पितरों के लिए अन्नादि), अलम् (पर्याप्त, समर्थ), वषट् (आहुति, साधुवाद)। (६)। (घ) शक्तः (समर्थ), समर्थः (समर्थ)। (२)।

सूचना—(क) तत्—इतर, सर्ववत्। (ख) दा—वितृ, भवतिवत्।

व्याकरण (सर्वनाम पुंलिंग, चतुर्थी, यण्सन्धि)

१. सर्व शब्द के रूप पुंलिंग में स्मरण करो। (देखो शब्द सं० २९ क)। नियम १६ इन शब्दों में लगेगा—सर्व, पूर्व, विप्र, इन्द्र, प्रभु, पितृ।

*सूचना—(क) अकारान्त सर्वनाम शब्दों में 'राम' शब्द के रूप से ये ५ अन्तर होते हैं—१. प्र. बहु. में 'ए'। २. च. एक. में 'स्मै'। ३. पं. एक. में 'स्मात्'। ४. ष. बहु. में 'एषाम्'। ५. स. एक. में 'स्मिन्' लगेगा। शेष रामवत्। (ख) तत्, यत्, एतत्, किम् को पुंलिंग में क्रमशः त, य, एत, क रूप हो जाता है, इनके ही रूप चलते हैं। केवल तत् और एतत् को प्र. एक. मे क्रमशः सः, एषः हो जाता है। जैसे-तत् > सः तौ ते।

२. धातुरूप—लट् में यच्छ् > यच्छति। वितृ > वितरति। दा > ददाति।

*नियम ३३—सर्वनाम शब्दो और विशेषण शब्दो का वही लिंग, विभक्ति और वचन होता है, जो विशेष्य का होता है। जैसे—कः नरः, कं नरम्, केन नरेण। का बाला।

*नियम ३४—(कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानम्) दान आदि क्रिया जिसके लिए की जाती है, उसे संप्रदान कहते हैं।

*नियम ३५—(चतुर्थी संप्रदाने) संप्रदान कारक में चतुर्थी होती है। विप्राय धनं ददाति।

*नियम ३६—(नमःस्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च) नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम् (तथा पर्याप्त अर्थवाले अन्य शब्द), वषट् के साथ चतुर्थी होती है। जैसे—गुरवे नमः। शिष्याय स्वस्ति। अग्नये स्वाहा। पितृभ्यः स्वधा। इन्द्राय वषट्। हरिः दैत्येभ्यः अलम्, प्रभुः, समर्थः, शक्तः वा।

*नियम ३७—(संधि) (इको यणचि) इ, ई को य्; उ, ऊ को व्; ऋ ॠ को र्; ऌ को ल् हो जाता है, यदि बाद में कोई स्वर हो तो। सवर्ण (वैसा ही) स्वर हो तो नहीं। जैसे—प्रति + एकः = प्रत्येकः, इ को य्। पठतु + एकः = पठत्वेकः, उ को व्। पितृ + आ = पित्रा। ऌ + आकृतिः = लाकृतिः।

अभ्यास १०

१. उदाहरण-वाक्यः—१. वह उस ब्राह्मण को धन देता है—स तस्मै विप्राय धनं ददाति, यच्छति, वितरति वा। २. गुरु को नमस्कार—गुरवे नमः। ३. पुत्राय स्वस्ति। ४. राम शत्रुओं के लिए पर्याप्त है—रामः शत्रुभ्यः अलम्, समर्थः, शक्तः, प्रभुः वा। ५. एतस्मै बालकाय फलं यच्छ, वितर वा। ६. कस्मै शिष्याय ज्ञानं वितरसि। ७. सर्वेभ्यः (विश्वेभ्यः) शिशुभ्यः भोजनंवितर, इतरेभ्यः (अन्येभ्यः) फलानि यच्छ। ८. तिष्ठत्यत्र कः ? ९. लिखत्वेकः, पठत्वन्यः। १०. आगच्छत्विह रामः।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. उस बालक को दूध दो (यच्छ्, वितॄ)। २. इस मुनि को धन दो। ३. सूर्य को जल दो। ४. किस राजा को धन देते हो ? ५. उस कवि को भोजन दो। ६. जिस बालक को फल देते हो, उसी को फूल भी दो। ७. पिता को नमस्कार। ८. शिष्य को आशीर्वाद। ९. दुर्जन के लिए राजा पर्याप्त है। १०. ज्ञान के लिए गुरु के पास जाओ। ११. अग्नि के लिए स्वाहा। १२. पितरों के लिए स्वधा। (ख) १३. इन मुनियों को फल और फूल दो। १४. जो बालक विद्यालय नहीं जाता, उसको पिता दण्ड देता है। १५. इन फलों के लिए उन वृक्षों को देखो। १६. इस प्रश्न को उस छात्र से पूछो। १७. सारे (सर्व, विश्व) विद्वानों को वहाँ ले जाओ। १८. किस बालक को पूछते हो ? १९. किस विद्यालय में पढ़ते हो ? २०. इन बालकों को पुस्तक दो और उन बालकों को गेंद दो।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) तं बालकं दुग्धं वितर।	तस्मै बालकाय दुग्धं वितर।	३३,३५
(२) एतं मुनिं धनं यच्छ।	एतस्मै मुनये धनं यच्छ।	३३,३५
(३) जनकं नमः।	जनकाय नमः।	३६
(४) एतं प्रश्नं तस्मात् छात्रात् पृच्छ।	एतं प्रश्नं तं छात्रं पृच्छ।	२१,३३

४. अभ्यासः—(क) २ (क) को बहुवचन में परिवर्तित करो। (ख) तत्, यत्, एतत्, किम्, सर्व और विश्व के पुंलिंग में पूरे रूप लिखो। (ग) यच्छ्, वितॄ के लट्, लोट् और विधिलिङ् के पूरे रूप लिखो।

५. वाक्य बनाओः—नमः, स्वस्ति, अलम्, प्रभुः, कस्मै, तस्मै, एतस्मै, यस्मै, सर्वेभ्यः।

६. संधि करोः—प्रति + एकः। इति + उवाच। इति + आह। इति + अवदत्। आगच्छतु + अत्र। पठतु + एषः। सुधी + उपास्यः। मधु + अरिः। धातृ + अंशः। ल + आकृतिः।

७. संधि-विच्छेद करोः—यद्यपि, प्रत्युपकारः, इत्येतत्, इत्युवाच, पठत्वत्र, गच्छत्वन्यः।

शब्दकोष—२५० + २५ = २७५) अभ्यास ११ (व्याकरण)

(क) ब्राह्मणः (ब्राह्मण), क्षत्रियः (क्षत्रिय), वैश्यः (वैश्य), शूद्रः (शूद्र), वर्णः (वर्ण), मोक्षः (मोक्ष, मुक्ति), मूर्खः (मूर्ख), चोरः (चोर), अश्वः (घोड़ा)। मोदकम् (लड्डू), पापम् (पाप)। (११)। (ख) क्रुध् (क्रोध करना), कुप् (क्रोध करना), द्रुह् (द्रोह करना), ईर्ष्य् (ईर्ष्या करना), असूय (बुराई निकालना), धारि (धारण करना, किसी का ऋणी होना), स्पृह् (चाहना), निवेदि (कहना, निवेदन करना), उपदिश् (उपदेश देना), भज् (सेवा या भजन करना), क्रन्द् (रोना)। रुच् (१. अच्छा लगना, २. चमकना)। (१२)। (ग) अर्थम् (लिए), कृते (लिए) (२)।

सूचना—(क) ब्राह्मण—अश्व, रामवत्। मादक—पाप, गृहवत्।

व्याकरण (सर्वनाम नपुं०, चतुर्थी, अयादिसंधि)

१. शब्दरूपः—सर्व के नपुं० के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० २९ ख)। संक्षिप्तरूप लगाकर तत् आदि (अभ्यास १०) के पूरे रूप बनाओ। सूचना—सर्व आदि के तृतीया से सप्तमी तक पुंलिंग के तुल्य रूप होंगे। प्र. द्वि. में अम्, ए, आनि लगेगा। तत् आदि के प्र. द्वि. एक. में ये रूप होते हैं—तत्, यत्, एतत्, किम्, अन्यत्, इतरत्।

२. धातुरूपः—क्रुध् आदि के ये रूप बनाकर लट् आदि में 'भवति' के तुल्य रूप चलेंगे। क्रुध्यति, कुप्यति, द्रुह्यति, ईर्ष्यति, असूयति, धारयति, स्पृहयति, निवेदयति, उपदिशति, भजति, क्रन्दति। रुच् का लट् प्र० पु० एक० में रोचते। (देखो अभ्यास १६)।

*नियम ३८—(रुच्यर्थानां प्रीयमाणः) रुच् (अच्छा लगना) अर्थ की धातुओं के साथ चतुर्थी होती है। जैसे—बालकाय मोदकं रोचते। पुत्राय दुग्धं रोचते।

*नियम ३९—(क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः) क्रुध्, द्रुह्, ईर्ष्य्, असूय अर्थ की धातुओं के साथ जिस पर क्रोध किया जाय, उसमें चतुर्थी होती है। रामः मूर्खाय (राम मूर्ख पर) क्रुध्यति, कुप्यति, द्रुह्यति, ईर्ष्यति, असूयति।

*नियम ४०—कथ्, निवेदय, उपदिश्, धारय (ऋणी होना), स्पृह्, कल्पते (होना), संपद्यते (होना), हितम् (हित) तथा सुखम् के साथ चतुर्थी होती है। जैसे—शिष्याय (शिष्य को) कथयति। रामः देवदत्ताय शतं (राम देवदत्त का सौ रु०) धारयति। विद्या ज्ञानाय कल्पते, संपद्यते। उपदिश् के साथ द्वितीया भी होती है।

*नियम ४१—(तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या) जिस प्रयोजन के लिए जो वस्तु या क्रिया होती है, उसमें चतुर्थी होती है। जैसे—मोक्षाय हरिं भजति। शिशुः दुग्धाय क्रन्दति।

*नियम ४२—चतुर्थी के अर्थ में 'अर्थम्' और 'कृते' अव्ययों का प्रयोग होता है। कृते के साथ षष्ठी होती है। भोजनार्थम्, भोजनस्य कृते (खाने के लिए)।

*नियम ४३—(संधि) (एचोऽयवायावः) ए को अय्, ओ को अव्, ऐ को आय् और औ को आव् हो जाता है, बाद में कोई स्वर हो तो। जैसे—ने + अनम् = नयनम्। हरे + ए = हरये। गुरो + ए = गुरवे। गै + अकः = गायकः। द्वौ + अत्र = द्वावत्र।

अभ्यास ११

१. उदाहरण-वाक्यः—१. बालक को लड्डू अच्छा लगता है—बालकाय मोदकं रोचते। २. नृपः दुर्जनेभ्यः (राजा दुर्जनों पर) क्रुध्यति, कुप्यति, द्रुह्यति, ईर्ष्यति, असूयति वा। ३. गुरुः शिष्याय (शिष्य को) कथयति, निवेदयति, उपदिशति वा। ४. हरिः पुष्पेभ्यः (फूलों को) स्पृहयति। ५. विद्या अर्थाय कल्पते, संपद्यते, भवति (धन के लिए है)। ६. ब्राह्मणाय (ब्राह्मण का) हितं सुखं वा भवेत्। ७. शिशुः दुग्धाय (दुग्धार्थम्, दुग्धस्य कृते) क्रन्दन्ति। ८. तत् पुस्तकं पठ। ९. एतत् राज्यं रक्ष। १०. किं कार्यं करोषि। ११. सर्वाणि पुस्तकानि शिष्येभ्यः सन्ति। १२. अन्यत् (इतरत्) पुस्तकं पठ। १३. द्वावत्र आगच्छतः। १४. बालकावद्य क्रीडतः।

२. संस्कृत बनाओः—१. इस लड़की को यह फूल अच्छा लगता है। २. उस बालक को यह पुस्तक अच्छी लगती है। ३. गुरु शिष्य पर क्रोध करता है। ४. यह दुर्जन उस सज्जन से द्रोह करता है। ५. वह मूर्ख इस विद्वान् से ईर्ष्या करता है (ईर्ष्य्, असूय)। ६. वह गुरु इन शिष्यों को उपदेश देता है। ७. राजा ने सेनापति से कहा। ८. शिष्य गुरु से भोजन के लिए (अर्थम्, कृते) निवेदन करता है। ९. वह मुनि मोक्ष के लिए ईश्वर को भजता है। १०. चार वर्ण हैं, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ११. वह गुरु इन शिष्यों को विद्या देता है। १२, राम इन फलों को चाहता है (स्पृह्)। १३. सारे पापों को छोड़ो। १४. ये क्षत्रिय उन वैश्यों और शूद्रों की रक्षा कर। १५. यह दूसरी (अन्य, इतर) पुस्तक है। १६. वह मनुष्य राम का सौ रु० का ऋणी है। १७. शिष्य का हित हो (हितम्, सुखम्)।

३.	अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
	(१) बालकं पुस्तकं रोचते।	बालकाय पुस्तकं रोचते।	३८
	(२) शिष्ये क्रुध्यति।	शिष्याय कुध्यति।	३९
	(३) सेनापतिम् अकथयत्।	सेनापतये अकथयत्।	४०

४. अभ्यासः—(क) यत्, तत्, एतत्, किम्, सर्व और विश्व के नपुं० के पूरे रूप लिखो। (ख) इनके लट्, लोट् और विधिलिङ् के रूप लिखो—क्रुध्, उपदिश्, भज्, निवेदय, धारय।

५. वाक्य बनाओः—रोचते, क्रुध्यति, द्रुह्यति, धारयति, स्पृहयति, कथयति, भजति, अर्थम्।

६. संधि करोः—मुने + ए, कवे + ए, जे + अति, जे + अः, शे+अनम्, गुरो+ए, पो + अनः, भो + अति, नै + अकः, कै + अः, पौ + अकः, प्रभौ + अः, भौ + अकः।

७. संधि-विच्छेद करोः—सज्जनावत्र, बालावद्य, ब्राह्मणाविदानीम्, द्वावेतौ, भावकः, परिचायकः, यतये, कवये, शिशवे, साधवे, गुरवे।

शब्दकोष—२७५ + २५ = ३००) **अभ्यास १२** (व्याकरण)

(क) वृक्षः (वृक्ष), प्रासादः (महल)। शैशवम् (बाल्यकाल), उपवनम् (वाटिका)। प्रजा (प्रजा), वेला (समय)। (६)। (ख) भी (डरना), त्रै (रक्षा करना), अधि + इ (पढ़ना), आ + नी (लाना)। (४)। (ग) ऋते (बिना), आरात् (१. समीप, २. दूर), प्रभृति (उक्त समय से लेकर), आरभ्य (आरम्भ करके); बहिः (बाहर), प्राक् (१. पूर्व की ओर, २. पहले), प्रत्यक् (पश्चिम की ओर), उदक् (उत्तर की ओर), दक्षिणा (दक्षिण की ओर)। (९)। (घ) पूर्वः (१. पूर्वदिशा, २. पहले), पश्चिमः (पश्चिम दिशा), उत्तरः (उत्तर दिशा), दक्षिणः (१. दक्षिण दिशा, २. चतुर), भिन्नः (अतिरिक्त, अलावा), अतिरिक्तः (भिन्न)। (६)।

सूचना—(क) वृक्ष—प्रासाद, रामवत्। शैशव—उपवन, गृहवत्। प्रजा—वेला, रमावत्।

व्याकरण (सर्वनाम स्त्रीलिंग, पंचमी, गुणसंधि)

१. सर्व शब्द के स्त्रीलिंग के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० २९ ग)। संक्षिप्तरूप लगाकर विश्व आदि (अभ्यास १०) के रूप बनाओ। सूचना—रमा शब्द से सर्व आदि के स्त्रीलिंग में ५ स्थानों पर अन्तर होंगे। १. च. एक. अस्यै। २. ३. पं. और ष. एक. अस्याः। ४. ष. बहु. आसाम्। ५. स. एक. अस्याम्। तत् आदि का प्रथमा एक. में सा, या, एषा और का होता है। आगे ता, या, एता, का के रूप रमावत् चलावें।

२. भी आदि के लट् में क्रमशः ये रूप होंगे—बिभेति, त्रायते (सेवतेवत्), अधीते, आनयति (भवतिवत्)।

नियम ४४—(ध्रुवमपायेऽपादानम्) जिससे कोई वस्तु आदि अलग हो, उसे अपादान कहते हैं।

नियम ४५—(अपादाने पंचमी) अपादान में पंचमी होती है। जैसे–वृक्षात् पत्रं पतति।

नियम ४६—(अन्यारादितरर्ते०) अन्य, आरात्, इतर (तथा अन्य अर्थवाले और भी शब्द), ऋते, पूर्व आदि दिशावाची शब्द (इनका देश, काल, अर्थ हो तो भी), प्रभृति और बहिः, इन शब्दों के साथ पंचमी होती है। जैसे–ज्ञानाद् ऋते न मोक्षः। ग्रामात् पूर्वः पश्चिमः उत्तरः दक्षिणः प्राक् आदि (गाँव से पूर्व आदि की ओर)। शैशवात् प्रभृति (बचपन से लेकर)। ग्रामाद् बहिः।

नियम ४७—(भीत्रार्थानां भयहेतुः) भय और रक्षा अर्थ की धातुओं के साथ भय के कारण में पंचमी होती है। चोराद् बिभेति। चोरात् त्रायते।

नियम ४८—(आख्यातोपयोगे) जिससे विद्या आदि पढ़ी जाए, उसमें पंचमी होती है। उपाध्यायादधीते। गुरोः पठति।

नियम ४९—(अदेङ् गुणः)। अ, ए और ओ को गुण कहते हैं।

नियम ५०—(संधि) (आद्गुणः) अ या आ के बाद इ या ई को ए, उ या ऊ को ओ, ऋ या ॠ को अर्, ऌ को अल् होता है। जैसे—रमा + ईशः = रमेशः, पर + उपकारः = परोपकारः, महा + ऋषिः = महर्षिः, तव + ऌकारः = तवल्कारः।

अभ्यास १२

१. उदाहरण-वाक्यः—१. उस वृक्ष से यह पत्ता गिरा—तस्माद् वृक्षात् एतत् पत्रम् अपतत् । २. तस्माद् अश्वात् स नरः पतति । ३. प्रासादाद् बालः अपतत् । ४. तस्माद् गुरोः अधीते, पठति वा । ५. चोराद् बिभेति । ६. चोरात् त्रायते । ७. रामाद् अन्यः (इतरः भिन्नः, अतिरिक्तः) कः सत्यं वदेत् । ८. धनाद् ऋते न सुखम् । ९. एषा बालिकेच्छति लतामेताम् । १०. एताः सर्वाः (विश्वाः) प्रजाः धर्मं रक्षन्ति । ११. प्रजेच्छति नृपम् । १२. पश्येदानीम् । १३. नेदानीं गच्छ । १४. पश्योपरि । १५. केदानीं वेला ?

२. संस्कृत बनाओः—१. इस वृक्ष से ये फूल गिरे । २. उस महल से वह लड़की गिरी । ३. किस घोड़े से वह सेनापति गिरा ? ४. जिस नगर से वह राजा इस गाँव में आया, उसी नगर को अब गया है । ५. उस पाठशाला से वह लड़की यहाँ आयी । ६. उस गुरु से वह शिष्य पढ़ता है (अधि + इ) । ७. उसने गुरु से पढ़ा । ८. यह लड़की चोर से डरती है । ९. वह ब्राह्मण इस कन्या को उस राक्षस से बचाता है । १०. प्रजा से राजा के लिए धन लाओ । ११. क्षत्रिय के अतिरिक्त (अन्यः, इतरः, भिन्नः, अतिरिक्तः) कौन इस प्रजा को दुःख से बचाता है ? १२. धर्म के बिना (ऋते) सुख नहीं । १३. गाँव के पास (आरात्) सारी सेना है । १४. गाँव के पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण की ओर कौन लोग रहते हैं ? १५. मैं बाल्यकाल से लेकर यहाँ ही रहता हूँ । १६. गाँव के बाहर जाओ । १७. अब क्या समय है ? १८. वाटिका से फूल लाओ । १९. वृक्ष से फल गिरे । २०. उस गुरु से विद्या पढ़ो ।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) इदं वृक्षात् एते फलानि० ।	एतस्माद् वृक्षाद् एतानि फलानि० ।	३३
(२) तं नगरम् अगच्छत् ।	तद् नगरम् अगच्छत् ।	३३
(३) तेन गुरुणा अधीते ।	तस्माद् गुरोः अधीते ।	४८
(४) चोरेण बिभेति ।	चोराद् बिभेति ।	४७
(५) ग्रामस्य पूर्वः, प्राक्० ।	ग्रामात् पूर्वः, प्राक्० ।	४६

४. अभ्यासः—यत्, तत्, एतत्, किम्, सर्व, पूर्व के स्त्रीलिंग के पूरे रूप लिखो ।

५. वाक्य बनाओः—बिभेति, त्रायते, अधीते, आनयति, ऋते, आरात्, प्रभृति, बहिः, पूर्वः, भिन्नः ।

६. संधि करोः—का + इदानीम् । एषा + इच्छति । न + इदम् । पर + उपकारः । महा + उदयः । महा + उत्सवः । वीर + इन्द्रः । महा + ऋषिः । राजा + ऋषिः । पश्य + उपरि ।

७. सन्धि-विच्छेद करोः—नेच्छति, गच्छोपरि, ब्रह्मर्षिः, सप्तर्षिः, केह, तस्योपरि, सूर्योदयः ।

शब्दकोष—३०० + २५ = ३२५) **अभ्यास १३** (व्याकरण)

(क) इदम् (यह), अदस् (वह) (सर्वनाम)। अङ्कुरः (अंकुर), तिलः (तिल), माषः (उड़द), यवः (जौ)। बीजम् (बीज)। दूरम् (दूर), अन्तिकम्, समीपम्, निकटम्, पार्श्वम्, सकाशम् (इन ५ का अर्थ है, समीप। (१३)। (ख) विरम् (रुकना), प्रमद् (प्रमाद करना), निवृ (हटाना), प्रभू (१. उत्पन्न होना, २. समर्थ होना), उद्भू (निकलना), प्रति + दा (बदले में देना)। जुगुप्स (घृणा करना), जन् (उत्पन्न होना), निली (छिपना)। (९)। (ग) पृथक् (अलग)। (१)। (घ) पटुः (पटुतरः) (१. चतुर, २. उससे चतुर), गुरुः (गुरुतरः) (१. भारी या श्रेष्ठ, २. उससे भारी या अच्छा)।

सूचना—(क) अङ्कुर—यव, रामवत्। बीज, गृहवत्।

व्याकरण (इदम्, अदस् (पुं०), पञ्चमी, वृद्धिसन्धि)

१. इदम्, अदस् के पुंलिंग के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ३७, ३८, क)।

२. 'विरम्' आदि धातुओं के लट् में क्रमशः ये रूप होते हैं:—विरमति, प्रमाद्यति, निवारयति, प्रभवति, उद्भवति, प्रतियच्छति (उक्त रूप बनाकर भवतिवत्)। जुगुप्सते, जायते, निलीयते (उक्त रूप बनाकर सेवतेवत्, देखो अभ्यास १६)।

*नियम ५१—(जुगुप्साविराम०) जुगुप्सते, विरमति, प्रमाद्यति के साथ पंचमी होती है। पापात् जुगुप्सते, विरमति। धर्मात् प्रमाद्यति।

*नियम ५२—(वारणार्थानामीप्सितः) जिस वस्तु से किसी को हटाया जाए, उसमें पंचमी होती है। यवेभ्यः पशुं वारयति। पुत्रं पापाद् वारयति, निवारयति वा।

*नियम ५३—जायते, उद्भवति, प्रभवति, उद्गच्छति (इन चारों का उत्पन्न होना या निकलना अर्थ हो तो), निलीयते और प्रतियच्छति के साथ पंचमी होती है। प्रजापतेः लोकः जायते। हिमालयाद् गङ्गा प्रभवति, उद्भवति वा। नृपात् चोरः निलीयते। तिलेभ्यः माषान् प्रतियच्छति।

*नियम ५४—(पञ्चमी विभक्ते) तुलना में जिससे तुलना की जाती है, उसमें पंचमी होती है। रामात् कृष्णः पटुतरः। धनात् ज्ञानं गुरुतरम्।

*नियम ५५—(पृथग्विना०) पृथक् और विना के साथ पंचमी, द्वितीया और तृतीया तीनों होती हैं। रामात्, रामेण, रामं विना पृथक् वा।

*नियम ५६—(दूरान्तिकार्थेभ्यो०) दूर और निकटवाची शब्दों में पंचमी, द्वितीया और तृतीया तीनों होती हैं। ग्रामस्य दूरात्, दूरेण, दूरम्।

*नियम ५७—(वृद्धिरादैच्) आ, ऐ और औ को वृद्धि कहते हैं।

*नियम ५८—(वृद्धिरेचि) अ या आ के बाद ए या ऐ हो तो 'ऐ', ओ या औ हो तो 'औ' होता है। तदा + एकः = तदैकः। तस्य + ऐश्वर्यम् = तस्यैश्वर्यम्। तण्डुल + ओदनम् = तण्डुलौदनम्। महा + औषधिः = महौषधिः।

अभ्यास १३

१. उदाहरण-वाक्यः—१. यह बालक पाप से घृणा करता है—अयं बालकः पापाद् जुगुप्सते, विरमति वा। २. यवेभ्यः इमान् पशून् निवारयति। ३. अमुं पुत्रं पापाद् निवारय। ४. एभ्यः तिलेभ्यः माषान् प्रतियच्छति। ५. अमुष्माद् बालकाद् अयं बालकः पटुतरः। ६. विद्यायाः (विद्यां, विद्यया) विना न ज्ञानम्। ७. अस्माद् ग्रामात् पृथक् वस। ८. जनकस्य समीपात् (अन्तिकात्, पार्श्वात्, निकटात्, सकाशात्) आगच्छामि। ९. बालिकैषा आगच्छति। १०. तदैकः नरः आगच्छत्। ११. पश्यैतां लताम्। १२. निवारयैतस्मात् पापात् पुत्रम्।

१. संस्कृत बनाओः—(इदम्, अदस् का प्रयोग करो) १. यह बालक धर्म से प्रमाद करता है। २. वह शिष्य इस पाप से रुकता (बचता) है। ३. मेरा पुत्र पाप से घृणा करता है। ४. यह गुरु उस शिष्य को इस पाप से हटाता है। ५. जौ से इन पशुओं को हटाओ (निकालो)। ६. प्रजापति से यह लोक उत्पन्न होता है। ७. गङ्गा हिमालय से निकलती है। ८. बीजों से अंकुर उत्पन्न होते हैं। ९. वह बालक पिता से छिपता है। १०. वह वैश्य इन चावलों से उड़द को बदलता है। ११. उस यति से यह कवि अधिक कुशल है। १२. धन से ज्ञान अधिक बड़ा है। १३. इस कवि के बिना कौन कथा कहेगा ? १४. उस गुरु के पास से इस ग्राम में आया हूँ। १५. नगर से दूर वह विद्यालय है। १६. उस गुरु से विद्या पढ़ो।

३.	अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
	(१) अनेन पापेन निवारयति।	अस्मात् पापाद् निवारयति।	५२
	(२) एभिः तण्डुलैः०० प्रतियच्छति।	एभ्यः तण्डुलेभ्यः०।	५३
	(३) धनेन ज्ञानं गुरुतरः।	धनात् ज्ञानं गुरुतरम्।	५४, ३३
	(४) अस्मिन् ग्रामे आगच्छम्।	इमं ग्रामम् आगच्छम्।	१५

४. अभ्यासः—(क) इदम् और अदस् क पुंलिंग के पूरे रूप लिखो। (ख) पंचमी किन-किन स्थानों पर होती है, उदाहरण सहित बताओ।

५. वाक्य बनाओः—जुगुप्सते, विरमति, प्रमाद्यति, जायते, उद्भवति, प्रभवति, प्रतियच्छति, निलीयते, पटुतरः, गुरुतरः, पृथक्, विना, दूरात्, अन्तिकात्।

६. संधि करोः—विद्या + एषा। पश्य + एतम्। देव + ऐश्वर्यम्। यदा + एकः। कदा + एकेन। तस्य+एव। सर्वदा+एव। अत्र+एकः। सा+एव। महा+औषधम्। महा + ओषधिः। सदा + एषा। न+एषः। का+एषा। अद्य + एव। अथ+एकः।

७. संधि-विच्छेद करोः—पश्यैताम्। आनयैतस्याः। निवारयैतस्मात्। सैषा। नैतत्। नैव।

शब्दकोष—३२५ + २५ = ३५०) **अभ्यास १४** (व्याकरण)

(क) छात्रः (विद्यार्थी), अन्नम् (अन्न)। निमित्तम् (कारण), कारणम् (कारण), हेतुः (कारण)। (५)। (ख) निन्द् (निन्दा करना), अर्च् (पूजा करना), शुच् (शोक करना), जप् (जप करना), आलप् (बात करना), आह्वे (बुलाना), तॄ (तैरना), ध्यै (ध्यान करना), अभिलष् (चाहना), जीव् (जीना), खन् (खोदना)। (११)। (ग) उत्तरतः (उत्तर की ओर), दक्षिणतः (१. दक्षिण की ओर, २. दाहिनी ओर), पुरः (सामने), पुरस्तात् (सामने), उपरिष्टात् (ऊपर की ओर), अधस्तात् (नीचे की ओर), पश्चात् (पीछे), अग्रे (आगे)। (८)। (घ) श्रेष्ठः (श्रेष्ठ), [पटुतमः (सबसे अधिक चतुर)] (१)।

सूचना—(क) छात्र, रामवत्। अन्न, गृहवत्। (ख) निन्द्—खन् भवतिवत्।

व्याकरण (इदम् अदम् (नपुं०), षष्ठी, पूर्वरूपसन्धि)

१. इदम्, अदस् के नपुंसक लिंग के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ३७, ३८ ख)

२. संक्षिप्त रूप लगाकर निन्द् आदि के भवतिवत् दसों लकारों में रूप चलाओ। ज़ैसे–निन्दति, शोचति, आह्वयति, तरति, ध्यायति, अभिलषति, जीवति, खनति।

सूचना—षष्ठी दो या अधिक शब्दों का केवल सम्बन्ध बताती है, उसका क्रिया से साक्षात् सम्बन्ध नहीं है, अतः संस्कृत में षष्ठी को कारक नहीं मानते हैं।

*नियम ५९—(षष्ठी शेषे) सम्बन्ध का बोध कराने के लिए षष्ठी विभक्ति होती है। जैसे—गङ्गायाः जलम्। रामस्य पुस्तकम्। देवदत्तस्य धनम्। रामायणस्य कथा।

*नियम ६०—(षष्ठी हेतुप्रयोगे) हेतु शब्द के साथ षष्ठी होती है। अन्नस्य हेतोः वसति।

*नियम ६१—(निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम्) निमित्त अर्थवाले शब्दों (निमित्त, कारण, हेतु, प्रयोजन) के साथ प्रायः सभी विभक्तियाँ होती हैं। किं निमित्तं वसति केन निमित्तेन, कस्मै निमित्ताय। कस्य हेतोः, कस्मात् कारणात्, केन प्रयोजनेन।

*नियम ६२—(अधीगर्थदयेशां कर्मणि) स्मरण अर्थ की धातुओं के साथ कर्म में षष्ठी होती है। मातुः स्मरति (खेदपूर्वक माता को स्मरण करता है।)

*नियम ६३—(षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन) उपरि, उपरिष्टात्, अधः, अधस्तात्, पुरः, पुरस्तात्, पश्चात्, अग्रे, दक्षिणतः और उत्तरतः के साथ षष्ठी होती है। ग्रामस्य दक्षिणतः उत्तरतः आदि। वृक्षस्य उपरि, उपरिष्टात्, अधः, अधस्तात् वा।

*नियम ६४—(यतश्च निर्धारणम्) बहुतों में से एक को छाँटने में जिसमें से छाँटा जाए, उसमें षष्ठी और सप्तमी दोनों होती हैं। छात्राणां छात्रेषु रामः श्रेष्ठः पटुतमः वा।

*नियम ६५—(एङः पदान्तादति) पद (सुबन्त या तिङन्त के अन्तिम ए या ओ के बाद अ हो तो, अ को पूर्वरूप (ए या ओ जैसा रूप) हो जाता है। (इस सन्धि के संकेत के लिए ए ओ के बाद अवग्रह चिह्न ऽ लगता है)। हरे + अव हरेऽव। विष्णो + अव विष्णोऽव।

अभ्यास १४

१. उदाहरण-वाक्य—१. यह देवदत्त की पुस्तक है—इदं देवदत्तस्य पुस्तकम् अस्ति। २. रामस्य पुत्रम् आह्वय। ३. सः ईश्वरं ध्यायति। ४. अजायाः दुग्धम् अभिलषति। ५. अध्ययनस्य हेतोः (पढ़ाई के लिए) जीवति। ६. त्वं कस्य हेतोः (कस्मात् कारणात्) शोचसि। ७. मातुः स्मरति। ८. ग्रामस्य पुरः, पुरस्तात्, अग्रे, पश्चात् वा वनम् अस्ति। ९. गृहस्याग्रे वसुधां खनति। १०. शिष्याणां शिष्येषु वा कृष्णः श्रेष्ठः पटुतमः वा। ११. नराणां नरेषु वा ब्राह्मणः श्रेष्ठः। १२. अधीतेऽत्र शिष्यः। १३. त्रायतेऽधुना नृपः। १४. दुर्जनः ब्राह्मणं निन्दति। १५. प्राज्ञः ईश्वरमर्चति, जपति वा। १६. छात्रः गुरुमालपति। १७. बालकः गङ्गां तरति (गङ्गायाः जले वा तरति)।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. यह गंगा का जल है। २. इस वृक्ष के ये फूल हैं। ३. बालक की यह पुस्तक है। ४. यह धन किसका है? ५. तुम यहाँ पर किसलिए रहते हो? ६. राम पिता को स्मरण करता है। ७. मैं धन के निमित्त जीता हूँ। ८. इस नगर के उत्तर और दक्षिण की ओर वृक्ष हैं। ९. घर के ऊपर, नीचे, आगे और पीछे की ओर आग जल रही है। १०. पुस्तकों में गीता श्रेष्ठ है। (ख) ११. मूर्ख गुरु की निन्दा करता है। १२. राम सज्जन की पूजा करता है। १३. कृष्ण शोक करता है। १४. यति प्रभु को जपता है। १५. यह बालक बालिका से बात करता है। १६. राम श्याम को बुलाता है। १७. यह फूल जमुना के जल में तैर रहा है। १८. तू ईश्वर का ध्यान करता है। १९. वह धन चाहता है (अभिलष्)। २०. मूर्ख धन के निमित्त ही जीते हैं।

३.		अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
	(१)	जनकं स्मरति।	जनकस्य स्मरति।	६२
	(२)	वृक्षस्य एते पुष्पानि।	वृक्षस्य एतानि पुष्पाणि।	३३,१६
	(३)	गुरोः निन्दति।	गुरुं निन्दति।	१३

४. अभ्यास—(क) २ (ख) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में परिवर्तित करो। (ख) इदम् और अदस् के नपुंसक लिंग के पूरे रूप लिखो। (ग) इन धातुओं के लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् के पूरे रूप लिखो—निन्द्, जप्, अर्च्, आह्वे, तॄ, जीव्, खन्, शुच्।

५. वाक्य बनाओः—हेतोः, निमित्तेन, स्मरति, श्रेष्ठः, पुरः, अग्रे, पश्चात्, दक्षिणतः।

६. सन्धि करोः—याचते + अधुना। हरे + अव। विष्णो + अव। अधीते + अधुना। रोचते + अग्निः। पुस्तके + अस्मिन्। विद्यालये + अस्मिन्। याचते + अमुम्।

७. सन्धि-विच्छेद करोः—अधीतेऽत्र। त्रायतेऽधुना। लोकेऽस्मिन्। केऽत्र। तेऽस्मिन्।

शब्दकोष—३५० + २५ = ३७५) अभ्यास १५ (व्याकरण)

(क) पाकः (पचना), उपदेशः (उपदेश)। शयनम् (सोना), गमनम् (जाना), पठनम् (पढ़ना), दानम् (दान), वस्त्रम् (वस्त्र), आयुष्यम्, कुशलम्, भद्रम् (तीनों आशीर्वाद अर्थ में आते हैं, कुशल हो)। (१०)। (ख) गर्ज् (गरजना), मूर्छ् (मूर्छित होना), श्रि (१. आश्रय लेना, २. सेवा करना), भृ (पालन करना), सृ (चलना), वे (बुनना), भूयात् (होवे, आशीर्वाद देना अर्थ में)। (७)। (ग) समक्षम् (सामने), मध्ये (बीच में), अन्तः (अन्दर), अन्तरे (अन्दर), शम् (कुशल हो)। (५)। (घ) तुल्यः, सदृशः, समः (तीनों का अर्थ है—तुल्य)। (३)।

सूचना—(क) पाक—उपदेश, रामवत्। शयन—वस्त्र, गृहवत्। (ख) गर्ज्—वे, भवतिवत्।

व्याकरण (इदम्, अदस् (स्त्री०), षष्ठी, दीर्घसंधि)

१. इदम्, अदस् के स्त्रीलिंग के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ३७, ३८ ग)

२. गर्ज् आदि के रूप भवतिवत्। जैसे—गर्जति, श्रयति, भरति, सरति, वयति।

*नियम ६६—(कर्तृकर्मणोः कृति) कृदन्त शब्द [जिनके अन्त में कृत् प्रत्यय अर्थात् तृच् (तृ), क्तिन् (ति), अच् (अ), घञ् (अ), ल्युट् (अन) आदि हों] के कर्ता और कर्म में षष्ठी होती है। जैसे—शिशोः शयनम् (बच्चे का सोना), रामस्य गमनम्। सूचना—पुस्तक पढ़ता है, इस प्रकार के वाक्यों का दो प्रकार से अनुवाद होता है, पुस्तकं पठति या पुस्तकस्य पठनं करोति। स्मरण रखें कि धातु का कृदन्तरूप बनाने पर उसके साथ षष्ठी होगी और शुद्ध धातु के साथ द्वितीया।

*नियम ६७—कृते (लिए), समक्षम्, मध्ये, अन्तः और अन्तरे के साथ षष्ठी होती है। भोजनस्य कृते। गुरोः समक्षम्। छात्राणां मध्ये। गृहस्य अन्तः, अन्तरे वा।

*नियम ६८—(दूरान्तिकार्थैः षष्ठी०) दूर और समीपवाची शब्दों के साथ षष्ठी और पंचमी दोनों होती हैं। ग्रामस्य ग्रामाद् वा दूरं, समीपं, पार्श्वं, सकाशं वा।

*नियम ६९—(तुल्यार्थैः०) तुल्यवाची शब्दों (तुल्य, सदृश, सम) के साथ षष्ठी और तृतीया दोनों होती हैं। कृष्णस्य कृष्णेन वा तुल्यः, सदृशः, समः।

*नियम ७०—(चतुर्थी चाशिष्यायुष्य०) आशीर्वादसूचक शब्दों (आयुष्यम्, भद्रम्, कुशलम्, सुखम्, हितम्, अर्थः, प्रयोजनम्, शम्, पथ्यम् आदि के साथ षष्ठी और चतुर्थी दोनों होती हैं। कृष्णस्य कृष्णाय वा भद्रम्, कुशलम्, शं वा भूयात्।

*नियम ७१—(अकः सवर्णे दीर्घः) अक् (अ इ उ ऋ) के बाद सवर्ण अक्षर हो तो दोनों के स्थान पर दीर्घ अक्षर हो जाता है। अ या आ + अ या आ = आ। इ या ई + इ या ई = ई। उ या ऊ + उ या ऊ = ऊ। ऋ या ॠ + ऋ या ॠ = ॠ। विद्या + आलयः = विद्यालयः। करोति + इदम् = करोतीदम्। गुरु + उपदेशः = गुरूपदेशः।

अभ्यास १५

१. उदाहरण-वाक्यः—१. बच्चे का सोना—शिशोः शयनम्। २. पुस्तकस्य पठनम्। ३. धनस्य दानम्। ४. भोजनस्य कृते (लिए)। ५. गृहस्य मध्ये, अन्तः, अन्तरे वा। ६. अस्याः समक्षम्। ७. ग्रामस्य दूरात्। ८. जनकस्य समीपात्, पार्श्वात्, सकाशाद् वा। ९. शिष्यस्य आयुष्यं भद्रं कुशलं शं वा भूयात्। १०. पटतीयं बाला। ११. स्मरतूपदेशम्। १२. वसतीहेयं बाला (यह लड़की यहाँ रहती है)। १३. मेघाः गर्जन्ति। १४. वस्त्रं वयति। १५. शिशुः मूर्छति। १६. शिष्यः गुरुं श्रयति। १७. जनकः पुत्रं भरति। १८. वायुः सरति।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. इस लड़की का पढ़ना उसे अच्छा लगता है। २. उस कन्या का खाना पकाना इसे अच्छा लगता है। ३. इस लड़की का जाना देखो। ४. उस बालिका का सोना देखो। ५. इस गुरु का उपदेश कैसा है? ६. यह कन्या धन का दान करना चाहती है। ७. अध्ययन के लिए (कृते) गुरु के सामने जाओ। ८. भोजन के लिए घर के अन्दर आओ। ९. गाँव के समीप या दूर से इस लड़की के लिए फूल लाओ। १०. राम के तुल्य कोई नहीं है। ११. इस बालक का कुशल हो। १२. इस लड़की की ये पुस्तकें हैं। (ख) १३. यह बादल गरजता है। १४. पुत्र मूर्छित होता है। १५. यह बालक पिता का आश्रय लेता है। १६. राजा प्रजा का पालन करता है। १७. हवा चलती है। १८. वह वस्त्र बुनता है। १९. तू खाता है, पीता है, बात करता है और जीता है। २०. मैं ईश्वर का ध्यान करता हूँ। २१. मैं पानी में तैरता हूँ।

३.	अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१)	अस्य बालिकां पठनम्०।	अस्याः बालिकायाः पठनम्०	६६, ३३
(२)	भोजनस्य पाकः अमुं रोचते।	भोजनस्य पाकः अस्मै रोचते।	३८
(३)	इमे पुस्तकानि०।	इमानि पुस्तकानि०।	३३

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट् और लङ् में बदलो। (ख) इदम् और अदस् के स्त्रीलिंग के पूरे रूप लिखो। (ग) इन धातुओं के लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् के पूरे रूप लिखो—गर्ज्, मूर्छ्, श्रि, भृ, सृ, वे। (घ) षष्ठी विभक्ति किन-किन स्थानों पर होती है। सोदाहरण लिखो।

५. वाक्य बनाओः—गमनम्, पाकः, उपदेशः, समक्षम्, मध्ये, अन्तः, कुशलम्, शम्।

६. संधि करोः—हिम + आलयः। दैत्य + अरिः। शिष्ट + आचारः। तदा + अगच्छत्। रत्न + आकरः। श्री + ईशः। पठति + इदम्। गच्छति + इयम्। विष्णु + उदयः। होतृ + ऋकारः।

७. संधि-विच्छेद करोः—लिखतीदम्। वसतीहासौ। हसतीयम्। इतीह। भानूदयः। इहायम्।

शब्दकोष—३७५ + २५ = ४००) **अभ्यास १६** (व्याकरण)

(क) युष्मद् (तू) (सर्वनाम)। सिंहः (सिंह), प्रातःकालः (प्रातःकाल), मध्याह्नः (दोपहर), सायंकालः (सायंकाल), मार्गः (मार्ग)। निशा (रात्रि)। (७)। (ख) सेव् (सेवा करना), लभ् (पाना), वृध् (बढ़ना), मुद् (प्रसन्न होना), सह् (सहना), [याच् (माँगना)], वृत् (होना), ईक्ष् (देखना), निरीक्ष् (१. देखना, २. निरीक्षण करना), वन्द् (प्रणाम करना), भाष् (कहना), कूर्द् (कूदना), यत् (यत्न करना), शिक्ष् (सीखना), कम्प् (काँपना), भिक्ष् (माँगना), ईह् (चाहना), शुभ् (शोभित होना), रम् (१. लगना, २. रमण करना)। (१८)

सूचना—(क) सिंह—मार्ग, रामवत्। (ख) सेव्—रम्, सेवतेवत्।

व्याकरण (युष्मद्, लट् (आ०), सप्तमी, श्चुत्वसंधि)

१. युष्मद् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० ३५)।

२. सेव्, लट् (आत्मनेपद)

सेवते	सेवेते	सेवन्ते	प्र० पु०
सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे	म० पु०
सेवे	सेवावहे	सेवामहे	उ० पु०

संक्षिप्त रूप	एक०	द्वि०	बहु०	
	अते	एते	अन्ते	प्र० पु०
	असे	एथे	अध्वे	म० पु०
	ए	आवहे	आमहे	उ० पु०

संक्षिप्त रूप लगाकर लभ् आदि के रूप बनाओ। जैसे—लभते, वर्धते, मोदते, वर्तते, ईक्षते, वन्दते, भाषते, कूर्दते, यतते, शिक्षते, भिक्षते, ईहते, शोभते, रमते। सूचना—भ्वादिगण (१) की सभी आत्मनेपदी धातुओं के रूप सेव् के तुल्य चलेंगे। पूर्वोक्त रुच्, त्रै आदि आत्मनेपदी धातुओं के भी रूप सेव् के तुल्य चलेंगे।

***नियम ७२**—(आधारोऽधिकरणम्) किसी क्रिया के आधार को अधिकरण कहते हैं, जहाँ पर या जिसमें वह कार्य किया जाता है।

***नियम ७३**—(सप्तम्यधिकरणे च) अधिकरण कारक में सप्तमी होती है। विद्यालये पठति। पाठशालायाम् उपाध्यायाः सन्ति। (नियम ६४ भी देखो।)

***नियम ७४**—'विषय में, बारे में, अर्थ में' तथा समय-बोधक शब्दों में सप्तमी होती है। मोक्षे इच्छास्ति (मोक्ष के विषय में इच्छा है)। दिने, दिवसे, प्रातःकाले, मध्याह्ने, सायंकाले वा कार्यं करोति। शैशवे, यौवने, वार्धक्ये (बाल्य, यौवन, वृद्धत्व समय में) वा पठति।

***नियम ७५**—(स्तोः श्चुना श्चुः) स् या तवर्ग से पहले या बाद में श् या चवर्ग कोई भी हो तो स् और तवर्ग को क्रमशः श् और चवर्ग हो जाता है। जैसे—रामस् + च = रामश्च। कस् + चित् = कश्चित्। सत् + चित् = सच्चित्। शार्ङ्गिन् + जय = शार्ङ्गिञ्जय। याच् + ना = याच्ञा। सूचना—स्मरण रखें कि रामः, बालः, कः आदि पुंलिंग एकवचन में स् के स्थान पर ही विसर्ग रहता है, अतः सन्धि के कार्यों में स् रखा जाता है। आगे भी स् = : ही सन्धि-नियमों में समझें।

अभ्यास १६

१. उदाहरण वाक्यः—१. घर में बालक है—गृहे बालकः वर्तते। २. विद्यालये छात्राः बालिकाश्च वर्तन्ते। ३. स बालः तच्च फलम् आसने वर्तते। ४. विद्या धर्मेण शोभते। ५. सिंहः वने निशायां भ्रमति। ६. यतिः धर्मे रमते। ७. सायंकाले मार्गे बालाः कूर्दन्ते। ८. त्वं गुरुं सेवसे, सुखं लभसे, मोदसे, वर्धसे च। ९. कविः नृपं धनं याचते, तं भाषते वन्दते च। १०. यः दुःखं सहते, विद्यां शिक्षते, अन्नं भिक्षते, ज्ञानमीहते च, सः लोके मोदते। ११. त्वया सहायं कः अस्ति ? १२. तुभ्यं किं रोचते ? १३. तव पुस्तकमहमीक्षे। १४. त्वयि सत्यं वर्तते। १५. वन्दे मातरम्।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. तू राजा की सेवा करता है, सुख पाता है और सुखपूर्वक रहता है। २. नगर में मनुष्य हैं। ३. बालक मार्ग में संन्यासी को देखता है (ईक्ष्)। ४. मोक्ष के विषय में तुम यत्न करते हो। ५. तुम दुःख सहते हो, गुरु की सेवा करते हो और संसार में शोभित होते हो। ६. वह धन में रमता है। ७. वृक्ष काँपता है (कम्प्)। ८. साधु राजा से अन्न माँगता है (भिक्ष्)। ९. बालक पिता को प्रणाम करता है, घर में कूदता है और सत्य ही बोलता है (भाष्)। १०. विद्या सत्य से शोभित होती है। ११. तुम क्या चाहते हो (ईह्) ? १२. पशुओं में सिंह श्रेष्ठ है। (ख) १३. मध्याह्न में तू यहाँ आना। १४. मैं तुमको बुलाता हूँ। १५. तेरे साथ कौन है ? १६. तुझे फल अच्छा लगता है ? १७. तेरी पुस्तक कहाँ है ? १८. तुझमें ज्ञान है। १९. तू बाल्यकाल में विद्या सीखता है। २०. तू धन, सुख और ज्ञान पाता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) त्वं नृपस्य सेवसे।	त्वं नृपं सेवसे।	१३
(२) साधुः नृपात् अन्नं भिक्षते।	साधुः नृपम् अन्नं भिक्षते।	२१
(३) विद्या सत्यात् शोभते।	विद्या सत्येन शोभते।	२४

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ख) युष्मद् शब्द के पूरे रूप लिखो। (ग) इनके लट् के पूरे रूप लिखो—सेव्, लभ्, वृध्, मुद्, सह्, याच्, वृत्, ईक्ष, भाष्, यत्, शिक्ष्, भिक्ष्, शुभ्, रम्। (घ) परस्मैपद और आत्मनेपद की पहचान बताओ।

५. वाक्य बनाओः—श्रेष्ठः, दिने, शैशवे, सायंकाले, सेवते, लभते, वर्तते, ईक्षे, यतसे।

६. संधि करोः—रामस् + च। हरिस् + च। बालस् + चलति। सिंहास् + चरन्ति। तत् + च। उत् + चयः। सन् + जयः। हरिस् + शेते। सद् + जनः। उत् + चारणम्। तत् + चरित्रम्। कस् + चन।

७. संधि-विच्छेद करोः—बालिकाश्च। हरिश्च। तच्च। इतश्च। उच्चरति। सच्चरित्रः। दुश्चरित्रः।

शब्दकोष–४०० + २५ = ४२५) **अभ्यास १७** (व्याकरण)

(क) अस्मद् (मैं) (सर्वनाम)। स्नेहः (स्नेह), विश्वासः (विश्वास), अभिलाषः (इच्छा), मृगः (हरिण), शरः (बाण)। शास्त्रम् (शास्त्र)। श्रद्धा (श्रद्धा), निष्ठा (विश्वास), रतिः (१. प्रेम, २. कामदेव की स्त्री)। (१०)। (ख) स्निह् (स्नेह करना), क्षिप् (फेंकना), मुच् (छोड़ना), अस् (फेंकना), विश्वस् (विश्वास करना), आदृ (आदर करना), कृतः (किया), सति (होने पर)। (८)। (घ) आसक्तः (१. अनुरक्त, २. लगा हुआ), युक्तः (लगा हुआ), लग्नः (लगा हुआ), अनुरक्तः (प्रेमयुक्त), प्रवीणः (चतुर), कुशलः (निपुण), निपुणः (चतुर)। (७)

सूचना—(क) स्नेह—शर, रामवत्। शास्त्र, गृहवत्।

व्याकरण (अस्मद् लोट् (आ०), सप्तमी, ष्टुत्वसन्धि)

१. अस्मद् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ३६)

सेव्—लोट् (आत्मनेपद)				सं० रू० एक०	द्वि०	बहु०	
सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्	प्र० पु०	अताम्	एताम्	अन्ताम्	प्र० पु०
सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्	म० पु०	अस्व	एथाम्	अध्वम्	म० पु०
सेवै	सेवावहै	सेवामहै	उ० पु०	ऐ	आवहै	आमहै	उ० पु०

२. स्निह् आदि के लट् में क्रमशः ये रूप होंगे:—स्निह्यति, क्षिपति, मुञ्चति, अस्यति, विश्वसिति, आद्रियते। उपर्युक्त रूप बनाकर प्रथम चार के रूप भवतिवत्।

*नियम ७६—प्रेम, आसक्ति या आदरसूचक धातुओं और शब्दों (स्निह्, अभिलष्, अनुरञ्ज्, आदृ, रति, आसक्त आदि) के साथ सप्तमी होती है। मयि स्नेहः।

*नियम ७७—(यस्य च भावेन भावलक्षणम्) एक क्रिया के बाद दूसरी क्रिया होने पर पहली क्रिया में सप्तमी होती है। कर्तृवाच्य में कर्ता और कृदन्त में सप्तमी होती है। कर्मवाच्य में कर्म और कृदन्त में सप्तमी होगी, कर्ता में तृतीया। प्रथम क्रिया में कृदन्त का प्रयोग होना चाहिए। रामे वनं गते दशरथः मृतः।

*नियम ७८—(आयुक्तकुशलाभ्याम्०, साधुनिपुणाभ्याम्०) संलग्न अर्थवाले शब्दों (व्यापृतः, लग्नः, आसक्तः, युक्तः, व्यग्रः, तत्परः) और चतुर अर्थवाले शब्दों (कुशलः, निपुणः, साधुः, पटुः, प्रवीणः, दक्षः, चतुरः) के साथ सप्तमी होती है। कार्ये लग्नः, तत्परः, युक्तः वा। शास्त्रे कुशलः, निपुणः, दक्षः वा।

*नियम ७९—क्षिप्, मुच्, अस् (फेंकना अर्थ की) धातुओं के साथ तथा विश्वास और श्रद्धा अर्थवाली धातुओं और शब्दों (विश्वसिति, विश्वासः, श्रद्धा, निष्ठा, आस्था) के साथ सप्तमी होती है। मृगे बाणं क्षिपति। न विश्वसेदविश्वस्ते।

*नियम ८०—(ष्टुना ष्टुः) स् या तवर्ग के बाद में या पहले ष् या टवर्ग कोई भी हो तो स् और तवर्ग को क्रमशः ष् और टवर्ग हो जाते हैं। जैसे—रामस् + षष्ठः = रामष्षष्ठः। तत् + टीका = तट्टीका। इष् + तम् = इष्टम्। राष् + त्रम् = राष्ट्रम्।

अभ्यास १७

१. उदाहरण-वाक्यः—१. वह बालक से स्नेह करता है—सः बालके स्निह्यति। २. तस्य मम पुत्रे स्नेहः वर्तते। ३. अस्माकं धर्मेऽभिलाषः वर्तताम्। ४. नृपः प्रजासु आद्रियते। ५. धर्मे रतिः वर्तताम्। ६. सत्ये मम श्रद्धा, निष्ठा, विश्वासः वा वर्तते। ७. जनकः पुत्रे विश्वसिति। ८. कार्ये कृते सति अहं वनमागच्छम्। ९. भोजने कृते सति सः विद्यालयमगच्छत्। १०. रामः तस्यां कन्यायाम् अनुरक्तः अस्ति। ११. कृष्णः शास्त्रेषु निपुणः, कुशलः, प्रवीणः वा अस्ति। १२. अहं कार्ये लग्नः, युक्तः, आसक्तः वा अस्मि। १३. सेनापतिः मृगे शरान् मुञ्चति, क्षिपति, अस्यति वा। १४. छात्रः गुरुं सेवताम्, विद्यां लभताम्, दुःखं सहताम्, ज्ञानेन वर्धतां, मोदतां च। १५. त्वं मोदस्व, अहं शिक्षै।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. पिता पुत्र से स्नेह करता है। २. वह सत्य में विश्वास करता है। ३. गुरु शिष्यों में आदर पाता है। ४. हरि रमा पर अनुरक्त है। ५. हमारी धर्म में रति है। ६. मेरी ईश्वर में श्रद्धा और निष्ठा है। ७. मेरी सत्य में अभिलाषा बढ़े। ८. मेरे भोजन कर लेने पर बालक यहाँ आया। ९. बालक के सोने पर पिता घर से बाहर आया। १०. मैं इस समय अध्ययन में लगा हुआ हूँ। ११. हरि शास्त्रों में निपुण और कुशल है। १२. राजा ने मृगों पर बाण चलाये (मुच्, क्षिप्)। (ख) १३. साधु भिक्षा माँगे (भिक्ष्)। १४. वृक्ष काँपे। १५. मैं सत्य में रमण करूँ (रम्)। १६. तू प्रसन्न हो (मुद्)। १७. तू बढ़। १८. मैं कूदूँ। १९. मैं सेवा करूँ। २०. तू देख (ईक्ष्)।

३.	अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
	(१) मम भोजनं कृते सति०।	मया भोजने कृते सति।	७७, ३३
	(२) पुत्रस्य शयनं कृते सति०।	पुत्रेण शयने कृते सति।	७७, ३३
	(३) नृपेण मृगेषु शराः अक्षिपत्।	नृपः मृगेषु शरान् अक्षिपत्।	४

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ख) अस्मद् शब्द के पूरे रूप लिखो। (ग) सप्तमी किन स्थानों पर होती है, सोदाहरण लिखो (घ) लोट् (आ०) के संक्षिप्त रूप बताओ।

५. वाक्य बनाओः—स्निह्यति, आद्रियते, विश्वसिति, क्षिपति, मुञ्चति, अस्यति, आसक्तः, लग्नः, निपुणः, साधुः, मह्यम्, अस्माकम्, मयि, सेवस्व, वर्तताम्।

६. संधि करोः—हरिस् + षष्ठः। एतत् + टीका। इष् + तः। आकृष् + तः। इष् + तिः। उत् + डीनः। उत् + टंकनम्। पृष् + तम्। सृष् + तिः। सृष् + ता। कृष् + नः। विष् + नुः।

७. संधि-विच्छेद करोः—रामष्षष्ठः। उड्डयनम्। तट्टीका। विसृष्टिः। विष्णुः।

८. शुद्ध करोः—अहं सेवताम्। त्वं मोदै। सः रमतु। सः लभतु। त्वम् ईक्षताम्। ते वर्तताम्। त्वं लभताम्। अहं यतताम्। ते सहन्तु। त्वं भाषै। अहं वर्धताम्।

शब्दकोष—४२५ + २५ = ४५०) **अभ्यास १८** (व्याकरण)

(क) पात्रम् (१. स्थान, २. बर्तन), भाजनम् (१. स्थान, २. बर्तन), आस्पदम् (स्थान), स्थानम् (स्थान), पदम् (स्थान), प्रमाणम्(प्रमाण)। एकदेशः (एक स्थान)। एकता (एकत्व)। (८)। (ख) स्पर्ध् (स्पर्धा करना), शङ्क् (शंका करना), चेष्ट् (चेष्टा करना), क्लृप्-कल्प् (होना), परा + अय् = पलाय् (भागना), द्युत् (चमकना), वेप् (काँपना), त्रप् (लज्जित होना)। (८)। (ग) एकदा (एकबार), सदा (सर्वदा), एकतः (एक ओर से), एकधा (एक प्रकार से), एकमात्रम् (एकमात्र), एकवारम्,—रे (एकबार, एकबार में)। (६)। (घ) एकाकिन् (अकेला), एकान्तः (एकान्त), एकविधः (एक प्रकार का)। (३)।

सूचना—(क) पात्र-प्रमाण, नित्य एकवचन, नपुं०। (ख) स्पर्ध्—त्रप्, सेवतेवत्।

व्याकरण (एक शब्द, एकवचनान्त शब्द, लृट्, जश्त्वसंधि)

१. एक शब्द के तीनों लिंगों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ३९)। एक शब्द का संख्या अर्थ में केवल एकवचन में ही रूप चलेगा; 'अन्य' अर्थ में बहुवचन में भी।

२. **सेव्-लृट् (आत्मनेपद)**

				सं० रू०एक०	द्वि०	बहु०
सेविष्यते	सेविष्येते	सेविष्यन्ते	प्र. पु.	(इ) स्यते	(इ) स्येते	(इ) स्यन्ते
सेविष्यसे	सेविष्येथे	सेविष्यध्वे	म. पु.	(इ) स्यसे	(इ) स्येथे	(इ) स्यध्वे
सेविष्ये	सेविष्यावहे	सेविष्यामहे	उ. पु.	(इ) स्ये	(इ) स्यावहे	(इ) स्यामहे

संक्षिप्त रूप लगाकर स्पर्ध् आदि के लृट् में रूप बनाओ। लट् में स्पर्धते, कल्पते।

*सूचना—(क) इन धातुओं में 'इष्यते' आदि लगेगाः—सेविष्यते, वर्धिष्यते, मोदिष्यते, सहिष्यते, याचिष्यते, वर्तिष्यते, ईक्षिष्यते, वन्दिष्यते, भाषिष्यते, कूर्दिष्यते, यतिष्यते, शिक्षिष्यते, कम्पिष्यते, भिक्षिष्यते, शोभिष्यते, स्पर्धिष्यते, शङ्किष्यते, चेष्टिष्यते, कल्पिष्यते, पलायिष्यते, द्योतिष्यते, वेपिष्यते, त्रपिष्यते, शयिष्यते, रोचिष्यते। (ख) इनमें 'स्यते' आदि लगेगाः—लप्स्यते, रंस्यते, त्रास्यते, अध्येष्यते।

*नियम ८१—पात्र, आस्पद, स्थान, पद, भाजन और प्रमाण शब्द जब विधेय के रूप में प्रयुक्त होंगे तो इनमें नपुंसक लिंग एक० ही रहेगा। उद्देश्यरूप में होंगे तो अन्य वचन भी होंगे। जैसे—गुणाः पूजास्थानं सन्ति। यूयं मम कृपापात्रं स्थ भवन्तः प्रमाणं सन्ति। अत्र सप्त पात्राणि सन्ति।

*नियम ८२—(संख्याया विधार्थे धा) सभी संख्यावाचक शब्दों से 'प्रकार से' अर्थ में 'धा' लगता है। 'प्रकार का' अर्थ में 'विध', 'गुना' अर्थ में 'गुण' तथा 'बार' अर्थ में 'वारम्' लगता है। जैसे—एकधा, द्विधा, त्रिधा, बहुधा। एकविधः, द्विविधः।

*नियम ८३—(झलां जशोऽन्ते) झलों (१, २, ३, ४, ऊष्म) को जश् (३. अपने वर्ग के तृतीय अक्षर) होते हैं, झल् यदि पद के अन्त में हों तो। (पद अर्थात् सुबन्त और तिङन्त)। जगत् + ईशः = जगदीशः। पट् + दर्शनम् = षड्दर्शनम्।

अभ्यास १८

१. उदाहरण-वाक्यः—१. एक बालक—एकः बालकः। २. एका बालिका। ३. एकं फलम्। ४. एकं बालकम्, एकां बालिकाम्, एकं फलं चात्रानय। ५. एकस्मै बालकाय, एकस्यै बालायै च फलानि वितर। ६. त्वं धनानां पात्रम्, आस्पदं, स्थानं, पदं, भाजनं वा असि। ७. पात्रेषु भाजनेषु वा जलं वर्तते। ८. आस्पदेषु स्थानेषु वा ते तिष्ठन्ति। ९. भवन्तः प्रमाणं सन्ति। १०. सः एकाकी अध्ययनात् पलायिष्यते। ११. सूर्यः प्रातःकाले द्योतिष्यते। १२. सः गुरुं सेविष्यते, दुःखं सहिष्यते, मोदिष्यते, वर्धिष्यते च। १३. एके एवं वदन्ति, अन्ये एवं कथयन्ति।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. यहाँ एक बालक है। २. वहाँ एक बालिका है। ३. वहाँ एक बर्तन है। ४. एक शिष्य और एक लड़की को ये पुस्तकें दो। ५. एक बालक और एक बालिका की पुस्तकें यहाँ हैं। ६. एक विद्यालय में मैं पढ़ता हूँ और एक पाठशाला में वह पढ़ती है। (ख) ७. तुम सारी विद्याओं के एकमात्र पात्र हो। (पात्र, आस्पद, स्थान, पद, भाजन)। ८. तुम सारे ज्ञानों के स्थान हो। ९. आप विद्या में प्रमाण हैं। १०. यहाँ पर दस बर्तन हैं। (ग) ११. वह स्पर्धा करेगा। १२. वह शंका करेगा। १३. तू चेष्टा करेगा। १४. विद्या धर्म के लिए होगी (कृप्)। १५. चोर भाग जायेगा। १६. सूर्य एक बार फिर चमकेगा। १७. शिष्य काँपेगा। १८. लड़की लज्जित होगी। १९. वह सेवा करेगा, विद्या सीखेगा, वन्दना करेगा, यत्न करेगा, भिक्षा माँगेगा, प्रसन्न रहेगा और बढ़ेगा। २०. मैं धन पाऊँगा (लभ्), पढ़ूँगा (अधि + इ) और आनन्द करूँगा (रम्)। (घ) २१. इन छात्रों में एकता है, ये एक प्रकार से ही सब कार्य करते हैं। २२. एक स्थान पर एक बार मैं अकेला एकान्त में बैठा था, वहाँ एक ओर से एक सिंह आ पहुँचा।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) सर्वेषां विद्यानां पात्राणि०।	सर्वासां विद्यानां पात्रम्।	८१, ३३
(२) भवन्तः विद्यायां प्रमाणाः सन्ति।	भवन्तः विद्यायां प्रमाणं सन्ति।	८१

४. अभ्यास—(क) २ (ग) को बहुवचन बनाओ। (ख) एक शब्द के तीनों लिंगों के पूरे रूप लिखो। (ग) इन धातुओं के लृट् के पूरे रूप लिखोः—सेव्, लभ्, वृध्, मुद्, सह्, याच्, वृत्, भाष्, यत्, शिक्ष्, शुभ्, शी, त्रै, रम्, अधि + इ, कृप्, ईक्ष्।

५. वाक्य बनाओः—पात्रम्, आस्पदम्, स्थानम्, पदम्, भाजनम्, प्रमाणम्, एकस्यै, एकस्मात्, एकस्याः, एकस्मिन्, सेविष्यते, लप्स्यते, वर्धिष्ये, अध्येष्ये, रंस्ये।

६. संधि करोः—अच् + अन्तः। इक् + अन्तः। दिक् + अम्बरः। वाक् + ईशः। दिक् + ईशः। सत् + आचारः। सत् + उपदेशः। षट् + दर्शनम्। उत् + देश्यम्।

७. संधि-विच्छेद करोः—सच्चिदानन्दः। सदानन्दः। जगदीशः। दिगन्तः। तद्धितम्। दिग्गजः।

शब्दकोश—४५० + २५ = ४७५) **अभ्यास १९** (व्याकरण)

(क) द्वि (दो), उभ (दोनों), उभय (दोनों), (सर्वनाम)। द्विजः। (१. ब्राह्मण, २. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, ३. पक्षी, ४ दाँत), द्विरेफः (भौंरा)। बलम् (बल)। दम्पती (पति-पत्नी), पितरौ (माता-पिता), अश्विनौ (दोनों अश्विनीकुमार), द्विवारम् (दो बार), युगलम् (जोड़ा), युगम् (जोड़ा), द्वन्द्वम् (जोड़ा) (१२)। (ख) दीक्ष् (दीक्षा देना), भास् (चमकना), आ + लम्ब् (१ सहारा देना, २. सहारा लेना), स्रंस् (गिरना), ध्वंस् (नष्ट होना), व्यथ् (दुःखित होना)। (८)। (ग) द्विधा (दो प्रकार से)। (१)। (घ) द्वयम् (द्वयी) (दो), द्विविधः (दो प्रकार का), द्विगुणः (दुगुना)। (३)।

सूचनाः—(क) दम्पती-अश्विनौ, नित्य द्विवचनान्त। (ख) दीक्ष्-व्यथ्, सेवतेवत्।

व्याकरण (द्विशब्द, द्विवचनान्तशब्द, लङ् (आ०), जश्त्वसंधि)

१. द्विशब्द के तीनों लिंगों के रूप (केवल द्विवचन में) स्मरण करो। देखो शब्द० सं० ४०)।

२. सेव्—लङ् (आत्मनेपद)

				संक्षिप्तरूप	एक०	द्वि०	बहु०
असेवत	असेवेताम्	असेवन्त	प्र. पु.	धातु से पहले	अत	एताम्	अन्त
असेवथाः	असेवेथाम्	असेवध्वम्	म.पु.	अ +	अथाः	एथाम्	अध्वम्
असेवे	असेवावहि	असेवामहि	उ.पु.		ए	आवहि	आमहि

संक्षिप्त रूप लगाकर दीक्ष् आदि के रूप चलाओ। अदीक्षत, अभासत, आलम्बत, अक्षमत।

ॐनियम ८४—द्वि और उभ शब्द सदा द्विवचन में ही आते हैं। उभय (दोनों) शब्द तीनों वचनों में आता है। (उभ और उभय के रूप तीनों लिंगों में सर्ववत् चलेंगे)।

ॐनियम ८५—(क) दम्पती, पितरौ, अश्विनौ, इनके रूप द्विवचन में ही चलते हैं। इनके साथ क्रिया द्विवचन में आती है। दम्पती, पितरौ, अश्विनौ वा गच्छतः, हसतः, मोदेते। (ख) द्वय, युगल, युग, द्वन्द्व, ये चारों 'दो' अर्थ के बोधक हैं। ये शब्द के अन्त में जुड़ते हैं और नपुंसक लिंग एकवचन रहते हैं। इनके साथ क्रिया एक० में रहती है। जैसे—छात्रद्वयम्, छात्रयुगलम्, छात्रयुगं पुस्तकानि पठति।

नियम ८६—(सापेक्ष सर्वनाम) यत् और तत् शब्द सापेक्ष सर्वनाम हैं (जो...वह)। अतः यत् शब्द में जो लिंग, विभक्ति और वचन होगा, वही तत् शब्द में भी होगा। बुद्धिर्यस्य बलं तस्य। यानि शुभानि कर्माणि, तानि त्वया सेवितव्यानि।

ॐनियम ८७—'यत्' शब्द जब 'कि' अर्थ में आता है, तब वह नपुंसकलिंग एक० ही रहता है। उसने कहा कि अब मैं जाऊँगा—सः अभाषत यत् अहमधुना गमिष्यामि।

नियम ८८—(झलां जश् झशि) झलों (१, २, ३, ४, ऊष्म) को जश् (३, अपने वर्ग का तृतीय अक्षर) होता है, बाद में झश् (३, ४) हो तो। (यह नियम पद के बीच में लगता है।) जैसे—सिध् + धिः = सिद्धिः, ध् को द्। दघ् + धः = दग्धः। क्षुभ् + धः = क्षुब्धः। ऋध् + धः = ऋद्धः।

अभ्यास १९

१. उदाहरण-वाक्यः—१. दो बालक—द्वौ बालकौ। २. द्वे बालिके। ३. द्वे पुस्तके। ४. द्वाभ्यां बालकाभ्यां, द्वाभ्यां बालिकाभ्यां च पुस्तकानि वितर। ५. एतयो. द्वयोः छात्रयोः रामः पटुतरः। ६. दम्पती भ्रमतः। ७. पितरौ आगच्छतः। ८. अश्विनौ बलं वितरताम्। ९. उभौ बालकौ उभयं पुस्तकं (उभयानि पुस्तकानि) पठतः। १०. पशुयुगलं, पशुयुगं, पशुद्वन्द्वं, पशुद्वयं, पशुद्वयी वा अत्र चरति। ११. द्विजः शिष्यम् अदीक्षत, आलम्बत च; शिष्यश्च अवर्धत, अमोदत च। १२. नगरम् अध्वंसत, नराः अव्यथन्त च। १३. सिंहः वनं गाहते, छात्रश्च जलं गाहते।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. दो शिष्य दो बार दो पुस्तक पढ़ते हैं। २. दो कन्याएँ दो प्रकार से दो पत्र लिखती हैं। ३. दोनों (उभ, उभय) बालक दुगुना खाना खाते हैं। ४. दो छात्र (युगल, युग, द्वयम्, द्वयी) वहाँ खेलते हैं। ५. दो भौंरे दो प्रकार से घूम रहे हैं। ६. दम्पती ने पुत्र को अवलम्बन दिया। ७. अश्विनीकुमार ज्ञान दें। ८. जो लड़की यहाँ आई थी, वह गई। ९. जिस मनुष्य में विद्या है, उसमें बल है। १०. माता-पिता ने बालक से कहा कि जल लाओ। (ख) ११. गुरु ने दीक्षा दी। १२. सूर्य चमका। १३. भौंरे ने वृक्ष का सहारा लिया। १४. राजा ने चोर को क्षमा कर दिया। १५. बालक जल में घुसा (गाह्)। १६. बालिका का वस्त्र पैर से हटा (स्रंस्)। १७. घर गिर गया और बालक दुःखित हुआ (व्यथ्)। १८. चोर को शंका हुई (शङ्क्), वह डरा, काँपा और भागा। १९. मैंने गुरु की सेवा की, सुख पाया (लभ्), बढ़ा और प्रसन्न हुआ। २०. बालक ने सीखा, यत्न किया, भिक्षा माँगी, खेला, कूदा और सुखपूर्वक रमा (रम्)।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) छात्रद्वयं क्रीडतः।	छात्रद्वयं क्रीडति।	८५ (ख)
(२) दम्पती पुत्रम् अभाषत।	दम्पती पुत्रम् अभाषेताम्।	८५ (क)
(३) या बाला आगच्छत्, सः०।	या बाला आगच्छत्, सा०।	८६

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ख) द्वि और उभ शब्द के तीनों लिंगों के पूरे रूप लिखो। (ग) नित्य द्विवचनान्त शब्द कौन से हैं? लिखो। (घ) इनके लङ् के पूरे रूप लिखोः—सेव्, लभ्, वृध्, मुद्, सह्, याच्, वृत्, भाष्, यत्, शिक्ष्, रम्, स्पर्ध्, चेष्ट्।

५. वाक्य बनाओ—द्वौ, द्वे, उभौ, उभयम्, दम्पती, पितरौ, द्वयम्, यत्, अवर्धत, अमोदत, अयाचत, अशिक्षत, अचेष्टत, अद्योतत, आलम्बत, अक्षमत, अगाहत।

६. संधि करोः—सिध्+धिः। बुध्+धिः। शुध्+धिः। रुध्+धः। लुभ्+धः। लभ्+धः। आरभ्+धः। बुध्+धः। विध्+धः। दुघ्+धम्। युध्+धः।

७. सन्धि-विच्छेद करोः—शुद्धः। समृद्धः। वृद्धः। क्रुद्धः। लुब्धः। प्रारब्धः। सिद्धः। बुद्धिः। दग्धः।

शब्दकोष—४७५ + २५=५००) **अभ्यास २०** (व्याकरण)

(क) त्रिवर्गः (धर्म, अर्थ, काम तीनों), त्र्यम्बकः (शिव), त्रिपुरारिः (शिव)। त्रिपथगा (गंगा), त्रिवेणी (गंगा-यमुना का संगमस्थान), त्रिभुवनम् (तीनों लोक)। दार (स्त्री), अक्षत (अक्षत चावल), लाज (खील), असु (प्राण), प्राण (प्राण)। वर्षा (वर्षा), सिकता (रेत), समा (वर्ष), अप् (जल), अप्सरस् (अप्सरा), सुमनस् (फूल)। त्रिवारम् (तीन बार)। (१८)। (ग) त्रिधा (तीन प्रकार से)। (१)। (घ) त्रि (तीन), कति (कितने), त्रयम् (तीन), त्रयी (१. तीन, २. तीन वेद-ऋक्, यजुः, साम), त्रिगुणः (तिगुना), त्रिविधः (तीन प्रकार का)। (६)।

व्याकरण (त्रि, बहुवचनान्तशब्द, विधिलिङ्, चर्त्वसंधि)

१. त्रि शब्द के तीनों लिंगों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ४१)।

२. सेव्—विधिलिङ् (आत्मनेपद)

सेवेत	सेवेयाताम्	सेवेरन्	प्र० पु०
सेवेथाः	सेवेयाथाम्	सेवेध्वम्	म० पु०
सेवेय	सेवेवहि	सेवेमहि	उ० पु०

सं० रू० एक० द्वि० बहु०

एक०	द्वि०	बहु०	
एत	एतायाम्	एरन्	प्र० पु०
एथाः	एयाथाम्	एध्वम्	म० पु०
एय	एवहि	एमहि	उ० पु०

संक्षिप्त रूप लगाकर लभ्, स्पर्ध्, दीक्ष् आदि पूर्वोक्त धातुओं के रूप चलाओ।

*नियम ८९—(क) दार, अक्षत, लाज (लाजा), असु, प्राण, इनके रूप पुंलिंग में और बहुवचन में ही चलते हैं। दाराः, अक्षताः, लाजाः, असवः, प्राणाः। (ख) अप्, अप्सरस्, वर्षा, सिकता, समा, सुमनस्, इनके रूप स्त्रीलिंग में और बहुवचन में ही चलते हैं। (अप्सरस्, वर्षा, समा, सुमनस्, इनका कहीं-कहीं एकवचन में भी प्रयोग मिलता है)। आपः, अपः, अप्सरसः, वर्षाः, सिकताः, समाः, सुमनसः।

*नियम ९०—त्रि से अष्टादशन् (३ से १८) तक के सारे शब्द तथा कति शब्द सदा बहुवचन में ही आते हैं। कति के रूप हैं:—कति, कति, कतिभिः, कतिभ्यः, कतिभ्यः, कतीनाम्, कतिषु।

*नियम ९१—(क) (आदरार्थे बहुवचनम्) आदर प्रकट करने में एक के लिए भी बहु० हो जाता है। गुरवः पूज्याः। (ख) (अस्मदो द्वयोश्च) अहम् और आवाम् के स्थान पर 'वयम्' का प्रयोग होता है, यदि वक्ता विशिष्ट व्यक्ति हो तो। (ग) (जात्याख्यायाम्०) जातिवाचक शब्दों में एक० और बहु० दोनों होते हैं। ब्राह्मणः पूज्यः, ब्राह्मणाः पूज्याः। (घ) देशवाचक शब्दों में बहु० का प्रयोग होता है। नगर का नाम या 'देश' अन्त में होने पर एक० होगा। अहम् अङ्गान् वङ्गान् कलिङ्गान् विदर्भान् गौडान् वा अगच्छम्। पाटलिपुत्रम्, अङ्गदेशं वा अगच्छम्।

नियम ९२—(खरि च) झलों (१, २, ३, ४, ऊष्म) को चर् (१. उसी वर्ग का प्रथम अक्षर) होता है, बाद में खर् (१, २, श, ष, स) हो तो। सद् + कारः = सत्कारः। उद् + पन्नः = उत्पन्नः।

अभ्यास २०

१. उदाहरण-वाक्यः—१. त्रयः छात्राः, तिस्रः कन्याः, त्रीणि पुस्तकानि चात्र सन्ति । २. त्रयाणां छात्राणां, तिसृणां कन्यानां च एतानि त्रीणि वस्त्राणि सन्ति । ३. कति छात्राः अत्र क्रीडन्ति ? ४. छात्रत्रयमत्र क्रीडति । ५. छात्रत्रयी वेदत्रयीं पठति । ६. त्र्यम्बकः त्रिपुरारिः वा त्रिभुवनं भयात् त्रायते । ७. त्रिवर्गः मनुष्यस्य धनमस्ति । ८. त्रिवेण्यां त्रिपथगायाः अपः शिष्यः पिबति । ९. सः प्राणान् असून् वा अत्यजत् । १०. इमे दाराः, अमी अक्षताः, एते लाजाः सुखाय भवन्तु । ११. वर्षासु सिकतासु अप्सु च सुमनसः तरन्ति । १२. एताः अप्सरसः त्रिभुवने मोदेरन्, वर्धेरन् च । १३. एताः पञ्च समाः स गुरुं सेवेत, मोदेत च ।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. तीन गुरु, तीन लड़कियाँ और तीन वस्त्र यहाँ हैं । २. तीन छात्रों को और तीन छात्राओं को तीन पुस्तकें तीन बार दो । ३. ये तीन छात्र त्रिवर्ग के लिए त्र्यम्बक की सेवा करें । ४. त्रिवेणी में त्रिपथगा का जल शोभित होता है । ५. तीन कन्याएँ वेदत्रयी को तीन बार तीन प्रकार से पढ़ें । ६. न दुगुना खाओ और न तिगुना काम करो । ७. कितने वर्ष (समा) हुए, जब उसने प्राण छोड़े थे ? ८. उस स्त्री (दार), इन अक्षत और इन खीलों को यहाँ लाओ । ९. वर्षा में रेत पर जल (अप्) और फूलों (सुमनस्) को देखो । १०. ये अप्सराएँ हैं । **(ख)** (विधिलिङ्) ११. वह गुरु की सेवा करे । १२. मैं धन पाऊँ (लभ्) । १३. वह बढ़े और प्रसन्न हो । १४. यहाँ सुख होवे (वृत्) । १५. बालक खेले और कूदे । १६. मैं देखूँ (ईक्ष्), बोलूँ (भाष्), यत्न करूँ, सीखूँ और आनन्द करूँ (रम्) । १७. चोर तिगुनी चेष्टा करे और भाग जाए । १८. वह तीन बार स्पर्धा करे । १९. वह तीन प्रकार से आशंका करे। २०. वह भिक्षा माँगे ।

३. अशुद्ध वाक्य	**शुद्ध वाक्य**	**नियम**
(१) तं दारम्, इमम् अक्षतम्, इमं लाजम्० ।	तान् दारान्, इमान् अक्षतान्, एतान् लाजान्० ।	८९ क ३३
(२) वर्षायां सिकतायाम् आपम्० ।	वर्षासु सिकतासु अपः सुमनसश्च० ।	८९ (ख)
(३) कतिः समा अगच्छत्, स प्राणम्० ।	कति समाः अगच्छन्, स प्राणान्०	८९,९०

४. अभ्यास—**(क)** २ (ख) को बहुवचन बनाओ । **(ख)** २ (ख) को लट्, लोट् और लङ् में बदलो । **(ग)** त्रि शब्द के तीनों लिंगों के रूप लिखो । **(घ)** नित्य बहुवचनान्त शब्दों के नाम और उनके लिंग बताओ । **(ङ)** किन स्थानों पर एक० के स्थान पर बहु० होता है, सोदाहरण लिखो ।

५. वाक्य बनाओः—त्रयः, तिस्रः, त्रीणि, कति, दाराः, असून्, प्राणान्, अपः, वर्षासु ।

६. संधि करोः—सद् + कर्म । उद् + पथः । तद् + परः । उद् + साहः ।

७. संधि-विच्छेद करो—सत्क्रिया । सत्पथः । सत्कर्म । उत्कृष्टम् । उत्पन्नः ।

शब्दकोष—५०० + २५ = ५२५) **अभ्यास २१** (व्याकरण)

(क) गुणः (१. गुण, २. रस्सी, धागा, ३. गुना), चतुर्वर्गः (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चारों), चतुर्भुजः (विष्णु)। (३)। (ख) [नी, हृ (ले जाना), आनी (लाना)], अनुनी (मनाना), अभिनी (अभिनय करना), अपनी (हटाना), उपनी (यज्ञोपवीत देना), परिणी (विवाह करना), प्रणी (ग्रन्थ लिखना), निर्णी (निर्णय करना)। प्रहृ (प्रहार करना), आहृ (१. लाना, २. संग्रह करना), संहृ (१. नष्ट करना, २. रोकना), विहृ (विहार करना), परिहृ (छोड़ना), अपहृ (चुराना), उपहृ (भेंट में देना), उद्धृ (उद्धार करना), उदाहृ (बोलना), व्यवहृ (व्यवहार करना), व्याहृ (बोलना)। (१८)। (ग) चतुर्धा (चार प्रकार से), चतुर्वारम् (चार बार)। (२)। (घ) चतुर् (चार), चतुर्गुणः (चौगुना)। (२)।

सूचना—(क) गुण—चतुर्भुज, रामवत्। (ख) नी—व्याहृ, भवतिवत्।

व्याकरण (चतुर्, नी, हृ (उभय०), उपसर्ग, भ्वादिगण, विसर्गसंधि)

१. चतुर् शब्द के तीनों लिंगों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० ४२)।

२. नी और हृ धातु के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० सं० २४, २५)।

नियम ९३—(उपसर्ग-परिचय) (उपसर्गाः क्रियायोगे) (क) धातु से पहले लगने वाले प्र, परा आदि को उपसर्ग कहते हैं। ये धातुओं और कृदन्त शब्दों के पहले ही लगते हैं। इनके लगाने से धातु का अर्थ प्रायः बदल जाता है। (देखो ऊपर शब्दकोष ख)। उपसर्गों के साथ धातुओं के अर्थ जहाँ दिये गये हैं, वहाँ उन्हें शुद्ध स्मरण कर लें। कहा भी है—उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते। प्रहाराहारसंहारविहारपरिहारवत्॥ (ख) ये २२ उपसर्ग हैं—प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप। इसके लिए यह श्लोक स्मरण कर लें--प्रपरापसमन्ववनिर्निसो, दुरतिदुष्प्रतिसूदधिपर्यपि। (तदनु) व्याङधिनी उप विंशतिर्द्विसहिते-त्युपसर्गसमाह्वयाः॥

नियम ९४—(गण-परिचय, भ्वादिगण) भ्वादिगण की धातुओं की ये विशेषताएँ हैं। इनसे गण पहचानें। (१) (कर्तरि शप्) धातु और प्रत्यय (ति, तः आदि) के बीच में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में 'अ' लगता है। जैसे—अति, अतः आदि। (सूचना—धातु और प्रत्यय के बीच में आनेवाले को 'विकरण' कहते हैं।) (२) धातु को गुण होता है, अर्थात् अन्तिम स्वर या अन्तिम स्वर से पूर्व इ, उ, ऋ को क्रमशः ए, ओ, अर् हो जाता है। (भ्वादि० की धातुएँ अभ्यास १, २, ३, ४, ५, ७, ८ में हैं।) (३) लट् में गण के कारण कोई अन्तर नहीं होता।

नियम ९५—(विसर्जनीयस्य सः) विसर्ग के बाद खर् (१, २, श, ष, स) हो तो विसर्ग को स् हो जाता है। (चवर्ग बाद में हो तो श्चुत्वसंधि भी)। जैसे—हरिः + त्रायते = हरिस्त्रायते। रामः + तरति = रामस्तरति। निः + चलः = निश्चलः।

अभ्यास २१

१. उदाहरण-वाक्यः––१. चत्वारः छात्राः, चतस्रः कन्याः, चत्वारि पुस्तकानि च अत्र वर्तन्ते। २. चतुर्णां छात्राणां, चतसृणां कन्यानाम् एतानि चत्वारि वस्त्राणि सन्ति। ३. स चतुर्भुजं चतुर्वर्गार्थं सेवते। ४. सः अजां हरति, शत्रुषु प्रहरति, जलम् आहरति, शत्रुं संहरति, वने विहरति, असत्यं परिहरति, धनम् अपहरति, देवेभ्यः बलिमुपहरति, वेदम् उद्धरति, वचनम् उदाहरति, धर्मे व्यवहरति, सत्यं च व्याहरति। ५. सः गुरुम् अनुनयति, कृष्णम् अभिनयति, जलम् आनयति, शत्रून् अपनयति, शिष्यम् उपनयति, कन्यां च परिणेष्यति, पुस्तकं प्रणेष्यति, विवादस्य च कारणं निर्णेष्यति।

२. संस्कृत बनाओः––(क) १. चार शिष्य, चार कन्याएँ, चार फल और चार पुस्तकें यहाँ हैं। २. चार बालकों को और चार बालिकाओं को ये चार फल दो। ३. चार शिष्य चतुर्वर्ग के लिए चतुर्भुज की चार बार वन्दना करते हैं। ४. चार छात्रों को ये फल चार बार चार प्रकार से दो। (ख) ५. राजा शत्रु पर प्रहार करता है। ६. वह धन संग्रह करता है। ७. वह धन चुराता है। ८. मैं शत्रुओं का संहार करूँगा। ९. मैं जल में विहार करूँगा। १०. मैं दुःखों का परिहार करूँगा। ११. दुर्जन कन्या का अपहरण करता है। १२. वह कन्या को फूल उपहार देता है। १३. वह धर्म का उद्धार करे। १४. वह कथा कहे (उदाहृ)। १५. वह सत्य व्यवहार करे। १६. वह असत्य न बोले (व्याहृ)। १७. वह पिता को मनाता है। १८. वह राम का अभिनय करता है। १९. तू दुःखों को दूर करता है (अपनी)। २०. तू फल ला। २१. गुरु शिष्य का उपनयन करे (उपनी)। २२. राम सीता से विवाह करे। २३. कवि पुस्तक रचे (प्रणी)। २४. राजा विवाद का निर्णय करेगा।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) चत्वारः कन्या, चत्वारः फलानि०।	चतस्रः कन्याः, चत्वारि फलानि०।	३३
(२) दुर्जनः कन्यायाः अपहरति।	दुर्जनः कन्याम् अपहरति।	१३

४. अभ्यासः––(क) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ख) चतुर् शब्द के तीनों लिंगों के पूरे रूप लिखो। (ग) नी और हृ धातु के दोनों पदों में दसों लकारों में पूरे रूप लिखो। (घ) उपसर्गों के पूरे नाम बताओ। (ङ) भ्वादिगण की मुख्य विशेषताएँ बताओ। (च) उपसर्ग लगने से अर्थ-परिवर्तन के १० उदाहरण बताओ।

५. वाक्य बनाओः––चत्वारः, चतस्रः, चत्वारि, प्रहरति, आहरेत्, उपाहरत्, परिणेष्यति, प्रणयेत्।

६. संधि करोः—कः + तत्र। बालः + चलति। बालाः + तरन्ति। गुरुः + तिष्ठति। रामः + तत्र। हरिः + तथा। रामः + त्रायते। निः + सारः।

७. संधि-विच्छेद करोः—कस्तिष्ठति। शिवस्त्रायते। हरिश्चलति। रामस्तिष्ठति। रामस्तथा।

शब्दकोश—५२५ + २५ = ५५०) **अभ्यास २२** (व्याकरण)

(क) शरीरम् (शरीर), मुखम् (मुँह), विमानम् (विमान), धूम्रयानम् (रेल-गाड़ी)। (४)। (ख) [कृ (करना)], अनुकृ (अनुकरण करना), अधिकृ (अधिकार करना), अपकृ (बुराई करना), अलंकृ (सजाना), आविष्कृ (आविष्कार करना), उपकृ (उपकार करना), तिरस्कृ (अपमान करना), नमस्कृ (नमस्कार करना), संस्कृ (शुद्ध करना), स्वीकृ (स्वीकार करना), प्रतिकृ (प्रतिकार करना)। (११)। (घ) (पञ्चन्, षष्, सप्तन्, अष्टन्, नवन्, दशन्); प्रथमः (पहला), द्वितीयः (दूसरा), तृतीयः (तीसरा), चतुर्थः (चौथा), पञ्चमः (पाँचवाँ), षष्ठः (छठा), सप्तमः (सातवाँ), अष्टमः (आठवाँ), नवमः (नवाँ), दशमः (दसवाँ)। (१०)।

व्याकरण (पञ्चन् से दशन्, कृ, अदादिगण, उत्वसन्धि)

१. पञ्चन् से दशन् शब्द तक के पूरे रूप (बहुवचन में) स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ४३ से ४८)। **सूचना**—पञ्चन् से अष्टादशन् (५ से १८) तक संख्याओं के रूप केवल बहु० में चलते हैं। तीनों लिंगों में वही रूप होंगे। अभ्यास ४ में दिये हुए 'पञ्च' आदि के मूल शब्द पञ्चन्, षष्, सतन्, अष्टन्, नवन्, दशन् हैं। एक से दश तक की संख्याओं के संख्येय (व्यक्ति या वस्तु-बोधक क्रमवाचक विशेषण) शब्द क्रमशः प्रथम आदि ऊपर दिये गये हैं। जैसे—एक का प्रथम, द्वि का द्वितीय आदि। ३. प्रथम आदि के रूप पुं० में रामवत्, स्त्री० में रमा या नदीवत्, नपुं० में गृहवत् चलेंगे। द्वितीय आदि से स्त्रीलिंग प्रत्यय (आ या ई) लगने पर इनका तिथि अर्थ भी हो जाता है। ४. कृ धातु के दोनों पदों में रूप स्मरण करो। (देखो धातु सं० ५९)।

*नियम ९६—लङ् लकार में 'अ' शुद्ध धातु से ही पहले लगता है, उपसर्ग से पहले कभी नहीं। अतः उपसर्गयुक्त धातुओं में लङ् में धात से पहले 'अ' लगाकर उपसर्ग मिलावें। (संधिकार्य प्राप्त हो तो उसे भी करें)। जैसे—हृ > अहरत्। संहृ > समहरत्। व्यहरत्, प्राहरत्। उपानयत्, अन्वकरोत्।

*नियम ९७—(अदादिगण) अदादिगण की धातुओं में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में कोई विकरण धातु और प्रत्यय के बीच में नहीं लगता है। केवल ति, तः, अन्ति आदि लगते हैं। धातु में लट् आदि में एक० में गुण होता है, अन्यत्र नहीं।

*नियम ९८—(ससजुषो रुः) पद के अन्तिम स् और सजुष् के ष् को रु (र् या :) होता है।

*नियम ९९—(अतो रोरप्लुतादप्लुते) ह्रस्व अ के बाद रु को उ हो जाता है, बाद में ह्रस्व अ हो तो। [इस उ को पहले अ के साथ गुण करके ओ हो जाता है और बाद के अ को पूर्वरूपसंधि। अर्थात् अस् (अः) + अ = ओऽ]। जैसे—रामः + अस्ति = रामोऽस्ति। कः + अत्र = कोऽत्र। सः + अयम् = सोऽयम्। (स्मरण रखें कि रामः कः आदि में स् का ही विसर्ग है। जहाँ अन्य नियम नहीं लगेंगे, वहाँ नियम ९८ से र् रह जायगा। हरिः + अवदत् = हरिरवदत्।

अभ्यास २२

१. उदाहरण-वाक्य—१. पञ्च बालकाः, षड् बालिकाः, सप्त पुस्तकानि, अष्ट जनाः, नव वस्त्राणि, दश फलानि चात्र सन्ति। २. प्रथमः छात्रः, द्वितीया बाला, तृतीयं पुस्तकं, चतुर्थं पुस्तकं, पञ्चमः पुत्रः, षष्ठः कविः, सप्तमं दिनम्, अष्टमं वर्षं, नवमी तिथिः, दशमः क्रोशः। ३. शिष्यः गुरुं गुरोः वा अनुकरोति। ४. नृपः राज्यम् अधिकरोति। ५. दुर्जनः सज्जनस्य अपकरोति। ६. नृपः चोरं तिरस्करोति। ७. शिष्यः मुनित्रयं नमस्करोति। ८. नरः दुःखं प्रतिकुर्यात्। ९. नृपः सज्जनस्य उपकरिष्यति। १०. विद्या ज्ञानं संस्करोति। ११. कन्या शरीरम् अलंकरोति। १२. प्राज्ञः विमानं धूम्रयानं चाविष्करोति। १३. यतिरेतद् धनं स्वीकरोति। १४. स गुरुम् अन्वकरोत्। १५. गुरुः शिष्यस्य उपाकरोत् उपकारं वाऽकरोत्।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. पाँच पुस्तकें, छः छात्र, सात लड़कियाँ, आठ आसन, नौ गुरु, दस पाठक यहाँ हैं। २. पाँचवीं पुस्तक, छठा छात्र, सातवीं लड़की, आठवाँ आसन, नवें गुरु, दसवें राजा भी यहाँ पर ही हैं। (ख) ३. वह पिता का अनुकरण करता है। ४. शत्रु नगर पर अधिकार करता है। ५. चोर मेरा अपकार करता है। ६. मूर्ख विद्वान् का तिरस्कार करता है। ७. मैं गुरु को नमस्कार करता हूँ (नमस्कृ)। ८. तूने शत्रुओं का प्रतिकार किया (प्रतिकृ)। ९. मैंने छात्रों का उपकार किया (उपकृ)। १०. बालिका ने अपने शरीर को अलंकृत किया। ११. गुरु आसन को अलंकृत करता है। १२. बुद्धिमान् विमान और रेलगाड़ी का उपयोग करते हैं। १३. शिष्य इस पुस्तक को स्वीकार करता है। १४. मैं शरीर को शुद्ध करता हूँ। १५. संस्कृत भाषा मनुष्य को संस्कृत करती है (संस्कृ)।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) नगरेऽधिकरोति।	नगरमधिकरोति।	१३
(२) अप्रतिकरोः। ओपकरवम्। आलंकरोत्।	प्रत्यकरोः। उपाकरवम्। अलमकरोत्।	९६

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, विधिलिङ् और लट् में बदलो। (ख) पञ्चन् से दशन् तक के पूरे रूप लिखो। (ग) कृ धातु के दोनों पदों में दसों लकारों में रूप लिखो। (घ) उपसर्गयुक्त धातुओं के लङ् में 'अ' प्रारम्भ में किस प्रकार लगता है, नी, हृ, कृ के १० उदाहरण देकर बताओ। (ङ) अदादिगण की धातुओं की विशेषता बताओ।

५. वाक्य बनाओः—प्रथमः, षष्ठः, अनुकरोति, संस्करोति, उपकरिष्यति।

६. संधि करोः—सः + अगच्छत्। एषः + अत्र। कः + अयम्। रामः + अवदत्। देवः + अधुना। नृपः + अकरोत्। छात्रः + अपठत्। सः + अयम्। हरिः + असौ। भानुः + अस्ति। कविः + अत्र।

७. संधि-विच्छेद करोः—कोऽत्रास्ति। रामोऽहसत्। देवोऽयम्। सोऽपि। कोऽपि।

शब्दकोष—५५० + २५ = ५७५) **अभ्यास २३** (व्याकरण)

(क) राहुः (राहु), केतुः (१. केतु ग्रह, २. ध्वजा), कक्षा (श्रेणी)। (३)। (ख) अद् (खाना)। ग्रस् (निगलना), राज् (शोभित होना), बाध् (दुःख देना), लङ्घ् (लाँघना)। (५)। (घ) एकादशन् (ग्यारह), द्वादशन् (बारह), त्रयोदशन् (तेरह), चतुर्दशन् (चौदह), पञ्चदशन् (पन्द्रह), षोडशन् (सोलह), सप्तदशन् (सत्रह); अष्टादशन् (अठारह), एकोनविंशतिः (उन्नीस, विंशतिः (बीस), त्रिंशत् (तीस), चत्वारिंशत् (चालीस), पञ्चाशत् (पचास), षष्टिः (साठ), सप्ततिः (सत्तर), अशीतिः (अस्सी), नवतिः (नब्बे), [शतम् (सौ)]। (१७)।

सूचना—(क) राहु-केतु, भानुवत्। कक्षा, रमावत्। (ख) ग्रस्-लङ्घ् सेवतेवत्।

व्याकरण (संख्या ११ से १००, अद्, जुहोत्यादि०, उत्वसंधि)।

१. अद् धातु के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० सं० २६)।

*नियम १००—(क) विंशति (२०) से बाद के सभी संख्यावाची शब्द केवल एकवचन में आते हैं:—'विंशत्याद्याः सदैकत्वे सर्वाः संख्येयसंख्ययोः।' (ख) एकादशन् से अष्टादशन् (११ से १८) तक के रूप दशन् के तुल्य बहु० में ही चलेंगे। (ग) एकोनविंशतिः (१९) से नवनवतिः (९९) तक सारे शब्दों के रूप स्त्रीलिंग एक० में ही चलते हैं। जिनके अन्त में 'इ' है (जैसे-विंशति, षष्टि आदि), उनके रूप एक० में ही मति (देखो शब्द सं० १४) के तुल्य चलेंगे। जिनके अन्त में 'त्' हैं (जैसे, त्रिंशत् आदि), उनके रूप स्त्रीलिंग एक० में सरित् (देखो शब्द सं० १९) के तुल्य चलेंगे। (घ) संख्येय (क्रमवाचकविशेषण) बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें—(१) एक से दश तक के संख्येय प्रथम, द्वितीय आदि हैं। (देखो अभ्यास २२)। (२) ११ से १८ तक के संख्येय शब्दों में अन्त में 'अ' लग जाता है जैसे, एकादशः (११वाँ)। (३) १९ से आगे संख्येय शब्दों में अन्त में 'तम' या 'अ' लगता है। जैसे, विंशतितमः, विंशः (२०वाँ)। (४) संख्येय शब्दों के रूप तीनों लिंगों में चलते हैं:—पुंलिंग में रामवत्, नपुंसक० में गृहवत्। स्त्रीलिंग में अन्त में 'ई' लगाकर 'नदीवत्'। स्त्रीलिंग में केवल प्रथमा, द्वितीया, तृतीया शब्द रमावत् होते हैं।

*नियम १०१—(जुहोत्यादिगण) जुहोत्यादिगण की विशेषता यह है कि इसमें धातु और प्रत्यय के बीच में विकरण नहीं लगता है, जैसे अदादि० में। परन्तु धातु को द्वित्व (दो बार पढ़ना) होता है। एक० में धातु को गुण होता है। (देखो अभ्यास ३८-४०)। हु > जुहोति, दा > ददाति, धा > दधाति।

*नियम १०२—(हशि च) ह्रस्व अ के बाद रु (स् या :) (नियम ९८) को 'उ' हो जाता है, बाद में हश् (३, ४, ५, ह, य, व, र, ल) हों तो। (नियम ९९ बाद में अ हो तब लगता है, यह बाद में हश् हो तो) उ करने पर अ + उ को ओ गुण हो जाता है। अर्थात् अः (अस्) + हश् = ओ + हश्। जैसे-रामः+वदति = रामो वदति। ऐसे ही रामो वन्द्यः, मेघो वर्षति, नरो हसति, बालो लिखति।

अभ्यास २३

१. उदाहरण-वाक्यः—१. एकादश छात्राः, द्वादश बालिकाः, त्रयोदश पुस्तकानि, चतुर्दश फलानि, एकोनविंशतिः पुष्पाणि चात्र सन्ति। २. प्रथमायां कक्षायां विंशतिः, द्वितीयायां त्रिंशत्, तृतीयायां चत्वारिंशत्, चतुर्थ्यां पञ्चाशच्च छात्राः सन्ति। ३. बालो भोजनम् अत्ति, अत्तु, अत्स्यति, अद्यात्, आदत् वा। ४. राहुः सूर्यं ग्रसते। ५. दुःखं मां बाधते। ६. सूर्यः मरीचिभिः राजते। ७. शिष्यः गिरिं लङ्घते। ८. तृतीयायाः कक्षायाः एकादशः, चतुर्थ्याः द्वादशश्च छात्रः अत्रास्ति। ९. नवम्याः कक्षायाः विंशतितमो (विंशो वा) दशम्याश्च त्रिंशत्तमो (त्रिंशो) वा छात्रोऽत्रास्ति। १०. काऽद्य तिथिरस्ति ? पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी वा।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. प्रथम कक्षा में १९, द्वितीय में २०, तृतीय में ३०, चतुर्थ में ४०, पंचम में ५०, षष्ठ में ६०, सप्तम में ७०, अष्टम में ८०, नवम में ९० और दशम में १०० छात्र हैं। २. प्रथम कक्षा के ११वें, द्वितीय के १५ वें, तृतीय के १६ वें, चतुर्थ के २० वें, पंचम के ४० वें, षष्ठ के ५० वें, सप्तम के ६० वें, अष्टम के ७० वें, नवम के ८० वें और दशम के ९० वें छात्र को गुरु जी (गुरवः) बुला रहे हैं। **(ख)** ३. पुत्र खाना खाता है (अद्)। ४. बालक फल खावे। ५. बालिका भात खायेगी। ६. शिष्य ने खाना खाया। ७. राम को फल खाना चाहिए। **(ग)** ८. राहु सूर्य को ग्रसता है (ग्रस्)। ९. केतु चन्द्रमा को ग्रसता है। १०. राजा शोभित होता है (राज्)। ११. पाप मुझको दुःख देता है (बाध्)। १२. सेनापति पर्वत को लाँघता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) दशमे कक्षायां शतानि छात्राः।	दशम्यां कक्षायां शतं छात्राः।	३३,१०० (क)
(२) सप्तमस्य कक्षायाः षष्टिः०।	सप्तम्याः कक्षायाः षष्टितमं०।	३३,१०० (घ)
(३) बालकः फलम् अदतु, अदेत् वा।	बालकः फलम् अत्तु, अद्यात् वा।	९७, धातुरूप

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ख) २ (ग) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो। (ग) इनके संख्या और संख्येय वाचक शब्द बताओः—११ से २० तक, ३०, ४०, ५०, ६०, ७०, ८०, ९०, १००। (घ) अद् धातु के दसों लकारों के रूप लिखो। (ङ) जुहोत्यादिगण की विशेषताएँ लिखो।

५. वाक्य बनाओः—एकादश, एकादशः, विंशतिः, विंशतितमः, विंशः, त्रिंशत्तमः, त्रिंशः, शतम्, अत्ति, आदत्, अत्स्यति।

६. संधि करोः—रामः + गच्छति। बालकः + वदति। नरः + हसति। देवः + याति। कृष्णः + जयति। छात्रः + वा। शिष्यः + भोजनम्। पुत्रः + दुग्धम्। कः + वा। कः + न।

७. संधि-विच्छेद करोः—बालो वदति। नृपो वा। पुत्रो याति। शिष्यो भाषते।

शब्दकोष—५७५ + २५ = ६००) **अभ्यास २४** (व्याकरण)

(क) संख्या (गिनती), कीर्तिः (यश)। (२)। (ख)। [अस् (होना)], प्रथ् (फैलना, यश आदि का), त्वर् (शीघ्रता करना), क्षुभ् (क्षुब्ध होना), स्पन्द् (फड़कना, हिलना), भ्रंश् (गिरना). भ्राज् (चमकना)। (६)। (ग) अद्यत्वे (आजकल), अतः (इसलिए), शनैः (धीरे), प्रायः (अक्सर), मुहुः (बारबार)। (५)। (घ) सहस्रम् (हजार), अयुतम् (१० हजार), लक्षम् (लाख), प्रयुतम् (१० लाख), नियुतम् (१० लाख), कोटिः (करोड़), अर्बुदम् (अरब). खर्वम् (१ खरब), नीलम् (१ नील), पद्मम् (१ पद्म), शंखम् (१ शंख), महाशंखम् (महाशंख)। (१२)।

सूचना—(क) संख्या, रमावत्। कीर्ति, मतिवत्। (ख) प्रथ्–भ्राज्, सेवतेवत्।

व्याकरण (संख्याएँ, अस्, दिवादि०, यत्वसंधि)

१. अस् धातु के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० २७)।

❀ **नियम १०३**—(क) शतम्, सहस्रम्, अयुतम् आदि एक० में ही आते हैं। कोटि स्त्रीलिंग है. शेष सब नपुंसक०। जैसे—शतं सहस्रं वा छात्राः, नराः, नार्यः, गृहाणि। संख्यावाचक शब्द पहले होने पर या विशेषरूप में प्रयुक्त होने पर ये शब्द द्वि० या बहु० में भी आते हैं। (ख) शतम् आदि के रूप एक० में गृहवत् चलेंगे। कोटि के मतिवत्। (ग) २१, ३१, ४१ आदि संख्याशब्द बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें। (देखो परिशिष्ट, संख्याशब्द)। (१) विंशतिः, त्रिंशत् आदि के पूर्व एक, द्वि, त्रि आदि शब्द लगाकर क्रमशः ये संख्याएँ बनती हैं। (२) 'एक' शब्द सब स्थानों पर 'एक' ही रहता है। केवल एकादश में दीर्घ होता है। एकविंशतिः। (३) द्वि, त्रि और 'अष्टन्' शब्दों को 'विंशति' आदि से पूर्व क्रमशः द्वा, त्रयस्, अष्टा हो जाता है, केवल अशीति को छोड़कर। (बाद में संधि-नियम भी लगेंगे)। द्वाविंशतिः, त्रयस्त्रिंशत्, अष्टादश। परन्तु द्व्यशीतिः, त्र्यशीतिः, अष्टाशीतिः ही होंगे। (४) चतुर्, पञ्च, षट् (ड्), सप्त, नव ये ऐसे ही रहते हैं। केवल संधि नियम लगेंगे। १६ के लिए षोडश है। (५) २९, ३९ में ९ के लिए 'नव' लगता है या अगली संख्या से पूर्व एकोन या ऊन लगाकर रूप बनते हैं।

❀ **नियम १०४**—(दिवादिगण) (दिवादिभ्यः श्यन्) दिवादिगण की विशेषता यह है कि धातु और प्रत्यय के बीच में 'य' लगता है। धातु को गुण नहीं होता।

❀ **नियम १०५**—(भोभगोअघोअपूर्वस्य योऽशि) भोः, भगोः, अघोः शब्द और अ या आ के बाद रु (नियम ९८) को य् होता है, बाद में अश् (स्वर, ३, ४, ५, ह य व र ल) हों तो। (यदि बाद में व्यंजन हो तो य् का लोप हो जाता है, स्वर बाद में हो तो लोप ऐच्छिक है। य् का लोप होने पर संधिकार्य नहीं होता। अः या आः + अश् = अ या आ + अश्, अर्थात् स् या विसर्ग नहीं रहता। देवाः + गच्छन्ति = देवा गच्छन्ति। ऐसे ही बाला हसन्ति, नरा आगच्छन्ति। राम इच्छति। क एषः।

अभ्यास २४

१. उदाहरण-वाक्यः—१. एताः संख्याः सन्ति, शतं सहस्रं लक्षं प्रयुतं कोटिः पद्मं शंखं महाशंखं च। २. अद्यत्वे यस्य समीपे धनमस्ति, तस्य कीर्तिः प्रथते। ३. सेनापतिः त्वरते। ४. दुर्जनः प्रायः क्षोभते। ५. मम नेत्रं मुहुः स्पन्दते। ६. सूर्यो भ्राजते। ७. एकविंशतिः, द्वाविंशतिः, त्रयस्त्रिंशत्, चतुश्चत्वारिंशत्, पञ्चपञ्चाशत्, षट्षष्टिः, सप्तसप्ततिः, अष्टाशीतिः, नवनवतिः (एकोनशतम्) वा मनुष्याः। ८. रामः अस्ति, अस्तु, आसीत्, स्यात्, भविष्यति वा।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १.२१ मनुष्य, ३१ कन्याएँ, ४२ पुस्तकें, ५३ फल, ६४ फूल, ७५ वस्त्र, ८६ विद्यालय और ९७ पाठशालाएँ हैं। २. २३ फल, ३४ फूल, ४५ पुस्तकें, ५६ वस्त्र, ६७ कन्याएँ, ७८ मनुष्य, ८९ दिन, ९८ वर्ष। ३. २ सौ, ३ सहस्र, १ हजार, १० हजार, १ लाख, १० लाख, १ करोड़, १० करोड़, १ अरब, १० अरब, १ खरब, १० खरब, १ नील, १० नील, १ पद्म, १० पद्म, १ शंख, १० शंख, महाशंख। (ख) ४. आजकल धन ही धर्म और सत्य है। ५. राम की कीर्ति फैल रही है। ६. उसकी आँख धीरे-धीरे फड़क रही है। ७. वह प्रायः क्षुब्ध हो जाता है। ८. कृष्ण बार-बार शीघ्रता करता है। ९. बालक घर के ऊपर है, अतः वहाँ से गिरता है (भ्रंश्)। १०. सूर्य की किरणें चमकती हैं (भ्राज्)। (ग) ११. वह है। १२. मैं हूँ। १३. तू भी है। १४. वह था। १५. तू भी था। १६. मैं ही था। १७. वह वहाँ होगा। १८. तू भी वहाँ होगा। १९. मैं यहाँ ही रहूँगा। २०. वह यहाँ रहे। २१. तू वहाँ रहना। २२. मैं यहीं होऊँ।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) अहम् आसीत्, आसीः, आस।	अहम् आसम्।	धातुरूप
(२) अहम् असिष्यामि, भविष्यति।	अहं भविष्यामि।	"
(३) त्वम् अस, असेः, अस्तु वा।	त्वम् एधि, स्याः वा।	"

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो। (ख) २ (ग) को द्विवचन और बहुवचन में बदलो। (ग) अस् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो। (घ) १ से सौ तक पूरी गिनती संस्कृत में बताओ। (ङ) दिवादिगण की विशेषता बताओ।

५. वाक्य बनाओः—अस्ति, स्तः, अस्तु, एधि, आसीत्, आसन्, आसीः, आसम्, स्यात्, स्युः, स्याम। प्रथताम्, स्पन्देत, अभ्रंशत, भ्राजिष्यते, त्वरते।

६. संधि करोः—देवाः + हसन्ति। नराः + गच्छन्ति। छात्राः + लिखन्ति। कन्याः + आगच्छन्ति। रामः + ऐच्छत्। पुत्राः + इच्छन्ति। शिष्याः + वदन्ति। बालः + इच्छति। सः + आगच्छत्।

७. संधि-विच्छेद करो—छात्रा हसन्ति। राम इच्छति। स एव। पुत्र आगच्छति। राम इव। कन्या इच्छन्ति। बाला एते। शिष्या अमी। नरा इमे। क एष। राम इति।

शब्दकोष—६०० + २५ = ६२५) **अभ्यास २५** (व्याकरण)

(क) सखि (मित्र), शाटिका (साड़ी), तारस्वरेण (उच्च स्वर से)। (३)। [(ख) ब्रू (बोलना)।] (ग) उच्चैः (१. ऊपर, २. ऊँचा, ३. ऊँचे स्वर से), नीचैः (१. नीचे, २. नीचा, ३. धीरे स्वर से)। (२)। (घ) सुन्दरम् (सुन्दर), समीचीनम् (सुन्दर, अच्छा), शोभनम् (सुन्दर), मधुरम्, (मीठा), शीतलम् (ठंडा), उष्णम् (गर्म), कोमलम् (कोमल), तीक्ष्णम् (१. तेज, २. तीखा)। स्वकीयः (अपना), परकीयः (पराया), त्वदीयः (तेरा), मदीयः (मेरा), भवदीयः (आपका), तदीयः (उसका), श्वेतः (१. सफेद, २. स्वच्छ), हरितः (हरा), नीलः (नीला), पीतः (पीला), रक्तः (लाल), कृष्णः (काला)। (२०)।

व्याकरण (सखि, ब्रू, स्वादि०, गुण, वृद्धि, संप्रसारण, सुलोपसन्धि)

१. सखि शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० ३)।

२. ब्रू धातु के उभयपद के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० २८)। लृट् में ब्रू को वच् हो जाता है, अतः वक्ष्यति, वक्ष्यतः आदि रूप बनेंगे।

*नियम १०६—दीर्घ, गुण, वृद्धि, संप्रसारण आदि के लिए यह विवरण-पत्र ठीक स्मरण कर लें। ऊपर मूल स्वर दिये गये हैं, उनके स्थान पर गुण, वृद्धि आदि कहने पर ऊपर के मूल स्वर के नीचे गुण आदि के सामने जो स्वर आदि दिये गये हैं, वे होंगे। आगे जहाँ भी गुण, वृद्धि, संप्रसारण आदि कहा जाय, वहाँ इस सारणी के अनुसार कार्य करें। (रिक्त स्थानों पर वह कार्य नहीं होता)।

१. स्वर	अ, आ	इ, ई	उ, ऊ	ऋ ॠ	ऌ	ए	ऐ	ओ	औ
२. दीर्घ	आ	ई	ऊ	ॠ	—	—	—	—	—
३. गुण	अ	ए	ओ	अर्	अल्	ए	—	ओ	—
४. वृद्धि	आ	ऐ	औ	आर्	आल्	ऐ	ऐ	औ	औ
५. यण् (सन्धि)	—	य्	व्	र्	ल्	–	–	–	—
६. अयादि (,,)	—	–	–	–	–	अय्	आय्	अव्	आव्।

७. संप्रसारण—य् को इ, व् को उ, र् को ऋ, ल् को ऌ। (यण्-संधि का उलटा कार्य)

*नियम १०७—(स्वादिगण) (स्वादिभ्यः श्नुः) स्वादिगण की धातुओं की विशेषता यह है कि धातु और प्रत्यय के बीच में 'नु' विकरण लगता है। धातु को गुण नहीं होता। 'नु' को परस्मै० एक० में गुण होता है। (देखो अभ्यास ४७ से ४९)।

*नियम १०८—(एतत्तदोः सुलोपो०) एषः और सः के स् अर्थात् विसर्ग (:) का लोप हो जाता है, बाद में कोई व्यंजन हो तो (बाद में अ हो तो 'ओऽ' होता है, नियम ९९। अन्य कोई स्वर हो तो भी विसर्ग का लोप हो जाता है, नियम १०५)। सः + करोति = स करोति। इसी प्रकार स पठति, स लिखति। एष करोति।

अभ्यास २५

१. उदाहरण-वाक्य:—१. स मदीयः त्वदीयश्च सखा अस्ति। २. स्वकीयं सखायं पश्य। ३. स्वकीयस्य सख्युः सुन्दरं मुखं पश्य। ४. सख्यौ विश्वासं कुरु। ५. स शोभनं, मधुरं च ब्रवीति, ब्रवीतु, ब्रूयात्, अब्रवीत्, वक्ष्यति वा। ६. अहम् उच्चैः तारस्वरेण च ब्रवीमि, अब्रवम्, वक्ष्यामि वा। ७. त्वं शनैः नीचैः वा ब्रवीषि, अब्रवीः, वक्ष्यसि वा। ८. स धर्मं ब्रूयात्। ९. अहं सत्यं ब्रवीमि, त्वमपि सत्यं ब्रूहि। १०. स्वकीयं श्वेतं वस्त्रमानय, परकीयां रक्तां शाटिकां न आनय। ११. त्वदीयमेतत् कृष्णं पुस्तकम्, मदीयमेतत् पीतं वस्त्रम्, तदीयमिदं नीलं पुष्पम्, भवदीयमिदं हरितं वस्त्रम्। १२. उष्णं, शीतलं च जलमानय। १३. कोमलं शोभनं च ब्रूहि, न तु तीक्ष्णम्।

२. संस्कृत बनाओ:—(क) १. वह उसका मित्र है। २. अपने मित्र को यहाँ साथ लाइये। ३. उसके मित्र को धन दो। ४. मेरे मित्र का यह कार्य कर दो (कृ)। ५. पराये मित्र पर विश्वास न करो। ६. उस मनुष्य का वस्त्र श्वेत है। ७. किस कन्या की साड़ी हरी है और किसकी लाल। ८. उसके नीले वस्त्र को लाओ। ९. मेरे पीले वस्त्र को न ले जाओ। १०. अग्नि उष्ण होती है और जल शीतल। ११. फूल कोमल और सुन्दर है। १२. फल मीठा और अच्छा है। (ख) (ब्रू धातु) १३. वह ऊँचे स्वर से बोलता है। १४. मैं धीरे बोलता हूँ। १५. तू तीखा बोलता है। १६. वह बोले। १७. तू बोल। १८. मैं बोलूँ। १९. वह बोला। २०. तू बोला। २१. मैं बोला। २२. वह बोलेगा। २३. तू बोलेगा। २४. मैं बोलूँगा।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) तदीयं सखायं धनं वितर।	तदीयाय सख्ये धनं वितर।	३३, ३४
(२) कस्य कन्यायाः शाटिका हरितम्०।	कस्याः कन्यायाः शाटिका हरिता०।	३३
(३) त्वं ब्रवसि, अब्रवः, ब्रव।	त्वं ब्रवीषि, अब्रवीः, ब्रूहि।	धातुरूप
(४) स ब्रूष्यति, अब्रवत्, ब्रवेत्।	स वक्ष्यति, अब्रवीत्, ब्रूयात्।	,,

४. अभ्यास:—(क) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ख) सखि शब्द के पूरे रूप लिखो। (ग) ब्रू धातु (परस्मैपद) के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो। (घ) स्वादिगण की विशेषताएँ बताओ। (ङ) किन स्वरों को दीर्घ, गुण और वृद्धि करने पर क्या होता है? बताओ। (च) संप्रसारण कहने से किसके स्थान पर क्या होगा? बताओ।

५. वाक्य बनाओ:—शोभनम्, कोमलम्, त्वदीयम्, भवदीयः, मदीयः, तदीया, श्वेतम्, रक्ता, ब्रवीति, ब्रवीमि, ब्रवीतु, ब्रूहि, वक्ष्यति, अब्रवीत्, अब्रवम्, ब्रूयात्, तारस्वरेण।

६. संधि करो:—सः + गच्छति। सः + पठति। सः + ब्रवीति। एषः + हसति। एषः + वदति।

७. संधि-विच्छेद करो:—स हरिः। स शिवः। स रुद्रः। स करोति। एष गच्छति। एष रामः।

शब्दकोष—६२५ + २५ = ६५०) अभ्यास २६ (व्याकरण)

(क) कर्तृ (करनेवाला), हर्तृ (१. चुरानेवाला, २. नाशक), धर्तृ (धारक), श्रोतृ (सुननेवाला), वक्तृ (बोलनेवाला), नप्तृ (नाती), सवितृ (१. सूर्य, २. प्रेरक), अध्येतृ (पढ़नेवाला), गन्तृ (जानेवाला), द्रष्टृ (दर्शक), त्वष्टृ (बढ़ई), धातृ (१. ब्रह्मा, २. धारक), विधातृ (१. ईश्वर, २. कर्ता), नेतृ (१. नेता, २. ले जानेवाला), निर्मातृ (बनानेवाला), दातृ (देनेवाला), द्वेष्टृ (द्वेषकर्ता), स्तोतृ (स्तुतिकर्ता), ज्ञातृ (जाननेवाला), भोक्तृ (१. खानेवाला, २. उपभोगकर्ता)। पाठः (पाठ), लेखः (लेख), ग्रन्थः (ग्रन्थ), भारः (बोझ)। (२४)। (ख) रुद् (रोना)। (१)

सूचना—(क) कर्तृ—भोक्तृ, कर्तृवत्। पाठ—भार, रामवत्।

व्याकरण (कर्तृ, रुद्, कर्मवाच्य, भाववाच्य, तुदादि०)

१. कर्तृ शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ५)।

२. रुद् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो (देखो धातु सं० ३०)।

*नियम १०९—(तुदादिभ्यः शः) तुदादिगण की धातुओं की विशेषता यह है कि धातु और प्रत्यय के बीच में 'अ' (भ्वादि० के तुल्य) लगता है। भ्वादि० में धातु को गुण होता है, परन्तु तुदादि० में धातु को गुण सर्वथा नहीं होता। (देखो, अभ्यास ५, ५०, ५१)। जैसे—लिखति, तुदति, मिलति, क्षिपति, दिशति।

कर्मवाच्य और भाववाच्य

*नियम ११०—(क) संस्कृत में ३ वाच्य होते हैं:—१. कर्तृवाच्य, २. कर्मवाच्य, ३. भाववाच्य। सकर्मक (कर्मयुक्त) धातुओं के दो वाच्यों में रूप होते हैं; १. कर्तृवाच्य, २. कर्मवाच्य। अकर्मक (कर्म-रहित) धातुओं के रूप कर्तृवाच्य और भाववाच्य में ही होते हैं, कर्मवाच्य में नहीं। अकर्मक की साधारणतया पहचान यह है कि जिसमें किम् (किसको, क्या) का प्रश्न नहीं उठता। १. कर्तृवाच्य में कर्ता मुख्य होता है, क्रिया कर्ता के अनुसार चलती है। कर्ता में प्रथमा और कर्म में द्वितीया। २. कर्मवाच्य में कर्म मुख्य होता है। कर्म के अनुसार ही क्रिया का पुरुष, वचन और लिंग होगा। कर्ता के अनुसार कुछ नहीं। कर्मवाच्य की पहचान है, कर्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा, क्रिया कर्म के अनुसार। ३. भाववाच्य में कर्ता में तृतीया, कर्म होगा ही नहीं, क्रिया में प्रथम पुरुष का एकवचन होगा। (ख) (सार्वधातुके यक्) कर्मवाच्य और भाववाच्य में सार्वधातुक लकारों (अर्थात् लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्) में धातु और प्रत्यय के बीच में 'य' लग जाता है। धातु का रूप सदा आत्मनेपद में ही चलता है, धातु चाहे किसी पद की हो। लट् में य नहीं लगेगा। धातु के साथ य लगाकर धातु के रूप 'सेव्' धातु के तुल्य होंगे, या युध् के तुल्य (धातु० सं० ४४)। लट् में इष्यते या स्यते आदि। गम् > गम्यते, गम्यताम्, अगम्यत, गम्येत, गमिष्यते।

अभ्यास २६

१. उदाहरण-वाक्यः—१. मेरे द्वारा पुस्तक पढ़ी जाती है—मया पुस्तकं पठ्यते। २. मया, त्वया, युष्माभिः, अस्माभिः, तेन, तैः वा गृहं गम्यते। ३. मया फलं खाद्यते, मया फले खाद्येते, मया फलानि खाद्यन्ते। ४. जनकेन बालः दृश्यते, बालौ दृश्येते, बालाः दृश्यन्ते। ५. तेन अत्र भूयते। ६. पुस्तकस्य कर्त्रा लेखो लिख्यते, श्रोत्रा हस्यते, गन्त्रा ग्रामो गम्यते, अध्येतृभिः पाठाः पठ्यन्ते, नप्त्रा भोजनं पच्येत, सवित्रा भास्येत, द्रष्टृभिः छात्राः दृश्यन्ते, त्वष्ट्रा धात्रा विधात्रा च नम्यते, नेत्रा जनाः नीयन्ताम्, स्तोतृभिः ज्ञातृभिश्च दाता सेव्यते, द्वेष्टा त्यज्यते, भोक्तृभिः भोजनं पच्यते खाद्यते च। ७. बालकः उच्चैः रोदिति, अरोदीत्, रोदितु, रुद्यात्, रोदिष्यति वा। ८. बालकेन उच्चैः रुद्यते, अरुद्यत, रुद्यताम्, रुद्येत, रोदिष्यते वा।

२. संस्कृत बनाओः—**(क)** १. तेरे द्वारा, मेरे द्वारा और उनके द्वारा हँसा जाता है। २. पुस्तक के कर्ता द्वारा ग्रन्थ पढ़ा जाता है। ३. धन के हर्ता द्वारा धन ले जाया जाता है। ४. भार के धारणकर्ता द्वारा भार यहाँ लाया जाता है। ५. श्रोताओं के द्वारा हँसा जाता है। ६. वक्ता के द्वारा भाषण दिया जाता है (भाष्)। **(ख)** ७. नाती के द्वारा गुरु की सेवा की जावे। ८. सूर्य के द्वारा तपा जाए (तप्)। ९. अध्येता के द्वारा तीन ग्रन्थ पढ़े जाएँ। १०. गाँवों को जानेवालों के द्वारा गाँवों को जाया जावे। ११. दर्शक के द्वारा दो छात्र देखे जाएँ। **(ग)** १२. नगर में बढ़ई, नेता, दानी, दर्शक, श्रोता, द्वेषकर्ता, निर्माता, स्तुतिकर्ता, उपभोगकर्ता, ज्ञाता और पढ़नेवाले सभी लोग रहते हैं। **(घ)** १३. बालक रोता है। १४. तू रोता है। १५. मैं रोता हूँ। १६. वह रोवे। १७. तू रो। १८. मैं न रोऊँ। १९. वह रोया। २०. तू रोया। २१. मैं नहीं रोया। २२. वह रोयेगा। २३. तू भी रोयेगा। २४. मैं नहीं रोऊँगा।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) त्वया मया तैः हस्यन्ते।	त्वया मया तैः हस्यते।	११० (क)
(२) पुस्तकस्य कर्ता ग्रन्थं लिख्यन्ते।	पुस्तकस्य कर्त्रा ग्रन्थः लिख्यते।	११० (क)
(३) ग्रामान् गन्त्रा ग्रामं गच्छेयुः।	ग्रामान् गन्तृभिः ग्रामाः गम्येरन्।	११० (क,ख)
(४) रोदति, रोदामि, रोदेत्, रोद।	रोदिति, रोदिमि, रुद्यात्, रुदिहि।	धातुरूप

४. अभ्यासः—**(क)** २ (क) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। **(ख)** २ (ख) को लोट्, लङ् और लट् में बदलो। **(ग)** २ (घ) को बहुवचन बनाओ। **(घ)** रुद् धातु के दसों लकारों में रूप बताओ। **(ङ)** इन शब्दों के पूरे रूप लिखोः—कर्तृ, हर्तृ, श्रोतृ, वक्तृ, अध्येतृ, गन्तृ, नेतृ, दातृ, ज्ञातृ, भोक्तृ। **(च)** तुदादिगण की विशेषता बताओ। **(छ)** कर्मवाच्य और भाववाच्य में कर्तृवाच्य से क्या अन्तर होता है, १० उदाहरण देकर समझाओ। **(ज)** इन धातुओं के कर्मवाच्य में दसों लकारों में रूप बनाओः—पठ्, सेव्, नम्, गम्, नी, भाष्।

५. वाक्य बनाओः—पठ्यते, सेव्यते, गम्यते, नंस्यते, नीयते, नेष्यते, भाष्यते।

शब्दकोष—६५० + २५ = ६७५) **अभ्यास २७** (व्याकरण)

(क) पितृ (पिता), भ्रातृ (भाई), जामातृ (जवाँई, दामाद), श्वशुरः (श्वशुर), गानम् (गाना), वचनम् (वचन)। (६)। (ख) [दुह्, (दुहना)], धा (१. धारण करना, २. रखना), मा (१. नापना, २. तोलना), हा (छोड़ना), अव + सा (१. नष्ट होना, २. नष्ट करना), नि + गॄ (निगलना), उद् + गॄ (१. उगलना, २. बोलना), जॄ (वृद्ध होना), शॄ (१. नष्ट होना, २. नष्ट करना), पॄ (१. पालन करना, २. पूर्ण करना), वृ (चुनना, छाँटना), स्तु (स्तुति करना), हु (हवन करना), मन्थ् (मथना), बन्ध् (बाँधना), भज् (१. भजन करना, २. सेवा करना), यज् (यज्ञ करना), वप् (१. बीज बोना, २. काटना), शप् (शाप देना), ग्रह् (लेना)। (१९)।

व्याकरण (पितृ, दुह्, कर्मवाच्य, भाववाच्य, रुधादि)

१. पितृ शब्द के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द ६)। भ्रातृ, जामातृ, पितृवत्।

२. दुह् धातु (उभयपद) के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु सं० २९)

*नियम १११—(रुधादिगण) (रुधादिभ्यः श्नम्) रुधादि० की विशेषता यह है कि धातु के प्रथम अक्षर के बाद न या न् विकरण जुड़ता है। धातु को गुण नहीं होता।

*नियम ११२—धातु से कर्मवाच्य या भाववाच्य बनाने के लिए ये नियम ठीक स्मरण कर लें। सार्वधातुक लकारों (लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्) में ही ये नियम लगते हैं। (क) धातु के साथ य लगता है। आत्मनेपद ही होता है। साधारणतया धातु में अन्तर नहीं होता। जैसे—भूयते, पठ्यते, लिख्यते, रक्ष्यते। (ख) धातु को गुण नहीं होता। धातु मूलरूप में रहती है। गच्छ्, पिब्, जिघ्र् आदि नहीं होते। (ग) (घुमास्थागापा०) आकारान्त धातुओं में से इनके ही आ को ई होता है:—दा, धा, मा, स्था, गा, पा, (पीना), हा (छोड़ना), सा। अन्य धातुओं को नहीं। जैसे—दीयते, धीयते, मीयते, स्थीयते, गीयते, पीयते, हीयते, सीयते। अन्यत्र ज्ञायते, स्नायते आदि। (घ) (रिङ्शयग्०) ह्रस्व ऋ अन्तवाली धातुओं को ऋ के स्थान पर 'रि' हो जाता है। जैसे—कृ, हृ, धृ, भृ के क्रियते, ह्रियते, ध्रियते, भ्रियते। परन्तु स्मृ > स्मर्यते। (ङ) दीर्घ ॠ अन्तवाली धातुओं को ईर् होता है। पवर्ग प्रारम्भ में हो तो ऊर्। गॄ > गीर्यते। जॄ > जीर्यते। शॄ > शीर्यते। तॄ > तीर्यते। परन्तु पॄ का पूर्यते। (च) (वचिस्वपि०, ग्रहिज्या०) वच् आदि धातुओं को संप्रसारण होता है। (ब्रू) वच् > उच्यते, यज् > इज्यते। वप् > उप्यते। स्वप् > सुप्यते। वह् > उह्यते। वद् > उद्यते। ग्रह् > गृह्यते। प्रच्छ् > पृच्छ्यते। वस् > उष्यते। (छ) ह्रस्व इ को ई, उ को ऊ हो जाता है। जि > जीयते, चि > चीयते, हु > हूयते। (ज) (अनिदितां हल०) धातु के बीच के न् का प्रायः लोप होता है। मन्थ् > मथ्यते, बन्ध् > बध्यते, भ्रंश् > भ्रश्यते, स्रंस् > स्रस्यते। इनमें न् रहेगा, वन्द्यते, चिन्त्यते, निन्द्यते। (झ) चुरादि० और णिच् वाली धातुओं के इ (अय) का लोप होता है। चोर्यते, कथ्यते, भक्ष्यते।

अभ्यास २७

१. उदाहरण-वाक्यः—१. पित्रा पुत्रः उच्यते। २. भ्राता भ्राता वन्द्यते। ३. जामात्रा श्वशुरः स्तूयते। ४. मया दुग्धं दुह्यते, दुह्यताम्, दुह्येत, अदुह्यत वा। ५. मया त्वया तेन तैः वा ग्रन्थः पठ्यते, लेखः लिख्यते, नगरं रक्ष्यते, कन्या दृश्यते, धनं लभ्यते, अजा नीयते, धनं याच्यते च। ६. अस्माभिः युष्माभिश्च दानं दीयते, वस्त्राणि धीयन्ते, तण्डुलाः माषाः यवाश्च नीयन्ते, गृहे स्थीयते, गानं गीयते, जलं पीयते, कार्यं हीयते, शत्रुः च अवसीयते। ७. तैः कार्याणि क्रियन्ताम्, धनानि ह्रियन्ताम्, वस्त्राणि ध्रियन्ताम्, बालाश्च भ्रियन्ताम्, पाठाश्च स्मर्यन्ताम्। ८. तेन भोजनं गीर्यते, शब्दः उद्गीर्यते, जलं तीर्यते, कार्यं पूर्यते, सखा म्रियतेच। ९. तेन वचनम् उच्यते, प्रातः इज्यते, बीजानि उप्यन्ते, भारः उह्यते, पुष्पं गृह्यते, छात्रः च पृच्छयते। १०. मया रिपुः जीयते, अग्नौ हूयते, फलानि चीयन्ते, दुग्धं मथ्यते, दुर्जनः वध्यते, गुरुः कथ्यते, भोजनं च भक्ष्यते।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. मेरे द्वारा पाठ पढ़ा जाता है। २. तेरे द्वारा लेख लिखे जाते हैं। ३. राम के द्वारा दूध दुहा जाता है। ४. राजा के द्वारा नगर की रक्षा की जाती है। ५. शिष्य के द्वारा भार ले जाया जाता है। ६. मेरे, तेरे और राम के द्वारा दान दिया जाता है, जल पिया जाता है, पुस्तकें रखी जाती हैं, वस्त्र नापा जाता है, गाने गाये जाते हैं, आश्रम में रहा जाता है (स्था), घर छोड़ा जाता है और पाप नष्ट किये जाते हैं। **(ख)** ७. मेरे द्वारा खाना खाया जाये, उपदेश कहा जाये (उद्गृ), अध्ययन पूर्ण किया जाये, तैरा जाये और कन्या छाँटी जाये। ८. उसके द्वारा कार्य किया जाये, वस्त्र हरण किये जायें और वचन कहा जाये। **(ग)** ९. तेरे द्वारा वस्त्र धारण किया गया, पाठ पूछा गया, शत्रु जीता गया, गुरु की स्तुति की गयी, समुद्र मथा गया, प्रातःकाल हवन किया गया, फूल चुने गये, भोजन खाया गया, ईश्वर का चिन्तन किया गया (चिन्त्) और गुरु की वन्दना की गई। १०. पिता के द्वारा चिन्तन किया जाता है, हरि का भजन किया जाता है (भज्), दुर्जन को शाप दिया जाता है, बीज बोया जाता है और धन लिया जाता है (ग्रह्)। ११. भाई और दामाद के द्वारा भोजन किया जाता है। **(घ)** १२. वह दूध दुहता है। १३. तू भी दूध दुहता है। १४. मैं दूध नहीं दुहता हूँ। १५. वह दूध दुहे। १६. तू दूध दुह। १७. आज मैं ही दूध दुहूँ। १८. उसने दूध दुहा। १९. मैंने दूध दुहा। २०. वह दूध दुहेगा, तू भी दूध दुहेगा।

३. अशुद्ध	**शुद्ध वाक्य**	**नियम**
(१) दायते, पायते, कृयते, त्रियते, वच्यते।	दीयते, पीयते, क्रियते, तीर्यते, उच्यते।	११२
(२) दोहति, अदोहत्, दोहिष्यति, दोहेत्।	दोग्धि, अधोक्, धोक्ष्यति, दुह्यात्।	**धातुरूप**

४. अभ्यासः—**(क)** २ (क) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् में बदलो। **(ख)** २ (ख) को लट् और लङ् में तथा २ (ग) को लोट् में बदलो। **(ग)** २ (घ) को बहुवचन बनाओ। **(घ)** पितृ और भ्रातृ के पूरे रूप लिखो। **(ङ)** दुह् धातु के दसों लकारों में रूप लिखो। **(च)** रुधादिगण की विशेषता बताओ।

शब्दकोष—६७५ + २५ = ७००) **अभ्यास २८** (व्याकरण)

(क) गौः (स्त्री० गाय, पुं० बैल) भृत्यः (नौकर), जनः (मनुष्य), वेदः (वेद), ऋग्वेदः (ऋग्वेद), यजुर्वेदः (यजुर्वेद), सामवेदः (सामवेद), अथर्ववेदः (अथर्ववेद), देवः (देवता)। मित्रम् (मित्र), आभूषणम् (आभूषण)। शिला (पत्थर), गीता (भगवद्गीता), वार्ता (१. बात, २. समाचार)। (१४)। (ख) स्वप् (सोना), आस् (१. बैठना, २. होना)। अव + गम् (जानना), श्रु (सुनना), प्र + विश् (प्रविष्ट होना), आ + रुह् (१. चढ़ना, २. उगना), उत् + तॄ (१. पार होना, २. उत्तीर्ण होना), प्र + आप् (१. प्राप्त करना, २. प्राप्त होना), भुज् १ (१. खाना, २. रक्षा करना)। (९)। (घ) खलः (दुष्ट), दुष्टः (दुष्ट)। (२)।

व्याकरण (गो, स्वप्, प्रेरणार्थक धातुएँ, णिच् प्रत्यय, चुरादि०)

१. गो शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ७)।

२. स्वप् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो० धातु सं० ३१)

*नियम ११३—(०चुरादिभ्यो णिच्) चुरादिगणी धातु की विशेषता यह है कि धातु के अन्त में णिच् (अय) लग जाता है। धातु में नियम ११४ के तुल्य वृद्धि या गुण होता है। धातु में अय लगाकर परस्मै० में रूप भवतिवत्, आत्मने० में सेवतेवत्।

*नियम ११४—(हेतुमति च) प्रेरणार्थक धातु उसे कहते हैं, जहाँ कर्ता स्वयं काम न करके दूसरे से काम कराता है। जैसे—पढ़ना > पढ़वाना, लिखना > लिखवाना, जाना > भेजना। प्रेरणार्थक धातु में शुद्ध धातु के अन्त में णिच् (अर्थात् अय) लग जाता है। धातु के अन्त में अय लगाकर परस्मै० में रूप भवतिवत् और आत्मने० में सेवतेवत् चलेंगे। धातु के अन्तिम इ, ई, उ, ऊ, ऋ ॠ को वृद्धि (अर्थात् क्रमशः ऐ, औ, आर) हो जाता है, बाद में अयादिसंधि भी। उपधा (अर्थात् अन्तिम अक्षर से पूर्व अक्षर) में अ को आ तथा इ, उ, ऋ को क्रमशः ए, ओ, अर, गुण हो जाता है। जैसे—कृ > कारयति, पठ् > पाठयति, लिख् > लेखयति। गम् का गमयति।

*नियम ११५—प्रेरणार्थक धातुओं के साथ मूल धातु के कर्ता में तृतीया होती है और कर्म में पूर्ववत् द्वितीया ही रहती है, क्रिया कर्ता के अनुसार होती है। जैसे—शिष्यः लेखं लिखति > गुरुः शिष्येण लेखं लेखयति। नृपः भृत्येन कार्यं कारयति।

*नियम ११६—(गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थ०) इन अर्थोंवाली धातुओं के प्रेरणार्थक रूप के साथ मूलधातु के कर्ता में तृतीया न होकर द्वितीया होती है:—जाना, जानना, समझना, खाना (अद्, खाद्, भक्ष् को), छोड़ना, पढ़ना, अकर्मक वस्तुएँ, बोलना, देखना (दृश्), सुनना (श्रु), प्रवेश (प्रविश्), चढ़ना (आरुह्), तरण (उत्तॄ), ग्रहण (ग्रह्), प्राप्ति (प्राप्), पीना, ले जाना (हृ) (नी, वह् को छोड़कर)। जैसे—बालः गृहं गच्छति > बालं गृहं गमयति। शिष्यान् वेदम् अवगमयति। माता पुत्रमन्नं भोजयति। गुरुः छात्रं शास्त्रं पाठयति।

अभ्यास २८

१. उदाहरण-वाक्यः—१. गुरुः बालकेन लेखं लेखयति। २. खलः दुष्टो वा भृत्येन धनं चोरयति। ३. बालिका बालं स्वापयति। ४. हरिः देवान् अमृतं भोजयति। ५. आभूषणं शिलायाम् आसयत्, अस्थापयत् वा। ६. पुत्रं सत्य भाषयति। ७. पिता पुत्रं चन्द्रं दर्शयति। ८. मित्रं वार्तां श्रावयति। ९. गुरुं गृहं प्रवेशयति। १०. भृत्यं वृक्षम् आरोहयेत्। ११. रामं गङ्गाम् उत्तारयतु। १२. सज्जनम् अन्नं ग्राहयिष्यति। १३. मित्रं नगरं प्रापयति। १४. भृत्येन भारं ग्राममहारयत्। १५. चत्वारो वेदाः, ऋग्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, अथर्ववेदश्च। १६. गौ स्वपिति, स्वपतु, स्वप्यात्, अस्वपत्, स्वप्स्यति वा। १७. गामानय। १८. गोः दुग्धमेतत्। १९. गवि शिलां न पातय।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. राम नौकर से काम कराता है। २. पिता पुत्र से पत्र लिखवाता है। ३. गुरु शिष्य को गाँव में भेजता है (गमय)। ४. दुष्ट धन चोरी करवाता है। ५. पिता पुत्र को गीता समझाता है (अवगमय)। ६. मित्र को भोजन खिलाता है (भोजय)। ७. गुरु शिष्य को चारों वेद पढ़ाता है। ८. पुत्र को शिला पर बैठाता है (आसय)। ९. भाई बालक को सुलाता है (स्वापय)। (ख) १०. मित्र से धर्म कहलाये (भाषय)। ११. पिता पुत्र को सूर्य दिखाये (दर्शय)। १२. पिता को समाचार सुनाये (श्रावय)। १३. मित्र को घर में प्रविष्ट कराये (प्रवेशय)। १४. दुष्ट को पेड़ पर चढ़ाये (आरोहय)। १५. कृष्ण को यमुना पार कराये (उत्तारय)। १६. बालक को पुस्तक पकड़ाये (ग्राहय)। १७. नौकर पुत्र को गाँव पहुँचाये (प्रापय)। १८. नौकर से बोझ लिवा जाये (हारय)। (ग) १९. गाय सोती है। २०. बछड़े को देखो। २१. नौकर गाय का दूध दुहता है। २२. गाय के लिए जल लाओ। २३. यह गाय का बच्चा (वत्सः) है। २४. गाय पर बोझ न रखो। (स्थापय)। (घ) २५. वह सोता है। २६. तू सोता है। २७. मैं सोता हूँ। २८. वह सोये। २९. तू सो। ३०. मैं सोऊँ। ३१. वह सोया। ३२. तू सोया। ३३. मैं सोया। ३४. वह सोयेगा।

३.	अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१)	रामः भृत्यं कार्यं करोति।	रामः भृत्येन कार्यं कारयति।	११४, ११५
(२)	शिष्येण ग्रामे गमयति।	शिष्यं ग्रामं गमयति।	११६, १५
(३)	स्वपति, स्वपामि, स्वपेत्।	स्वपिति, स्वपिमि, स्वप्यात्।	धातुरूप

४. अभ्यास—(क) २ (क) को लोट्, विधिलिङ् और लङ् में बदलो। (ख) २ (ख) को लट्, लट् और लङ् में बदलो। (ग) २ (घ) को बहुवचन बनाओ। (घ) गो शब्द के पूरे रूप लिखो। (ङ) स्वप् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो। (च) प्रेरणार्थक धातुओं में से किन धातुओं के साथ मूलधातु के कर्ता में तृतीया नहीं होती, सोदाहरण लिखो। (छ) चुरादिगण की विशेषता लिखो।

५. इन धातुओं के प्रेरणार्थक रूप बनाओः—पठ्, लिख्, गम्, दृश्, दुह्, स्वप्, प्र + आप्, चुर्, कथ्, भुज्, आस्, श्रु, भाष्, आरुह्, प्रविश्, उत् + तॄ, ग्रह्, हृ, कृ, धृ, पत्।

शब्दकोष—७०० + २५ = ७२५) **अभ्यास २९** (व्याकरण)

(क) भगवत् (भगवान्), भवत् (आप) (सर्वनाम)। श्रीमत् (श्रीमान्), धीमत् (बुद्धिमान्), बुद्धिमत् (विद्वान्), बलवत् (बलवान्), धनवत् (धनवान्), हिमवत् (हिमालय)। कालः (१. समय, २. मृत्यु), समयः (समय)। (१०)। (ख) हन् (१. मारना, हत्या करना)। विद् (जानना), या (जाना), वा (हवा चलना), भा (चमकना), स्ना (नहाना), पा (रक्षा करना)। यापि (समय बिताना), बुध् (जानना), शम् (शान्त होना), जन् (पैदा होना), दम् (दमन करना), घट् (काम में लगना), क्रम् (चलना), गतवत् (गया)। (१५)। श्रीमत्, धनवत् विशेषण भी हैं।

सूचना—(क) भगवत्—हिमवत् तथा गतवत्, भगवत् के तुल्य।

व्याकरण (भगवत्, हन्, णिच् प्रत्यय, तनादि०)

१. भगवत् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० ९)। सूचना—जिन शब्दों के अन्त में मतुप् (मत् या वत्) प्रत्यय लगता है और जिन धातुओं के अन्त में क्तवतु (तवत्) प्रत्यय लगता है, उनके रूप पुंलिंग में भगवत् के तुल्य ही चलेंगे।

२. हन् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० सं० ३२)।

३. विद् और या के रूप परिशिष्ट में देखो। या के तुल्य ही वा आदि।

*नियम ११७—(तनादिकृञ्भ्य उः) तनादिगण की विशेषता यह है कि धातु और प्रत्यय के बीच में 'उ' विकरण लगता है। धातु को गुण होता है। उ को परस्मै० एक० में गुण होता है। (देखो अभ्यास २२, ५४)। जैसे—तनोति, तनुते।

*नियम ११८—मूलधातु से प्रेरणार्थक धातु बनाने के लिए ये नियम ठीक स्मरण कर लें। (क) धातु से णिच् (अय) प्रत्यय लगता है। नियम ११४ के अनुसार वृद्धि या गुण। (ख) (मितां ह्रस्वः) इन धातुओं की उपधा (अर्थात् उपान्त्य स्वर) के अ को आ नहीं होता। गम्, रम्, क्रम्, नम्, शम्, दम्, जन्, त्वर्, घट्, व्यथ्। गमयति, रमयति, क्रमयति, नमयति, शमयति, दमयते, जनयति, त्वरयति, घटयति, व्यथयति। अन्यत्र अ को आ होता है। पाठयति, कामयते। (ग) (०आतां पुङ्णौ) आकारान्त धातुओं के अन्त में णिच् से पहले 'प्' और लग जाता है। जैसे—दा > दापयति, धा > धापयति, स्था > स्थापयति, या > यापयति, स्ना > स्नापयति। किन्तु पा (पीना) का पाययति, पाययते होता है। पा और पाल् (रक्षा करना) का पालयति होता है। (घ) इन धातुओं के णिच् में ये रूप होते हैं:—ब्रू > वाचयति, अधि + इ (आ०) अध्यापयति (पढ़ाना), हन् > घातयति (वध कराना), दुष् > दूषयति (दोष देना), रुह् > रोहयति, रोपयति (उगाना)। (ङ) चुरादिगण की धातुओं के रूप णिच् में वैसे ही रहते हैं। (च) कर्मवाच्य और भाववाच्य में णिजन्त धातु के अन्तिम इ (अय्) का लोप हो जाता है। जैसे—पाठ्यते, कार्यते। इसी प्रकार हार्यते, बोध्यते, भक्ष्यते, चोर्यते।

अभ्यास २९

१. उदाहरण-वाक्यः—१. गुरुः शिष्यं नगरं गमयति, बालकं कथाभिः रमयति, शत्रून् शमयति दमयते च, कस्यापि दुःखं न जनयति, अध्ययनार्थं त्वरयति, कार्यं घटयति, कमपि न व्यथयति च । २. सज्जनः नृपेण दानं दापयति, धनं धापयति च । ३. धीमान् पुस्तकं स्थापयति । ४. बुद्धिमान् पठने कालं समयं वा यापयति । ५. धनवान् भृत्येन पुत्रं स्नापयति । ६. भवन्तः शिष्यान् जलं पाययन्ति । ७. भगवान् संसारं पालयेत् । ८. गुरुः छात्रं वेदं वाचयति, अध्यापयति च । ९. खलः पशून् घातयिष्यति, सज्जनान् दूषयिष्यति च । १०. धीमद्भिः श्रीमद्भिश्च बालः पाठ्यते, भारः हार्यते, जनो बोध्यते न च कदापि कस्यापि धनं चोर्यते, कार्यं क्रियते कार्यते च । ११. सिंहः पशून् हन्ति, हन्तु, हन्यात्, अहन्, हनिष्यति वा । १२. स हिमवन्तं गतवान् ।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. पिता पुत्र को गाँव भेजता है (गमय) । २. कवि गान से सबको प्रसन्न करता है (रमय) । ३. यति पापों का दमन करता है (दमय) । ४. राजा नौकर को काम में लगाता है (घटय) और शीघ्रता कराता है (त्वरय) । ५. बुद्धिमान् विवाद शान्त कराता है (शमय), सबको सुख देता है (जनय) । ६. बलवान् धनवान् से धीमान् को धन दिलाता है । ७. गुरु शिष्य से पुस्तक यहाँ रखवाता है (धापय), शिष्य उन्हें रखता है (स्थापय) । (ख) ८. धीमान् अध्ययन में समय बितावे । ९. पुत्र को जल पिलाओ । १०. राजा से राज्य का पालन कराओ । ११. बालक को स्नान कराओ । १२. शिष्य को पढ़ाओ । १३. छात्र को पाठ पढ़ाओ (पाठय) । १४. शत्रु का वध कराओ । १५. वृक्षों को लगाओ (रोपय) । (ग) १६. वह शत्रु को मारता है (हन्), तू भी शत्रु को मारता है, मैं भी शत्रु को मारता हूँ । १७. उसने शत्रु को मारा, तूने चोर को मारा, मैंने दुष्ट को मारा । १८. वह चोर को मारेगा, तू उसे मारेगा, मैं उसे मारूँगा । १९. वह दुष्ट का वध करे । (घ) २०. वह मुझको जानता है (विद्), मैं उसे जानता हूँ । २१. वह हिमालय पर्वत पर जाता है (या) । २२. वायु चलती है (वा) । २३. सूर्य चमकता है (भा) । २४. आप नहाते हैं । २५. राजा रक्षा करता है (पा) ।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. गामयति, रामयति, दामयति जानयति।	गमयति, रमयति, दमयते, जनयति	११८ (ख)
२. व्रावयति, पापयति, हानयति ।	वाचयति, पाययति, घातयति ।	११८ (ग,घ)
३. हनति, हनामि, अहनत्, हंस्यति ।	हन्ति, हन्मि, अहन्, हनिष्यति ।	धातुरूप

४. अभ्यास—(क) २ (क) को लोट्, लङ् और लट् में बदलो । (ख) २ (ख) को लट्, लङ् और लृट् में बदलो । (ग) २ (ग) को बहुवचन बनाओ । (घ) २ (घ) को लोट् और लृट् में बदलो । (ङ) इन शब्दों के पूरे रूप लिखो—भगवत्, भवत्, श्रीमत्, धीमत्, धनवत्, गतवत् । (च) हन् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो । (छ) तनादिगण की विशेषता बताओ । (ज) मूलधातु से प्रेरणार्थक धातु बनाने के लिए मुख्य नियम कौन से हैं, सोदाहरण बताओ ।

शब्दकोष—७२५ + २५ = ७५०) अभ्यास ३० (व्याकरण)

(क) भूभृत् (१. राजा, २. पर्वत), महीक्षित् (राजा), विपश्चित् (विद्वान्), मरुत् (वायु)। शुश्रूषा (१. सुनने की इच्छा, २. सेवा), चिकित्सा (इलाज), मीमांसा (१. गम्भीर विचार, २. मीमांसा दर्शन)। (७)। (ख) इ (जाना), उत् + इ (उदय होना), आ + इ (आना), अप + इ (दूर होना)। (४)। (ग) चित्, चन (दोनों किम् शब्द के साथ मिलकर अनिश्चय बोधक अव्यय), ह्यः (विगत दिन), परह्यः (विगत परसों), श्वः (आगामी दिन), परश्वः (आगामी परसों)। (६)। (घ) शुश्रूषुः (सुनने का इच्छुक), चिकीर्षुः (करने का इच्छुक), जिज्ञासुः (जानने का इच्छुक), विवक्षुः (बोलने का इच्छुक), जिघांसुः (मारने का इच्छुक), दिदृक्षुः (देखने का इच्छुक), पिपासुः (प्यासा), तितीर्षुः (तैरने का इच्छुक)। (८)।

सूचना—(क) भूभृत्—मरुत्, भूभृत्वत्। शुश्रूषा—मीमांसा, रमावत्।

व्याकरण (भूभृत्, इ, सन् प्रत्यय, क्र्यादि०)

१. भूभृत् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ८)।

२. इ धातु के दसों लकारों में पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० सं० ३३)।

३. ह्यः, श्वः के अन्तर के लिए यह स्मरण कर लें, 'ह्यो गतेऽनागतेऽह्नि श्वः'।

*नियम ११९—(क्र्यादिभ्यः श्ना) क्र्यादिगण की विशेषता यह है कि धातु और प्रत्यय के बीच में 'ना' विकरण लगता है। उसको 'नी' भी हो जाता है। धातु को गुण नहीं होता। (देखो अभ्यास ५५ से ५७)। जैसे—क्रीणाति, क्रीणीते।

*नियम १२०—(धातोः कर्मणः०) इच्छा करना या चाहना अर्थ में धातु से सन् (स) प्रत्यय लगता है, यदि इच्छा करनेवाला वही व्यक्ति हो तो। सन् लगने पर धातु को द्वित्व हो जाता है। धातु के स्वरूप में कुछ अन्तर भी हो जाता है। सन् प्रत्यय लगने पर परस्मैपदी धातु के रूप भवतिवत् और आत्मनेपदी के सेवतेवत्। जैसे-गम् > जिगमिषति, जिगमिषतु, जिगमिषेत्, अजिगमिषत्, जिगमिषिष्यति। सन्नन्त प्रयोगवाली प्रचलित धातुएँ ये हैं:—भू > बुभूषति। ब्रू > विवक्षति। श्रु > शुश्रूषते। कृ > चिकीर्षति। हृ > जिहीर्षति। तॄ > तितीर्षति। मृ > मुमूर्षति। ज्ञा > जिज्ञासते। पा > पिपासति। दा > दित्सति-ते। धा > धित्सति-ते। लभ् > लिप्सते। हन् > जिघांसति। दृश् > दिदृक्षते। पठ् > पिपठिषति। स्वप् > सुषुप्सति। ग्रह् > जिघृक्षति। जि > जिगीषति। कित् > चिकित्सति। भुज् > बुभुक्षते। मान् > मीमांसते। मुच् > मुमुक्षति। बध् > बीभत्सते।

*नियम १२१—(सनाशंसभिक्ष उः, अ प्रत्ययात्) सभी सन् प्रत्ययवाली धातुओं के अन्त में उ या आ लगा देने से विशेषण और संज्ञा-शब्द बन जाते हैं। उकारान्त के रूप पुं० में गुरुवत्, स्त्री० में धेनुवत्, नपुं० में मधुवत्। आकारान्त के रूप रमावत् चलेंगे। उ लगाने से 'कर्ता' अर्थ हो जाता है। 'आ' लगाने से भाववाचक संज्ञा।

अभ्यास ३०

१. उदाहरण-वाक्यः—१. भूभृत् कस्यचित् महीक्षितो राज्यं जिगीषति । २. विवक्षुः विपश्चित् किंचिद् विवक्षति । ३. मरुद् वाति, इतः एति च । ४. विपश्चित् एति, सूर्यः उदेति, शत्रुः अपैति । ५. जिज्ञासुः भूभृत् परह्योऽत्र ऐत्, ह्योऽगच्छच्च । ६. शुश्रूषुः विपश्चित् श्वः एष्यति, परश्वो गमिष्यति च । ७. शुश्रूषुः गुरोः शुश्रूषां कुर्यात् । ८. चिकित्सको जिघांसुमपि चिकित्सति । ९. विपश्चिद् धर्मं मीमांसिष्यते । १०. चिकीर्षुः कार्यं चिकीर्षतु । ११. जिज्ञासुः धर्मं जिज्ञासेत । १२. दिदृक्षुः महीक्षितं दिदृक्षते । १३. पिपासुः जलं पिपासति । १४. तितीर्षुः गङ्गां तितीर्षति । १५. विपश्चित् तत्र एति, एतु, इयात्, ऐत्, एष्यति वा । १६. कस्मैचित् शुश्रूषा रोचते ।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. बालक पढ़ना चाहता है, बोलना चाहता है, सेवा करना चाहता है और कार्य करना चाहता है । २. शिष्य तैरना चाहता है, धर्म को जानना चाहता है, जल पीना चाहता है, दान देना चाहता है, वस्त्र धारण करना चाहता है और धन पाना चाहता है (लभ्)। ३. राजा (भूभृत्) शत्रु को मारना चाहता है (हन्), मरणासन्न (मुमूर्षु) को देखना चाहता है, धन लेना चाहता है (ग्रह्) और राज्य जीतना चाहता है । ४. चिकित्सक मरणासन्न की चिकित्सा करना चाहता है (चिकित्स), भोजन खाना चाहता है (भुज्), सत्य पर विचार करना चाहता है (मीमांस) और पापों को छोड़ना चाहता है (मुच्) । (ख) ५. किसीको शुश्रूषा, किसीको चिकित्सा, किसीको धर्म की मीमांसा और किसीको सत्य की जिज्ञासा अच्छी लगती है(रुच्) । ६. वह परसों आया था, कल गया । ७. मैं कल जाऊँगा, परसों पुनः आऊँगा । ८. सुनने का इच्छुक सुनने की इच्छा करे, प्यासा जल पिये, जिज्ञासु जानना चाहे और तैरने का इच्छुक तैरे। (ग) (इ धातु) ९. सूर्य उदय होता है । १०. वह आता है । ११. वह दूर हटता है । १२. वह जाता है। १३. मैं जाता हूँ । १४. वह जाये । १५. तू जा । १६. मैं जाऊँ । १७. वह गया । १८. मैं गया । १९. तू गया ।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
(१) जिज्ञासति, शुश्रूषति, दिदृक्षति ।	जिज्ञासते, शुश्रूषते, दिदृक्षते ।	१२०
(२) बुब्रूषति, दिदासति, लिलप्सति ।	विवक्षति, दित्सति, लिप्सते ।	१२०

४. अभ्यासः—(क) २ (क) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् लृट् में बदलो । (ख) २ (ग) का बहुवचन बनाओ। (ग) इनके पूरे रूप लिखो—भूभृत्, महीक्षित्, विपश्चित्, मरुत् । (घ) इ धातु के दसों लकारों में पूरे रूप लिखो । (ङ) क्र्यादिगण की विशेषता बताओ । (च) सन् प्रत्यय लगाकर इन धातुओं के दसों लकारों के रूप लिखोः—ब्रू, श्रु, कृ, हृ, मृ, तृ, पा, दा, धा, ज्ञा, पठ्, लभ्, दृश्, हन्, स्वप्, ग्रह्, जि, कित्, भुज्।

५. वाक्य बनाओः—४. (च) की उपर्युक्त धातुओं के सन्नन्त रूप बनाकर उनमें अन्त में उ और आ लगाकर उनका वाक्यों में प्रयोग करो—जैसे—विवक्षुः, विवक्षा ।

शब्दकोष—७५० + २५ = ७७५) **अभ्यास ३१** (व्याकरण)

(क) करिन् (हाथी), दण्डिन् (१. संन्यासी, २. दण्डधारी), विद्यार्थिन् (छात्र), शशिन् (चन्द्रमा), पक्षिन् (पक्षी), स्वामिन् (स्वामी), मन्त्रिन् (मंत्री), साक्षिन्, (साक्षी), ज्ञानिन् (ज्ञानी), योगिन् (योगी), त्यागिन् (त्यागी), वाग्मिन् (चतुर वक्ता)। (१२)। (ख) पीड् (पीड़ा देना), प्र + क्षाल् (धोना), पाल् (पालन करना), युज् (लगाना), प्र + ईर् (प्रेरणा देना), गण् (गिनना), मन्त्र् (मंत्रणा करना), रच् (बनाना), पूज् (पूजा करना), आ + श्लिष् (आलिंगन करना), [चुर् (चुराना), चिन्त् (सोचना), कथ् (कहना), भक्ष् (खाना)]। (१०)। (ग) पश्चात् (बाद में, पीछे), पुनः (फिर), शीघ्रम् (शीघ्र)। (३)।

सूचना—(क) करिन्—वाग्मिन्, करिन् के तुल्य। (ख) पीड्—चोरयतिवत्।

व्याकरण (करिन्, क्त प्रत्यय)

१. करिन् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द संख्या १०)।

२. पीड् आदि धातुओं के रूप चुर् धातु (देखो धातु संख्या ६३) के तुल्य दोनों पदों में चलेंगे। जैसे—पीडयति, प्रक्षालयति, पालयति, योजयति, प्रेरयति, गणयति, रचयति, पूजयति। आत्मनेपद में 'अय' लगाकर सेवतेवत् रूप होंगे। मन्त्रयते।

***नियम १२२**—(क्तक्तवतू निष्ठा, निष्ठा) भूतकाल अर्थ में क्त (त), क्तवतु (तवत्) कृत् प्रत्यय होते हैं। दोनों का क्रमशः त, तवत् शेष रहता है। 'त' प्रत्यय कर्मवाच्य और भाववाच्य में होता है और 'तवत्' प्रत्यय कर्तृवाच्य में। सेट् ('इ' वाली) धातुओं में बीच में इ लगता है, अनिट् (इ-नहीं वाली) धातुओं में इ नहीं लगता है। धातु को गुण या वृद्धि नहीं होती, संप्रसारण होता है।

***नियम १२३**—(क) क्त (त) प्रत्यय जब सकर्मक धातु से कर्मवाच्य में होगा तो कर्म में प्रथमा, कर्ता में तृतीया और क्रिया का लिंग, वचन और विभक्ति कर्म के अनुसार होगी, कर्ता के अनुसार नहीं। (ख) अकर्मक धातु से क्त (त) प्रत्यय होगा तो कर्ता में तृतीया होगी। क्रिया में नपुंसकलिंग एकवचन ही रहेगा। (ग) 'त' प्रत्ययान्त क्रियाशब्द कर्म के अनुसार पुंलिंग होगा तो उसके रूप 'रामवत्' चलेंगे, स्त्रीलिंग होगा तो रमावत्, नपुंसकलिंग होगा तो गृहवत्। जैसे—अहं पुस्तकम् अपठम् के स्थान पर मया पुस्तकं पठितम्। मया द्वे पुस्तके पठिते, पुस्तकानि पठितानि। मया ग्रन्थः पठितः, ग्रन्थौ पठितौ, ग्रन्थाः पठिताः। मया बाला दृष्टा, बालाः दृष्टाः। तेन हसितम्, तेन रुदितम्।

***नियम १२४**—(गत्यर्थाकर्मक०) जाना, चलना अर्थ की धातुओं, अकर्मक धातुओं तथा श्लिष्, शी, स्था, आस्, वस्, जन्, रुह्, जॄ (वृद्ध होना) धातु से क्त प्रत्यय कर्तृवाच्य में भी होता है। अतः कर्ता में प्रथमा और कर्म में द्वितीया। जैसे—स गृहं गतः। स ग्रामं प्राप्तः। स भूतः। हरिः रमामाश्लिष्टः। कर्म-वाच्य या भाववाच्य में भी इनसे क्त होता है। जैसे—तेन गतम्, तेन भूतम्।

अभ्यास ३१

१. उदाहरण-वाक्यः—१. त्वया मया तेन युष्माभिः अस्माभिः वा पुस्तकं पठितम्, पुस्तके पठिते, पुस्तकानि पठितानि। २. मया लेखो लिखितः, विद्या पठिता, कथा श्रुता, पत्रं पठितम्, भोजनं च खादितम्। ३. मया अस्माभिः वा लेखाः लिखिताः, विद्याः पठिताः, कथाः श्रुताः, पत्राणि पठितानि, भोजनानि च खादितानि। ४. स ग्रामं गतः, स आगतः, सोऽत्र स्थितः, स सुप्तः, स मृतः, राजा मित्रमाश्लिष्टः, स आसनम् अधिशयितः, स आसितः, सोऽत्र उषितः, स जातः, स वृक्षमारूढः, स जीर्णः च। ५. सिंहः करिणं पीडयति। ६. स्वामी पादौ प्रक्षालयति, ज्ञानिनः पालयति, कार्ये योजयति प्रेरयति च, पुस्तकं रचयति च। ७. कथयताम्, चिन्तयताम्, भोजनं भक्षयतां च भवान्।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. मैंने एक पुस्तक पढ़ी, दो पुस्तकें पढ़ीं, तीन पुस्तकें पढ़ीं। २. उसने खाना खाया। ३. मैंने लेख लिखा। ४. मैं हँसा। ५. वह रोया। ६. उसने पुस्तकें चुराईं। ७. मैंने विद्या पढ़ी। ८. उसने फूल देखा। ९. वह विद्यालय गया। १०. वह बाद में गाँव में आया। ११. वह शीघ्र सोया। १२. पुत्र हुआ। १३. मैं बैठा (आस्)। १४. भाई ने भाई का आलिंगन किया (श्लिष्)। १५. मैं वहाँ रहा (वस्)। १६. वह आसन पर सोया (शी)। १७. बालक पैदा हुआ (जन्)। १८. मैं पर्वत पर चढ़ा (रुह्)। १९. वह वृद्ध हुआ (जॄ)। २०. वह आया और मैं गया। (ख) २१. विद्यार्थी योगी और त्यागी की पूजा करता है। २२. मन्त्री मन्त्रणा देता है। २३. हाथी दण्डधारियों को दुःख दे रहा है। २४. वह वस्त्रों को धोता है। २५. पिता पुत्रों का पालन करता है। २६. ज्ञानी वाग्मी को प्रेरणा देता है। २७. वह पक्षियों को गिनता है। २८. विधि ने शशी को बनाया। २९. योगी सोचता है। ३०. वाग्मी कथा कह रहा है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
(१) मया त्रीणि पुस्तकानि पठितम्।	मया त्रीणि पुस्तकानि पठितानि।	१२३
(२) अहं विद्यां पठितम्।	मया विद्या पठिता।	१२३

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लट् में बदलो। (ख) इन धातुओं के दसों लकारों में रूप लिखोः—पीड्, प्रक्षाल्, पाल्, युज्, प्रेर्, गण्, मन्त्र्, रच्, पूज्। (ग) इन शब्दों के पूरे रूप लिखोः—करिन्, दण्डिन्, विद्यार्थिन्, स्वामिन्, मन्त्रिन्, ज्ञानिन्, योगिन्। (घ) क्त प्रत्यय लगाने पर कर्ता, कर्म और क्रिया में कौन-सी विभक्ति और वचन होते हैं, १० उदाहरण देकर बताओ। (ङ) किन धातुओं के साथ क्त प्रत्यय होने पर कर्ता में प्रथमा रहती है, सोदाहरण बताओ।

शब्दकोष—७७५ + २५ = ८००) **अभ्यास ३२** (व्याकरण)

(क) आत्मन् (आत्मा), जीवात्मन् (जीवात्मा), परमात्मन् (परमात्मा), ब्रह्मन् (ब्रह्मा), द्विजन्मन् (१. ब्राह्मण, २. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य), अश्मन् (पत्थर), अध्वन् (मार्ग), यज्वन् (यज्ञकर्ता), अर्वन् (घोड़ा), पाप्मन् (पाप, पापी)। कथनम् (कहना), काष्ठम् (लकड़ी)। (१२)। (ख) सान्त्व् (सान्त्वना देना), खण्ड् (खण्डन करना), मण्ड् (मण्डन करना), तुल् (तोलना), घुष् (घोषणा करना), पुष् (पोषण करना), आ + लोक् (देखना), आ + लोच् (आलोचना करना), तृप् (तृप्त करना), तड् (मारना)। (१०)। (ग) ध्रुवम् (अवश्य), वरम् (अच्छा, श्रेष्ठ), तर्हि (तो)। (३)।

सूचना—(क) आत्मन्—पाप्मन्, आत्मन् के तुल्य।

व्याकरण (आत्मन्, क्त प्रत्यय)

१. आत्मन् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० ११)।

२. सान्त्व् आदि के रूप चोरयति के तुल्य। जैसे—सान्त्वयति, खण्डयति, मण्डयति, तोलयति, घोषयति, पोषयति, आलोकयति, आलोचयति, तर्पयति, ताडयति।

*नियम १२५—धातु से त और तवत् (तथा क्तिन्) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम ठीक स्मरण कर लें। (देखो परिशिष्ट में क्त प्रत्यय से बने रूप)। (१) धातु को गुण या वृद्धि नहीं होती। सेट् में इ लगता है। अनिट् में नहीं। सन्धिकार्य होगा। जैसे—कृ > कृतः। हृतः, धृतः, भृतः। पठितम्, लिखितम्। (२) (रदाभ्यां निष्ठातो नः०) र् या द् के बाद के त को न होता है, धातु के द् को भी न्। अर्थात् र् + त = र्ण। द् + त = न्न। दीर्घ ॠ को ईर् या ऊर् होगा। शॄ > शीर्णः, तॄ > तीर्णः, गॄ > गीर्णः, कॄ > कीर्णः, संकीर्णः, प्रकीर्णः, पॄ > पूर्णः, भिद् > भिन्नः, छिद् > छिन्नः, सद् > सन्नः, प्रसन्नः। (३) (द्यतिस्यति०) द (दा), सो (सा), मा, स्था इनके आ को इ होगा। दितः, अवसितः, परिमितः, स्थितः। गा, पा, हा के आ को ई होगा। गीतः, पीतः, हीनः। (४) (अनुदात्तोपदेश०) यम्, रम्, नम्, गम्, हन्, मन्, वन् और तनादिगणी धातुओं के म् और न् का लोप होता है। धातुओं की उपधा के न् का भी प्रायः लोप होता है। गम् > गतः, यम् > यतः, संयतः, रम् > रतः, नम् > नतः, प्रणतः, हन् > हतः, मन् > मतः, संमतः, तन् > ततः, विततः। जन्, सन्, खन्, के न् को आ होगा। जातः, सातः, खातः। बन्ध् > बद्धः, ध्वंस् > ध्वस्तः, स्रंस् > स्रस्तः, दंश् > दष्टः। (५) (वचिस्वपि०, ग्रहिज्या०) वच् आदि को संप्रसारण होता है। ब्रू या वच् > उक्तः, स्वप् > सुप्तः, यज् > इष्टः, वप् > उप्तः, ग्रह् > गृहीतः, व्यध् > विद्धः, प्रच्छ् > पृष्टः, आह्वे > आहूतः, वह् > ऊढः, वद् > उदितः, वस् > उषितः। (६) इन धातुओं के ये रूप होते हैं:—धा > हितः, विहितः, निहितः। दा > दत्तः, अस् > भूतः, शुष् > शुष्कः, पच् > पक्वः। सह् > सोढः, अद् > जग्धः, क्षै > क्षामः।

अभ्यास ३२

१. उदाहरण-वाक्य :—१. मया कार्यं कृतम्, मया गुरुः सेवितः, मया वस्त्रं याचितम्, मया धनं लब्धम्, मया कार्यम् आरब्धम्, मया मार्गः रुद्धः, मया भोजनं च भुक्तम्। २. मया काष्ठं भिन्नं छिन्नं च, नदी तीर्णा, परीक्षा उत्तीर्णा, अन्नं कीर्णम्, कार्यं च पूर्णम्। ३. मया गानं गीतम्, जलं च पीतम्। ४. मया दुष्टः हतः, गुरुः नतः, नगरं च ध्वस्तम्। ५. स ग्रामं गतः, पुत्रः शयितः, नरः उत्थितः, शिष्यः आसितः, मुनिः उषितः, पुत्रो जातः, नृपः अश्वमारूढः, वृक्षः च जीर्णः। ६. मया सुप्तम्, बीजम् उप्तम्, पुस्तकं गृहीतम्, प्रश्नः पृष्टः, छात्रः आहूतः, भार ऊढः, कार्यं विहितम्, भोजनं पक्वम्, दुःखं च सोढम्। ७. द्विजन्मा आत्मानं पोषयति, तर्पयति, आलोचयति च। ८. स तस्य कथनं खण्डयति मण्डयति च।

२. संस्कृत बनाओ:—(क) १. राम ने पुस्तक पढ़ी। २. ब्रह्मा ने संसार का पालन किया और उसको धारण किया। ३. यज्ञकर्ता ने वृक्ष काटा (खण्ड्)। ४. कृष्ण ने फूल बिखेरे (कॄ) और कार्य पूर्ण किया। ५. बालक उठा, शिष्य वहाँ रहा, पुत्र उत्पन्न हुआ, राम सोया (शी), गुरु वृद्ध हुआ और लड़की पर्वत पर चढ़ी। ६. ब्राह्मण ने पत्थर फोड़ा। ७. घोड़े ने अन्न खाया। ८. पाप नष्ट हुए। ९. मैंने पुस्तक पढ़ी, लेख लिखा, भोजन खाया, धन पाया, गंगा पार की और परीक्षा उत्तीर्ण की। १०. तूने गाना गाया, जल पिया, शत्रु को मारा, गुरु को प्रणाम किया और दुष्ट को बाँधा। ११. उसने भूमि खोदी, यज्ञ किया, बीज बोया, पुस्तक ली, प्रश्न पूछा, भार ढोया और मुझे बुलाया। १२. मैंने दान दिया और भोजन किया। १३. पुत्र पैदा हुआ, फल पका, वृक्ष सूखा और वह उठा। (ख) १४. वह अवश्य शिष्य को सान्त्वना देता है। १५. वह ठीक ढंग से (वरम्) मेरे कथन का मंडन करता है और यह खंडन करता है। १६. वह अन्न तोलता है। १७. वह घोषणा करता है। १८. वह पुत्र का पालन करता है और उसे देखता है। १९. द्विजन्मा आत्मा की विवेचना करता है। २०. अन्न संसार को तृप्त करता है।

३.	अशुद्ध	शुद्ध	नियम
	१. अत्तम्, पक्तम्, शुषितः।	जग्धम्, पक्वम्, शुष्कः।	१२५
	२. वसम्, यष्टम्, कीर्तम्, पूर्तम्।	उप्तम्, इष्टम्, कीर्णम्, पूर्णम्।	१२५

४. अभ्यासः—(क) २ (क) को बहु० में बदलो। (ख) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ग) इन शब्दों के पूरे रूप लिखोः—आत्मन्, ब्रह्मन्, द्विजन्मन्, अध्वन्, यज्वन्। (घ) इन धातुओं के दसों लकारों में रूप लिखोः—खण्ड्, तुल्, घुष्, पुष्, आलोक्, तड्। (ङ) इन धातुओं के क्त प्रत्यय लगाकर रूप बनाओः—कृ, लभ्, रुध्, भुज्, कॄ, तॄ, पॄ, भिद्, छिद्, सद्, गा, पा, गम्, नम्, बन्ध्, वच्, वह्, ग्रह्, प्रच्छ्, धा, आस्, सह्, पच्।

शब्दकोष—८०० + २५ = ८२५) **अभ्यास ३२** (व्याकरण)

(क) राजन् (राजा), पूषन् (सूर्य), मूर्धन् (मस्तक), ग्रावन् (पत्थर), तक्षन् (बढ़ई), उक्षन् (बैल)। नदी (नदी), नारी (स्त्री), पत्नी (स्त्री), जननी (माता), पृथ्वी (पृथ्वी), पुत्री (लड़की)। (१२)। (ख) कृत् (वर्णन करना), मन्त्र् (मन्त्रणा करना), तर्ज् (डराना), तर्क् (तर्क करना), आस्वद् (स्वाद लेना), गर्ह् (निन्दा करना), गवेष् (ढूँढ़ना) (७) (ग) सुष्ठु (अच्छा), स्वयम् (स्वयम्), मिथः (परस्पर), परस्परम् (परस्पर), जातु (कभी), कदापि (कभी)। (६)।

सूचना—(क) राजन्—उक्षन्, राजन् के तुल्य। नदी–पुत्री, नदीवत्।

व्याकरण (राजन्, नदी, क्तवतु, चुरादिगणी धातुएँ)

१. राजन् और नदी शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० १२, १५)

२. कृत् आदि के रूप चोरयति के तुल्य। कीर्तयति, तर्कयति, आस्वादयति, गर्हयति, गवेषयति। मन्त्रयते और तर्जयते आत्मनेपदी ही हैं।

सूचना—लट् के रूप के साथ 'स्म' लगाने से भी भूतकाल का अर्थ होता है।

*नियम १२६—क्तवतु प्रत्यय भूतकाल में होता है। कर्तृवाच्य में होता है, अतः कर्ता के तुल्य क्रियाशब्द के लिंग विभक्ति और वचन होंगे। कर्ता में प्रथमा होगी, कर्म में द्वितीया और क्रिया कर्ता के तुल्य। धातु के रूप क्त प्रत्यय के तुल्य ही बनेंगे। (नियम १२५ लगेगा)। क्त प्रत्यय लगाकर जो रूप बनता है, उसी में 'वत्' और जोड़ दें। जैसे—कृ > कृतः, तवत् में कृतवत्। तवत्-प्रत्ययान्त के रूप पुंलिंग में भगवत् के तुल्य चलेंगे, स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य और नपुंसकलिंग में जगत् (देखो शब्द० २६) के तुल्य। भूतकाल में त या तवत् प्रत्यय लगाकर अनुवाद बनाना सरल होता है, अतः इन उदाहरणों से नियमों की व्याख्या समझें। क्त प्रत्यय लगाने पर कर्म के लिंग, वचन और विभक्ति पर ध्यान दिया जायगा, कर्ता के लिंग आदि पर नहीं। क्तवतु प्रत्यय लगाने पर कर्ता के लिंग, विभक्ति और वचन पर ध्यान देना होगा, कर्म पर नहीं।

भूतकाल गणरूप	क्त प्रत्यय	क्तवतु प्रत्यय
१. स पुस्तकम् अपठत्।	तेन पुस्तकं पठितम्।	स पुस्तकं पठितवान्।
२. त्वं ,, अपठः।	त्वया ,, ,, ।	त्वम् ,, ,, ।
३. अहं ,, अपठम्।	मया ,, ,, ।	अहं ,, ,, ।
४. तौ पुस्तके अपठताम्।	ताभ्यां पुस्तके पठिते।	तौ पुस्तके पठितवन्तौ।
५. युवाम् ,, अपठतम्।	युवाभ्यां ,, ,, ।	युवाम् ,, ,, ।
६. आवाम् ,, अपठाव।	आवाभ्यां ,, ,, ।	आवाम् ,, ,, ।
७. ते पुस्तकानि अपठन्।	तैः पुस्तकानि पठितानि।	ते पुस्तकानि पठितवन्तः।
८. यूयं ,, अपठत।	युष्माभिः ,, ,, ।	यूयं ,, ,, ।
९. वयं ,, अपठाम।	अस्माभिः ,, ,, ।	वयं ,, ,, ।

अभ्यास ३३

१. उदाहरण-वाक्यः—१. राजा गृहं गतवान्, राजानौ गृहं गतवन्तौ, राजानः गृहं गतवन्तः। २. बालिका भोजनं भुक्तवती, बालिके भुक्तवत्यौ, बालिकाः भुक्तवत्यः। ३. पत्रं पृथ्व्यां पतितवत्, पत्रे पतितवती, पत्राणि पतितवन्ति। ४. राजा मन्त्रयते, पूषा पोषयति, पुत्री तर्कयति च। ५. नार्यौ मिथः मन्त्रयेते। ६. पुत्री जननीं गवेषयति। ७. भुक्तवन्तं तं पश्य। ८. भुक्तवता तेन कार्यं कृतम्। ९. भुक्तवते तस्मै वस्त्रं देहि। १०. भुक्तवति तस्मिन् स आगतवान्। ११. स पठति स्म, लिखति स्म, निवसति स्म च।

२. संस्कृत बनाओः—(क्तवतु प्रत्यय) (क) १. वह घर गया, वे दोनों घर गये, वे सब घर गये। २. वह लड़की यहाँ आई, वे दोनों आईं, वे सब आईं। ३. एक पत्ता पृथ्वी पर गिरा, दो फूल गिरे और तीन फल गिरे। ४. वह आया, वह हँसा, उसने पढ़ा, उसने लिखा, वह सोया, उसने देखा और उसने काम किया। ५. तू उठा, तू ठीक दौड़ा, तूने स्वयं सेवा की और तूने खाना खाया। ६. सोये हुए बालक को देखो और पढ़े हुए पाठ को फिर स्वयं पढ़ो। ७. भोजन किये हुए उस ब्राह्मण को एक फल और दो। ८. जब वह खाना खा चुका, तब (भुक्तवति तस्मिन्) मैं उसके पास गया। ९. उसके चले जाने पर (गतवति तस्मिन्) मैं यहाँ आया। १०. सूर्य (पूषन्) चमका। ११. सिर झुका। १२. पत्थर गिरा। १३. बढ़ई आया। १४. बैल उठा। १५. नारी ने नदी देखी। १६. पुत्री जननी से बोली। (ख) १७. कवि राजा के गुणों का वर्णन करता है। १८. राजा मन्त्रियों से मन्त्रणा करता है। १९. राजा शत्रु को डराता है। २०. वह लड़की तर्क करती है। २१. वह भोजन का स्वाद लेता है। २२. दुर्जन सज्जन की निन्दा करता है। २३. सज्जन सत्य को ढूँढ़ता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. भोजनं खादन् ब्राह्मणं फलं देहि।	भुक्तवते ब्राह्मणाय फलं देहि।	१२६, ३३, ३५
२. स भोजनस्य आस्वादयति।	स भोजनम् आस्वादयति।	४

४. अभ्यास—(क) २ (क) को क्त प्रत्यय लगाकर वाक्य बनाओ। (ख) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ग) इन शब्दों के रूप लिखो— राजन्, पूषन्, मूर्धन्, ग्रावन्, तक्षन्। नदी, नारी, पत्नी, जननी, पुत्री, पृथ्वी। (घ) इन धातुओं के दसों लकारों में रूप लिखो—कृत्, मन्त्र्, तर्ज्, आस्वद्, गर्ह्।

शब्दकोष—८२५ + २५ = ८५०) **अभ्यास ३४** (व्याकरण)

(क) मतिः (बुद्धि), श्रुतिः (वेद), स्मृतिः (स्मृति), भूमिः (भूमि), पङ्क्तिः (पंक्ति), ओषधिः (दवा), श्रेणिः (कक्षा), अङ्गुलिः (अँगुली), प्रीतिः (प्रेम), अनुरक्तिः (अनुराग), कान्तिः (चमक), शान्तिः (शान्ति), प्रकृतिः (स्वभाव, प्रकृति), भक्तिः (भक्ति), शक्तिः (शक्ति), मूर्तिः (मूर्ति), पद्धतिः (मार्ग, विधि), समृद्धिः (वृद्धि), समितिः (सभा), सूक्तिः (सुभाषित), नियतिः (भाग्य), व्यक्तिः (मनुष्य), रात्रिः (रात्रि), तिथिः (तिथि)। २४। (ख) पठत् (पढ़ता हुआ)। ।१।

सूचना—(क) मति—तिथि, मतिवत्।

व्याकरण (मति, पठत्, शतृ, प्रत्यय, द्वितीया)

१. मति शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० १४)।

२. पठत् शब्द के रूप स्मरण करो। शतृ-प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुं० में पठत् के तुल्य चलेंगे। प्रथमा एक० में अन्त में अन् रहेगा, जैसे पठन्, गच्छन् आदि। शेष रूप भगवत् के तुल्य। (देखो परिशिष्ट में तृ प्रत्यय के रूप।)

३. अभ्यास ५ में दिये गये द्वितीया के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

*नियम १२७—(क) (लटः शतृशानचौ०) लट् के स्थान पर परस्मैपद में शतृ और आत्मनेपद में शानच् होता है। शतृ का अत् और शानच् का आन शेष रहता है। शतृ-प्रत्ययान्त के लिंग, वचन और कारक विशेष्य के तुल्य होते हैं। शतृप्रत्ययान्त शब्द के रूप पुं० में पठत् के तुल्य होंगे। जुहोत्यादि की धातुओं में न् नहीं लगेगा। जैसे—ददत्, ददतौ, ददतः। स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य। नपुं० में जगत् के तुल्य रूप चलेंगे। शतृ और शानच् क्रिया की वर्तमानता का बोध कराते हैं। जैसे—वह जा रहा है, वह जा रहा था, वह खा रहा था—स गच्छन् अस्ति आदि। (ख) शतृ प्रत्यय में भी विकरण आदि होते हैं, अतः शतृ प्रत्यय लगाकर रूप बनाने का अति सरल प्रकार यह है कि उस धातु के लट् के प्रथमपुरुष बहु० के रूप में से अन्तिम इ और बीच के न् को हटा दें। इस प्रकार प्रायः शतृ प्रत्ययवाला रूप बच जाता है। जैसे—भू—भवन्ति, शतृ—भवत्। अस्—सन्ति, सत्। गम्—गच्छन्ति, गच्छत्। पा—पिबन्ति, पिबत्। (ग) शतृ-प्रत्ययान्त के बाद अर्थ के अनुसार अस् धातु का प्रयोग करो। जैसे—वर्तमान में लट्, भूत में लङ्, भविष्यत् में लृट्। यथा—स गच्छन् अस्ति (वह जा रहा है)। तौ गच्छन्तौ स्तः। अहं गच्छन् अस्मि। स गच्छन् आसीत्, भविष्यति वा। (घ) शतृ-प्रत्ययान्त का स्त्रीलिंग बनाना—(१) (शप्श्यनोर्नित्यम्) भ्वादि०, दिवादि०, चुरादि०, तुदादि० की धातु के लट् प्र० पु० बहु० के रूप में अन्त में ई जोड़ दो। जैसे—गच्छन्ति से गच्छन्ती (जाती हुई), पठन्ती, पिबन्ती, दीव्यन्ती, तुदन्ती। (२) अदादि०, स्वादि०, क्र्यादि०, तनादि०, जुहोत्यादि० की धातु में लट्, प्र० पु० बहु० के रूप में ई लगेगा, न् नहीं रहेगा। जैसे—रुदती, शृण्वती, क्रीणती, कुर्वती, ददती।

अभ्यास ३४

१. उदाहरण-वाक्यः—१. स गृहं गच्छन् अस्ति, आसीत्, भविष्यति वा। २. तौ गृहं गच्छन्तौ स्तः, आस्ताम् वा। ३. ते गृहं गच्छन्तः सन्ति, आसन् वा। ४. त्वं गच्छन् असि, आसीः वा। ५. अहं गच्छन् अस्मि, आसम् वा। ६. बालिका गच्छन्ती अस्ति। ७. बालिके गच्छन्त्यौ स्तः। ८. बालिकाः गच्छन्त्यः सन्ति। ९. फलं पतत् अस्ति। १०. फलानि पतन्ति सन्ति। ११. पठन्तं बालकं, लिखन्तीं बालिकां च पश्य। १२. पठता मया सर्पः दृष्टः। १३. भोजनं खादते ब्राह्मणाय फलं देहि। १४. धावतः अश्वात् नरः पतितः। १५. पठतः रामस्य मुखं पश्य। १६. मयि पठति सति (जब मैं पढ़ रहा था तब) गुरुः आगतः।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. राम आ रहा है। २. वे दोनों पढ़ रहे हैं। ३. वे सब लिख रहे हैं। ४. तू हँस रहा है। ५. तुम सब बैठ रहे हो। ६. मैं देख रहा हूँ। ७. हम सब खेल रहे हैं। ८. रमा आ रही है। ९. प्रभा गा रही है। १०. पत्ता गिर रहा है। (ख) ११. राम सोच रहा था। १२. कृष्ण पूछ रहा था। १३. वे सब जल पी रहे थे। १४. तू फूल सूँघ रहा था। १५. मैं काम कर रहा था। १६. हम हँस रहे थे। (ग) १७. लिखते हुए बालक को देखो। १८. काम करते हुए मैंने एक सुन्दर फल पाया। १९. पढ़ती हुई बालिका को फूल दो। २०. दौड़ते हुए घोड़े से शिष्य गिरा। २१. गीत गाती हुई कमला का भाव देखो। २२. जब मैं लिख रहा था तब एक आदमी मेरे पास आया। (घ) २३. श्रुति के पीछे स्मृति चलती है। २४. शक्ति, भक्ति, अनुरक्ति और प्रीति को शान्ति और समृद्धि के लिए चाहो। २५. सूक्ति को पढ़ो, मूर्ति को देखो, समिति में जाओ और औषधि लाओ। २६. कक्षा के पास दो पंक्ति में दस व्यक्ति हैं। २७. सुन्दर पद्धति को अपनाओ (सेव्)।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. गमन्, पान्, घ्रान्, दृशन्।	गच्छन्, पिबन्, जिघ्रन्, पश्यन्।	१२७ ख
२. आगच्छती, गायती।	आगच्छन्ती, गायन्ती।	१२७ घ

४. अभ्यासः—(क) २ (क) को भूतकाल में बदलो। (ख) २ (ख) को वर्तमान में बदलो। (ग) इन धातुओं के शतृ प्रत्यय के रूप तीनों लिंगों में बनाओः—पठ्, लिख्, गम्, आगम्, दृश्, हस्, पा, घ्रा, स्था, कृ, जि, दा, अस्, वद्, पच्, इष्, प्रच्छ्, कथ्। (घ) इन शब्दों के पूरे रूप लिखोः—मति, श्रुति, भूमि, प्रकृति, शक्ति, रात्रि, पठत्, गच्छत्, लिखत्, पश्यत्।

शब्दकोष--८५० + २५ = ८७५) **अभ्यास ३५** (व्याकरण)

(क) कुमारी (कुमारी), गौरी (पार्वती), मही (पृथ्वी), रजनी (रात्रि), कौमुदी (चाँदनी), प्राची (पूर्व), प्रतीची (पश्चिम), उदीची (उत्तर), महिषी (१. रानी, २. भैंस), सखी (सखी), पुत्री (पुत्री), दासी (दासी), वापी (तालाब), कमलिनी (कमलिनी), पुरी (नगर), नगरी (नगर), वाणी (वाणी), सरस्वती (सरस्वती)। १८। (पार्वती, भागीरथी, जानकी, अष्टाध्यायी।) (ग) यदि (यदि), चेत् (१. यदि, २. तो), नो चेत् (नहीं तो), अन्यथा (नहीं तो), यतो हि (क्योंकि), सकृत् (एक बार), असकृत् (अनेक बार)। ७।

सूचना—(क) कुमारी--सरस्वती, नदीवत्।

व्याकरण (नदी, शतृ, शानच्, द्वितीया)

१. नदी शब्द के तुल्य कुमारी आदि के रूप चलाओ। (देखो शब्द० १५)।

२. अभ्यास ६–७ में दिये द्वितीया के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

नियम १२८—(क) (लटः शतृशानचौ०) आत्मनेपदी धातुओं के लट् के स्थान पर शानच् (आन) हो जाता है। शानच् प्रत्यय होने पर शब्द के रूप पुंलिंग में रामवत् चलेंगे। स्त्रीलिंग में अन्त में आ लगाकर रमावत् और नपुं० में गृहवत् रूप चलेंगे। शानच् का आन शेष रहता है। शानच्-प्रत्ययान्त शब्दों के लिंग, वचन और कारक विशेष्य के तुल्य ही रहेंगे। (देखो परिशिष्ट में शानच् प्रत्यय)। (ख) शानच्-प्रत्ययान्त के बाद अर्थ के अनुसार अस् धातु का प्रयोग करो, अर्थात् वर्तमान में लट् लकार, भूत में लङ् और भविष्यत् में लट्। (ग) (आने मुक्) जिन धातुओं के अन्त में अ विकरण लगता है, वहाँ पर अ और आन के बीच में म् लग जाएगा। अर्थात् अ + आन = मान। जैसे–यजते > यजमानः। वर्तते > वर्तमानः। वर्धते > वर्धमानः। (घ) (ईदासः) आस् धातु का शानच् होने पर आसीनः रूप होता है। स्त्री० आसीना, नपुं० आसीनम्।

सूचना—हिन्दी में रहा वाले प्रयोगों (जा रहा है, जा रहा था, पढ़ रही थी) का अनुवाद शतृ या शानच् प्रत्यय लगाकर होता है, बाद में अस् धातु का रूप। जैसे–स पठन् अस्ति, सा याचमाना अस्ति, स पचमानः आसीत्, भविष्यति वा।

नियम १२९—(लृटः सद् वा) लृट् लकार को भी परस्मै० में शतृ और आत्मने० में शानच् होता है। लृट् का रूप बनाकर अन्त में शतृ या शानच् लगावें। जैसे–स गमिष्यन् भविष्यति, स पठिष्यन् भविष्यति। (वह जाता हुआ होगा, वह पढ़ता हुआ होगा)।

नियम १३०—शतृ और शानच प्रत्ययान्त का सप्तमी में समय-सूचक अर्थ हो जाता है। जिस समय मैं पढ़ रहा था—मयि पठति सति। जब मैं रो रहा था—मयि रुदति सति।

अभ्यास ३५

१. उदाहरण-वाक्यः—१. छात्रः वर्तमानोऽस्ति, आसीद् वा। २. कुमारी कार्यं कुर्वाणा अस्ति, आसीद् वा। ३. गौरी भोजनं पचमाना अस्ति। ४. शिष्यः अधीयानः (पढ़ रहा) अस्ति। ५. पुत्री आसीना (बैठी हुई) अस्ति। ६. दासी भुञ्जाना (भोजन खाती हुई) अस्ति। ७. अहं श्वः प्रातः पठिष्यन्, कार्यं करिष्यन् च भविष्यामि। ८. रुदन्तं पुत्रं त्यक्त्वा पिता गतः। ९. मयि गच्छति सति (जब मैं जा रहा था तब) पिता आगतः। १०. कुमार्यः महिष्यश्च सखीभिः दासीभिश्च सह वापीं निकषा महीम् अधितिष्ठन्ति। ११. सखी शयाना (सोती हुई) अस्ति।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. उस छात्र ने एक बार पाठ पढ़ा। २. राजकुमारी नदी के पास जा रही है। ३. कमलिनी वापी में अत्यन्त शोभित हो रही है (शुभ्)। ४. रानी सखियों के साथ गौरी और सरस्वती की वन्दना कर रही है (वन्दमाना)। ५. नगरी के चारों ओर रजनी में प्राची, प्रतीची, उदीची और अवाची दिशा में कौमुदी फैल रही है (प्रसृ)। ६. गौरी की वाणी शिव को अच्छी लग रही है (रुच्)। ७. पार्वती और जानकी पृथ्वी पर बैठी हुई (आसीना) अष्टाध्यायी पढ़ रही हैं (अधि + इ-अधीयाना)। (ख) ८. मैं बैठा हुआ था। ९. तू पढ़ रहा था (अधि + इ)। १०. वह माँग रहा था। ११. कुमारी सो रही थी (शी)। १२. गौरी खाना खा रही थी (भुज्)। १३. प्रभा हँस रही थी। १४. रानी हँसती हुई सखी को क्षोभ से देख रही थी (ईक्षमाणा)। (ग) १५. मैं जब लिख रहा था, तब गौरी आयी। १६. बालक जब रो रहा था, तब वह दासी आयी। १७. कुमारी गाय का दूध दुहती है (दोग्धि)। १८. दासी रानी से धन माँग रही है। १९. सरस्वती पार्वती से प्रश्न पूछ रही है। २०. दासी बकरी को गाँव में ले जा रही है। २१. वह कल प्रातः लिख रहा होगा। २२. तू कल घर जा रहा होगा। २३. पाप मत कर, नहीं तो बाद में रोयेगा, क्योंकि पाप से दुःख होता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. अधीयती, शयन्ती, भुंजती, आसन्।	अधीयाना, शयाना, भुञ्जाना, आसीना।	१२८
२. महिष्याः धनं याचते।	महिषीं धनं याचमाना अस्ति।	२१
३. दासी अजां ग्रामे नयन् अस्ति।	दासी अजां ग्रामं नयन्ती अस्ति।	२१, १२७

४. अभ्यासः—(क) २ (क) को भूतकाल में बदलो। (ख) २ (ख) को वर्तमान में बदलो। (ग) इन धातुओं के शानच् प्रत्यय के रूप तीनों लिंगों में बनाओ :—वृत्, पच्, भुज्, कृ, शी, ईक्ष्, वन्द्, रुच्, शुभ्, अधि + इ, आस्। (घ) इन शब्दों के पूरे रूप लिखो:—नदी, कुमारी, पृथ्वी, गौरी, सखी, पुरी, पुत्री, वाणी।

शब्दकोष—८७५ + २५ = ९००) अभ्यास ३६ (व्याकरण)

(क) धेनुः (गाय), रेणुः (धूल), चञ्चुः (चोंच), रज्जुः (रस्सी), हनुः (ठोडी)। सुलेखः (सुलेख), परिणामः (परिणाम), क्रीडकः (खिलाड़ी), अङ्कः (अंक), अवकाशः (छुट्टी), परीक्षा (परीक्षा), क्रीडा (खेल), संचिका (कापी), मसी (स्याही), लेखनी (कलम), श्रेणी (कक्षा), मसीपात्रम् (दावात), वादनम् (बजे), पृष्ठम् (पृष्ठ), उत्तरम् (उत्तर), क्रीडाक्षेत्रम् (क्रीडाक्षेत्र), अनुशासनम् (अनुशासन)। २२। (ख) आस् (बैठना), उत्तीर्णः (उत्तीर्ण), उपस्थितः (उपस्थित)। ३।

सूचना—(क) धेनु—हनु, धेनुवत्।

१. धेनु शब्द के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० १६)।

२. आस् धातु के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० सं० ३४)।

३. अभ्यास ८ में दिए हुए तृतीया के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

व्याकरण (धेनु शब्द, तुमुन् प्रत्यय, द्वितीया)

नियम १३१—(१) (तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्) को, के लिए अर्थ को प्रकट करने के लिए धातु से तुमुन् प्रत्यय होता है। तुमुन् का तुम् शेष रहता है। यह अव्यय होता है, अतः इसका रूप नहीं चलेगा। जैसे—पठितुम् (पढ़ने को), लेखितुम् (लिखने को), स्नातुम् (नहाने को)। (२) इच्छार्थक धातुओं, शक् आदि धातुओं तथा पर्याप्त अर्थ के शब्दों और समय-वाचक शब्दों के साथ भी तुमुन् होता है। (उदाहरण-वाक्योंमें उदाहरण देखिए)।

नियम १३२—तुमुन् (तुम्) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें। ये नियम तृच् (तृ) तव्यत् (तव्य) में भी लगेंगे। (१) धातु को गुण होता है, अर्थात् अन्तिम इ या ई को ए, उ या ऊ को ओ, ऋ या ॠ को अर् तथा उपधा (उपान्त्य) के इ, उ, ऋ को क्रमशः ए, ओ, अर् होता है। जैसे—जि-जेतुम्, भू-भवितुम्, कृ-कर्तुम्। इसी प्रकार हर्तुम्, धर्तुम्, लेखितुम्, रोदितुम्, शोचितुम्। (२) सेट् धातुओं के बीच में इ लगता है, अनिट् में नहीं। उदाहरण उपर्युक्त हैं। (३) धातु के अन्तिम च् और ज् को क् होता है, द् को त्, भ् को ब्, ध् को द्। जैसे—पच्-पक्तुम्, भुज्-भोक्तुम्, छिद्-छेत्तुम्, रुध्-रोद्धुम्, लभ्-लब्धुम्। (४) धातु के अन्तिम च्छ् और श् तथा भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज् के ज् के स्थान पर ष् होकर ष्टुम् हो जाता है। जैसे-प्रच्छ्-प्रष्टुम्। प्रविश्-प्रवेष्टुम्। सृज्-स्रष्टुम्, यज्-यष्टुम्। (५) ए और ऐ अन्तवाली धातुओं को आ हो जाता है। गै-गातुम्, त्रै-त्रातुम्, आह्वे-आह्वातुम्। (६) धातु के अन्तिम म् को न् हो जाता है। गम्-गन्तुम्, रम्-रन्तुम्। (७) इन धातुओं के ये रूप होते हैं:—सह्-सोढुम्, वह्-वोढुम्, सृज्-स्रष्टुम्, दृश्-द्रष्टुम्; आरुह्-आरोढुम्, दह्-दग्धुम्।

नियम १३३—(तुं काममनसोरपि) तुम् के म् का लोप हो जाता है, बाद में काम या मनस् (इच्छार्थक) शब्द हों तो। जैसे—वक्तुकामः, वक्तुमनाः (बोलने का इच्छुक)।

अभ्यास ३६

१. उदाहरण-वाक्यः—१. अहं कार्यं कर्तुमिच्छामि । २. स लेखं लेखितुम्, पुस्तकं पठितुम्, गृहं गन्तुं, शत्रुं हन्तुं, गुरुं वन्दितुं, भोजनं खादितुं च इच्छति । ३. अहं कार्यं कर्तुं शक्नोमि, पठितुं च जानामि । ४. एष समयः कालो वेला वा पठितुम् । ५. अहं भोक्तुं पर्याप्तः अलं वा अस्मि । ६. स वक्तुकामः वक्तुमनाः वा अस्ति । ७. रामः अत्र आस्ते, आस्ताम्, आसीत , आस्त, आसिष्यते वा ।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. खाने के लिए घर जाओ । २. पढ़ने के लिए विद्यालय जाओ । ३. बालक कौवे की चोंच को तोड़ना चाहता है । ४. यह भोजन का समय है । ५. रमा लिख और पढ़ सकती है । ६. कृष्ण खाना खाने के लिए, पाठ पढ़ने के लिए, लेख लिखने के लिए, काम करने के लिए, गाय दुहने के लिए, भार ढोने के लिए, गाय (धेनु) लाने के लिए ओर रस्सी जलाने के लिए वहाँ जाता है । ७. वृक्ष पर चढ़ने के लिए, दुःख सहन करने के लिए, गाय देखने के लिए, प्रश्न पूछने के लिए, यज्ञ करने के लिए, पुत्र की रक्षा करने के लिए, गाना गाने के लिए और शत्रु को जीतने के लिए तुम यहाँ आना । ८. वह पढ़ने का इच्छुक है, खाने का इच्छुक है और गाने का भी इच्छुक है (कामः या मनाः) । (ख) ९. इस कक्षा में २० छात्र और ८ छात्राएँ उपस्थित हैं और ४ छात्र अनुपस्थित हैं । १०. विद्यालय में गुरु छात्रों और छात्राओं से प्रश्न पूछते हैं, वे उत्तर देते हैं । ११. दस बजे विद्यालय की पढ़ाई आरम्भ होती है । १२. छात्र अपने मित्रों के साथ कक्षा में बैठते हैं, लेख लिखते हैं और पुस्तकें पढ़ते हैं । १३. कुछ छात्र परीक्षा में उत्तीर्ण होते हैं और कुछ अनुत्तीर्ण । १४. कुछ खिलाड़ी क्रीड़ाक्षेत्र में गेंद खेल रहे हैं । १५. दावात में स्याही है । १६. अपनी लेखनी से चार पृष्ठ लिखो । १७. अनुशासन का पालन करो । (ग) १८ वह धूलि पर बैठता है । १९. तू बैठता है । २०. मैं बैठता हूँ । २१. वह बैठा । २२. तू बैठा । २३. मैं बैठा । २४. वह बैठेगा । २५. वह बैठे ।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. लिखितुम्, दुग्धुम्, सहितुम् , प्रच्छितुम् ।	लेखितुम्, दोग्धुम्, सोढुम्, प्रष्टुम् ।	१३१
२. पठितुंमनाः, पठितुंकामः ।	पठितुमनाः, पठितुकामः ।	१३३

४. अभ्यासः—(क) २ (ग) को बहुवचन में बदलो । (ख) आस् धातु के दसों लकारों में रूप लिखो । (ग) इन शब्दों के पूरे रूप लिखो—धेनु, रेणु, रज्जु । (घ) तुमुन् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के नियमों को सोदाहरण बताओ । (ङ) इन धातुओं के तुमुन् प्रत्यय के रूप बनाओः—कृ, हृ, धृ, पठ् , लिख् , गम् , भुज् , सह्, वह्, सृज् , दृश् , रुह्, दह्, लभ् , हन् , गै, आह्वे ।

शब्दकोष—९०० + २५ = ९२५) अभ्यास ३७ (व्याकरण)

(क) वधूः (बहू), चमूः (सेना), तनूः (शरीर), जम्बूः (जामुन), श्वश्रूः (सास)। व्याघ्रः (बाघ), ऋक्षः (रीछ), शूकरः (सूअर), वृकः (भेड़िया), शृगालः (गीदड़), शशः (खरगोश), वानरः (बन्दर), मृगः (हिरन), नकुलः (न्योला), अश्वः (घोड़ा), वृषभः (बैल), उष्ट्रः (ऊँट), गर्दभः (गधा), महिषः (भैंसा), कुक्कुरः (कुत्ता), मार्जारः (बिलाव), अजः (बकरा), मूषकः (चूहा), एडका (भेड़)। २४। (ख) शी (सोना)। १।

सूचना—(क) वधू—श्वश्रू, वधूवत्।

व्याकरण (वधू, शी, क्त्वा प्रत्यय, तृतीया)

१. वधू शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० १७)।

२. शी धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो (देखो धातु० ३५)।

३. अभ्यास ९ में दिए तृतीया के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

नियम १३४—(१) (समानकर्तृकयोः पूर्वकाले) 'पढ़कर', 'लिखकर' आदि 'कर' या 'करके' के अर्थ में 'क्त्वा' प्रत्यय होता है। क्त्वा का 'त्वा' शेष रहता है। क्रिया का कर्ता एक ही होना चाहिए। त्वा अव्यय होता है, अतः इसके रूप नहीं चलते हैं। जैसे—भोजनं खादित्वा विद्यालयं गच्छति। (२) (अलंखल्वोः०) निषेधार्थक अलम् या खलु बाद में हो तो धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है। जैसे—अलं कृत्वा, कृत्वा खलु (मत करो)। अलं हसित्वा (मत हँसो)। देखो अभ्यास ३८ भी।

नियम १३५—क्त्वा (त्वा) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें:—(१) धातु को गुण या वृद्धि नहीं होती। सेट् धातुओं में इ लगेगा, अनिट् में नहीं। जैसे—पठित्वा, हसित्वा, कृत्वा, हृत्वा, धृत्वा, लिखित्वा, रुदित्वा, जित्वा, चित्वा, भूत्वा। (२) नियम १२५ के (१) (३) (४) (५) यहाँ पर भी लगेंगे। जैसे—(१) हृत्वा, लब्ध्वा, रुद्ध्वा, (३) दित्वा, सित्वा, मित्वा, स्थित्वा, (४) गत्वा, रत्वा, यत्वा, नत्वा, मत्वा, हत्वा, बद्ध्वा। जन् आदि में 'इ' भी लगता है—जनित्वा, सात्वा-सनित्वा, खात्वा-खनित्वा, (५) उक्त्वा, सुप्त्वा, इष्ट्वा, उप्त्वा, गृहीत्वा, विद्ध्वा, पृष्ट्वा, हुत्वा, ऊढ्वा, उदित्वा, उषित्वा। (३) नियम १३२ के (३), (४) यहाँ भी लगते हैं। (३) पक्त्वा, भुक्त्वा, (४) मृष्ट्वा, दृष्ट्वा, इष्ट्वा, सृष्ट्वा (४) गा, पा के आ को ई हो जाता है—गीत्वा, पीत्वा। अन्यत्र आ रहता है। ज्ञात्वा, त्रात्वा। (५) दीर्घ ऋ को ईर् होता है, तॄ > तीर्त्वा, कॄ > कीर्त्वा, पॄ में ऊर् होता है पूर्त्वा। (६) कम्, क्रम्, चम्, दम्, भ्रम्, श्रम् के दो-दो रूप होते हैं। एक इ बीच में लगाकर, दूसरा अम् को 'आन्' बनाकर। जैसे—कमित्वा—कान्त्वा, क्रमित्वा—क्रान्त्वा, शमित्वा—शान्त्वा आदि। (७) इन धातुओं के ये रूप होते हैं। दा > दत्त्वा, धा > हित्वा, हा (छोड़कर) हित्वा, अद् > जग्ध्वा, दह् > दग्ध्वा।

अभ्यास ३७

१. उदाहरण-वाक्यः—१. रामः स्नात्वा, पाठं पठित्वा, लेखं लिखित्वा, भोजनं च भुक्त्वा विद्यालयं गच्छति। २. कृष्णः आसने स्थित्वा, मित्रं दृष्ट्वा, तं प्रश्नं पृष्ट्वा, स्वयं च किञ्चिद् उक्त्वा लिखति। ३. शिष्यः आसने शेते, शेताम्, शयीत, अशेत, शयिष्यते वा।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. कृष्ण स्नान करके, पुस्तक पढ़कर, लेख लिखकर, पाठ स्मरण कर और भोजन करके प्रतिदिन पाठशाला जाता है। २. राजा की सेना शत्रुओं को जीतकर और उन्हें बाँधकर राजा के पास लाती है। ३. बहू काम करके, भोजन पकाकर और सास को खिलाकर स्वयं खाती है। ४. गुरु सत्य बोलकर, धर्म करके, यज्ञ करके, दूध पीकर और छात्रों को पढ़ाकर जीवन बिताता है। ५. सास दान देकर, मन्त्र जपकर, गाना गाकर, अधर्म को छोड़कर और सत्य को जानकर सुखपूर्वक रहती है। ६. बालक रोकर, भूमि खोदकर और डण्डा लेकर दौड़ता है। ७. भृत्य नदी को पार करके, भार सिर पर ढोकर ले जाता है। (ख) ८ राम ने वन में एक व्याघ्र, दो रीछ, तीन सूअर, चार भेड़िए, पाँच गीदड़ और छः मृग देखे। ९. नगर में बहुत से घोड़े, बैल, ऊँट, भैंसे, कुत्ते, बिल्ली तथा गधे रहते हैं। १०. मत हँसो, मत रोओ, विवाद मत करो। ११. कुत्ता आँख से काना है। १२. घोड़ा पैर से लँगड़ा है। १३. खरगोश स्वभाव से सरल होता है। १४. ऐसे कुत्ते से क्या लाभ जो रक्षा न करे? (ग) (शी धातु) १५. वह सोता है। १६. मैं सोता हूँ। १७. वह सोवे। १८. तू सो। १९. मैं सोऊँ। २०. वह सोया। २१. तू सोया। २२. मैं सोया। २३. वह सोएगा। २४. तू सोएगा। २५. मैं सोऊँगा।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. बन्ध्वा, यजित्वा, वक्त्वा, दुहित्वा।	बद्ध्वा, इष्ट्वा, उक्त्वा, दुग्ध्वा।	१३५
२. दात्वा, ग्रहीत्वा, तरित्वा, वहित्वा।	दत्त्वा, गृहीत्वा, तीर्त्वा, ऊढ्वा।	१३५

४. अभ्यास—(क) २ (ग) को बहुवचन बनाओ। (ख) इन शब्दों के पूरे रूप लिखो—वधू, चमू, तनू। (ग) शी धातु के दसों लकारों के रूप लिखो। (घ) क्त्वा प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के नियमों को सोदाहरण लिखो। (ङ) इन धातुओं के क्त्वा प्रत्यय के रूप लिखो—कृ, गम्, पठ्, लिख्, खन्, वच्, स्वप्, ग्रह्, वह्, दृश्, प्रच्छ्, गा, तृ, कृ, दा, धा, क्रम्, भ्रम्।

शब्दकोश—९२५ + २५ = ९५०) **अभ्यास ३८** (व्याकरण)

(क) वाच् (वाणी), शुच् (शोक), त्वच् (त्वचा), ऋच् (वेद की ऋचा)। कोकिलः (कोयल), मयूरः (मोर), हंसः (हंस), शुकः (तोता), चातकः (चातक), चक्रवाकः (चकवा), खञ्जनः (खंजन), कपोतः (कबूतर), टिट्टिभः (टिटिहरी), चिल्लः (चील), काकः (कौआ), वायसः (कौआ), कुक्कुटः (मुर्गा), गृध्रः (गीध), बकः (बगुला), उलूकः (उल्लू), श्येनः (बाज)। सारिका (मैना), वर्तिका (१. बत्तख, २. बत्ती), चटका (चिड़िया)। २४। (घ) स्वच्छः (स्वच्छ)। १।

व्याकरण (वाच्, हु, ल्यप्, चतुर्थी)

१. वाच् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० १८)।

२. हु धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ३६)।

३. अभ्यास १० में दिए चतुर्थी के नियमों का पुनः अध्ययन करो।

नियम १३६—(समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्) धातु से पूर्व अव्यय, उपसर्ग या च्विप्रत्यय हो तो क्त्वा के स्थान पर ल्यप् (य) हो जाता है। धातु से पहले नञ् (अ) हो तो नहीं। ल्यप् का 'य' शेष रहता है। ल्यप् अव्यय होता है, अतः इसके रूप नहीं चलते। जैसे—प्रलिख्य, प्रगम्य, स्वीकृत्य। परन्तु अकृत्वा, अगत्वा। ल्यप् प्रत्यय का वही अर्थ है जो क्त्वा का है अर्थात् करके।

नियम १३७—ल्यप् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें:—
(१) साधारणतया धातु अपने मूल रूप में रहती है। गुण या वृद्धि नहीं होती है। इ भी बीच में नहीं लगता। जैसे—आलिख्य, संपठ्य, आनीय। (२) धातु के अन्त में आ, ई, ऊ हो तो वह उसी रूप में रहता है। जैसे—प्रदाय, उत्थाय, निधाय, निलीय, विक्रीय, आनीय, अनुभूय, स्थिरीभूय। (३) (ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्) ह्रस्व अ, इ, उ, ऋ के बाद ल्यप से पहले 'त्' और लग जाता है अर्थात् 'त्य' होता है। जैसे—आगत्य, अधीत्य, विजित्य, संश्रुत्य, प्रस्तुत्य, प्रकृत्य, प्रहृत्य। (४) दीर्घ ॠ को ईर् हो जाता है और पॄ में ऊर्। जैसे—उत्तीर्य, अवतीर्य, विकीर्य, प्रपूर्य। (५) (वचिस्वपि०) वच् आदि को संप्रसारण होता है। वच् > प्रोच्य, वद् > अनूद्य, वस् > अध्युष्य, स्वप् > प्रसुप्य, ह्वे > आहूय, ग्रह् > संगृह्य, प्रच्छ् > आपृच्छ्य। (६) णिजन्त धातुओं के 'इ' का लोप हो जाता है। विचारि > विचार्य। प्रहार्य, उत्तार्य, उत्थाप्य, प्रदर्श्य, संचिन्त्य। (७) (ल्यपि लघुपूर्वात्) उपधा में ह्रस्व हो तो इ को अय् होता है। विगणय्य, प्रणमय्य, विरचय्य। (८) (वा ल्यपि) गम् आदि के म् का लोप विकल्प से होता है और हन् आदि के न् का लोप नित्य होता है। (लोप होने पर बीच में त्)। आगम्य—आगत्य, प्रणम्य—प्रणत्य। हन् > आहत्य, तन् > वितत्य, मन् > अनुमत्य।

अभ्यास ३८

१. उदाहरण-वाक्यः—१. पाठं संपठ्य, लेखम् उल्लिख्य, सुखम् अनुभूय, परीक्षाम् उत्तीर्य रामोऽत्रागतः। २. रामम् आहूय, सम्यग् विचार्य च गुरुः पृष्टवान्। ३. वाचम् उच्चार्य, शुचं संत्यज्य, वेदम् अधीत्य, ऋचं प्रोच्य च गुरुः प्राप्तः। ४. छात्रः अग्नौ जुहोति, जुहोतु, जुहुयात्, अजुहोत्, होष्यति वा।

२. संस्कृत बनाओः—(क) (ल्यप्) १. गुरुजी को जल लाकर दो। २. श्रम से पढ़कर और परीक्षा उत्तीर्ण कर अग्रिम श्रेणी में पढ़ो। ३. राजा शत्रु का संहार करके, दुष्ट पर प्रहार कर, गुणियों का उपकार कर, पापियों का अपकार कर और सुख का अनुभव कर ब्राह्मणों को दान देता है। ४. वणिक् अन्न और पुस्तक बेचकर, धन-संग्रह कर, दान देकर और अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण कर सुख से सोता है। ५. बालक उठकर, गुरु को प्रणाम कर, सुन्दर वचन उच्चारण कर और विद्यालय में आकर ऋचा पढ़ता है। ६. शिष्य रात्रि में सोकर, प्रातः उठकर, अन्य छात्रों को उठाकर, स्नान कर, हवन कर, भोजन कर और पुस्तक लेकर पढ़ने के लिए जाता है। ७. वह सायंकाल खेलकर, घूमकर, पूजाकर, भोजनकर और ऋचा पढ़कर सोता है। ८. शोक को छोड़कर वाणी कहो। (ख) ९. कोयल और कौए के पंख काले होते हैं। १०. मोर नाचकर, हंस चलकर, तोता बोलकर, चातक मेघ की ओर देखकर, खंजन उड़कर (उड्डीय), कबूतर, चील, बगुला और बाज अपनी क्रीड़ा से मन को हरते हैं। ११. मैना बोलती है, बत्तक इधर आती है, चिड़िया उड़ती है (उड्डयते), उल्लू चिल्लाता है (क्रन्द्), गीध देखता है, मुर्गा भागता है, चकवा रात्रि में रोता है और टिटिहरी उड़ती है। (ग) १२. वह अग्नि में हवन करता है। १३. तू हवन करता है। १४. मैं हवन करता हूँ। १५. वह हवन करे। १६. तू हवन कर। १७. उसने हवन किया। १८. मैंने हवन किया। १९. वह हवन करेगा। २०. मैं हवन करूँगा।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. आदत्य, अधीय, उत्तीर्त्वा।	आदाय, अधीत्य, उत्तीर्य।	१३७
२. आह्वाय, संहृय, उपकृय।	आहूय, संहृत्य, उपकृत्य।	१३७

४. अभ्यासः—(क) २ (ग) को बहुवचन बनाओ। (ख) हु धातु के दसों लकारों के रूप लिखो। (ग) वाच्, शुच्, त्वच्, ऋच् के पूरे रूप लिखो। (घ) इन धातुओं के ल्यप् प्रत्यय के रूप बनाओ—अनुभू, उपकृ, संस्कृ, संहृ, आहृ, प्रहृ, अधि+इ, आनी, उत्तॄ, अवतॄ, संगम्, आदा, उत्था, अनुवद्, अधिवस्, आह्वे, आहन्, विचारि, उत्थापि।

शब्दकोष--९५० + २५=९७५) **अभ्यास ३९** (व्याकरण)

(क) सरित् (नदी), योषित् (स्त्री), तडित् (बिजली), विद्युत् (बिजली)। दन्तः (दाँत), ओष्ठः (ओष्ठ), अधरः (नीचे का ओष्ठ), स्कन्धः (कन्धा), कण्ठः (गला), स्तनः (स्तन), करः (हाथ), नखः (नाखून)। नासिका (नाक), ग्रीवा (गर्दन), जिह्वा (जीभ), नाभिः (नाभि), बुद्धिः (बुद्धि), मुष्टिः (मुट्ठी), बाहुः (भुजा, हाथ), शीर्षम् (शिर), ललाटम् (माथा), उरःस्थलम् (छाती), हृदयम् (हृदय), उदरम् (पेट), अङ्गम् (अंग)। २५।

व्याकरण (सरित्, भी, तव्यत्, अनीयर्, चतुर्थी)

१. सरित् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो (देखो शब्द० १९)।

२. भी धातु के दसों लकारों में पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ३७)।

३. अभ्यास ११ में दिए चतुर्थी के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

नियम १३८—(तव्यत्तव्यानीयरः) 'चाहिए' अर्थमें तव्यत् और अनीयर् प्रत्यय होते हैं। इनके क्रमशः तव्य और अनीय शेष रहते हैं। तव्य और अनीय भाववाच्य और कर्मवाच्य में होते हैं। (१) जब ये कर्मवाच्य में होंगे तो कर्म के अनुसार इनके लिंग, वचन और कारक होंगे, कर्ता में तृतीया होगी और कर्म में प्रथमा। जैसे--तेन त्वया मया अस्माभिः वा पुस्तकानि पठितव्यानि, पठनीयानि वा। (२) जब भाववाच्य में तव्य और अनीय होंगे तो इनमें नपुंसक० एकवचन ही रहेगा, कर्ता में तृतीया होगी। जैसे--तेन हसितव्यम्। तव्य और अनीय प्रत्ययान्त शब्द के रूप पुं० में रामवत् स्त्रीलिंग में रमावत् और नपुं० में गृहवत् होंगे।

नियम १३९--'तव्य' प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए देखो नियम १३२। जैसे—पठितव्यम्, लेखितव्यम्, कर्तव्यम्। रूप बनाने का सरल उपाय यह भी है कि तुम् के स्थान पर तव्य लगा दो।

नियम १४०--'अनीय' प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें। ल्युट् (अन), अच् (अ), अप् (अ) में भी ये नियम लगेंगे। (१) साधारणतया धातुओं में कोई अन्तर नहीं होता। धातु मूलरूप में रहती है। बीच में इ नहीं लगता। गम् > गमनीयम्, हसनीयम्, जयनीयम्, वचनीयम्। पा > पानीयम्, दानीयम्, स्थानीयम् आदि। (२) धातु के अन्तिम और उपधा के इ, उ, ऋ को क्रमशः ए, ओ, अर् हो जाता है और अन्तिम ई, ऊ, ॠ को भी क्रमशः ए, ओ, अर् होते हैं। जैसे—जि > जयनीयम्, चयनीयम्, हवनीयम्, स्तवनीयम्, करणीयम्, हरणीयम्, स्मरणीयम्, लेखनीयम्, शोचनीयम्, कर्षणीयम्। (३) धातु के अन्तिम ए और ऐ को आ होता है। गै > गानीयम्, आह्वे > आह्वानीयम्।

अभ्यास ३९

१. उदाहरण-वाक्य—१. मया पाठः पठनीयः पठितव्यो वा। २. मया अस्माभिः वा पाठौ पठनीयौ, पाठाः पठनीयाः च। ३. मया त्वया अस्माभिः वा कार्यं कर्तव्यं करणीयं वा, कार्याणि च करणीयानि। ४. त्वया हसनीयम्। ५. मया सरित् योषिद् वा दर्शनीया, द्रष्टव्या वा। ६. शिष्यः गुरोः बिभेति, बिभेतु, अबिभेत्, बिभीयात्, भेष्यति वा।

२. संस्कृत बनाओः—(क) (तव्यत्, अनीयर्) १. मुझे लेख लिखना चाहिए। २. मुझे हँसना चाहिये। ३. तुम्हें काम करना चाहिये। ४. मुझे पाठ स्मरण करना चाहिये। ५. तुम्हें गाना गाना चाहिये। ६. स्त्री को पढ़ना चाहिये, गाना गाना चाहिये, दान देना चाहिये और हवन करना चाहिये। ७. नदी में स्नान करना चाहिये। ८. विद्युत् से डरना चाहिये। (ख) ९. देवी की नाक, ओष्ठ, दाँत और अधर उसे अच्छे लगते हैं (रुच्)। १०. हृदय की शुद्धि से बुद्धि शुद्ध होती है। ११. हाथ दान से, जीभ सत्यभाषण से, बुद्धि सुविचार से, बाहु बल से, हृदय दया से और कण्ठ सुन्दर स्वर से शोभित होता है। १२. उन्नत कंधा, उन्नत वक्षःस्थल, उन्नत ललाट और पुष्ट बाहु शोभित होते हैं। १३. इस पुरुष की नाभि, नाखून, उदर और शिर सुन्दर हैं। (ग) १४. पिता को नमस्कार। १५. बालक को स्वस्ति। १६. मैं इस कार्य के लिये समर्थ और पर्याप्त हूँ। १७. स्त्री को आभूषण अच्छा लगता है। १८. राम दुष्ट पर क्रोध, द्रोह, ईर्ष्या और असूया करता है। १९. सुख और शान्ति के लिए स्त्री को प्रसन्न रखो (प्रसादय)। (घ) २०. वह पिता से डरता है, डरे, डरा या डरेगा। २१. मैं सिंह से डरता हूँ, डरा या डरूँगा। २२. तू चोर से डरता है, डरा या डरेगा।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. अहं लेखं लेखनीयम्।	मया लेखः लेखनीयः।	१३८
२. विद्युता भेतव्यः।	विद्युतः भेतव्यम्।	१३८, ४७

४. अभ्यासः—(क) २ (क) को बहुवचन बनाओ। (ख) २ (घ) को बहु० बनाओ। (ग) भी धातु के दसों लकारों के रूप लिखो। (घ) सरित्, योषित्, विद्युत्, तडित् के पूरे रूप लिखो। (ङ) इन धातुओं के तव्यत् और अनीयर् लगाकर रूप बनाओ—कृ, पठ्, लिख्, गम्, हृ, पा, दा, गै, जि, चि। (च) चतुर्थी किन स्थानों पर होती है, सोदाहरण लिखो।

शब्दकोष—९७५ + २५ = १०००) अभ्यास ४० (व्याकरण)

(क) वारि (जल), हस्तः (हाथ), अङ्गुष्ठः (अँगूठा), केशः (बाल), मलम् (शौच), मूत्रम् (लघुशंका), रक्तम् (खून), मांसम् (मांस), आननम् (मुँह), पृष्ठम् (पीठ), शिखा (चोटी), जङ्घा (जंघा), अङ्गुलिः (अँगुली), कटिः (कमर)। १४। (ख) आदा (लेना), प्रदा (देना), अभिधा (कहना), अपिधा (ढकना), विधा (करना), परिधा (पहनना), निधा (रखना), श्रद्धा (श्रद्धा करना)। ८। (घ) सुरभिः (सुगन्धित), शुचिः (स्वच्छ, पवित्र), मनोहारिन् (मनोहर)। ४।

सूचना—सुरभि, शुचि, मनोहारिन्, वारि के तुल्य। सं० में मनोहारिन् होगा।

व्याकरण (वारि, दा, धा, यत्, अच्, अप्, पंचमी)

१. वारि शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० २१)।

२. दा, धा धातु के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ३८-३९)।

३. अभ्यास १२ में दिये पंचमी के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

नियम १४१—(अचो यत्) 'चाहिए' या 'योग्य' अर्थ में आ, इ, ई, उ, ऊ अन्तवाली धातुओं से यत् प्रत्यय होता है। यत् का 'य' शेष रहता है। यत् प्रत्यय कर्मवाच्य और भाववाच्य में होता है। लिंग, वचन आदि के लिए देखो नियम १३८, अर्थात् कर्मवाच्य में कर्म के तुल्य लिंग, वचन, विभक्ति। कर्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा। भाववाच्य में कर्ता में तृतीया, क्रिया में नपुं० एकवचन। मया, त्वया, अस्माभिः वा जलं पेयम्। पुस्तकानि देयानि। मया स्थेयम्। दानं देयम्।

नियम १४२—(ईद्यति) यत् (य) प्रत्यय लगाने पर (१) आ को ए हो जाता है। दा>देयम्, गा>गेयम्, स्था>स्थेयम्, मा>मेयम्, पा>पेयम्, हा>हेयम्। (२) इ ई को ए हो जाता है। चि>चेयम्, जि>जेयम्, नी>नेयम्। (३) उ, ऊ को ओ होकर अव् हो जाता है। श्रु>श्रव्यम्, हु>हव्यम्, भू>भव्यम्, सु>सव्यम्।

नियम १४३—(१) (पचाद्यच्) प्रायः पच् आदि सभी धातुओं से अच् प्रत्यय होता है। अच् का अ शेष रहता है। अच् प्रत्यय लगाने से संज्ञा शब्द बन जाते हैं। धातु को गुण होता है। पुंलिंग होता है। रामवत् रूप होंगे। पच्>पचः, दिव्>देवः, कृ>करः (हाथ), नद्>नदः (बड़ी नदी), चुर्>चोरः, युध्>योधः। (२) (एरच्) इ अन्तवाली धातुओं से अच्। (अ) प्रत्यय होता है। गुण होकर अय् हो जायगा। चि>चयः। जि>जयः। नी>नयः। आश्रि>आश्रयः। इसी प्रकार प्रश्रयः, विनयः, प्रणयः।

नियम १४४—(ऋदोरप्) उ, ऊ, या ऋ अन्तवाली धातुओं से अप् (अ) प्रत्यय होता है। गुण होता है। पुंलिंग होगा। कृ>करः, गॄ>गरः, यु>यवः, भू>भवः।

अभ्यास ४०

१. उदाहरण-वाक्यः—१. मया त्वया अस्माभिः वा सुरभि वारि पेयम्, दानं देयम्, गानं गेयम्, शत्रुः जेयः, यशः श्रव्यम्, कीर्तिः च श्रव्या। २. मया त्वया वा पुस्तकानि देयानि, पापानि दुःखानि च हेयानि। ३. तेन मया वा विद्या अध्येया, शिक्षा देया, कीर्तिः च गेया। ४. स धनं ददाति प्रददाति वा, विद्याम् आददाति च। ५. स शिष्येभ्यः धनं ददाति, ददातु, दद्यात्, अददात्, दास्यति वा। ६. स पुस्तकं दधाति, वाचम् अभिदधाति, कर्णौ अपिदधाति पिदधाति वा, कार्यं विदधाति, शुचि वस्त्रं परिदधाति, पुस्तकम् आसने निदधाति, धर्मे श्रद्दधाति च।

२. संस्कृत बनाओ:—(क) (यत् प्रत्यय) १. मुझे स्वच्छ जल पीना चाहिए। २. तुम्हें दान देना चाहिए। ३. उसे यहाँ रहना चाहिए। (स्था)। ४. हम सबको गाना गाना चाहिए, शत्रु जीतना चाहिए, गुरु से विद्या पढ़नी चाहिए और पाप छोड़ने चाहिएँ। (ख) ५. अपने शरीर के सभी अंगों को स्वच्छ रखो (स्थापि)। ६. अपने हाथ, पाँव, मुँह, बाल, नाक, कान, आँख, जीभ, त्वचा, उँगली, अँगूठा, नाखून, नाभि, पेट, कमर और जीभ को स्वच्छ और सुन्दर रखो। ७. शरीर में रक्त, मांस और अस्थियाँ होती हैं। ८. शिखा कल्याण और कीर्ति के लिए होती है। (ग) ९. वह गाँव से आता हुआ सुगन्धित फूल वृक्ष से तोड़ता है (आदा)। १०. वह स्वच्छ जल देता है (प्रदा)। ११. वह मनोहर वचन कहता है (अभिधा)। १२. वह स्वच्छ वस्त्र से नाक बन्द करता है (अपिधा)। १३. वह गाँव से आकर यहाँ काम करता है (विधा)। १४. वह स्वच्छ वस्त्रों को पहनता है (परिधा)। १५. वह पत्ते पर फूल रखता है (निधा)। १६. वह गुरु पर श्रद्धा करता है। (घ) १७. बालक चोर से डरता है। १८. योधा शत्रु से मित्र को बचाता है। १९. राम गुरु से विद्या पढ़ता है। २०. ज्ञान के बिना (ऋते) मुक्ति नहीं होती।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. अहं शुचिः जलं पेयम्।	मया शुचि जलं पेयम्।	१४१, ३३
२. चोरण बिभेति। गुरुणा अधीते।	चोराद् बिभेति। गुरोः अधीते।	४७, ४८

४. अभ्यासः—(क) २ (ग) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) वारि, सुरभि, शुचि के नपुं० के पूरे रूप लिखो। (ग) दा, धा के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो। (घ) इनके यत् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—दा, धा, गै, हा, स्था, चि, जि, नी, श्रु, हु, भू। (ङ) अच् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ— जि, नी, श्रि, चि। (च) अप् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—कृ, गृ, यु, भू, स्तु, पू, रु, द्रु।

शब्दकोष—१००० + २५ = १०२५) (व्याकरण)

(क) दधि (दही), अस्थि (हड्डी), अक्षि (आँख), अक्षाः (पासे, जुए की गिट्टियाँ), तरङ्गः (तरंग), पङ्कः (कीचड़), नाविकः (मल्लाह), धीवरः (धीवर, मछुआ), मत्स्यः (मछली), मकरः (मगर), कच्छपः (कछुआ), दर्दुरः (मेढक), तडागः (तालाब), कूपः (कुआँ), बिन्दुः (बूँद), नौका (नाव), तटम् (तट, किनारा), सैकतम् (नदी का रेतीला किनारा), जालम् (जाल), कमलम् (कमल)। २०। (ख) दिव् (१. जुआ खेलना, २. चमकना), सिव् (सीना), अस् (फेंकना), अभ्यस् (अभ्यास करना), निरस् (छोड़ना, निकालना)। ५।

सूचना—(क) दधि—अक्षि, दधिवत। (ख) दिव्—निरस्, दिव् के तुल्य।

व्याकरण (दधि, दिव्, घञ्, पंचमी)

१. दधि शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० २२)।

२. दिव् धातु के दसों लकारों में पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४०)।

३. अभ्यास १३ में दिये पंचमी के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

नियम १४५—(भावे, अकर्तरि च कारके०) धातु के अर्थ में या कर्ता को छोड़कर अन्य कारक का अर्थ बताने के लिए घञ् प्रत्यय होता है। घञ् का 'अ' शेष रहता है। घञन्त शब्द पुंलिंग होता है। जैसे—हस्>हासः (हँसी), पाकः (पकना)। घञन्त के साथ कर्म में षष्ठी होती है। जैसे—भोजनस्य पाकः, रामस्य हासः।

नियम १४६—घञ् (अ) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें:—(१) धातु के अन्तिम इ, उ, ऋ को क्रमशः ऐ, औ, आर् वृद्धि हो जाती है और धातु की उपधा के अ, इ, उ, ऋ को क्रमशः आ, ए, ओ, अर् होते हैं। धातु के अन्तिम ई, ऊ, ॠ को भी क्रमशः ऐ, औ, आर् होते हैं। जैसे—पठ्> पाठः, लिख्>लेखः, रुध्>रोधः, श्रि>श्रायः, भू>भावः। हस्>हासः। कृ>कारः, प्रकारः, विकारः, उपकारः, अपकारः। हृ>हारः, प्रहारः, आहारः, संहारः, विहारः, उपहारः आदि। अध्यायः उपाध्यायः, संस्कारः। (२) (चजोः कु घिण्ण्यतोः) च् को क् और ज् को ग् हो जाता है। पच्>पाकः, शुच्> शोकः, भज्>भागः, यज्>यागः, भुज्>भोगः, रुज्>रोगः। त्यज्>त्यागः। (३) इन धातुओं के ये रूप होते हैं:—रञ्ज्>रागः, अनुरागः, विरागः, उपरागः। मृज्>मार्गः, अपामार्गः। चि>कायः, निकायः। नि+इ>न्यायः। हन्> घातः, आघातः, उपघातः। घञ् के कुछ अन्य रूपः—१. युज्>योगः, वियोगः, संयोगः, प्रयोगः, उपयोगः। २. चर्>चारः, आचारः, विचारः, प्रचारः, संचारः। ३. वद्>वाद;, विवादः, आशीर्वादः, संवादः, प्रवादः, अपवादः, अनुवादः। ५. नम्>प्रणामः, परिणामः। ४. भुज्>भोगः, उपभोगः, संभोगः, आभोगः। ६. दिश्>देशः, विदेशः, उपदेशः, सन्देशः, निर्देशः, आदेशः, उद्देशः, प्रदेशः।

अभ्यास ४१

१. उदाहरण-वाक्यः—१. स शुचि दधि भक्षयति। २. दध्नः घृतं भवति। ३. सः अक्ष्णा पश्यति। ४. अस्थिषु त्वग् भवति। ५. सः अक्षैः दीव्यति, दीव्यतु, अदीव्यत्, दीव्येत्, देविष्यति वा। ६. स वस्त्राणि सीव्यति। ७. स शत्रौ इषुम् अस्यति, शास्त्रम् अभ्यस्यति, पापिनं निरस्यति च।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. दही मधुर है। २. दही लाओ, दही से घी उत्पन्न होता है। ३. आँख से देखो। ४. आँख में अश्रु हैं। ५. वह आँख से काना है। ६. हड्डी पर मांस और त्वचा है। ७. इसकी हड्डियों में शक्ति है। (ख) ८. नदी में मछलियाँ, कछुए और मगर हैं। ९. नदी के तट पर रेत और कीचड़ है। १०. धीवर तालाब में जाल डालकर (प्रक्षिप्य) मछलियाँ पकड़ता है (आदा)। ११. गंगा की तरंगें सुन्दर हैं। १२. कुएँ में मेढक रहते हैं। १३. जल की बूँदें गिर रही हैं। १४. नाविक नौका से नदी को पार कर रहा है (तॄ)। १५. नदी के रेतीले भाग में छात्र खेल रहे हैं। १६. जल में कमल शोभित हो रहे हैं। (ग) १७. वह पासों से जुआ खेल रहा है। १८. तू जुआ खेलता है। १९. उसने जुआ खेला। २०. मैंने जुआ नहीं खेला। २१. तू जुआ न खेल। २२. वह जुआ नहीं खेलेगा। २३. वह वस्त्र-सीता है। २४. मैं बाण फेंकता हूँ। २५. वह धनुर्विद्या का अभ्यास करता है (अभ्यस्)। २६. वह शत्रु को नगर से निकालता है (निरस्)। (घ) २७. पाप से दुःख होता है। २८. अधर्म से बचो (विरम्)। २९. वह पुत्र को पाप से हटाता है। ३०. राम के अतिरिक्त अन्य कोई यहाँ आ रहा है। ३१. बल से बुद्धि श्रेष्ठ है (गरीयसी)। ३२. गुरु के पास से शिष्य आता है। ३३. वह धन से धान्य को बदलता है। ३४. चोर राजा से छिप रहा है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. दधिनः, अक्षिणा, अक्षिणि।	दध्नः, अक्ष्णा, अक्ष्णि।	शब्दरूप
२. मतिः बलेन गरीयसी।	मतिरेव बलाद् गरीयसी।	५४

४. अभ्यासः—(क) २ (ग) को बहुवचन बनाओ। (ख) दधि, अस्थि, अक्षि के पूरे रूप लिखो। (ग) दिव्, सिव्, अस् के दसों लकारों में रूप लिखो। (घ) पंचमी किन स्थानों पर होती है, सादाहरण लिखो। (ङ) इन धातुओं के घञ् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओः—पठ्, लिख्, विक्रु, आह्व, आधृ, भृ, पच्, शुच्, भज्, भुज्, युज्, रुज्, त्यज्, उपदिश्, वस्, हस्, हन्, वद्, अधि + इ, प्रणम्।

५. वाक्य बनाओः—पाठः, प्रहारः, भागः, भोगः, संयोगः, त्यागः, आघातः, ऋते, त्रायते, निवारयति, जायते, प्रतियच्छति, अधीते, विरमति।

शब्दकोष—१०२५ + २५ = १०५०) अभ्यास ४२ (व्याकरण)

(क) मधु (१. शहद, २. मीठा), दारु (लकड़ी), जानु (घुटना), अम्बु (जल), वस्तु (वस्तु), वसु (धन), अश्रु (आँसू), जतु (लाख), श्मश्रु (दाढ़ी), त्रपु (राँगा), सानु (पर्वत की चोटी), तालु (तालु)। १२। (ख) नृत् (नाचना), व्यध् (बींधना, मारना), पुष् (पुष्ट करना), शुष् (सूखना), तुष् (संतुष्ट होना), श्लिष् (चिपकना, २. आलिंगन करना), तृप् (तृप्त होना), रञ्ज् (१. प्रसन्न होना, २. लगना), शुध् (शुद्ध होना)। ९। (घ) स्वादु (स्वादिष्ट), बहु (बहुत), होतृ (हवन करनेवाला), रक्षितृ (रक्षाकर्ता)। ४।

सूचना—(क) मधु—तालु, मधुवत्। (ख) नृत्–शुध्, दिव् के तुल्य।

व्याकरण (मधु, नृत्, तृच्, षष्ठी)

१. मधु शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० २३)।

२. नृत् धातु के दसों लकारों में पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४१)।

३. अभ्यास १४ में दिए षष्ठी के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

४. कर्तृ शब्द नपुं० के प्रथमा, द्वितीया में ये रूप होंगे :—शेष पुंलिंग कर्तृवत्।

कर्तृ	कर्तृणी	कर्तॄणि	प्र०	संक्षिप्तरूप	ऋ	ऋणी	ॠणि	प्र०
,,	,,	,,	द्वि०		,,	,,	,,	द्वि०

नियम १४७—(ण्वुल्तृचौ) धातु से 'वाला' (कर्ता) अर्थ में तृच् प्रत्यय होता है। तृच् का 'तृ' शेष रहता है। जैसे—कर्तृ (करनेवाला), हर्तृ (हरनेवाला)। इसी प्रकार संहर्ता, धर्ता, उपकर्ता आदि। विशेष्य के अनुसार इसके लिंग, विभक्ति और वचन होते हैं। पुंलिंग में इसके रूप कर्तृ शब्द (शब्दरूप सं० ५) के तुल्य चलेंगे। स्त्रीलिंग में अन्त में 'ई' लगाकर नदी के तुल्य। नपुं० में उपर्युक्त ढंग से रूप चलेंगे। प्रायः सभी धातुओं से तृच् प्रत्यय लगता है। तृच्-प्रत्ययान्त के साथ कर्म में षष्ठी होती है। जैसे—पुस्तकस्य कर्ता, हर्ता, धर्ता वा। धातु को गुण होता है।

नियम १४८—तृच् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें :— (१) नियम १३२ (१) से (७) पूरा लगेगा। रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि तुम् के स्थान पर तृ लगाने से तृच्-प्रत्ययान्त रूप बन जाता है। (१) (२) धातु को गुण होता है। जैसे—कृ > कर्तुम् > कर्तृ, हृ > हर्तुम् > हर्तृ। इसी प्रकार भर्तृ, धर्तृ, लेखितृ, पठितृ, रोदितृ आदि। (३) भोक्तृ, पक्तृ, छेत्तृ। (४) यष्टृ, प्रष्टृ, स्रष्टृ, प्रवेष्टृ। (५) गातृ, दातृ, धातृ, विधातृ, ज्ञातृ, आह्वातृ। (६) गन्तृ, रन्तृ, यन्तृ, उपयन्तृ। (७) सोढृ, वोढृ, स्रष्टृ, द्रष्टृ।

अभ्यास ४२

१. उदाहरण-वाक्यः—१. स्वादु मधु भक्षय। २. इदं दारु इहानय। ३. पर्वतस्य सानुनि सानौ वा वृक्षोऽस्ति। ४. ईश्वरः जगतः कर्ता, धर्ता, संहर्ता चास्ति। ५. ईश्वरस्य प्रकृतिः जगतः कर्त्री, धर्त्री, संहर्त्री चास्ति। ६. ब्रह्म जगतः कर्तृ, धर्तृ, संहर्तृ चास्ति। ७. कन्या नृत्यति, नृत्यतु, अनृत्यत्, नृत्येत्, नर्तिष्यति वा। ८. नृपः शत्रुं शरैः विध्यति, पिता पुत्रं पुष्यति, रोगिणः शरीरं शुष्यति, मम मनः तुष्यति तृप्यति च, पत्नी पतिं श्लिष्यति, मम मनः कार्ये रज्यति, मनः सत्येन शुध्यति च।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. स्वादिष्ट मधु खाओ। २. इस लकड़ी को यहाँ लाओ। ३. पृथ्वी पर घुटना रखो। ४. बहुत जल न पिओ। ५. उस वस्तु को उठाओ। ६. बहुत धन चाहो। ७. तुम्हारे आँसू गिर रहे हैं। ८. लाख यहाँ लाओ। ९. दाढ़ी स्वच्छ करो। १०. राँगा चिपकता है (श्लिष्)। ११. पर्वत की चोटी पर चढ़ो। १२. तालु में बाण लगा (विद्धः)। (ख) १३. ईश्वर संसार का कर्ता, धर्ता और हर्ता है। १४. ब्रह्म सृष्टि का कर्ता, धर्ता और हर्ता है। १५. ग्रन्थ का रचयिता ग्रन्थ बनाता है (रच्)। १६. जेता शत्रुओं को जीतता है। १७. रक्षक रक्षा करता है। १८. धन का लेनेवाला धन लेता है। १९. धन का हर्ता धन चुराता है। २०. भर्ता पत्नी का पालन करता है। (ग) २१. नटी नाचती है। २२. कन्या नाची। २३. मोर नाचेगा। २४. भूपति मृग को बाणों से बींधता है। २५. माता पुत्र को पालती है। २६. वृक्ष सूख रहा है। २७. ब्राह्मण सुस्वादु भोजन से संतुष्ट होता है। २८. राम भरत का आलिंगन करते हैं। २९. मनुष्य धन से तृप्त नहीं होता है। ३०. मेरा मन पढ़ने में लगता है (रञ्ज्)। (घ) ३१. लकड़ी के लिए पर्वत की चोटी पर जाता है। ३२. बालक माता का स्मरण करता है। ३३. कमल के ऊपर, नीचे, आगे और पीछे भौंरे हैं (भ्रमर)। ३४. कालिदास कवियों में सर्वश्रेष्ठ हैं।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. दारुम्, अम्बुम्, वस्तुम्, अश्रुम्।	दारु, अम्बु, वस्तु, अश्रूणि।	शब्दरूप
२. बालकः मातरं स्मरति।	बालकः मातुः स्मरति।	६२

४. अभ्यासः—(क) २ (ग) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) इन शब्दों के पूरे रूप लिखो—मधु, दारु, वस्तु, वसु, स्वादु (नपुं०), बहु० (नपुं०)। (ग) इन धातुओं के दसों लकारों में पूरे रूप लिखो—नृत्, पुष्, शुष्, तुष्, तृप्। (घ) इन धातुओं के तृच् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—कृ, हृ, धृ, गम्, पठ्, जि, चि, हन्, मन्, पच्, भुज्, युज्, छिद्, भिद्, प्रच्छ्, सृज्, गा, दा, सह्, वह्, दृश्।

शब्दकोश—१०५० + २५ = १०७५) **अभ्यास ४३** (व्याकरण)

(क) पयस् (१. जल, २. दूध), यशस् (यश), वचस् (वचन), तपस् (तपस्या), शिरस् (शिर), वासस् (वस्त्र), सरस् (तालाब), नभस् (आकाश), अम्भस् (जल), सदस् (सभा), वक्षस् (छाती), स्रोतस् (स्रोत)। यानम् (सवारी), स्थानम् (स्थान), उपकरणम् (साधन), आवरणम् (आवरण, ढक्कन), संस्करणम् (१. शुद्धि, २. पुस्तकादि का संस्करण), प्रकरणम् (प्रकरण)। करणम् (करना), हरणम् (हरना), मरणम् (मरना), भजनम् (भजन करना), पानम् (पीना)। २३। (ख) नश् (नष्ट होना), मुह् (मोहित होना)। २।

सूचना—(क) पयस्—स्रोतस्, पयस् के तुल्य। (ख) नश्—मुह्, दिव् के तुल्य।

व्याकरण (पयस्, नश्, ल्युट्, ण्वुल्, षष्ठी)

१. पयस् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो (देखो शब्द० २४)।
२. नश् धातु के दसों लकारों में पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४२)।
३. अभ्यास १५ में दिए षष्ठी के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

नियम १४९—(१) (ल्युट् च) भाववाचक शब्द बनानेके लिए धातु से ल्युट् (अन) प्रत्यय होता है। ल्युट् के यु को 'अन' हो जाता है। अनप्रत्ययान्त शब्द नपुंसक लिंग होते हैं। धातु को गुण होता है। ल्युट् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए नियम १४० देखें। गम् > गमनम् (जाना)। इसी प्रकार पठनम् (पढ़ना), यजनम्, भजनम्। कृ > करणम्, हरणम्, भरणम्, मरणम्, रोदनम्, शोचनम्। (२) (करणाधिकरणयोश्च) करण और अधिकरण अर्थ में भी ल्युट् (अन) होता है। यानम् (जिससे जाते हैं, सवारी), स्थानम् (जिस पर या जहाँ बैठते हैं), उपकरणम् (जिससे काम करते हैं, साधन), आवरणम् (जिससे ढकते हैं)।

नियम १५०—(ण्वुल्तृचौ) 'करने वाला' या 'वाला' अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय होता है। ण्वुल् के वु को 'अक' हो जाता है। नियम १४६ (१) के तुल्य धातु को वृद्धि होगी। विशेष्य के अनुसार इसके लिंग होंगे। पुंलिंग में रामवत्, स्त्रीलिंग में 'इका' अन्त में होगा और रमावत् रूप होंगे। नपुं० में ज्ञानवत्। जैसे—कृ > कारकः (करनेवाला), कारिका, कारकम्। पाठकः, लेखकः, हारकः, संहारकः, धारकः, मारकः, उपकारकः, अपकारकः, सेवकः। (१) आकारान्त धातु में बीच में 'य्' लग जायगा। दा > दायकः, सुखदायकः। धा > धायकः, विधायकः। पा > पायकः। इनके ये रूप होते हैं—हन् > घातकः, जन् > जनकः, शम् > शमकः, गम् > गमकः, नि + यम् > नियामकः, वध् > वधकः।

अभ्यास ४३

१. उदाहरण-वाक्यः—१. बालः पयः पिबति। २. जगत् नश्यति। ३. मूर्खस्य मनः मुह्यति। ४. पिता पुत्रे स्निह्यति। ५. पयसः पानं, वचसः कथनं, तपसः आचरणं, शिरसः प्रक्षालनम्, वाससः धारणम्, नभसः दर्शनम्, सदसि भाषणं, स्रोतसि स्नानं च कुरु। ६. ईश्वरः जगतः कारकः धारकः हारकश्चास्ति। ७. ईश्वरस्य प्रकृतिः जगतः कारिका, धारिका, हारिका चास्ति। ८. ब्रह्म जगतः कारकं, धारकं, हारकं चास्ति।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. जल पिओ। २. यश की इच्छा करो। ३. मधुर वचन बोलो। ४. तप करो। ५. अपना सिर उठाओ। ६. कपड़े पहनो। ७. तालाब में स्नान करो। ८. आकाश की ओर देखो। ९. सभा में शान्त बैठो। १०. दूध का पीना, वचन का कहना, तप का करना, शिर का धोना, वस्त्रों का पहनना, नभ का देखना, जल का लाना, वक्षःस्थल का उठना (उत्थान) और स्रोत का बहना अच्छा है। ११. लेख का लिखना, पुस्तक का पढ़ना, भोजन का खाना, ईश्वर का स्मरण, कार्य का करना, धन का हरण, मनुष्य का मरना, बालक का उठना, कन्या का सोना और चोर का रात्रि में जागना, ये विविध कार्य हैं। १२. यश में रुचि, तालाब में नहाना और सभा में बैठना अच्छा है। १३. यान पर चढ़ो। १४. अपने स्थान पर बैठो। १५. भोजन के उपकरण लाओ। १६. शय्या पर आवरण डालो (स्थापय)। (ख) १७. ईश्वर संसार का कारक, धारक और हारक है। १८. नियति जगत् की कर्त्री, धर्त्री और हर्त्री है। १९. रसोइया भोजन बनाता है। २०. रक्षक रक्षा करता है। २१. गायिका गाती है। २२. गाँव से दूर, राम के समीप मनुष्य हैं। २३. राम के तुल्य श्याम है। २४. बालक का कुशल हो। (ग) २५. प्रलय में संसार नष्ट होता है। २६. वृक्ष नष्ट हुआ। २७. दुष्ट नष्ट हो। २८. मूर्ख मोहित होता है। २९. गुरु शिष्य पर स्नेह रखता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. पिबनम्, पश्यनम्, उत्तिष्ठनम्।	पानम्, दर्शनम्, उत्थानम्।	१४९
२. यशम्, तपसम्। यशे, सरे।	यशः, तपः। यशसि, सरसि।	शब्दरूप

४. अभ्यासः—(क) २ (ग) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो। (ख) इन शब्दों के पूरे रूप लिखो—पयस्, यशस्, वचस्, तपस्, शिरस्, वासस्, सरस्, नभस्, सदस्। (ग) नश् और मुह् के दसों लकारों के रूप लिखो। (घ) इन धातुओं के ल्युट् और ण्वुल् प्रत्यय के रूप बनाओ :—कृ, हृ, धृ, भृ, पठ्, लिख्, गम्, दृश्, पा, स्था, दा, या, स्ना, ज्ञा, शी, भज्, मुच्, रुद्, रुह्, वद्, खन्। (ङ) षष्ठी किन स्थानों पर होती है, सोदाहरण लिखो।

शब्दकोष—१०७५ + २५ = ११००) **अभ्यास ४४** (व्याकरण)

(क) शर्मन् (सुख), वर्मन् (कवच), ब्रह्मन् (१. ब्रह्म, २. वेद), वेश्मन् (घर), सदनम् (घर), पर्वन् (१. पर्व, त्यौहार, २. गाँठ), भस्मन् (भस्म, राख), जन्मन् (जन्म), लक्ष्मन् (चिह्न), वर्त्मन् (मार्ग), चर्मन् (चमड़ा)। बुधः (विद्वान्), आतपत्रम् (छाता)। १३। (ख) भ्रम् (घूमना), शम् (शान्त होना), दम् (१. दमन करना, २. संयम करना), क्लम् (थकना), हृष् (प्रसन्न होना), लुभ् (लोभ करना)। ६। (घ) प्रियः (प्रिय), कृशः (दुबला, पतला), सुकरः (सरल), दुष्करः (कठिन), सुलभः (सुलभ), दुर्लभः (दुर्लभ)। ६।

सूचना—(क) शर्मन्—चर्मन्, शर्मन् के तुल्य। (ख) भ्रम्—लुभ्, दिव् के तुल्य।

व्याकरण (शर्मन्, भ्रम्, क, खल्, सप्तमी)

१. शर्मन् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० २५)।

२. भ्रम् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ४३)।

३. अभ्यास १६ में दिए सप्तमी के नियमों का पुनः अभ्यास करो।

नियम १५१—(१) (इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः) जिन धातुओं की उपधा में इ, उ या ऋ हो उनसे तथा ज्ञा, प्री और कॄ धातु से क प्रत्यय होता है। क प्रत्यय का 'अ' शेष रहता है। धातु को गुण नहीं होगा। धातु के अन्तिम 'आ' का लोप होता है। 'वाला' (कर्ता) अर्थ में क प्रत्यय होता है। जैसे—बुध् > बुधः (जाननेवाला, विद्वान्), लिख् > लिखः (लेखक), कृश् > कृशः (निर्बल), ज्ञा > ज्ञः (ज्ञाता), प्री > प्रियः (प्रिय), कॄ > किरः (बखेरनेवाला)। (२) (आतश्चोपसर्गे) उपसर्ग पहले हो तो आकारान्त धातु से क प्रत्यय होता है। आ का लोप हो जाएगा। जैसे—प्र + ज्ञा > प्रज्ञः, प्राज्ञः, विज्ञः, ज्ञः, अभिज्ञः, आ + ह्वा = आह्वः, प्रह्वः। (३) (आतोऽनुपसर्गे कः, सुपि स्थः) उपसर्ग-भिन्न कोई शब्द पहले हो तो भी आकारान्त से क प्रत्यय होता है। आ का लोप हो जाएगा। जैसे—सुख + दा > सुखदः, दुःखदः, त्रा > आतपत्रम्, गोत्रम्, पुत्रः। पा > द्विपः, गोपः, महीपः, पादपः। स्था > समस्थः, द्विष्ठः, आसनस्थः, वृक्षस्थः।

नियम १५२—(ईषद्दुःसुषु०) ईषत्, दुः या सु पहले हो तो धातु से खल् (अ) प्रत्यय ही होता है, कठिन या सरल अर्थ में। धातु को गुण होगा। जैसे—ईषत्करः, दुष्करः, सुकरः, दुर्लभः, सुलभः, दुर्गमः, सुगमः, दुर्जयः, सुजयः, दुःसहः, सुसहः।

अभ्यास ४४

१. उदाहरण वाक्य:—१. प्रियाय प्राज्ञाय शर्म। २. वर्म धारय। ३. स्वकीये वेश्मनि सद्मनि वा निवसामि। ४. सतां वर्त्मना गच्छामि। ५. भस्मनि बालः पतितः। ६. मम पुत्रस्य जन्म रविवारेऽभवत्। ७. बुधः भ्राम्यति, पुत्रः शाम्यति, प्राज्ञः इन्द्रियाणि दाम्यति, पथिकः क्लाम्यति, सज्जनः हृष्यति, बालः मोदकाय लुभ्यति च। ८. दुःखं सुलभम्, सुखं तु दुर्लभम्।

२. संस्कृत बनाओ:—(क) १. अपना कल्याण चाहो। २. सुलभ कवच पहनो। ३. ब्रह्म संसार को बनाता है। ४. घर में सुख से रहो। ५. रास्ते में मत खेलो। ६. सज्जनों के मार्ग पर चलो। ७. आज अमावस्या का पर्व है। ८. यति भस्म में रमता है। ९. तुम्हारा जन्म कब हुआ था? १०. शत्रु के दुःसह बाणों का चिह्न मेरे शरीर पर है। ११. यति मृग के चर्म पर बैठता है। १२. मेरी धर्म में श्रद्धा है। १३. वसन्त में बहुत से फूल और फल होते हैं। १४. सायंकाल घूमने के लिए जाऊँगा। १५. कृश मनुष्य पर दया करो। १६. वर्षा में छाता वर्षा से बचाता है। १७. प्राज्ञ सुकर और दुष्कर सभी कर्मों को करता है। (ख) १८. बुद्धिमान् लोग प्रियजनों के साथ घूमते हैं। १९. वह भ्रमण करता है। २०. तूने भ्रमण किया। २१. मैं भ्रमण करूँ। २२. वह शान्त होता है। २३. बुद्धिमान् इन्द्रियों का दमन करता है। २४. तू थूकता है। २५. मैं प्रसन्न होता हूँ। २६. मूर्ख लोभ करते हैं।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. शर्माणम्, वर्माणम्, वर्त्मनि।	शर्म, वर्म, वर्त्मनि।	शब्दरूप
२. वर्षायां आतपत्रं वर्षाया त्रायते।	वर्षासु आतपत्रं वर्षाभ्यः त्रायते।	४७, ८९
३. इन्द्रियाणां दाम्यति।	इन्द्रियाणि दाम्यति।	४

४. अभ्यास:—(क) २ (ख) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो। (ख) इनके पूरे रूप लिखो—शर्मन्, वर्मन्, ब्रह्मन्, वर्त्मन्, जन्मन्, चर्मन्। (ग) इन धातुओं के दसों लकारों में रूप लिखो—भ्रम्, शम्, दम्, हृष्, लुभ्। (घ) इन धातुओं के क प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—लिख्, बुध्, कृश्, ज्ञा, प्री, कॄ। (ङ) इनके खल् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—सुगम्, दुर्गम्, दुष्कृ, सुकृ, सुजि, दुजि, सुलभ्, दुर्लभ्।

५. वाक्य बनाओ:—शर्मणे, पर्वणि, जन्मना, भ्राम्यति, हृष्यति, सुकरः, दुर्लभः।

शब्दकोष-११०० + २५ = ११२५)　**अभ्यास ४५**　　　　(व्याकरण)

(क) जगत् (संसार), वियत् (आकाश) । गतिः (गति), बुद्धिः (बुद्धि), धृतिः (धैर्य), कृतिः (कार्य), नतिः (१. नमस्कार, २. झुकना), भूतिः (ऐश्वर्य), उक्तिः (कथन), इष्टिः (१. यज्ञ, २. इच्छित), वृत्तिः (१. व्यवहार, २. आजीविका), प्रवृत्तिः (१. झुकाव, २. लगना), मुक्तिः (मोक्ष), युक्तिः (युक्ति), संसृतिः (संसार) । १५। (ख) युध् (लड़ना), उद् + डी (उड़ना), दीप् (१. जलना, २. दीप्त होना), क्लिश् (दुःखित होना) । ४ । (घ) पचत् (पकाता हुआ), पतत् (गिरता हुआ), पण्डितमन्यः (अपने को पंडित माननेवाला), शाकाहारिन् (शाकाहारी), निरामिषभोजिन् (शाकाहारी), मांसाहारिन् (मांसाहारी) । ६ ।

सूचना--(क) जगत्--वियत् , जगत् के तुल्य । (ख) युध्—क्लिश् , युध् के तुल्य ।

व्याकरण (जगत् , युध् , क्तिन् , अण् , णिनि, सप्तमी)

१. जगत् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० २६) ।

२. युध् धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ४४) ।

२. अभ्यास १७ में दिए सप्तमी के नियमों का पुनः अभ्यास करो ।

नियम १५३—(स्त्रियां क्तिन्) धातुओं से क्तिन् प्रत्यय होता है । क्तिन् का 'ति' शेष रहता है । 'ति' प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिंग ही होते हैं । इनसे भाववाचक संज्ञा बनती हैं । जैसे—कृ > कृतिः (करना), धृतिः, स्तुतिः, भूतिः । गुण या वृद्धि नहीं होगी । संप्रसारण होगा । 'ति' प्रत्यय लगाकर धातुओं से रूप बनाने के लिए नियम १३५ (१) से (६) देखें । (१) कृतिः, हृतिः, धृतिः, चितिः, भूतिः । (२) स्थितिः, मितिः, गतिः, मतिः, यतिः, रतिः, नतिः, उक्तिः, सुप्तिः, इष्टिः । (३) पंक्तिः, भुक्तिः, मुक्तिः । (४) गीतिः, पीतिः । (५) कीर्तिः, पूर्तिः । (६) कान्तिः, भ्रान्तिः, शान्तिः, श्रान्तिः ।

नियम १५४—(कर्मण्यण्) कोई कर्मवाचक पद पहले हो तो धातु से अण् (अ) प्रत्यय होता है । धातु को वृद्धि होती है । जैसे—कुम्भं करोतीति—कुम्भकारः । भाष्यकारः, सूत्रधारः, तन्तुवायः ।

नियम १५५-(१) (नन्दिग्रहि०) 'वाला' (कर्ता) अर्थ में धातु से णिनि (इन्) प्रत्यय होता है । धातु को गुण या वृद्धि होगी। करिन् के तुल्य रूप चलेंगे। जैसे—निवसतीति > निवासी, प्रवासी, स्था > स्थायी, कृ > उपकारी, अपकारी, अधिकारी । इसी प्रकार द्वेषी, अभिलाषी, संचारी । (२) (सुप्यजातौ०) कोई शब्द पहले हो तो धातु से णिनि (इन्) प्रत्यय होता है, स्वभाव अर्थ में । भुज् > उष्णभोजी (गर्म खाने के स्वभाववाला), आमिषभोजी, निरामिषभोजी, मिथ्यावादी, मनोहारी, अग्रयायी, अनुगामी, मित्रद्रोही, शाकाहारी, मांसाहारी । (३) (आत्ममाने खश्च) अपने आपको समझने अर्थ में णिनि (इन्) और खश् (अ) दोनों प्रत्यय होते हैं । शब्द के बाद म् भी लगता है । जैसे—पण्डितंमानी, पण्डितंमन्यः ।

अभ्यास ४५

१. उदाहरण-वाक्यः—१. ब्रह्मणः जगत् उद्भवति, जगतः कर्ता ब्रह्म वा। २. वियति पक्षिणः उड्डीयन्ते। ३. पुष्पाणि पतन्ति सन्ति (गिर रहे हैं)। ४. ओदनं पचत् अस्ति (भात पक रहा है)। ५. योधः युध्यते, पक्षी उड्डीयते, उदडीयत वा, अग्निः दीप्यते, दुष्टः क्लिश्यते च। ६. मम धर्मे बुद्धिः, कर्मणि च प्रवृत्तिः अस्ति। ७. स पण्डितंमन्यः पण्डितंमानी वा अस्ति। ८. अहं शाकाहारी निरामिषभोजी वा अस्मि।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. जगत् सुन्दर है। २. जगत् में बहुत से मनुष्य मूर्ख और पापी हैं। ३. आकाश में बहुत से पक्षी हैं। ४. आकाश स्वच्छ है। ५. फल पक रहा है। ६. पत्ता गिर रहा है। ७. गुरु की गति, मनुष्य की मति, धीर की धृति, कवि की कृति, भद्र की भूति, उदार की उक्ति, इष्ट की इष्टि, वीर की वृत्ति, पुरुष की प्रवृत्ति, योग की युक्ति और मुमुक्षु की मुक्ति सुखद हो। ८. संसृति में धर्म में प्रवृत्ति, विद्या में गति, मुक्ति के विषय में मति और विपत्ति में धृति सब में नहीं होती। ९. पति पत्नी से स्नेह करता है। १०. छात्र छात्रा से स्नेह करता है। ११. गुरु के जाने पर शिष्य आया। १२. धर्मों में आर्यधर्म श्रेष्ठ है। १३. पर्वतों में हिमालय श्रेष्ठ है। १४. अर्जुन धनुर्विद्या में कुशल, पटु, निपुण और दक्ष है। १५. राजा शत्रुओं पर बाण फेंकता है। (ख) १६. वीर युद्ध करता है। १७. मैं युद्ध करता हूँ। १८. तूने युद्ध किया। १९. हंस आकाश में उड़ता है। २०. अग्नि दीप्त होती है। २१. मूर्ख दुःखित होता है। (ग) २२. वह अपने आपको पंडित समझता है। २३. मैं शाकाहारी हूँ। २४. वह मांसाहारी है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. गुरोः गते सति।	गुरौ गते सति।	७७, ३३
२. हंसः वियत उड्डयति।	हंसः वियति उड्डीयते उड्डयते वा।	शब्दरूप, धातुरूप

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) इन शब्दों के रूप लिखो—जगत्, वियत् (नपुं०), पतत् (नपुं०)। मति, बुद्धि, धृति, कृति, उक्ति, वृत्ति। (ग) इन धातुओं के दसों लकारों में रूप लिखो—युध्, डी, दीप्, क्लिश्। (घ) इन धातुओं से क्तिन् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—कृ, हृ, धृ, गा, गम्, रम्, नम्, स्था, पा, स्वप्, यज्, कम्, शम्। (ङ) सप्तमी किन स्थानों पर होती है, सोदाहरण लिखो।

५. वाक्य बनाओः—जगति, जगताम्, वियति, युक्तिः। युध्यते, योत्स्यते, उड्डीयते, उदडीयत, उड्डयिष्यते, अदीप्यत, दीपिष्यते, क्लिश्यते, क्लेशिष्यते।

शब्दकोष—११२५ + २५ = ११५०) अभ्यास ४६ (व्याकरण)

(क) नामन् (नाम), प्रेमन् (प्रेम), धामन् (धाम, घर), व्योमन् (आकाश), सामन् (सामवेद), हेमन् (सोना), दामन् (रस्सी), लोमन् (बाल)। ८। (ख) जन् (पैदा होना), संपद् (होना, पूर्ण होना), उत्पद् (उत्पन्न होना), विद् (होना), मन् (मानना)। ५। (ग) निर्विघ्नम् (निर्विघ्न), निष्कारणम् (बिना कारण के), यथाशक्ति (शक्तिभर), आबालवृद्धम् (बालक से वृद्ध तक)। ४। (घ) यावत् (१. जितना, २. जबतक), तावत् (१. उतना, २. तबतक), कियत् (कितना), इयत् (इतना), अनुकूलः (अनुकूल), प्रतिकूलः (विपरीत), निर्द्वन्द्वम् (निर्विघ्न), निर्जनम् (जनरहित)। ८।

सूचना—(क) नामन्—लोमन्, नामन् के तुल्य। (ख) जन्—मन्, युध् के तुल्य।

व्याकरण (नामन्, जन्, अव्ययीभाव समास)

१. नामन् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० २७)।

२. जन् धातु के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४५)।

नियम १५६—(समास) (१) दो या अधिक शब्दों को मिलाने या जोड़ने को समास कहते हैं। समास का अर्थ है संक्षेप। समास करने पर समास हुए शब्दों के बीच की विभक्ति (कारक) नहीं रहती। समस्त (समासयुक्त) शब्द एक हो जाता है, अन्त में विभक्ति लगती है। समास के तोड़ने को 'विग्रह' कहते हैं। जैसे—राज्ञः पुरुषः (राजा का पुरुष) विग्रह है, राजपुरुषः (राजपुरुष) समस्तपद है। बीच के कारक षष्ठी का लोप हुआ है। (२) समास के छः भेद हैं:—१. अव्ययीभाव, २. तत्पुरुष, ३. कर्मधारय, ४. द्विगु, ५. बहुव्रीहि, ६. द्वन्द्व।

नियम १५७—(अव्ययीभाव) (अव्ययं विभक्तिसमीप०) अव्ययीभाव समास की पहचान यह है कि इसमें पहला शब्द अव्यय (उपसर्ग या निपात) होगा। बाद का शब्द कोई संज्ञा-शब्द होगा। अव्ययीभाव समासवाले अकारान्त शब्द नपुं०एक०में ही रहते हैं, अन्य शब्द अव्यय होते हैं। अव्ययीभाव समास के समस्तपद और विग्रह पद में अन्तर होता है, क्योंकि किसी विशेष अर्थ में अव्यय शब्द आता है। १. सप्तमी के अर्थ में 'अधि'–हरौ > अधिहरि। २. समीप अर्थ में 'उप'–कृष्णस्य समीपे > उपकृष्णम्। ऐसे ही उपकूलम्, उपगङ्गम्, उपयमुनम्। ३. अभाव अर्थ में 'निर्'-जनानामभावो > निर्जनम्। निर्विघ्नम्, निर्द्वन्द्वम्। निर्मक्षिकम्। ४. पीछे अर्थ में अनु, रथस्य पश्चात् > अनुरथम्। अनुहरि। ५. प्रत्येक अर्थ में प्रति, गृहं गृहं प्रति > प्रतिगृहम्। ६. अनुसार अर्थ में 'यथा'—शक्तिमनतिक्रम्य > यथाशक्ति। यथेच्छम्, यथाकामम्। ७. साथ और सदृश अर्थ में सह को 'स'–सचक्रम्। ८. तक अर्थ में 'आ'–आसमुद्रम्। आबालवृद्धम्। ९. बाहर अर्थ में 'बहिः'–बहिर्वनम्, बहिर्ग्रामम्। १०. समीप या ओर अर्थ में 'अनु'–अनुकूलम्। ११. विपरीत अर्थ में 'प्रति'–प्रतिकूलम्। अपने रूढ़ अर्थ में अनुकूल प्रतिकूल विशेषण होते हैं।

अभ्यास ४६

१. उदाहरण-वाक्यः—१. मम नाम देवदत्तोऽस्ति । २. गुरुः शिष्ये प्रेम करोति । ३. व्योम्नि पक्षिणः विद्यन्ते । ४. हेम्नः आभूषणं संपद्यते । ५. मातुः पुत्रः जायते, जायेत, अजायत, जनिष्यते, उत्पस्यते वा । ६. सा आत्मानं प्राज्ञं मन्यते, अमन्यत, मंस्यते वा । ७. स यथाशक्ति साम अगायत् । ८. निष्कारणं प्रतिकूलं न आचर । ९. निर्जने निर्द्वन्द्वः निर्विघ्नं तावत् पठ, यावत् इयत् कार्यं न संपद्यते । १०. यावन्तो जनाः ग्रामे सन्ति, तावन्तः सर्वेऽपि आबालवृद्धम् इयत्कालं यावत् सुखिनः सन्ति ।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. तुम्हारा नाम क्या है ? २. मेरा नाम कृष्ण है । ३. सज्जन सब पर प्रेम करता है । ४.प्रेम से प्रेम उत्पन्न होता है । ५.मेरे घर में आबाल-वृद्ध सब यथाशक्ति कार्य करते हैं । ६. हमारे विद्यालय में जितने छात्र हैं, उतनी ही छात्राएँ हैं । ७. वहाँ कितने छात्र, कितनी छात्राएँ, कितने फल और कितनी पुस्तकें हैं ? ८. जितने फल और जितने फूल वहाँ हैं, उतने ही फल और फूल यहाँ भी हैं । ९. तब तक काम करो, जब तक गुरु जी न आवें । १०. उतने समय तक वहाँ मत रहो । ११. अकारण विवाद न करो । १२. निर्जन में भी अनुकूल और प्रतिकूल प्राणी मिल जाते हैं । १३. राम मेरे अनुकूल है । १४. रावण मेरे प्रतिकूल है । १५. आकाश में पक्षी हैं । १६. श्याम सामवेद का मन्त्र गाता है । १७. यह सोने का आभूषण है । १८. रस्सी लाओ । १९. बाल धोओ । (ख) २०. बच्चा पैदा होता है । २१. पुत्र पैदा हुआ । २२. विद्या से ज्ञान होता है (संपद्) । २३. वह वहाँ है । २४. अपने आपको कौन मूर्ख समझता है ?

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. प्रेमात् प्रेमः जायते ।	प्रेम्णः प्रेम जायते ।	शब्दरूप
२. यावान् छात्राः तावन्तः बालिकाः ।	यावन्तः छात्राः, तावत्यः बालिकाः	,,
३. अनुकूलं प्रतिकूलं प्राणिनः ।	अनुकूलाः प्रतिकूलाः प्राणिनः ।	३२

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो । (ख) इन शब्दों के रूप लिखो—नामन्, प्रेमन्, व्योमन्, हेमन् । (ग) इन धातुओं के दसों लकारों में रूप लिखो—जन्, संपद्, विद्, मन् । (घ) समास किसे कहते हैं ? कितने समास हैं ? नाम लिखो । (ङ) अव्ययीभाव समास की पहचान सोदाहरण लिखो ।

५. समास करोः—कृष्णस्य समीपे । जनानाम् अभावः । रथस्य पश्चात् । द्वारं द्वारं प्रति । शक्तिम् अनतिक्रम्य । चक्रेण सहितम् । गङ्गायाः समीपम् ।

शब्दकोष—११५० + २५ = ११७५) अभ्यास ४७ (व्याकरण)

(क) मनस् (मन), चेतस् (चित्त), तमस् (अन्धकार), उरस् (छाती), तेजस् (तेज), रजस् (१. धूल, २. रजोगुण), वयस् (आयु), रक्षस् (राक्षस), ओजस् (तेज), छन्दस् (वेद के छन्द), रहस् (एकान्त), एनस् (पाप), अंहस् (पाप)। हविष् (हवि), सर्पिष् (घी), ज्योतिष् (१. ज्योति, २. तारे), रोचिष् (तेज), धनुष् (धनुष), चक्षुष् (आँख)। राजपुरुषः (राजकर्मचारी), सोमः (१. चन्द्रमा, २. सोमरस), मूर्तिपूजा (मूर्तिपूजा)। २२। (ख) सु (१. नहाना, २. नहवाना, ३. रस निकालना)। १। (घ) ईश्वरभक्तः (ईश्वर का भक्त), विद्याहीनः (मूर्ख)। २।

सूचना—(क) मनस्—अहंस्, मनस् के तुल्य। हविष्—रोचिष्, हविष् के तुल्य।

व्याकरण (मनस्, हविष्, सु, तत्पुरुष)

१. मनस् और हविष् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द २८ क, ख)।

२. सु धातु के दसों लकारों में रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४६)।

नियम १५८—(तत्पुरुष) तत्पुरुष समास उसे कहते हैं, जहाँ पर दो या अधिक शब्दों के बीच से द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी या सप्तमी विभक्ति का लोप होता है। समास होने पर बीच की विभक्ति का लोप हो जायगा। जिस विभक्ति का लोप होगा, उसी विभक्ति के नाम से वह तत्पुरुष समास कहा जायगा। जैसे—द्वितीया तत्पुरुष, षष्ठी तत्पुरुष समास आदि। (उत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषः) इसमें बाद वाले पद का अर्थ मुख्य होता है। जैसे—(१) द्वितीया—कृष्णम् आश्रितः—कृष्णाश्रितः। दुःखमतीतः—दुःखातीतः। भयं प्राप्तः—भयप्राप्तः। (२) तृतीया—बाणेन आहतः—बाणाहतः। खड्गेन हतः—खड्गहतः। नखैः भिन्नः—नखभिन्नः। हरिणा त्रातः—हरित्रातः। विद्यया हीनः—विद्याहीनः। ज्ञानेन शून्यः—ज्ञानशून्यः। मात्रा सदृशः—मातृसदृशः। पित्रा तुल्यः—पितृतुल्यः। एकेन ऊनम्—एकोनम् आदि। (३) चतुर्थी—यूपाय दारु—यूपदारु। गवे हितम्—गोहितम्। भूताय बलिः—भूतबलिः। द्विजाय इदम्—द्विजार्थम्। स्नानाय इदम्—स्नानार्थम्। भोजनार्थम्। (४) पंचमी—चोराद् भयम्—चोरभयम्। पापाद् मुक्तः—पापमुक्तः। प्रासादात् पतितः—प्रासादपतितः। वृक्षपतितः, अश्वपतितः, रोगमुक्तः, शत्रुभयम्, राजभयम्। (५) षष्ठी—राज्ञः पुरुषः—राजपुरुषः। ईश्वरस्य भक्तः—ईश्वरभक्तः। शिवभक्तः, विष्णुभक्तः, देवपूजकः। मूर्त्याः पूजा—मूर्तिपूजा। देवपूजा। सुवर्णकुण्डलम्, विद्यालयः, देवालयः, देवमन्दिरम्। (६) सप्तमी—शास्त्रे निपुणः—शास्त्रनिपुणः। विद्यानिपुणः, युद्धनिपुणः। जले लीनः—जललीनः। जलमग्नः। कार्ये चतुरः—कार्यचतुरः। कार्यदक्षः।

अभ्यास ४७

१. उदाहरण-वाक्य:—१. मनसि ईश्वरं चिन्तय । २. चेतसा रहसि अपि अंहांसि एनांसि वा न कुरु । ३. रक्षांसि तमसि विचरन्ति । ४. नभसि रविः तेजोभिः ज्योतिर्भिः च प्रकाशते । ५. यौवने छन्दांसि पठ, हविः अग्नौ जुहुधि, बाल्ये च वयसि सर्पिः भक्षय । ६. शिवभक्तः राजपुरुषः मूर्तिपूजां करोति । ७. रामः यज्ञार्थे सोमं सोमस्य रसं वा सुनोति, सुनोतु, असुनोत्, सुनुयात्, सोष्यति वा । ८. कृष्णः प्रातः सुनुते, सुनुताम्, असुनुत, सुन्वीत, सोष्यते वा ।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. मन सत्य से शुद्ध होता है । २. चित्त में ईश्वर का ध्यान करो । ३. रात्रि में अन्धकार सर्वत्र फैल जाता है । ४. हृदय में पाप न रखो । ५. धूल में बालक खेलते हैं । ६. तुम्हारी आयु क्या है ? ७. राक्षस अँधेरे में घूमते हैं । ८. ब्रह्मचारी का ओज, सूर्य का तेज, चन्द्रमा की ज्योति और वीर का तेज (रोचिष्), शोभित हो रहा है । ९. वेद के छन्दों को प्रतिदिन पढ़ो, अग्नि में हवि और घी डालो । १०. ईश्वरभक्त पापों से डरता है । ११. एकान्त में भी पाप न करो । १२. विद्या से हीन मनुष्य पाप से युक्त होता है (युज्) । १३. दोनों आँखों से देखो । १४. राजपुरुष धनुष उठाता है और राक्षसों को मारता है (हन्) । १५. विष्णु का भक्त मूर्तिपूजा करता है । (ख) १६. वह रस निकालता है । १७. तू सोम का रस निकाल । १८. मैं रस निकालूँ । १९. वह रस निकालेगा । २०. वह प्रातः सोमरस निकाले (सु) ।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. मनः सत्यात् शुध्यति ।	मनः सत्येन शुध्यति ।	२४
२. मने चेते वा ईश्वरस्य चिन्तयति ।	मनसि चेतसि वा ईश्वरं चिन्तयति ।	शब्द०, १३
३. रक्षसाः, छन्दसाः, एनसाः ।	रक्षांसि, छन्दांसि, एनांसि ।	शब्दरूप

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो । (ख) इन शब्दों के पूरे रूप लिखो—मनस्, तेजस्, नभस्, उरस्, छन्दस्, हविष्, ज्योतिष्, धनुष्, चक्षुष् । (ग) सु धातु के दोनों पदों में दसों लकारों में रूप लिखो । (घ) तत्पुरुष समास किसे कहते हैं, सोदाहरण लिखो ।

५. समास करो :—राज्ञः पुरुषः । ईश्वरस्य भक्तः । विद्यायाः आलयः । भयं प्राप्तः । ज्ञानेन शून्यः । विद्यया हीनः । एकेन ऊनम् । द्विजाय इदम् । रोगात् मुक्तः । विद्यायां निपुणः ।

६. विग्रह करो :—राजपुरुषः । दुःखातीतः । खड्गहतः । पितृतुल्यः । भूतबलिः । वृक्षपतितः । युद्धनिपुणः । जलमग्नः ।

शब्दकोष—११७५ + २५ = १२००) अभ्यास ४८ (व्याकरण)

(क) स्वर्णकारः (सुनार), लौहकारः (लोहार), चर्मकारः (चमार), घटः (घड़ा), कुम्भकारः (कुम्हार), मालाकारः (माली), कर्णधारः (मल्लाह), चित्रकारः (चित्रकार), तैलिकः (तेली), महत्तरः (मेहतर), रजकः (धोबी), तन्तुवायः (जुलाहा), भारवाहः (मजदूर), शिल्पिन् (कारीगर), स्वर्णम् (सोना), लौहम् (लोहा), चक्रम् (१. चक्र. २. चाक), चित्रम् (चित्र), तैलम् (तेल), पादत्राणम् (१. जूता, २. चप्पल), संमार्जनी (झाड़ू)। २१। (ख) आप् (पाना), प्राप् (पाना), समाप् (१. पाना, २. समाप्त करना), व्याप् (व्याप्त होना)। ४।

व्याकरण (आप्, कर्मधारय, द्विगु समास)

१. आप् धातु के दसों लकारों में पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४७)।

नियम १५९—(तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः) विशेषण और विशेष्य का जो समास होता है, उसे कर्मधारय समास कहते हैं। विशेषण शब्द पहले रहेगा, विशेष्य बाद में। कर्मधारय में दोनों पदों में एक ही विभक्ति रहती है। जैसे—नीलं कमलम्—नीलकमलम्। नीलम् उत्पलम्—नीलोत्पलम्। कृष्णः सर्पः—कृष्णसर्पः। महान् चासौ देवः—महादेवः। महान् चासौ आत्मा—महात्मा। (१) एव (ही) के अर्थ में :—मुखमेव कमलम्—मुखकमलम्। चरणः एव कमलम्—चरणकमलम्। इसी प्रकार मुखचन्द्रः, करकमलम्, पादपद्मम्, नयनकमलम्। (२) सुन्दर के अर्थ में 'सु' और कुत्सित के अर्थ में 'कु' लगता है। सुन्दरः पुरुषः—सुपुरुषः। कुत्सितः पुरुषः—कुपुरुषः। कुपुत्रः, कुनारी, कुदेशः। (३) इव (तरह) के अर्थ में—घन इव श्यामः—घनश्यामः। पुरुषः व्याघ्र इव—पुरुषव्याघ्रः। नरसिंहः, नृसिंहः। चन्द्रसदृशं मुखम्—चन्द्रमुखम्। चन्द्रमुखी।

नियम १६०—(संख्यापूर्वो द्विगुः) कर्मधारय का ही उपभेद द्विगुसमास है। जब कर्मधारय समास में प्रथम शब्द संख्या वाचक हो तो वह द्विगु समास होता है। अधिकतर यह समाहार (एकत्र या समूह) अर्थ में होता है। जैसे—त्रयाणां लोकानां समाहारः—त्रिलोकम् (तीनों लोकों का समूह)। इसी प्रकार त्रिभुवनम्। चतुर्णां युगानां समाहारः—चतुर्युगम्। पञ्चानां पात्राणां समाहारः—पञ्चपात्रम्। समाहार अर्थ में समास में एकवचन ही रहता है, अन्य वचन नहीं। समास होने पर ये नपुंसक लिंग या स्त्रीलिंग शब्द बन जाते हैं। जैसे—त्रिलोकम्, त्रिलोकी, चतुर्युगम्, चतुर्युगी, शतानाम् अब्दानां समाहारः—शताब्दी, दशवर्षम्, दशाब्दी।

अभ्यास ४८

१. उदाहरण-वाक्य—१. स्वर्णकारः स्वर्णेन आभूषणानि रचयति। २. लौहकारः लौहेन पात्राणि रचयति। ३. चर्मकारः चर्मणा पादत्राणं (जूता), कुम्भकारः घटं, मालाकारः मालां, चित्रकारः चित्रं, महत्तरः संमार्जन्या स्वच्छतां, तन्तुवायः वस्त्रं, शिल्पी खट्वाम् (खाट), रजकः वस्त्राणां स्वच्छतां च करोति। ४. नरः धर्मेण यशः आप्नोति, आप्नोतु, आप्नोत्, आप्नुयात्, आप्स्यति वा। ५. प्राज्ञः सत्येन सुखं प्राप्नोति। ६. छात्रः कार्यं समाप्नोति, फलं च समाप्नोति। ७. ईश्वरः त्रिलोकं व्याप्नोति।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. सुनार सोने से सुन्दर और बहुमूल्य आभूषण बनाता है। २. लोहार लोहे को पीटता है (ताडयति)। ३. चमार चमड़े से जूता बनाता है। ४. कुम्हार चाक पर मिट्टी से (मृत्तिका) घड़ा बनाता है। ५. माली फूलों से माला बनाता है। ६. कर्णधार नौका को नदी के पार ले जाता है। ७. चित्रकार एक नारी का सुन्दर चित्र बनाता है। ८. तेली तिलों से तेल निकाल रहा है (निष्कासयति)। ९. धोबी वस्त्रों को धोता है (प्रक्षालयति)। १०. जुलाहा वस्त्रों को बुनता है। ११. भारवाहक भार को ढोता है (नी, वह्)। १२. महादेव काले साँप को धारण करते हैं। १३. तालाब में नीलकमल खिल रहे हैं। १४. संसार में सुपुरुष न्यून और कुपुरुष अधिक हैं। १५. नारी के मुखकमल को देखो। (ख) १६. वह धन पाता है। १७. मैं यश पाता हूँ। १८. तू पुस्तक पाता है। १९. वह विद्या पावे। २०. मैं धन पाऊँ। २१. तू सुख पा। २२. वह शान्ति पाएगा। २३. मैं ज्ञान पाऊँगा। २४. तूने यश पाया। २५. मैंने सुख पाया। २६. मैं कार्य को समाप्त करता हूँ। २७. ईश्वर त्रिलोक, त्रिभुवन और चतुर्युगों में व्याप्त है।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. अप्राप्नोः, अप्राप्नवम्।	प्राप्नोः, प्राप्नवम्।	९६
२. त्रिलोकेषु, त्रिभुवनेषु, चतुर्युगेषु।	त्रिलोके, त्रिभुवने, चतुर्युगे।	१६०

४. अभ्यास—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) आप्, प्राप्, समाप् के परस्मैपद के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो। (ग) कर्मधारय और द्विगु समास किसे कहते हैं? सोदाहरण लिखो।

५. समास करोः—नीलं कमलम्। महान् चासौ देवः। धीरः पुरुषः। घन इव श्यामः। पादः एव पद्मम्। कुत्सितः पुरुषः। त्रयाणां लोकानां समाहारः। शतानाम् अब्दानां समाहारः।

६. विग्रह बताओः—कृष्णसर्पः, करकमलम्, नीलोत्पलम्, सुपुरुषः, पुरुषव्याघ्रः, चन्द्रमुखम्। त्रिभुवनम्, पञ्चपात्रम्, चतुर्युगी, पञ्चयोजनम्।

शब्दकोष--१२०० + २५ = १२२५) अभ्यास ४९ (व्याकरण)

(क) नापितः (नाई), तक्षकः (बढ़ई), क्षुरः (उस्तरा), सौचिकः (दर्जी), रञ्जकः (रंगरेज), व्याधः (शिकारी), प्रतिहारः (द्वारपाल), कहारः (कहार), वधकः (कसाई), वामनः (बौना), वञ्चकः (ठग) ऐन्द्रजालिकः (मदारी), सुधाजीविन् (पुताई करनेवाला), द्वारम् (द्वार), सौधम् (महल), सुधा (१. अमृत, २. सफेदी), सूचिका (सूई), खट्वा (खाट), आसन्दिका (कुर्सी)। पीताम्बरः (कृष्ण)। १९। (ख) शक् (सकना), श्रु (सुनना), वप् (१. बोना, २. काटना) । ३ । (ग) सविनयम् (सविनय), सादरम् (सादर)। २। (घ) तुन्दिलः (पेटू)। १।

व्याकरण (शक् धातु, बहुव्रीहि समास)

१. शक् (प०) धातु के दसों लकारों में पूरे रूप स्मरण करो (देखो धातु० ४८)।

नियम १६१—(अनेकमन्यपदार्थे) (अन्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिः) जिस समास में अन्य पद के अर्थ की प्रधानता होती है, उसे बहुव्रीहि समास कहते हैं। बहुव्रीहि समास होने पर समासयुक्त पद स्वतन्त्र रूप से अपना अर्थ नहीं बताते, अपितु वे विशेषण के रूप में काम करते हैं और किसी अन्य वस्तु का बोध विशेष्य के रूप में कराते हैं। बहुव्रीहि की पहचान है कि जहाँ अर्थ करने पर जिसको, जिसने, जिसका, जिसमें आदि अर्थ निकले। बहुव्रीहि के साधारणतया तीन भेद होते हैं—(१) समानाधिकरण, (२) सहार्थक, (३) व्यधिकरण। (१) समानाधिकरण—दोनों पदों में प्रथमा विभक्ति ही रहती है। अन्य पदार्थ कर्ता को छोड़कर कर्म, करण आदि कोई भी हो सकता है। जैसे--(क) कर्म—प्राप्तम् उदकं यं सः = प्राप्तोदकः। (ख) करण--हताः शत्रवः येन सः = हतशत्रुः (राजा)। इसी प्रकार उत्तीर्णपरीक्षः (छात्रः), कृतकृत्यः (मनुष्यः)। (ग) संप्रदान—दत्तं भोजनं यस्मै सः दत्तभोजनः (भिक्षुकः)। (घ) अपादान—पतितं पर्णं यस्मात् सः = पतित-पर्णः (वृक्षः)। (ङ) सबन्ध—पीतम् अम्बरं यस्य सः = पीताम्बरः (कृष्णः)। इसी प्रकार दशाननः (रावण), चतुराननः (ब्रह्मा), चतुर्मुखः, पद्मयोनिः। (च) अधिकरण—वीराः पुरुषाः यस्मिन् सः = वीरपुरुषः ग्रामः। (२) (तेन सहेति तुल्ययोगे) साथ अर्थ में बहुव्रीहि। जैसे—पुत्रेण सहितः—सपुत्रः (पुत्र के साथ)। इसी प्रकार सानुजः, साग्रजः, सबान्धवः, सविनयम्, सादरम्, सानुरोधम्। सह या सहित के अर्थ में स पहले लगेगा। (३) व्यधिकरण--दोनों पदों में भिन्न विभक्ति होने पर भी बहुव्रीहि। जैसे--धनुः पाणौ यस्य सः—धनुष्पाणिः।

अभ्यास ४९

१. उदाहरण-वाक्य :—१. नापितः क्षुरेण केशान् वपति । २. तक्षकः खट्वाम् आसन्दिकां च रचयति । ३. सौचिकः सूचिकया वस्त्राणि सीव्यति । ४. रञ्जकः वस्त्राणि रञ्जयति (रँगता है) । ५. धनुष्पाणिः व्याधः मृगान् हन्ति । ६. प्रतिहारः सौधस्य द्वारं रक्षति । ७. वधकः पशून् हन्ति । ८. सुधाजीवी सुधाभिः सौधं लिम्पति (पोतता है) । ९. रामः कार्यं कर्तुं शक्नोति, शक्नोतु, शक्नुयात्, अशक्नोत्, शक्ष्यति वा । १०. कृष्णः पितुः कथनं शृणोति, शृणोतु, शृणुयात्, अशृणोत्, श्रोष्यति वा ।

२. संस्कृत बनाओ :—(क) १. नाई उस्तरे से मनुष्य के बाल काटता है । २. बढ़ई एक खाट और तीन कुर्सियाँ बनाता है । ३. दर्जी सूई से चार वस्त्रों को सीता है । ४. रँगरेज इन सब वस्त्रों को रँगता है । ५. शिकारी बाण से व्याघ्र को मारता है । ६. द्वारपाल राजा के महल के द्वार की रक्षा करता है । ७. कहार घड़े से पानी भरता है । (ह) । ८. कसाई पशुओं को मारता है । ९. बौना व्यक्ति हँस रहा है । १०. ठग सज्जन को ठगता है (वञ्चयति) । ११. पेटू अधिक भोजन करता है । १२. मदारी अपना जादू (इन्द्रजालम्) दिखाता है । १३. पुताई करनेवाला सफेदी से मेरे मकान को पोतता है । १४. मैं पीताम्बर कृष्ण और चतुरानन को सादर सविनय प्रणाम करता हूँ । १५. मैं अपने बड़े भाई, छोटे भाई और पुत्रों के साथ इस नगर में रहता हूँ । १६. सत्यनिष्ठ और धर्मनिष्ठ राम धनुष्पाणि वन में घूमते हैं । (ख) १७. वह कार्य कर सकता है । १८. मैं पढ़ सकता हूँ । १९. वह उठ सकेगा । २०. तू लिख सका । २१. वह सुनता है । २२. मैं सुनूँ । २३. तू सुन । २४. वह सुनेगा । २५. मैंने कुछ नहीं सुना ।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. अहं पाठं शक्नोमि ।	अहं पठितुं शक्नोमि ।	१३१
२. स उत्थानं शक्नोति ।	स उत्थातुं शक्ष्यति ।	१३१
३. त्वं लेखं शक्नोषि ।	त्वं लेखितुम् अशक्नोः ।	१३१

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो । (ख) शक् और श्रु धातु के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो । (ग) बहुव्रीहि समास किसे कहते हैं ? सोदाहरण लिखो ।

५. समास करो:—पीतम् अम्बरं यस्य सः । दश आननानि यस्य सः । बान्धवैः सहितः । सत्ये निष्ठा यस्य सः । पतितं पुष्पं यस्मात् सः । विनयेन सहितम् ।

६. विग्रह बताओ:—चतुराननः, पद्मयोनिः, चतुर्मुखः, दत्तभोजनः । सविनयम्, सादरम्, सानुजः, साग्रजः, धर्मनिष्ठः, ज्ञाननिष्ठः, सत्यव्रतः ।

शब्दकोष--१२२५ + २५ = १२५०) **अभ्यास ५०** (व्याकरण)

(क) अग्रजः (बड़ा भाई), अनुजः (छोटा भाई), पितामहः (दादा), मातामहः (नाना), प्रपितामहः (परदादा), पितृव्यः (चाचा), मातुलः (मामा), पौत्रः (पोता), प्रपौत्रः (परपोता), श्वशुरः (ससुर), श्यालः (साला), देवरः (देवर)। भगिनी (बहन), स्वसृ (बहन)। १४। (ख) मृ (मरना), नुद् (प्रेरणा देना), उपदिश् (उपदेश देना), आदिश् (आज्ञा देना), संदिश् (संदेश देना), क्षिप् (फेंकना), कॄ (फैलाना), उद्गॄ (१. उगलना, २. बोलना), निगॄ (निगलना), सृज् (बनाना), विसृज् (छोड़ना)। ११।

सूचना--नुद्--सृज्, तुद् के तुल्य।

व्याकरण (मृ धातु, द्वन्द्व समास)

१. मृ (आ०) धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५४)।

२. अग्रज आदि के स्त्रीलिंग-बोधक शब्द ये होते हैं--कहीं पर अन्त में आ लगेगा, कहीं पर 'ई'। अग्रजा (बड़ी बहिन), अनुजा (छोटी बहिन), पितामही (दादी), मातामही (नानी), प्रपितामही (परदादी), पितृव्या (चाची), मातुलानी (मामी), पौत्री (पोती), प्रपौत्री (परपोती), श्वश्रूः (सास), श्याली (साली)।

नियम १६२--(चार्थे द्वन्द्वः) (उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः) जहाँ पर दो या अधिक शब्दों का इस प्रकार समास हो कि उसमें च (और) का अर्थ छिपा हुआ हो तो वह 'द्वन्द्व' समास होता है। द्वन्द्व समास के दोनों पदों का अर्थ मुख्य होता है। द्वन्द्व समास की पहचान है कि जहाँ अर्थ करने पर बीच में 'और' अर्थ निकले। द्वन्द्व समास साधारणतया तीन प्रकार का होता है:--१. इतरेतर, २. समाहार, ३. एकशेष। (१) इतरेतर--जहाँ पर बीच में 'और' का अर्थ होता है तथा शब्दों की संख्या के अनुसार अन्त में वचन होता है, अर्थात् दो वस्तुएँ हों तो द्विवचन और बहुत हों तो बहुवचन। प्रत्येक शब्द के बाद विग्रह में च लगता है। जैसे--रामश्च कृष्णश्च रामकृष्णौ (राम और कृष्ण)। इसी प्रकार सीतारामौ, उमाशंकरौ, रामलक्ष्मणौ, भीमार्जुनौ। पत्रं च पुष्पं च फलं च-पत्रपुष्पफलानि। (२) समाहार--जहाँ पर कई शब्दोंके समाहार (समूह, एकत्रस्थिति) का बोध होता है। समाहार द्वन्द्व में समस्तपद के अन्त में प्रायः नपुंसक लिंग एकवचन होता है। जैसे--हस्तौ च पादौ च-हस्तपादम् (हाथ और पैर)। दधि च घृतं च तयोः समाहारः--दधिघृतम् (दही, घी)। इसी प्रकार गोमहिषम्, व्रीहियवम्, शीतोष्णम्। (३) एकशेष--जहाँ समान आकारवाले पदों में से एक बचा रहे और अर्थ के अनुसार उसमें द्विवचन या बहुवचन हो। जैसे--वृक्षश्च वृक्षश्च-वृक्षौ। पितरौ।

शब्दकोष--१२२५ + २५ = १२५०) **अभ्यास ५०** (व्याकरण)

(क) अग्रजः (बड़ा भाई), अनुजः (छोटा भाई), पितामहः (दादा), मातामहः (नाना), प्रपितामहः (परदादा), पितृव्यः (चाचा), मातुलः (मामा), पौत्रः (पोता), प्रपौत्रः (परपोता), श्वशुरः (ससुर), श्यालः (साला), देवरः (देवर)। भगिनी (बहन), स्वसृ (बहन)। १४। (ख) मृ (मरना), नुद् (प्रेरणा देना), उपदिश् (उपदेश देना), आदिश् (आज्ञा देना), संदिश् (संदेश देना), क्षिप् (फेंकना), कॄ (फैलाना), उद्गॄ (१. उगलना, २. बोलना), निगॄ (निगलना), सृज् (बनाना), विसृज् (छोड़ना)। ११।

सूचना--नुद्—सृज्, तुद् के तुल्य।

व्याकरण (मृ धातु, द्वन्द्व समास)

१. मृ (आ०) धातु के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५४)।

२. अग्रज आदि के स्त्रीलिंग-बोधक शब्द ये होते हैं—कहीं पर अन्त में आ लगेगा, कहीं पर 'ई'। अग्रजा (बड़ी बहिन), अनुजा (छोटी बहिन), पितामही (दादी), मातामही (नानी), प्रपितामही (परदादी), पितृव्या (चाची), मातुलानी (मामी), पौत्री (पोती), प्रपौत्री (परपोती), श्वश्रूः (सास), श्याली (साली)।

नियम १६२—(चार्थे द्वन्द्वः) (उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः) जहाँ पर दो या अधिक शब्दों का इस प्रकार समास हो कि उसमें च (और) का अर्थ छिपा हुआ हो तो वह 'द्वन्द्व' समास होता है। द्वन्द्व समास के दोनों पदों का अर्थ मुख्य होता है। द्वन्द्व समास की पहचान है कि जहाँ अर्थ करने पर बीच में 'और' अर्थ निकले। द्वन्द्व समास साधारणतया तीन प्रकार का होता है:—१. इतरेतर, २. समाहार, ३. एकशेष। (१) इतरेतर—जहाँ पर बीच में 'और' का अर्थ होता है तथा शब्दों की संख्या के अनुसार अन्त में वचन होता है, अर्थात् दो वस्तुएँ हों तो द्विवचन और बहुत हों तो बहुवचन। प्रत्येक शब्द के बाद विग्रह में च लगता है। जैसे—रामश्च कृष्णश्च रामकृष्णौ (राम और कृष्ण)। इसी प्रकार सीतारामौ, उमाशंकरौ, रामलक्ष्मणौ, भीमार्जुनौ। पत्रं च पुष्पं च फलं च–पत्रपुष्पफलानि। (२) समाहार—जहाँ पर कई शब्दोंके समाहार (समूह, एकत्रस्थिति) का बोध होता है। समाहार द्वन्द्व में समस्तपद के अन्त में प्रायः नपुंसक लिंग एकवचन होता है। जैसे—हस्तौ च पादौ च–हस्तपादम् (हाथ और पैर)। दधि च घृतं च तयोः समाहारः--दधिघृतम् (दही, घी)। इसी प्रकार गोमहिषम्, व्रीहियवम्, शीतोष्णम्। (३) एकशेष—जहाँ समान आकारवाले पदों में से एक बचा रहे और अर्थ के अनुसार उसमें द्विवचन या बहुवचन हो। जैसे--वृक्षश्च वृक्षश्च–वृक्षौ। पितरौ।

अभ्यास ५०

१. **उदाहरण-वाक्य:**—१. अद्यत्वे मम गृहेऽहं, ममाग्रजोऽनुजश्च, पितरौ, पितामहः, पितामही, तिस्रो भगिन्यश्च सन्ति। २. अत्र रामकृष्णयोः चित्रे वर्तेते। ३. पत्रपुष्पफलानि उद्याने सन्ति। ४. दधिघृतं प्रतिदिनं भोजनीयम्। ५. शीतोष्णं सदा सोढव्यम्। ६. सर्वदा पितरौ पूजनीयौ। ७. दुष्टः रोगेण म्रियते, म्रियताम्, अम्रियत, म्रियेत, मरिष्यति वा। ८. गुरुः शिष्यं धर्ममुपदिशति, कार्यं कर्तुम् आदिशति च। ९. रामो वचनम् उद्गिरति, भोजनं च निगिरति। १०. ईशः सृष्टिं सृजति, पापानि विसृजति च।

२. **संस्कृत बनाओ:**—(क) १. राम के माता-पिता, भाई और बहनें यहाँ रहती हैं। २. मेरा बड़ा भाई और छोटा भाई तथा बड़ी बहन और छोटी बहन विद्यालय में पढ़ती हैं। ३. मेरे दादा और दादी वृद्ध हैं। ४. मेरे मामा, मामी, नाना और नानी प्रयाग में रहते हैं। ५. मेरी पत्नी, मेरे साले, साली, ससुर और सास काशी में रहते हैं। ६. मेरे पुत्र, पुत्रियाँ, पौत्र, पौत्रियाँ, प्रपौत्र और प्रपौत्रियाँ तथा जामाता और नाती विद्यालय और विश्वविद्यालय में पढ़ते हैं। ७. मेरे चाचा और चाची पटना (पाटलिपुत्र) में रहते हैं। ८. रमा के देवर व्यापार करते हैं। ९. राम-लक्ष्मण आते हैं। १०. सीता-राम हँसते हैं। ११. भीम-अर्जुन युद्ध में जाते हैं। १२. फल-फूल लाओ। १३. दही-घी खाओ। १४. गाय-भैंस पालो। १५. धान-जौ बोओ। १६. सर्दी-गर्मी सहो। (ख) १७. चोर मरता है। १८. पापी मरा। १९. दुर्जन मरेगा। २०. पिता पुत्र को पढ़ने के लिए प्रेरणा देता है, आदेश देता है और संदेश देता है। २१. गुरु शिष्य को अहिंसा का उपदेश देता है। २२. राम बाण फेंकता है। २३. बालक धूल फैलाता है। २४. बालक भोजन उगलता है। २५. जादूगर पत्थर निगलता है। २६. कवि काव्य बनाता है। २७. वह घर छोड़ता है।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. पितरः, दधिघृतानि, गोमहिषौ।	पितरौ, दधिघृतम्, गोमहिषम्।	१६२
२. मरति, अमरत्, मरिष्यते।	म्रियते, अम्रियत, मरिष्यति।	धातुरूप

४. **अभ्यास:**—(क) २ (ख) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो। (ख) मृ धातु के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो। (ग) द्वन्द्व समास किसे कहते हैं? सोदाहरण लिखो।

५. **समास करो:**—रामश्च कृष्णश्च। हरिश्च हरश्च। भीमश्च अर्जुनश्च। पुष्पाणि च फलानि च। हस्तौ च पादौ च। दधि च घृतं च। माता च पिता च।

६. **विग्रह बताओ:**—पितरौ, गोमहिषम्, शीतोष्णम्, रामलक्ष्मणौ।

शब्दकोष—१२५० + २५ = १२७५) अभ्यास ५१ (व्याकरण)

(क) पाचकः (रसोइया), मोदकः (लड्डू), अपूपः (पूआ), सूपः (दाल), शाकः (साग), कृशरः (खिचड़ी)। रोटिका (रोटी), शर्करा (शक्कर), सिता (चीनी), सूत्रिका (सेवई), लप्सिका (हलुआ), शष्कुली (पूरी)। भक्तम् (भात), पायसम् (खीर), मिष्टान्नम् (मिठाई), पक्वान्नम् (पकवान), नवनीतम् (मक्खन), घृतम् (घृत), लवणम् (नमक), तक्रम् (मट्ठा)। २०। (ख) मुच् (छोड़ना), लुप् (नष्ट करना), विद् (प्राप्त करना), लिप् (लीपना), सिच् (सींचना)। ५।

सूचना—मुच्—सिच्, मुच् के तुल्य।

व्याकरण (मुच्, एकशेष, अलुक्; नञ् समास)

१. मुच् धातु के दोनों पदों में दसों लकारों में रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५५)

नियम १६३—(एकशेष) जब उद्देश्य के रूप में प्रथम, मध्यम और उत्तम पुरुष में से दो या तीन एकत्र हो जाते हैं, वहाँ पर क्रिया का रूप निम्नलिखित रूप से रखा जाएगा। (क) प्रथम पु० + प्रथम पु० = क्रिया प्रथम पुरुष होगी। वचन कर्ता की सामूहिक संख्या के अनुसार। जैसे-राम, कृष्ण और देव पढ़ते हैं—रामः कृष्णः देवश्च पठन्ति। रामः रमा च पठतः। (ख) प्रथम पु० + मध्यम पु० = क्रिया मध्यम पुरुष होगी। वचन कर्ता की सामूहिक संख्या के अनुसार। वह और तुम पढ़ते हो—स त्वं च पठथः। तौ त्वं च लिखथ। स यूयं च गच्छथ। अर्थात् प्रथम पु० और मध्यम पु० में मध्यम पु० शेष रहता है। (ग) यदि उत्तम पुरुष साथ में होगा तो उत्तम पुरुष ही शेष रहेगा। वचन कर्ता की सामूहिक संख्या के अनुसार। तू और मैं पढ़ते हैं—त्वम् अहं च पठावः। स त्वम् अहं च पठामः। अहं युवां च पठामः।

नियम १६४—(नञ् समास) 'नहीं' अर्थ वाले नञ् का जब दूसरे शब्द के साथ समास होता है तो उसे नञ् समास कहते हैं। यदि बाद में व्यञ्जन रहता है तो नञ् का 'अ' रहेगा। यदि कोई स्वर बाद में होगा तो अन् रहेगा। जैसे—न ब्राह्मणः—अब्राह्मणः। इसी प्रकार अस्वस्थः, अन्यायः, अप्रियः, असुन्दरः। न उपस्थितः—अनुपस्थितः। इसी प्रकार अनुचितः, अनागतः, अनुदारः, अनीश्वरवादी।

नियम १६५—(अलुक् समास) कुछ स्थानों पर बीच की विभक्ति का लोप नहीं होता है, उसे अलुक् समास कहते हैं। जैसे—परस्मैपदम्, आत्मनेपदम्, युधिष्ठिरः, सरसिजम्, मनसिजः (कामदेव)।

अभ्यास ५१

१. उदाहरण-वाक्यः—१. अहं प्रतिदिनं रोटिकां, भक्तं, सूपं, शाकं, घृतं, दुग्धं, दधि च खादामि। २. अहं पर्वदिवसे लप्सिकां सूत्रिकां शष्कुल्यः पायसं मिष्टान्नं पक्वान्नं नवनीतं च खादामि। ३. संन्यासी गृहं मुञ्चति, मुञ्चतु, अमुञ्चत्, मुञ्चेत्, मोक्ष्यति, मुञ्चते, मुञ्चताम्, अमुञ्चत, मुञ्चेत, मोक्ष्यते वा। ४. मद्यपानं बुद्धिं लुम्पति। ५. रामो धनं विन्दति। ६. भृत्यो गृहं लिम्पति। ७. मालाकारः उद्यानं सिञ्चति। ८. स तौ च गच्छन्ति। ९. स त्वं च पठथः। १०. स त्वम् अहं च लिखामः।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. रसोइया प्रतिदिन दाल, भात, साग और रोटी बनाता है (पच्)। २. मैं प्रतिदिन दूध, घी, दही, मट्ठा, शक्कर, चीनी और मक्खन खाता हूँ। ३. आज मेरे घर लड्डू, पुए, हलुवा, सेवई, खीर, पूरी, मिठाई और पकवान बने हैं (पक्वानि)। ४. दही, खिचड़ी और साग में नमक डालो (क्षिप्)। ५. अनीश्वरवादी न बनो, अनुचित कार्य न करो, अनुदार न हो, अप्रिय न हो, अन्याय न करो और अस्वस्थ न रहो। ६. विद्यालय में अनुपस्थित न रहो (भू)। ७. सरोवर में सरसिज हैं। ८. राम और रमा पढ़ते हैं। ९. कृष्ण और तुम लिखते हो। १०. वह, तू और मैं हँसते हैं। ११. वह और तुम दोनों जाते हो। १२. तुम दोनों और हम दोनों विद्यालय जाते हैं। (ख) १३. यति घर छोड़ता है। १४. मैं दुर्गुणों को छोड़ता हूँ। १५. तू अधर्म को छोड़ता है। १६. राम ने राज्य छोड़ा। १७. सुरापान बुद्धि को नष्ट करता है। १८. मैं धन पाता हूँ (विद्)। १९. सेवक घर लीपता है। २०. माली वृक्ष सींचता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. कृष्णः त्वं च लिखतः।	कृष्णः त्वं च लिखथः।	१६३
२. स त्वमहं च हसथ।	स त्वमहं च हसामः।	१६३

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ् और विधिलिङ् में बदलो। (ख) मुच् धातु के दोनों पदों के दसों लकारों के रूप लिखो। (ग) नञ् समास के १० उदाहरण बताओ। (घ) अलुक् समास के ५ उदाहरण बताओ।

५. वाक्य बनाओः—प्रथम, मध्यम और उत्तम पुरुष को इकट्ठे रखते हुए १० वाक्य बनाओ।

६. रिक्त स्थानों को भरोः—(कोष्ठगत धातु के लट्, लोट्, लङ् के रूप) १. स त्वं च (पठ्)। २. स अहं च (लिख्)। ३. त्वमहं च (गम्)। ४. अहं युवां च (हस्)। ५. मुनिः गृहं (मुच्)। ६. पापं बुद्धिं (लुप्)। ७. भृत्यो वृक्षं (सिच्)।

शब्दकोष—१२७५ + २५ = १३००) **अभ्यास ५२** (व्याकरण)

(क) सानुमत् (पर्वत), भास्वत् (सूर्य), गरुत्मत् (गरुड़), सूदः (रसोइया), आपणः (दूकान, बाजार), तण्डुलः (चावल), गोधूमः (गेहूँ), चणकः (चना), यवः (जौ), माषः (उड़द), मसूरः (मसूर), सर्षपः (सरसों), सक्तुः (सत्तू), अवलेहः (चटनी), पलाण्डुः (प्याज), धान्यम् (धान), सन्धितम् (अचार), लशुनम् (लहसुन)। १८। (ख) रुध् (रोकना), भिद् (काटना), छिद् (काटना)। ३। (घ) विद्यावत् (विद्वान्), ज्ञानवत् (ज्ञानी), मतिमत् (बुद्धिमान्), गुणवत् (गुणवान्)।४।

सूचना—रुध्—छिद्, रुध् के तुल्य।

व्याकरण (रुध्, तद्धित मतुप् प्रत्यय)

१. रुध् धातु के दोनों पदों के दसों लकारों में रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५६)।

नियम १६६—(तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्) युक्त या 'वाला' अर्थ में मतुप् प्रत्यय होता है। मतुप् का 'मत्' शेष रहता है। (मादुपधायाश्च०) यदि शब्द के अन्त में या उपधा में अ, आ, या म् होता है तो मत् को वत् हो जाता है। (कुछ स्थानों पर नहीं)। मत् प्रत्ययान्त के रूप पुंलिंग में भगवत् (शब्द २९) के तुल्य चलेंगे। स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य और नपुं० में जगत् के तुल्य। जैसे--धन से युक्त या धनवाला--धनवान्। इसी प्रकार गुणवान्, ज्ञानवान्, विद्यावान्, धीमान्, श्रीमान्, मतिमान्, बुद्धिमान् आदि। स्त्रीलिंग में—धनवती, गुणवती, ज्ञानवती, विद्यावती, धीमती, श्रीमती, बुद्धिमती आदि।

अनुवादार्थ कतिपय निर्देश

नियम १६७—(क) हिन्दी के 'जी' के लिए संस्कृत में महोदयः, महाभागः या महाशयः शब्द लगाओ। जैसे—गांधीजी—गांधीमहोदयः, जवाहरलालनेहरूमहाभागः, श्रीपन्तमहोदयः। (ख) व्यक्तिवाचक, नगर आदि के वाचक शब्द उसी रूप में रहेंगे। व्यक्तिवाचक के अन्त में महोदयः, नामकः, आख्यः, आदि लगाकर रूप बनाओ। नगरवाची के अन्त में नगर शब्द लगेगा, देशवाची के अन्त में देश शब्द। जैसे—कानपुरनगरे, लखनऊनगरे, इंगलैण्डदेशे, अमेरिकादेशे, लन्दननगरे। आक्सफोर्डविश्वविद्यालये आदि। राममूर्तिनामकः मल्लः। जटोपेकनामकः द्रुतमधावकः। (ग) उपनामसूचक शब्दों के साथ 'उपाह्वः' शब्द, स्थानवाचक के साथ 'स्थानम्' शब्द, देशवासी के लिए 'देशीयः', गाड़ी के लिए 'यानम्' आदि लगाकर वाक्य बनाओ। मालवीयोपाह्वः, पन्तोपाह्वः, नालन्दास्थाने, पञ्चनददेशीयः (पंजाबी), वङ्गदेशीयः (बंगाली), धूम्रयानम् (रेलगाड़ी), मोटरयानम्, मोटर-साइकिलयानम्।

अभ्यास ५२

१. उदाहरण-वाक्य :—१. भास्वान् सानुमतः शिखरे द्योतते। २. विद्यावन्तो मतिमन्तो ज्ञानवन्तश्च सर्वत्रादरं लभन्ते। ३. सूदः आपणात् तण्डुलं गोधूमं चणकान् यवान् माषान् मसूरान् सर्षपान् च आनयति। ४. दुर्जनः सज्जनस्य मार्गं रुणद्धि, रुणद्धु, अरुणत्, रुन्ध्यात्, रोत्स्यति वा। ५. गान्धिमहोदयाः, नेहरूमहाभागाः, पन्त-महाशयाश्च देशस्य पूज्या जनाः सन्ति। ६. लखनऊनगरे उत्तरप्रदेशस्य विधानसभा अस्ति। ७. पञ्चनददेशीयाः छात्रा अपि अत्र पठन्ति। ८. नृपः शत्रोः शिरः भिनत्ति छिनत्ति च।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. विद्वान्, मतिमान् और ज्ञानवान् अपने ज्ञान से देश का उपकार करते हैं। २. सूर्य पर्वत पर चमक रहा है। ३. गरुड़ आकाश में उड़ता है। ४. बाजार से चावल, गेहूँ, चना, जौ, उड़द, मसूर, सरसों और धान लाओ। ५. प्याज और लहसुन मत खाओ, यदि खाओ तो कम खाओ। ६. मुझे भोजन के साथ अचार और चटनी अच्छी लगती है। ७. धनवती स्त्रियाँ सुख से रहती हैं। ८. गुणवती और ज्ञानवती स्त्रियाँ अपने बालकों को स्वयं पढ़ाती हैं। ९. गांधीजी महापुरुष थे। १०. पण्डित जवाहरलाल नेहरू जी भारतवर्ष के सदा आदरणीय हैं। ११. श्री महाराणा प्रताप देशरक्षकों में अग्रगण्य थे। १२. कानपुर, लखनऊ, प्रयाग और वाराणसी में जनसंख्या अधिक है। १३. रेलगाड़ी और मोटर बहुत तेज चलती हैं। (ख) १४. वह मार्ग रोकता है। १५. तू मुझे रोकता है। १६. मैं दुष्ट को रोकता हूँ। १७. राम ने रावण को रोका। १८. पिता पुत्र को असत्य भाषण से रोके। १९. योधा शस्त्र से शत्रुओं को काटता है। २०. वह वृक्ष काटता है।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. रोधति, अरोधत्, रोधेत्।	रुणद्धि, अरुणत्, रुन्ध्यात्।	धातुरूप
२. छेदति, भेदति।	छिनत्ति, भिनत्ति।	”

४. अभ्यास—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) रुध् धातु के दोनों पदों के दसों लकारों के रूप लिखो। (ग) मतुप् प्रत्यय लगाकर १० नए शब्द बनाओ और उनका प्रयोग करो।

५. वाक्य बनाओ :—(इनको अन्त में लगाकर पाँच-पाँच वाक्य बनाओ)—महोदयः, महाभागः, महाशयः, नामकः, आख्यः, नगरे, देशे, उपाह्वः, देशीयः, यानम्।

शब्दकोष--१३०० + २५ = १३२५) **अभ्यास ५३** (व्याकरण)

(क) दन्तिन् (हाथी), ब्रह्मचारिन् (ब्रह्मचारी), गृहिन् (गृहस्थी), संन्यासिन् (संन्यासी), शिखरिन् (पर्वत)। गृहस्थः (गृहस्थी), वानप्रस्थः (वानप्रस्थी), मायिकः (जादूगर)। ८। **(ख)** भुज् (१. पालन करना, २. खाना)। १। **(ग)** पुनः (फिर), भूयः (फिर), अन्यत्र (और जगह), सर्वत्र (सब जगह)। ४। **(घ)** तृषितः (प्यासा), क्षुधितः (भूखा), दुःखितः (दुःखित), गुणिन् (गुणी), धनिन् (धनी), ज्ञानिन् (ज्ञानी), सुकृतिन् (१. विद्वान्, २. पवित्रात्मा), कुशलिन् (सकुशल), दूरदर्शिन् (दूरदर्शी), अत्याचारिन् (अत्याचारी), दुराचारः (दुराचारी), धनिकः (धनिक)। १२।

सूचना—दन्तिन्—शिखरिन् तथा गुणिन्—अत्याचारिन्, करिन् के तुल्य।

व्याकरण (भुज्, तद्धित इनि, ठन्, इतच् प्रत्यय)

१. भुज् धातु के दोनों पदों के दसों लकारों के रूप स्मरण करो (देखो धातु० ५७)।

***नियम १६८—(भुजोऽनवने)**—भुज् धातु के दो अर्थ होते हैं--रक्षा करना और भोजन करना। रक्षा करने अर्थ में केवल परस्मैपदी है। भोजन, उपभोग आदि अर्थों में केवल आत्मनेपद में रूप चलेंगे। राजा पृथ्वीं भुनक्ति। रामः भोजनं भुङ्क्ते। कृष्णो विषयान् उपभुङ्क्ते।

नियम १६९—(अत इनिठनौ) अकारान्त शब्दों से युक्त या 'वाला' अर्थ में शब्द के अन्त में इनि और ठन् (तद्धित) प्रत्यय होते हैं। इनि का इन् शेष रहता है। जैसे—गुण > गुणिन् (गुणयुक्त, गुणवाला), धन > धनिन्। इसी प्रकार ज्ञानिन्, दन्तिन् आदि। इन्-प्रत्ययान्त के रूप पुंलिंग में करिन् के तुल्य (शब्द १०) चलेंगे। स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य। ठन् प्रत्यय का 'इक' शेष रहता है। जैसे—धन > धनिकः, दण्ड > दण्डिकः, माया > मायिकः।

नियम १७०—(तदस्य संजातं०) युक्त अर्थ में कुछ शब्दों से इतच् प्रत्यय होता है। इतच् का 'इत' शेष रहता है। जैसे—तारका > तारकितः (तारों से युक्त), क्षुधा > क्षुधितः (भूखा), पिपासा > पिपासितः (प्यासा), कुसुम > कुसुमितः, पुष्प > पुष्पितः (फूलों से युक्त), दुःख > दुःखितः (दुःखयुक्त), अङ्कुरितः (अंकुरयुक्त)।

सूचना :—(निर्देश चिह्न) लेखादि में शुद्ध बोध के लिए कतिपय संकेतों का प्रयोग किया जाता है। उनके नाम तथा निर्देश-चिह्न ये हैं :—

१. अल्पविराम	,	२. अर्धविराम	;	३. पूर्णविराम	।
४. प्रसंगसमाप्ति चिह्न	॥	५. प्रश्नबोधक चिह्न	?	६. विस्मयादिबोधक चिह्न	!
७. समास (योजक) चिह्न	-	८. व्यवच्छेदक चिह्न	—	९. उद्धरण चिह्न	" "
१०. निर्देशचिह्न	:—	११. कोष्ठचिह्न	( ) [ ]	१२. धनचिह्न	+
१३. पर्यायचिह्न	=	१४. त्रुटिनिर्देशचिह्न	∧	१५ इतिभवतिचिह्न	>

अभ्यास ५३

१. उदाहरण-वाक्य :—१. गुणिनः धनिनः ज्ञानिनः कुशलिनः दूरदर्शिनश्च सर्वेऽपि अस्मिन् नगरे वसन्ति । २. ब्रह्मचारिणः वानप्रस्थाः सन्यासिनश्च अस्मिन् आश्रमे सन्ति । ३. गृहिणो गृहे वर्तन्ते । ४. अत्याचारिणा दुराचाराणां च संगतिं कदापि न कुरु । ५. एष जनो दुःखितः क्षुधितश्चास्ति । ६. राजा पृथ्वीं भुनक्ति भुनक्तु अभुनक् भुञ्ज्यात् भोक्ष्यति वा । ७. बालको भोजनं भुङ्क्ते भुङ्क्ताम् अभुङ्क्त भुञ्जीत भोक्ष्यते वा । ८. अहं भोजनं भुञ्जे भुञ्जीय वा ।

२. संस्कृत बनाओ :—(क) १. गुणी, धनी और ज्ञानी संसार में सुखी रहते हैं। २. ब्रह्मचारी वानप्रस्थ और संन्यासी सुकृती होते हैं। ३. इस गृहस्थ के घर एक हाथी (दन्तिन्) है। ४. दूरदर्शी जन शान्ति पाते हैं। ५. अत्याचारी और दुराचारी सब जगह दुःखित होते हैं। ६. धनिक प्रायः सकुशल रहते हैं। ७. जादूगर जादू (माया) दिखा रहा है। ८. यह पथिक बहुत प्यासा है। ९. यह अतिथि बहुत भूखा है। १०. बार-बार सत्य बोलो और धर्म करो। ११. यहाँ से हटो (अपसृ) और दूसरी जगह जाकर बैठो। १२. यह वन कुसुमित और सुरभित है। १३. यह वृक्ष अंकुरित हो रहा है। १४. आकाश तारों से युक्त है। (ख) (भुज् धातु) १५. राजा राज्य की रक्षा करता है। १६. सेनापति ने राष्ट्र की रक्षा की। १७. हम अपने राष्ट्र भारतवर्ष की रक्षा करें। १८. वह भोजन खाता है। १९. तू फल खाता है। २०. मैं मिठाई खाता हूँ। २१. उसने हलुआ खाया। २२. वह पकवान खाए।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. राजा राज्यस्य भुनक्ति ।	राजा राज्यं भुनक्ति ।	४
२. भोजति, अभोजत् ।	भुनक्ति, अभुनक् ।	धातुरूप
३. भोजते, भोजसे, अभोजत् ।	भुङ्क्ते, भुङ्क्षे, अभुङ्क्त ।	धातुरूप

४. अभ्यास :—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) भुज् धातु के दोनों पदों के दसों लकारों के रूप लिखो। (ग) तद्धित इनि, ठन् और इतच् प्रत्यय लगाकर पाँच-पाँच शब्द बनाओ। (घ) निर्देश चिह्नों को उदाहरण देकर समझाओ।

५. वाक्य बनाओ :—भुनक्ति, अभुनक्, भुञ्ज्यात्, भुङ्क्ते, भुङ्क्ष्व, भुञ्जीरन्। ब्रह्मचारिणः, गृहिणाम्, वानप्रस्थाः, संन्यासिनाम्। पुनः, भूयः, अन्यत्र, सर्वत्र।

६. रिक्त स्थान भरो :—(लट्, लोट्, लङ्, लृट् लकार)—१. अहं भोजनं (भुज्)। २. त्वं भक्तं (भुज्)। ३. ते मोदकान् (भुज्)। ४. भूपतिः भूमिं (भुज्)। ५. वयं भारतवर्षं (भुज्)।

शब्दकोष—१३२५ + २५ = १३५०) **अभ्यास ५४** (व्याकरण)

(क) आम्रः (आम), रसालः (आम), दाडिमः (अनार), पनसः (कटहल), जम्बीरः (नीबू), उदुम्बरः (गूलर), अश्वत्थः (पीपल), निम्बः (नीम), पूगः (सुपारी), बिल्वः (बेल), वातादः (बादाम), द्राक्षा (अंगूर), बदरी (बेर), कदली (केला), कदलीफलम् (केला), नारिकेलफलम् (नारियल), सेवफलम् (सेब), नारङ्गफलम् (नारंगी, संतरा), आम्रलम् (दृढबीजम्, अमरूद)। १९। (ख) तन् (फैलाना)। १। (ग) तूष्णीम् (चुप), अकस्मात् (अचानक), नित्यम् (नित्य), शीघ्रम् (शीघ्र), पश्चात् (बाद में)। ५।

सूचना—आम्र—वाताद्, वृक्ष अर्थ में रामवत्, फल अर्थ में गृहवत्।

व्याकरण (तन्, अपत्यार्थक तद्धित प्रत्यय अण्)

१. तन् धातु के दोनों पदों में दसों लकार के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५८)।

सूचना—आम्र आदि शब्द वृक्षवाचक होने पर पुंलिंग होते हैं। फलवाचक होने पर नपुंसक०। अन्त में फलम् लगाकर भी फलवाचक बनाते हैं। जैसे—आम्र (आम का पेड़), आम्रम् या आम्रफलम् (आम) आदि।

नियम १७१—(तस्यापत्यम्) अपत्य पुत्र या पुत्री दोनों को कहते हैं। अपत्य अर्थ में शब्द के बाद प्रायः अण् (अ) प्रत्यय लगता है। अण् का अ शेष रहता है। शब्द के सर्वप्रथम स्वर को वृद्धि होती है, अर्थात् अ को आ, इ ई को ऐ, उ ऊ को औ, ऋ को आर्, अन्तिम उ को ओ होगा। जैसे—वसुदेव का पुत्र—वासुदेवः (कृष्ण), पाण्डु के पुत्र-पाण्डवाः, कुरु के पुत्र-कौरवाः, पृथा (कुन्ती) के पुत्र-पार्थाः। रघु का पुत्र—राघवः, पुत्र का पुत्र—पौत्रः, शिव का पुत्र—शैवः, विष्णु का पुत्र—वैष्णवः। इनके रूप राम की तरह चलेंगे। स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य।

नियम १७२—(अत इञ्) अकारान्त शब्दों से (कुछ शब्दों को छोड़कर) अपत्य अर्थ में अन्त में इञ् प्रत्यय होता है। इञ् का इ शेष रहता है। शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि। हरि के तुल्य रूप चलेंगे। जैसे—दशरथ का पुत्र—दाशरथिः (राम), दक्ष का—दाक्षिः, सुमित्रा का—सौमित्रिः (लक्ष्मण), द्रोण का—द्रौणिः (अश्वत्थामा)।

नियम १७३—(दित्यदित्या०) कुछ शब्दों से अपत्य अर्थ में अन्त में 'य' प्रत्यय लगता है। शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि। रामवत् रूप चलेंगे। जैसे–दिति के पुत्र–दैत्याः, अदिति के पुत्र–आदित्याः, प्रजापति–प्राजापत्यः, गर्ग–गार्ग्यः। वत्स–वात्स्यः।

नियम १७४—(स्त्रीभ्यो ढक्) स्त्रीलिंग शब्दों से अपत्य अर्थ में अन्त में 'एय' लगता है (कुछ शब्दों को छोड़कर)। शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि। जैसे–कुन्ति के पुत्र-कौन्तेयाः (युधिष्ठिर आदि), माद्री के पुत्र—माद्रेयौ (नकुल, सहदेव), राधा का—राधेयः (कर्ण), द्रौपदी के–द्रौपदेयाः, गङ्गा का–गाङ्गेयः, विनता का–वैनतेयः (गरुड)।

अभ्यास ५४

१. उदाहरण-वाक्यः—१. आम्राः दाड़िमाः पनसा उदुम्बरा अश्वत्थाः निम्बाः बिल्वाश्च अस्मिन् उद्याने सन्ति। २. अहम् आम्राणि, दाडिमानि, सेवफलानि, नारङ्ग-फलानि, पनसानि, पूगानि, वातादानि, द्राक्षाफलानि, कदलीफलानि च प्रायः भोजनस्य पश्चात् भक्षयामि। ३. तूष्णीं तिष्ठ। ४. सोऽकस्माद् आगतः। ५. दाशरथेः, वासुदेवस्य, पाण्डवानां, कौरवाणां, सौमित्रेः, राधेयस्य च एतानि चित्राणि सन्ति। ६. स वस्त्राणि तनोति, तनोतु, अतनोत्, तनुयात्, तनिष्यति च।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. मेरे गाँव में आम, अनार, कटहल, नीबू, गूलर, पीपल, नीम, सुपारी, बेल, केला, बेर और नारियल के पेड़ हैं। २. भोजन के बाद फल खाओ। ३. वह प्रायः आम, सेव, अनार, संतरा, कटहल, नीबू, बेल, बादाम, अंगूर, केला, नारियल और सुपारी खाता है। ४. ये आम, सेव, अंगूर, केले और अमरूद बहुत मधुर हैं। ५. बेर और गूलर कम खाओ। ६. सेव, बादाम, केला और संतरा स्वास्थ्य-लाभ के लिए बहुत उत्तम हैं। ७. यहाँ चुप बैठो। ८. गुरु जी अकस्मात् आ गये। ९. व्यायाम, संध्या और अध्ययन नित्य करो। १०. मेरी पुस्तक शीघ्र लाओ। ११. भोजन के बाद विद्यालय जाना। १२. महाभारत के युद्ध में वासुदेव, तीनों कुन्ती के पुत्र, दोनों माद्री के पुत्र, राधा के पुत्र कर्ण, द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा तथा द्रौपदी के पुत्र थे। १३. सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मण दाशरथि राम के साथ वन को गये। (ख) १४. वह वस्त्र फैलाता है। १५. तू ज्ञान को फैलाता है। १६. मैं धर्म को फैलाता हूँ। १७. वह विद्या को फैलावे। १८. तूने सत्य को फैलाया। १९. वह अपनी विद्या को फैलायेगी। २०. मैं गुणों को फैलाऊँगा।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. कौन्तेयः, माद्री, राधिः, द्रौणः।	कौन्तेयाः, माद्रेयौ, राधेयः, द्रौणिः।	१७२, १७४
२. तनति, तनतु, तनेत्।	तनोति, तनोतु, तनुयात्।	धातुरूप

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को बहुवचन बनाओ। (ख) तन् धातु के दोनों पदों के दसों लकारों के पूरे रूप लिखो। (ग) इन शब्दों के पुत्रवाचक शब्द बनाओ—वसुदेव, दशरथ, पाण्डु, कुरु, पुत्र, द्रोण, सुमित्रा, दिति, अदिति, प्रजापति, गर्ग, कुन्ति, पृथा, रघु, राधा, द्रौपदी, गङ्गा, विनता।

५. वाक्य बनाओः—आम्रः, आम्रम्, दाडिमः, दाडिमम्, नारिकेलः, नारिकेल-फलम्। तूष्णीम्, अकस्मात्, नित्यम्, शीघ्रम्, पश्चात्। तनोति, तनोतु, अतनोत्, तनुयात्।

शब्दकोष—१३५० + २५ = १३७५) अभ्यास ५५ (व्याकरण)

(क) कञ्चुकः (कुर्ता), उत्तरीयः (१. चादर, २. दुपट्टा), कम्बलः (कम्बल), नीशारः (रजाई), पादयामः (पायजामा), तूलः (रूई)। शाटिका (साड़ी), शय्या (बिस्तर, खाट), रशना (कमरबन्द, नाड़ा), उपानह् (जूता), उष्णीषम् (पगड़ी), अङ्गप्रोक्षणम् (अँगोछा), शिरस्कम् (टोपी), अधोवस्त्रम् (धोती), मुखप्रोक्षणम् (रूमाल), कटिसूत्रम् (करधनी, मेखला), उपधानम् (तकिया), अवगुण्ठनम् (घूँघट)। १८। (ख) क्री (खरीदना), विक्री (बेचना), बन्ध् (बाँधना), मन्थ् (मथना), अश् (खाना), मुष् (चुराना), क्लिश् (दुःख देना)। ७। वि + क्री आत्मने० है।

सूचना—(क) कञ्चुकः—तूल, रामवत्। (ख) क्री—क्लिश्, क्री के तुल्य।

व्याकरण (क्री उ०, अन्य तद्धितप्रत्यय, जात, भव आदि)

१. क्री धातु के दोनों पदों के दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो। (दे० धातु ६०)।

नियम १७५—(तत्र जातः, तत्र भवः) उत्पन्न होना या होना अर्थ में अण् आदि प्रत्यय होते हैं। (१) कुछ शब्दों के अन्त में अ प्रत्यय लगता है। प्रथम स्वर को वृद्धि। जैसे—स्रुघ्ने जातः स्रौघ्नः (स्रुघ्ननिवासी)। मथुरा में उत्पन्न—माथुरः। कान्यकुब्ज में उत्पन्न—कान्यकुब्जः। सिन्धु (१. समुद्र, २. सिन्ध प्रान्त) में होनेवाला—सैन्धवः (१. नमक, २. अश्व)। (२) कुछ शब्दों के अन्त में इक लगता है। प्रथम स्वर को वृद्धि। मासे भवः—मासिकः, षाण्मासिकः। वर्ष > वार्षिकः, काल > कालिकः, तात्कालिकः। प्रातःकालीनः, सायंकालीनः आदि 'कालीन' वाले प्रयोग भी प्रचलित हैं, अतः प्रयोग किया जा सकता है। पर व्याकरणानुसार शुद्ध नहीं हैं। (३) (सायंचिरं०) कुछ शब्दों के अन्त में 'तन' जुड़ता है। जैसे—अद्यतनः (आज का), पुरातनः (पुराना), सायन्तनः (सायंकालीन), चिरन्तनः (पुराना), इदानीन्तनः (अब का)।

नियम १७६—(तदधीते तद्वेद) पढ़ने वाला, पढ़ानेवाला या जाननेवाला अर्थ में अ या इक अन्त में लगता है। प्रथम स्वर को वृद्धि। जैसे—वेद पढ़नेवाला या वेदज्ञ—वैदिकः। पुराण > पौराणिकः, तर्क > तार्किकः, न्याय > नैयायिकः। व्याकरण > वैयाकरणः।

नियम १७७—(तेन प्रोक्तम्) पुस्तक-निर्माण अर्थ में रचयिता के नाम के बाद अ या ईय लगता है। प्रथम स्वर को वृद्धि। जैसे—ऋषि-रचित > आर्षः। मनुरचित > मानवः, पाणिनि-रचित > पाणिनीयः, पाणिनीया (अष्टाध्यायी), वाल्मीकि-रचित > वाल्मीकीयम् (रामायण)।

नियम १७८—(तस्येदम्) 'उसका यह' अर्थात् सम्बन्ध अर्थ बताने में अ या इक अन्त में लगता है। प्रथम स्वर को वृद्धि। जैसे—दिन सम्बन्धी > दैनिकम्, अहन् > आह्निकम् (दिन का), देव-सम्बन्धी > दैवः। शरद्-सम्बन्धी > शारदः। लोक-संबन्धी > लौकिकः, भूत-संबन्धी > भौतिकः।

अभ्यास ५५

१. उदाहरण-वाक्य :—१. मम समीपे कञ्चुकः, अधोवस्त्रम्, अङ्गप्रोक्षणम्, उत्तरीयः, उपानत् च सन्ति, परन्तु उष्णीषं शिरस्कं च न स्तः। २. सैन्धवम् आनय (१. घोड़ा लाओ। २. नमक लाओ)। ३. इदानीन्तनाः छात्राः पुरातनच्छात्रवत् न गुरुभक्ताः सन्ति। ४. पाणिनीयाम् अष्टाध्यायीम् अवश्यं पठ। ५. स वस्त्राणि क्रीणाति, क्रीणातु, अक्रीणात्, क्रीणीयात्, क्रेष्यति वा। ६. स पुस्तकविक्रेता पुस्तकानि विक्रीणीते। ७. स चौरं बध्नाति, दधि मथ्नाति, भोजनम् अश्नाति, दुर्जनं क्लिश्नाति, कस्यापि धनं च न मुष्णाति।

२. संस्कृत बनाओ—(क) १. तुम अपने वस्त्र कुर्ता, धोती, पायजामा, कम्बल, रजाई, पगड़ी, टोपी, अँगोछा, रूमाल और तकिया स्वच्छ रखो। २. कुर्ता और धोती पहनो (धारय)। ३. स्त्री अपनी साड़ी और मेखला पहनती है और घूँघट नीचे करती है। ४. अपना जूता या चप्पल पैर में पहनो। ५. नमक (सैन्धव) लाओ। ६. छात्रों की प्रतिवर्ष त्रैमासिक, षाण्मासिक और वार्षिक परीक्षा होती है। ७. आजकल के मनुष्यों में सत्य, प्रेम, अहिंसा और धर्म पुराने लोगों के तुल्य नहीं है। ८. वैदिक धर्म सनातन, पुरातन और चिरन्तन है। ९. इस सभा में वैदिक, स्मार्त, पौराणिक, धार्मिक, वैयाकरण, साहित्यिक, नैयायिक, मीमांसक तथा अन्य विद्वान् बैठे हैं। १० चारों वेद, धर्मशास्त्र, उपनिषद्, वाल्मीकीय रामायण, व्यासरचित महाभारत, गीता और पाणिनीय अष्टाध्यायी अवश्य पढ़ो। ११. दैनिक कार्य प्रतिदिन करो। १२. भौतिक, लौकिक और पारलौकिक सुख चाहो। (ख) १३. यह फल खरीदता है। १४. तू वस्त्र खरीदता है। १५. मैं पुस्तक खरीदता हूँ। १६. वह वस्त्र बेचता है। १७. पुस्तक-विक्रेता पुस्तक बेचता है। १८. राजा पापी को बाँधता है। १९. चोर धन चुराता है और दुःख देता है। २०. हरि समुद्र से अमृत को मथता है।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. क्रयति, विक्रयति, बन्धयति।	क्रीणाति, विक्रीणीते, बध्नाति।	धातुरूप
२. समुद्रात् सुधां मन्थति।	सुधां समुद्रं मथ्नाति।	२१

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) क्री धातु के दोनों पदों में दसों लकारों के रूप लिखो। (ग) उत्पन्न या होना अर्थ में इनके तद्धित शब्द बनाओ—मथुरा, स्रुघ्न, मास, वर्ष, प्रातःकाल, सायंकाल, पुरा, सायम्, इदानीम्।

५. वाक्य बनाओ—वैयाकरणः, तार्किकः, साहित्यिकः, आर्षः, शारदः, दैवः, लौकिकः, भौतिकः, दैनिकम्, क्रीणाति, विक्रीणीते, अश्नाति।

शब्दकोष—१३७५ + २५ = १४००) **अभ्यास ५६** (व्याकरण)

(क) फेनिलः (साबुन), दर्पणः (शीशा), अलंकारः (आभूषण), हारः (मोती की माला), कर्णपूरः (कनफूल), नूपुरः (पायजेब)। मेखला (करधनी), प्रसाधनी (कंघी), वेणिका (वेणी)। सिन्दूरम् (सिन्दूर), अञ्जनम् (काजल), गन्धतैलम् (इत्र), तिलकम् (तिलक), अङ्गुलीयकम् (अँगूठी), केयूरम् (बाजूबन्द), ग्रैवेयकम् (हँसुली), कुण्डलम् (कान की बाली), कङ्कणम् (कंकण), कण्ठाभरणम् (कण्ठा), नासाभरणम् (बुलाक)। २०। (ख) ग्रह् (लेना), संग्रह् (संग्रह करना), अनुग्रह् (अनुग्रह करना)। ३। (घ) सौभाग्यवती (सधवा, पतियुक्ता), विधवा (विधवा)। २।

सूचना—(क) फेनिल—नूपुर, रामवत्। (ख) ग्रह—अनुग्रह्, ग्रह् के तुल्य।

व्याकरण (ग्रह् धातु त्व, ता, ष्यञ्, इमनिच् प्रत्यय)

१. ग्रह् धातु के दोनों पदों में दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ६१)।

नियम १७९—(तेन तुल्यं क्रिया चेद् वतिः, तत्र तस्येव) तुल्य या सदृश अर्थ को बताने के लिए शब्द के बाद 'वत्' प्रत्यय लगता है। जैसे—ब्राह्मण के तुल्य—ब्राह्मणवत्। इसी प्रकार क्षत्रियवत्, वैश्यवत्, शूद्रवत्। रामशब्द के तुल्य > रामवत्, भवति के तुल्य > भवतिवत्।

नियम १८०—(तस्य भावस्त्वतलौ) भाव (हिन्दी 'पन') अर्थ में शब्द के अन्त में त्व और ता लगते हैं। त्व-प्रत्ययान्त के रूप नपुंसक लिंग में ही चलेंगे, गृहवत्। ता-प्रत्ययान्त के रूप रमा के तुल्य स्त्री०। जैसे—लघु > लघुत्वम्, लघुता (हलका या छोटापन), गुरु से गुरुत्वम्, गुरुता (भारीपन)। इसी प्रकार ब्राह्मणत्वम्, क्षत्रियत्वम्, शूद्रत्वम्, विद्वस् > विद्वत्त्वम्, विद्वत्ता। दीनता, हीनता, मूर्खता, खिन्नता, दुष्टता।

नियम १८१—(गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः०) गुणवाचक और ब्राह्मण आदि शब्दों से भाव अर्थ में ष्यञ् अर्थात् य प्रत्यय अन्त में लगता है। शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि होती है और अन्तिम अ का लोप। जैसे—शूर शौर्यम् (शूरता), सुन्दर > सौन्दर्यम्, धीर > धैर्यम्, सुख > सौख्यम्, कवि > काव्यम्, ब्राह्मण > ब्राह्मण्यम्, विदग्ध > वैदग्ध्यम्, विद्वस् > वैदुष्यम्।

नियम १८२—कुछ शब्दों के अन्त में ष्यञ् अर्थात् य या अ प्रत्यय स्वार्थ (अर्थात् उसी अर्थ) में होते हैं। जैसे—बन्धु > बान्धवः (दोनों का अर्थ भाई है)। प्रज्ञ > प्राज्ञः, रक्षस् > राक्षसः। करुणा > कारुण्यम्, चतुर्वर्ण > चातुर्वर्ण्यम्, सेना > सैन्यम्, समीप > सामीप्यम्, त्रिलोक > त्रैलोक्यम्।

नियम १८३—(पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा) कुछ शब्दों से भाव अर्थ में शब्द के अन्त में 'इमन्' लगता है। अन्तिम अक्षर या टि (व्यञ्जन सहित अन्तिम स्वर) का लोप हो जाता है। ऋ को र् होता है। जैसे—लघु > लघिमा (लघुता), गुरु > गरिमा, महत् > महिमा, मृदु > म्रदिमा, अणु > अणिमा।

अभ्यास ५६

१. उदाहरण-वाक्य :—१. सौभाग्यवती स्त्री हारं नूपुरं कङ्कणं सिन्दूरं तिलकं कण्ठाभरणं च धारयति। २. फेनिलेन वस्त्राणि प्रक्षालय। ३. मनुष्येषु एकतः (एक ओर) विद्वत्ता, शौर्यं, धैर्यं, सौख्यं, सौन्दर्यं गुरुत्वं च दृश्यते, अपरतः (दूसरी ओर) दीनता, हीनता, खिन्नता, मूर्खता, भीरुत्वं कुरूपत्वं च दृश्यते। ४. गुणानां गरिमा, अणोः अणिमा, लघूनां लघिमा, मृदूनां म्रदिमा, महतां महिमा च सर्वत्र दृश्यते। ५. ब्राह्मणः धनं गृह्णाति, गृह्णातु, अगृह्णात्, गृह्णीयात्, ग्रहीष्यति वा। ६. धनिकः धनं संगृह्णाति, पुत्रं च अनुगृह्णाति।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. वह सुन्दर स्त्री ग्रीवा में मोती की माला, कान में कनफूल, नाक में बुलाक, हाथ में कंकण और बाजूबन्द, भाल पर तिलक, आँख में काजल और पैर में पायजेब धारण किए हुए है। २. सौभाग्यवती नारियाँ सभी अलंकारों को धारण करती हैं और विधवा स्त्रियाँ नहीं। ३. वह सुन्दरी साबुन से अंगों को धोकर दर्पण में मुँह देखती है और कंघी से वेणी को गूँथती है (बन्ध्)। ४. सिन्दूर सौभाग्य का चिह्न है। ५. स्त्रियाँ मेखला, हँसुली, कुंडल भी पहनती हैं और इत्र लगाती हैं (निक्षिप्)। ६. ब्राह्मणवत् विद्वान् बनो, क्षत्रियवत् नीरोग बनो, वैश्यवत् धनी बनो और शूद्रवत् परिश्रमी बनो। ७. संसार में एक ओर दीनता, हीनता, मूर्खता, दुष्टता, रोग और शोक हैं, दूसरी ओर विद्वत्ता, सौख्य, शान्ति, सौन्दर्य और साधुता है। ८. चातुर्वर्ण्य प्राचीन परम्परा है। ९. त्रैलोक्य में गुणों की गरिमा, प्रेम की प्रियता, अहिंसा की महिमा सदा रही है। (ख) १०. वह धन लेता है। ११. तू पुस्तक लेता है। १२. मैं फल लेता हूँ। १३. मनुष्य धन संग्रह करता है। १४. गुरु शिष्य पर अनुग्रह करता है।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. विद्वानता, महानता, बुद्धिमानता।	विद्वत्ता, महत्ता, बुद्धिमत्ता।	१८०
२. शौर्यता, धैर्यता।	शौर्यम् (शूरता), धैर्यम् (धीरता)।	१८१
३. सौन्दर्यता, सामीप्यता।	सौन्दर्यम् (सुन्दरता) सामीप्यम् (समीपता)	१८१

४. अभ्यासः—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् में बदलो। (ख) ग्रह् धातु के दोनों पदों के दसों लकारों के रूप लिखो। (ग) त्व और ता प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—विद्वस्, महत्, धीमत्, दीन, हीन। (घ) ष्यञ् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—शूर, धीर, सुन्दर, ब्राह्मण, कवि, सुख, विद्वस्। (ङ) इमनिच् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ— लघु, गुरु, महत्, मृदु, अणु।

शब्दकोश—१४०० + २५ = १४२५) अभ्यास ५७ **(व्याकरण)**

(क) आयातः (देशान्तर से आगत), **निर्यातः** (देश से बाहर गया हुआ), **विनिमयः** (बदलना), **पत्रवाहकः** (डाकिया), **उत्कोचः** (घूस), **कुसीदः** (सूद), **अभियोगः** (मुकदमा), **वाक्कीलः** (वकील), **न्यायाधीशः** (जज), **न्यायालयः** (कोर्ट), **दीनारः** (अशर्फी), **आपणः** (दूकान), **पणः** (पैसा), **नाणकम्** (नोट), **वादी** (मुद्दई), **प्रतिवादी** (मुद्दालेह), **रूप्यकम्** (रुपया), **रजतम्** (चाँदी), **उपनेत्रम्** (चश्मा), **काष्ठपट्टम्** (तख्त) । २० । **(ख) ज्ञा** (जानना), **प्रतिज्ञा** (प्रतिज्ञा करना), **अवज्ञा** (तिरस्कार करना), **अनुज्ञा** (आज्ञा देना), **अभिज्ञा** (पहचानना) । ५ ।

सूचना—(क) आयात—पण, रामवत् । ज्ञा—अभिज्ञा, ज्ञा के तुल्य ।

व्याकरण (ज्ञा, तद्धित प्रत्यय तः, त्र, था, दा, धा, मात्र)

१. ज्ञा धातु के दोनों पदों में दसों लकारों के पूरे रूप स्मरण करो (देखो धातु० ६२)

सूचना—प्रतिज्ञा के रूप आत्मनेपद में ही चलते हैं । प्रतिजानीते ।

नियम १८४—(पञ्चम्यास्तसिल्) पंचमी विभक्ति के स्थान पर 'तः' प्रत्यय होता है । जैसे—कस्मात् > कुतः (कहाँ से) । इसी प्रकार यतः, ततः, इतः, परितः, अभितः, समन्ततः, अतः, अग्रतः, सर्वतः, उभयतः । मत्तः (मुझसे), त्वत्तः (तुझसे), अस्मत्तः (हमसे), युष्मत्तः (तुमसे) ।

नियम १८५—(सप्तम्यास्त्रल्) सप्तमी के स्थान पर 'त्र' प्रत्यय होता है । जैसे—कस्मिन् > कुत्र । इसी प्रकार अत्र, यत्र, तत्र, सर्वत्र, अन्यत्र (दूसरी जगह), बहुत्र (बहुत स्थानों पर) ।

नियम १८६—(प्रकारवचने थाल्) 'प्रकार' अर्थ में सर्वनाम शब्दों से 'था' प्रत्यय होता है । जैसे—तेन प्रकारेण—तथा (उस प्रकार से) । इसी प्रकार यथा, सर्वथा, उभयथा (दोनों प्रकार से), अन्यथा (अन्य प्रकार से, नहीं तो) । इत्थम् और कथम् में था की जगह थम् लगता है ।

नियम १८७—(सर्वैकान्यकिंयत्तदः काले दा) सर्व आदि शब्दों से समय अर्थ में 'दा' प्रत्यय होता है । जैसे—सर्वदा, सदा, एकदा (एक बार), अन्यदा (कभी), कदा, यदा, तदा । इदम् का इदानीम् (अब) रूप होता है ।

नियम १८८—(संख्याया विधार्थे धा) संख्यावाची शब्दों से प्रकार अर्थ में 'धा' प्रत्यय होता है । जैसे—एकधा (एक प्रकार से), द्विधा, त्रिधा, चतुर्धा, पञ्चधा, बहुधा (अनेक बार, प्रायः), शतधा, सहस्रधा ।

नियम १८९—(प्रमाणे द्वयसच्०) प्रमाण अर्थ में अर्थात् नाप, तोल आदि अर्थ में शब्द से 'मात्र' प्रत्यय होता है । जैसे, हाथभर—हस्तमात्रम्, मुट्ठीभर—मुष्टिमात्रम् । कमर तक—कटिमात्रम्, घुटने तक—जानुमात्रम् ।

अभ्यास ५७

१. उदाहरण-वाक्यः—१. देशस्योन्नत्यै आयातो निर्यातश्च आवश्यकौ स्तः। २. उत्कोचस्य आदानं प्रदानं च द्वयमपि पापम् अस्ति। ३. इतस्ततो न भ्रम। ४. बहुधा विचार्य कार्यं कर्तव्यम्। ५. अस्मिन् सरसि जानुमात्रं जलमस्ति। ६. स धर्मं जानाति, जानातु, अजानात्, जानीयात्, ज्ञास्यति, जानीते, जानीताम्, अजानीत, जानीत, ज्ञास्यते वा। ७. स प्रतिजानीते यत्सदा सत्यं वक्ष्यति। ८. राजा चोरम् अवजानाति। ९. पिता पुत्रम् अनुजानाति। १०. अहं त्वामभिजानामि।

२. संस्कृत बनाओः—(क) १. आयात और निर्यात से देश के व्यापार की उन्नति होती है और वस्तुओं का विनिमय होता है। २. डाकिया पत्र लाया। ३. घूस लेना और देना दोनों ही महापाप है। ४. कोर्ट में जज के सम्मुख वकील तर्क कर रहा है। ५. वादी ने प्रतिवादी पर अभियोग लगाया (कृ)। ६. धनिक निर्धन से धन और सूद दोनों लेता है। ७. एक रुपये में १०० पैसे होते हैं। ८. चाँदी, सोना, अशर्फी और रत्न बहुमूल्य वस्तुएँ हैं। ९. वह प्राध्यापक चश्मा पहनते हैं। १०. वह तख्त यहाँ रखो। ११. इधर उधर (इतस्ततः) न दौड़ो। १२. तुम कहाँ से आ रहे हो? १३. छात्र मुझसे और तुमसे विद्या पढ़ता है। १४. विद्यालय के दोनों ओर और गाँव के चारों ओर जल है। १५. सत्य बोलो, नहीं तो पापी होगे। १६. पाठ को दो बार, तीन बार, चार बार, पाँच बार, दस बार पढ़ो। १७. यह मुट्ठी भर अन्न है। १८. यहाँ कमर तक जल है। १९. यह एक हाथ कपड़ा है। (ख) २०. वह राम को जानता है। २१. तू धर्म को जानता है। २२. मैं सत्य को जानता हूँ। २३. वह प्रतिज्ञा करता है कि मैं कभी झूठ न बोलूँगा। २४. मूर्ख दीनों का तिरस्कार करता है। २५. गुरु शिष्य को आज्ञा देता है। २६. दुष्यन्त शकुन्तला को पहचानता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. विद्यालयस्य उभयतः, ग्रामस्य परितः।	विद्यालयमुभयतः, ग्रामं परितः।	१४, १७
२. जानति, जानतु, अजानत्।	जानाति, जानातु, अजानात्।	धातुरूप
३. स प्रतिजानाति।	स प्रतिजानीते।	धातुरूप

४. अभ्यास :—(क) २ (ख) को लोट्, लङ्, विधिलिङ और लृट् में बदलो। **(ख)** ज्ञा धातु के दोनों पदों में दसों लकारों में रूप लिखो। **(ग)** इन प्रत्ययों को लगाकर पाँच-पाँच बार रूप बनाओ और वाक्य में प्रयोग करो—तः, त्र, था, दा, धा, मात्र।

५. वाक्य बनाओः—जानीहि, प्रतिजानीष्व, अवजानाति, अनुजानीहि। मत्तः, त्वत्तः, अस्मत्तः, युष्मत्तः, उभयतः, सर्वतः, अन्यत्र, सर्वत्र, एकदा, सदा, त्रिधा, बहुधा, शतधा, मुष्टिमात्रम्, कटिमात्रम्, जानुमात्रम्।

शब्दकोष—१४२५ + २५ = १४५०) अभ्यास ५८ (व्याकरण)

(क) ऋतुः (ऋतु), वसन्तः (वसन्त), ग्रीष्मः (गर्मी), वर्षा (वर्षा), शरद् (शरद्), हेमन्तः (हेमन्त), शिशिरः (शिशिर)। ७। (घ) कृशः (निर्बल), प्रियः (प्रिय), कटुः (कड़वा), लघुः (छोटा,हलका), बहुः (अधिक), भीरुः (डरपोक), मृदुः (कोमल), दीर्घः (बड़ा), ह्रस्वः (छोटा), महत् (बड़ा), अल्पः (छोटा, थोड़ा), प्रशस्यः (अच्छा), उदारः (दानी), कृपणः (कृपण), प्राचीनः (पुराना), नूतनः (नया), कोमलः (कोमल), विशालः (बड़ा)। १८।

व्याकरण (तरप्, तमप्, प्रत्यय)

नियम १९०—(द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ) तुलनात्मक विशेषण—जब दो की तुलना की जाती है और उनमें से एक की विशेषता या न्यूनता बताई जाती है तो विशेषण के बाद तरप् या ईयसुन् प्रत्यय होता है। तरप् का तर और ईयसुन् का ईयस् शेष रहता है। तरप् प्रत्यय लगाने पर पुंलिंग में रामवत्, स्त्रीलिंग में रमावत् और नपुं० में गृहवत् रूप चलेंगे। ईयस् लगाने पर पुंलिंग में अन्त में ईयान्, ईयांसौ, ईयांसः, प्रथमा। ईयांसम्, ईयांसौ, ईयसः द्वितीया में लगेगा। स्त्रीलिंग में अन्त में ई लगाकर नदी के तुल्य और नपुं० में मनस् के तुल्य रूप चलेंगे। जिससे विशेषता दिखाई जाती है, उसमें पंचमी होती है (देखो नियम ५४)। जैसे—राम श्याम से पटु है—रामः श्यामात् पटुतरः पटीयान् वा। इसी प्रकार लघु > लघुतरः, लघीयान्। महत् > महत्तरः, महीयान्। विद्वस् > विद्वत्तरः।

नियम १९१—(अतिशायने तमबिष्ठनौ) बहुतों में से एक की विशेषता बताने पर तमप् या इष्ठन् होता है। तमप् का तम और इष्ठन् का इष्ठ शेष रहता है। दोनों के रूप पुं० में रामवत्, स्त्री० में रमावत्, नपुं० में ज्ञानवत् चलेंगे। जिनसे विशेषता बताई जाती है, उनमें षष्ठी या सप्तमी होगी। (देखो नियम ६४)। जैसे—कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं—कवीनां कविषु वा कालिदासः श्रेष्ठः। छात्राणां छात्रेषु वा रामः पटुतमः पटिष्ठः वा। विद्वस् > विद्वत्तमः।

इस पाठ में दो की तुलना में 'तर' और बहुतों की तुलना में 'तम' प्रत्यय का प्रयोग करें।

अभ्यास ५८

१. उदाहरण-वाक्य :—१. षड् ऋतवः सन्ति, वसन्तः, ग्रीष्मादयः। २. देवदत्तः यज्ञदत्तात् पटुतरः, कृशतरः, लघुतरः, भीरुतरः, मृदुतरः चास्ति। ३. कालिदासः कवीनां कविषु वा बुद्धिमत्तमः, पटुतमः, योग्यतमश्चासीत्। ४. कृष्णः छात्राणां, छात्रेषु वा पटुतमः। ५. रमा कमलायाः पटुतरा। ६. श्यामा छात्रासु पटुतमा अस्ति।

२. संस्कृत बनाओ :—१. एक वर्ष में ६ ऋतुएँ होती हैं—वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर। २. वसन्त ऋतु को ऋतुराज कहते हैं। ३. वसन्त में सभी वृक्ष और लताएँ फल-फूल से युक्त होती हैं। ४. ग्रीष्मऋतु में धूप (आतपः) बहुत उग्र होती है। ५. वर्षा ऋतु में वृष्टि अधिक होती है। ६. शरद् ऋतु से ठण्ड (शीतः) शुरू होती है। ७. हेमन्त ऋतु में ठण्ड बढ़ती है। ८. शिशिर में हिम (हिमम्) गिरता है और ठण्ड अत्यधिक होती है। ९. राम शिवदत्त से अधिक चतुर, पटु, कृश और लघु है। १० मुझे धनिक से विद्वान् प्रियतर है। ११. धन से विद्या प्रशस्यतर है। १२. विद्या से भी बुद्धि प्रशस्यतर है। १३. हरिश्चन्द्र रामचन्द्र से छोटा है और देवदत्त रामचन्द्र से बड़ा है। १४. वैदिक धर्म सारे धर्मों से प्राचीन है। १५. साम्यवाद सबसे नया वाद (वादः) है। १६. हरिश्चन्द्र सबसे बड़ा दानी था। १७. राजाओं में दुर्योधन सबसे अधिक कृपण था। १८. परमाणु सबसे छोटा होता है। १९. नवग्रहों में सूर्य सबसे बड़ा ग्रह (ग्रहः) है। २०. स्त्री का स्वर मृदुतम होता है। २१. खरगोश सबसे अधिक डरपोक जानवर होता है। २२. सरस्वती सबसे अधिक विदुषी (विद्वत्तमा) है। २३. ग्रीष्म ऋतु में दिन सबसे बड़ा होता है और शिशिर में रात्रि सबसे बड़ी होती है। २४. गुड़ सबसे अधिक मधुर होता है और विष सबसे अधिक कटु होता है।

३. अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य	नियम
१. रामः शिवदत्तेन अधिकं चतुरतरः।	रामः शिवदत्तात् चतुरतरः।	५४
२. वैदिकधर्मः सर्वधर्मात् प्राचीनः।	वैदिकधर्मः सर्वधर्मेषु प्राचीनतमः।	६४

४. अभ्यास—(क) इन शब्दों से तरप् और तमप् प्रत्यय लगाकर रूप बनाओ—पटु, गुरु, लघु, मृदु, कटु, मधुर, प्रिय, ह्रस्व, दीर्घ, महत्, अल्प, कृपण, उदार, प्राचीन, नवीन, दुष्ट, हीन, नीच।

५. वाक्य बनाओ :—पटुतरः, लघुतरः, प्रियतरः, दुष्टतरः, महत्तरः, पटुतमः, गुरुतमः, मधुरतमः, कटुतमः, प्राचीनतमः, नवीनतमः।

शब्दकोष—१४५० + २५ = १४७५) **अभ्यास ५९** (व्याकरण)

(क) वासरः (दिन), रविवारः (रविवार), सोमवारः (सोमवार), मङ्गलवारः (मंगलवार), बुधवारः (बुधवार), बृहस्पतिवार. (बृहस्पतिवार), शुक्रवारः (शुक्रवार), शनिवारः (शनिवार)। मासः (महीना), चैत्रः (चैत्र), वैशाखः (वैशाख), ज्येष्ठः (ज्येष्ठ), आषाढ़ः (आषाढ़), श्रावणः (श्रावण), भाद्रपदः (भाद्रपद), आश्विनः (आश्विन), कार्तिकः (कार्तिक), मार्गशीर्षः (मार्गशीर्ष), पौषः (पूष), माघः (माघ), फाल्गुनः (फाल्गुन)। २१। (घ) बाढः (अच्छा), युवन् (छोटा), उरुः (बड़ा), स्थूलः (मोटा)। ४।

व्याकरण (तद्धित ईयस्, इष्ठ प्रत्यय)

नियम १९२—(अजादी गुणवचनादेव, टेः) ईयस् और इष्ठ के विषय में दो बातें स्मरण रक्खें—(१) ईयस् और इष्ठ गुणवाचक शब्दों के ही साथ लगते हैं, सब प्रकार के शब्दों के साथ नहीं। तर, तम सब स्थानों पर लगते हैं। (२) ईयस् और इष्ठ लगाने पर शब्द के अन्तिम स्वर का लोप हो जाएगा। यदि अन्त में व्यञ्जन हो तो उस व्यञ्जन और उससे पहले के स्वर, दोनों का लोप होगा। जैसे—पटु, लघु, आदि में उ हटेगा, महत् में अत् हटेगा। पटु > पटीयान्, पटिष्ठः। लघु > लघीयान्, लघिष्ठः। महत् > महीयान्, महिष्ठः।

नियम १९३—(स्थूलदूर०, प्रियस्थिर०) निम्नलिखित शब्दों से ईयस् और इष्ठ प्रत्यय करने पर ये रूप होते हैं। ठीक स्मरण कर लें। कोष्ठगत शब्द शेष रहता है। सभी शब्दों के तर और तम वाले भी रूप बनेंगे।

प्रशस्य (श्र)	श्रेयान्	श्रेष्ठः	गुरु (गर्)	गरीयान्	गरिष्ठः
वृद्ध, प्रशस्य (ज्य)	ज्यायान्	ज्येष्ठः	दीर्घ (द्राघ्)	द्राघीयान्	द्राघिष्ठः
अन्तिक (नेद्)	नेदीयान्	नेदिष्ठः	बहु (भू)	भूयान	भूयिष्ठः
बाढ (साध्)	साधीयान्	साधिष्ठः	युवन् (कन्)	कनीयान्	कनिष्ठः
स्थूल (स्थू)	स्थवीयान्	स्थविष्ठः	पटु (पट्),	पटीयान्	पटिष्ठः
दूर (दू)	दवीयान्	दविष्ठः	लघु (लघ्)	लघीयान्	लघिष्ठः
प्रिय (प्र)	प्रेयान्	प्रेष्ठः	महत् (मह्)	महीयान्	महिष्ठः
स्थिर (स्थ)	स्थेयान्	स्थेष्ठः	मृदु (म्रद्)	म्रदीयान्	म्रदिष्ठः
उरु (वर्)	वरीयान्	वरिष्ठः	बलिन् (बल्)	बलीयान्	बलिष्ठः

इस पाठ में दो की तुलना में 'ईयस्' और बहुतों की तुलना में 'इष्ठ' का प्रयोग करें।

अभ्यास ५९

१. **उदाहरण-वाक्यः**—१. सप्ताहे सप्त दिनानि भवन्ति (रविवारः, सोमवारादयः) । २. एकस्मिन् वर्षे द्वादश मासाः भवन्ति, चैत्रः, वैशाखादयः । ३. जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी । ४. श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् । ५. रामो लक्ष्मणात् ज्यायान् आसीत्, शत्रुघ्नश्च भरतात् कनीयान् आसीत् । ६. पाण्डवानां युधिष्ठिरो ज्येष्ठः, सहदेवश्च कनिष्ठो भ्राता बभूव ।

२. **संस्कृत बनाओ** :—१. एक सप्ताह में सात दिन होते हैं—रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार और शनिवार । २. एक वर्ष में बारह मास होते हैं—चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन । ३. विद्या धन से बड़ी है (गुरु) । ४. मेरा घर तुम्हारे घर से दूर है (दूर) । ५. भीम अर्जुन से स्थूल है । ६. अर्जुन भीम से धनुर्विद्या में चतुर है (पटु) । ७. हिंसा से अहिंसा प्रशस्यतर है । ८. यह मार्ग उस मार्ग से लम्बा है (दीर्घ) । ९. कृष्ण मेरा बड़ा भाई है और राम छोटा भाई । १०. रमा विष्णु की पत्नी है । ११. इन्दुमती का शरीर फूल से भी कोमल था (मृदु) । १२. वेद सारे धर्मग्रन्थों में श्रेष्ठ हैं । १३. कालिदास कवियों में श्रेष्ठ हैं । १४. कौरवों में दुर्योधन सबसे बड़ा भाई था । १५. पाण्डवों में सहदेव सबसे छोटा भाई था । १६. सारी पुस्तकों में मुझे गीता प्रिय है (प्रिय) । १७. ईश्वर सबसे अधिक समीप (अन्तिक), सबसे अधिक दूर, सबसे उत्तम (बाढ), सबसे स्थूल, सबसे लघु, सबसे महान्, सबसे बड़ा (गुरु), सबसे विशाल (उरु), सबसे स्थिर, सबसे बड़ा (वृद्ध), सबसे प्रिय, सबसे बलवान् (बलिन्) और सबसे अधिक (बहु) कोमल है (मृदु) ।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. ज्येयान्, दूरीयान्, प्रियेयान् ।	ज्यायान्, दवीयान्, प्रेयान् ।	१९३
२. बहीयान्, बहिष्ठः, गुरिष्ठः ।	भूयान्, भूयिष्ठः, गरिष्ठः ।	१९३
३. जेष्ठः, कनेष्ठः, वरेष्ठः ।	ज्येष्ठः, कनिष्ठः, वरिष्ठः ।	१९३

४. **अभ्यासः**—**(क)** इन शब्दों से ईयस् और इष्ठ लगाकर रूप बनाओ:—प्रिय, स्थिर, उरु, गुरु, वृद्ध, दीर्घ, युवन्, अन्तिक, बाढ़, स्थूल, प्रशस्य, पटु, लघु, मृदु, महत्, बहु ।

५. **वाक्य बनाओ** :—श्रेयान्, श्रेष्ठः, प्रेयान्, प्रेयसी, प्रेष्ठः, ज्यायान्, ज्येष्ठः, कनीयान्, कनिष्ठः, भूयांसः, भूयिष्ठम्, गरिष्ठः, वरिष्ठः ।

शब्दकोष—१४७५ + २५ = १५००) अभ्यास ६० (व्याकरण)

(क) अजा (बकरी), कोकिला (कोयल), मूषिका (चुहिया), प्रिया (प्रिय स्त्री, स्त्री), तरुणी (युवती), किशोरी (कम आयु की कन्या), ब्राह्मणी (ब्राह्मणी), क्षत्रिया (क्षत्रिय स्त्री), वैश्या (वैश्य स्त्री), शूद्रा (शूद्र स्त्री), युवतिः (युवती), मृगी (हिरनी), सिंही (शेरनी), सर्पिणी (साँपिन), मार्जारी (बिल्ली), इन्द्राणी (इन्द्र की स्त्री), भवानी (दुर्गा), आचार्या (प्रिंसिपल स्त्री), आचार्यानी (आचार्य की स्त्री), राज्ञी (रानी), । २० । (घ) प्रेयसी (स्त्री), बुद्धिमती (बुद्धिमती), तपस्विनी (तपस्विनी), मानिनी (मानवाली), श्रीमती (ऐश्वर्ययुक्त स्त्री) । ५ ।

व्याकरण (स्त्रीप्रत्यय)

नियम १९४—(अजाद्यतष्टाप्) शब्दों के स्त्रीलिंग बनाने में साधारणतया अन्त में 'आ' या 'ई' लगता है। कुछ मुख्य नियम यहाँ दिये जाते हैं :—शब्द के अन्त में अ हो तो साधारणतया अन्त में टाप् अर्थात् 'आ' जुड़ जाता है। जैसे—बाल–बाला, प्रथम प्रथमा, द्वितीय–द्वितीया, कृपण-कृपणा, दीन-दीना, अज-अजा, कोकिल–कोकिला, क्षत्रिय–क्षत्रिया, वैश्य–वैश्या, शूद्र-शूद्रा।

नियम १९५—(प्रत्ययस्थात्कात्०) अन्त में अक हो तो उसे 'इका' हो जाता है। जैसे—बालक–बालिका, पाचिका, गायिका, साधिका, अध्यापिका, मूषिका।

नियम १९६—(उगितश्च) जिन प्रत्ययों में से उ या ऋ का लोप होता है, उनके अन्त में ङीप् अर्थात् ई लगेगा। जैसे—मतुप्, शतृ, क्तवतु और ईयसुन्, प्रत्ययवाले शब्द। यथा—श्रीमत् > श्रीमती। इसी प्रकार बुद्धिमती, विद्यावती। गच्छत् > गच्छन्ती। इसी प्रकार पठन्ती, लिखन्ती, हसन्ती। गतवत् > गतवती। इसी प्रकार पठितवती, उक्तवती। श्रेयस् > श्रेयसी। इसी प्रकार गरीयसी, प्रेयसी, ज्यायसी, भूयसी।

नियम १९७—(ऋन्नेभ्यो ङीप्) शब्द के अन्त में ऋ या न् होगा तो ङीप् अर्थात् 'ई' लगेगा। जैसे—कर्तृ > कर्त्री। इसी प्रकार हर्त्री, धर्त्री, कवयित्री, विधात्री। दण्डिन् > दण्डिनी। इसी प्रकार तपस्विनी, मानिनी, मनोहारिणी, कामिनी।

नियम १९८—(षिद्गौरादिभ्यश्च) गौर आदि शब्दों के अन्त में ई लगता है। गौर—गौरी। नर्तक—नर्तकी। मातामह—मातामही। पितामह—पितामही। इसी प्रकार कुमारी, किशोरी, तरुणी, सुन्दरी।

नियम १९९—(जातेरस्त्री०, पुंयोगा०) जातिवाचक शब्दों में तथा स्त्री (पत्नी) अर्थ करने में ई लगता है। जैसे—ब्राह्मण की स्त्री—ब्राह्मणी। इसी प्रकार शूद्री, गोपी आदि। मृग—मृगी। इसी प्रकार हरिणी, सिंही, व्याघ्री, हंसी, मार्जारी।

नियम २००—(इन्द्रवरुण०, पत्युर्नो०, यूनस्तिः, आदि) इन शब्दों के स्त्रीलिंग में ये रूप होते हैं :—इन्द्र—इन्द्राणी, भव—भवानी, रुद्र—रुद्राणी, मातुल—मातुलानी, उपाध्याय—उपाध्यायानी, आचार्य—आचार्यानी, आचार्या। पति—पत्नी, युवन्—युवतिः, श्वशुर—श्वश्रूः, राजन्—राज्ञी, विद्वस्—विदुषी।

अभ्यास ६०

१. उदाहरण-वाक्यः—१. अस्यां नगर्यां ब्राह्मण्यः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राश्च नार्यो वसन्ति। २. अस्मिन् उद्याने मनोहारिण्यः कुमार्यः तरुण्यः सुन्दर्यो राज्ञ्यः युवतयः ससुखं भ्रमन्ति। ३. गुरुकुलस्य आचार्या बालिकाः पाठयति, आचार्यानी आचार्यं सेवते।

२. संस्कृत बनाओः—१. महात्मा गांधी बकरी का दूध पीते थे। २. सरोजिनी नायडू भारत की कोकिला थीं। ३. कोयल मधुर स्वर से गाती है। ४. बिल्ली चूहों और चुहियोंका नाश करती है। ५. इस कक्षा में मनोरमा सर्वप्रथम है, सुशीला द्वितीय और शान्ति तृतीय। ६. ब्राह्मण ब्राह्मणी से, क्षत्रिय क्षत्रिया से, वैश्य वैश्य स्त्री से और शूद्र शूद्र स्त्री से विवाह करते हैं। ७. बालिका हँसती है, गायिका गाती है और अध्यापिका पढ़ाती है। ८. वे बालिकाएँ पढ़ रही हैं, हँस रही हैं और लिख रही हैं। ९. छोटी बहन, प्रेयसी स्त्री, श्रेयसी सिद्धि और गुरुतर क्रिया सुखद हैं। १०. बालिका पढ़ चुकी है, लिख चुकी है और खाना खा चुकी है। ११. यह मानिनी मनोहारिणी कामिनी अब दण्डिनी तपस्विनी हो गई है। १२. प्रकृति जगत् की कर्त्री, धर्त्री और हर्त्री है। १३. कवयित्री कविता करती है (रच्)। १४. मेरी माता, पत्नी, बहिन, मामी, दादी और नानी आजकल यहाँ पर ही हैं। १५. सुन्दर कुमारी, किशोरी, तरुणी स्त्रियों का सौन्दर्य किसके मन को नहीं हरता? १६. वन में मृग मृगी के साथ, सिंह सिंही के साथ और व्याघ्र व्याघ्री के साथ घूमते हैं। १७. इन्द्राणी, भवानी, आचार्यानी और आचार्या सदा पूज्य हैं। १८. विदुषी स्त्री रानी और गुरुपत्नी (उपाध्यायानी) के साथ आ रही है। १९. गोपियाँ कृष्ण के साथ खेल रही हैं। २०. हँसती हुई कुमारी ने सामने से आती हुई नववधू को देखा।

३. अशुद्ध	शुद्ध	नियम
१. अजी, बालका, मूषका, श्रीमता।	अजा, बालिका, मूषिका, श्रीमती।	१९४-१९६
२. मृगा, इन्द्रा, रुद्रा, भवा।	मृगी, इन्द्राणी, रुद्राणी, भवानी।	१९९-२००
३. पतिनी, श्वशुरी, विद्वानी।	पत्नी, श्वश्रूः, विदुषी।	२००

४. अभ्यास :—इन शब्दों के स्त्रीलिंग शब्द बनाओ—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अज, मृग, हंस, कोकिल, मूषक, तपस्विन्, मानिन्, मनोहारिन्, कुमार, किशोर, सुन्दर, इन्द्र, आचार्य, भव, रुद्र, पति, युवन्, श्वशुर, राजन्, विद्वस्।

५. वाक्य बनाओ :—ब्राह्मणी, पत्नी, तरुणी, सुन्दरी, आचार्या, आचार्यानी, विदुषी, श्वश्रूः, युवतिः, बुद्धिमती, गायिका, कनीयसी।

व्याकरण

आवश्यक निर्देश

१. जिन शब्दों और धातुओं के तुल्य अन्य शब्दों और धातुओं के रूप चलते हैं, उनके रूपों के सामने उनका संक्षिप्तरूप दिया गया है। संक्षिप्तरूप का भाव यह है कि उस प्रकार के सभी शब्दों या धातुओं के अन्त में वह अंश रहेगा। अतः उस प्रकार से चलनेवाले सभी शब्दों और धातुओं के अन्त में संक्षिप्तरूप चलाकर रूप बनाएँ। संक्षिप्तरूपों को शुद्ध स्मरण करलें।

२. शब्दों और धातुओं के रूप के साथ अभ्यासों की संख्याएँ दी गई हैं। उसका भाव यह है कि उस शब्द या धातु का प्रयोग उस अभ्यास में हुआ है और उस प्रकार से चलनेवाले शब्द या धातु भी उसी अभ्यास में दिये हुए हैं। संक्षिप्तरूप लगाकर उन शब्दों या धातुओं के रूप चलाइए।

३. संक्षेप के लिए निम्नलिखित संकेतों का उपयोग किया गया है :—

(क) शब्दरूपों में प्रथमा आदि के लिए उनके प्रथम अक्षर रखे गए हैं। जैसे—प्र० = प्रथमा, द्वि० = द्वितीया, तृ० = तृतीया, च० = चतुर्थी, पं० = पंचमी, ष० = षष्ठी, स० = सप्तमी, सं० = संबोधन।

(ख) पुं० = पुंलिंग, स्त्री० = स्त्रीलिंग, नपुं० = नपुंसक लिंग। एक० = एकवचन, द्वि० = द्विवचन, बहु० = बहुवचन। प्रत्येक शब्द या धातु के रूप में ऊपर से नीचे की ओर प्रथम पंक्ति एकवचन की है, दूसरी द्विवचन की और तीसरी बहुवचन की। जो शब्द किसी विशेष वचन में ही चलते हैं, उनमें उसी वचन के रूप हैं।

(ग) धातुरूपों में प्र० पु० या प्र० = प्रथम पुरुष (अन्यपुरुष), म० पु० या म० = मध्यमपुरुष, उ०पु० या उ० = उत्तमपुरुष। पर० या प० = परस्मैपद, आ० = आत्मनेपद, उ० = उभयपद।

४. सर्वनाम शब्दों का संबोधन नहीं होता, अतः उनके रूप संबोधन में नहीं होते।

५. संक्षिप्त रूपों में न् को ण् हो जाता है, यदि वह र् या ष् के बाद होता है। यदि र् या ष् के बाद और न् से पहले अट् (स्वर, ह य व र), कवर्ग, पवर्ग, आ, न्, बीच में हों तो भी न् को ण् हो जाएगा। संक्षिप्त रूपों में न् ही रखा गया है, वही सर्वसाधारण है। जैसे, राम का तृतीया एक० में एन, ष० बहु० में आनाम्। (देखो नियम १६)

(१) शब्दरूप-संग्रह (क)

(१) राम (राम) अकारान्त पुंलिंग शब्द			(१) राम (संक्षिप्त रूप) (देखो अभ्यास १, ५)			
रामः	रामौ	रामाः	प्र०	अः	औ	आः
रामम्	,,	रामान्	द्वि०	अम्	,,	आन्
रामेण	रामाभ्याम्	रामैः	तृ०	एन	आभ्याम्	ऐः
रामाय	,,	रामेभ्यः	च०	आय	,,	एभ्यः
रामात्	,,	,,	पं०	आत्	,,	,,
रामस्य	रामयोः	रामाणाम्	ष०	अस्य	अयोः	आनाम्
रामे	,,	रामेषु	स०	ए	,,	एषु
हे राम !	हे रामौ !	हे रामाः !	सं०	अ	औ	आः

(२) हरि (विष्णु) इकारान्त पुं०			(२) हरि (संक्षिप्त रूप) (देखो अभ्यास ८)			
हरिः	हरी	हरयः	प्र०	इः	ई	अयः
हरिम्	,,	हरीन्	द्वि०	इम्	,,	ईन्
हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः	तृ०	इना	इभ्याम्	इभिः
हरये	,,	हरिभ्यः	च०	अये	,,	इभ्यः
हरेः	,,	,,	पं०	एः	,,	,,
हरेः	हर्योः	हरीणाम्	ष०	एः	योः	ईनाम्
हरौ	,,	हरिषु	स०	औ	,,	इषु
हे हरे !	हे हरी !	हे हरयः !	सं०	ए	ई	अयः

(३) सखि (मित्र) इकारान्त पुं०			
सखा	सखायौ	सखायः	प्र०
सखायम्	,,	सखीन्	द्वि०
सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः	तृ०
सख्ये	,,	सखिभ्यः	च०
सख्युः	,,	,,	पं०
,,	सख्योः	सखीनाम्	ष०
सख्यौ	,,	सखिषु	स०
हे सखे !	हे सखायौ !	हे सखायः !	सं०

सूचना—

सखि शब्द के तुल्य और कोई शब्द नहीं चलता है। (देखो अभ्यास २५)

(४) गुरु (गुरु) उकारान्त पुं० — (४) गुरु (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ९)

गुरुः	गुरू	गुरवः	प्र०	उः	ऊ	अवः
गुरुम्	,,	गुरून्	द्वि०	उम्	,,	ऊन्
गुरुणा	गुरुभ्याम्	गुरुभिः	तृ०	उना	उभ्याम्	उभिः
गुरवे	,,	गुरुभ्यः	च०	अवे	,,	उभ्यः
गुरोः	,,	,,	पं०	ओः	,,	,,
,,	गुर्वोः	गुरूणाम्	ष०	,,	वोः	ऊनाम्
गुरौ	,,	गुरुषु	स०	औ	,,	उषु
हे गुरो !	हे गुरू !	हे गुरवः !	सं०	ओ	ऊ	अवः

(५) कर्तृ (करनेवाला) ऋकारान्त पुं० — (५) कर्तृ (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० २६)

कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः	प्र०	आ	आरौ	आरः
कर्तारम्	,,	कर्तॄन्	द्वि०	आरम्	,,	ॠन्
कर्त्रा	कर्तृभ्याम्	कर्तृभिः	तृ०	रा	ऋभ्याम्	ऋभिः
कर्त्रे	,,	कर्तृभ्यः	च०	रे	,,	ऋभ्यः
कर्तुः	,,	,,	पं०	उः	,,	,,
,,	कर्त्रोः	कर्तॄणाम्	ष०	,,	रोः	ॠणाम्
कर्तरि	,,	कर्तृषु	स०	अरि	,,	ऋषु
हे कर्तः !	हे कर्तारौ !	हे कर्तारः !	सं०	अः	आरौ	आरः

(६) पितृ (पिता) ऋकारान्त पुं० — (६) पितृ (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० २७)

पिता	पितरौ	पितरः	प्र०	आ	अरौ	अरः
पितरम्	,,	पितॄन्	द्वि०	अरम्	,,	ॠन्
पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः	तृ०	शेष कर्तृवत् (देखो शब्द ५)।		
पित्रे	,,	पितृभ्यः	च०			
पितुः	,,	,,	पं०			
,,	पित्रोः	पितॄणाम्	ष०			
पितरि	,,	पितृषु	स०			
हे पितः !	हे पितरौ !	हे पितरः	सं०			

(७) गो (गाय या बैल) ओकारान्त पुं०, स्त्री०

गौः	गावौ	गावः	प्र०
गाम्	,,	गाः	द्वि०
गवा	गोभ्याम्	गोभिः	तृ०
गवे	,,	गोभ्यः	च०
गोः	,,	,,	पं०
,,	गवोः	गवाम्	ष०
गवि	,,	गोषु	स०
हे गौः	हे गावौ	हे गावः	सं०

सूचना—

१. साधारणतया (द्यो शब्द को छोड़कर) अन्य कोई शब्द गो शब्द के तुल्य नहीं चलता। (देखो अभ्यास २८)।

२. गो शब्द बैल अर्थ में पुंलिंग है तथा गाय, वाणी और पृथ्वी अर्थ में स्त्रीलिंग है।

(८) भूभृत् (राजा, पर्वत) तकारान्त पुं० | (८) भूभृत् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३०)

भूभृत्	भूभृतौ	भूभृतः	प्र०	त्	तौ	तः
भूभृतम्	,,	,,	द्वि०	तम्	,,	,,
भूभृता	भूभृद्भ्याम्	भूभृद्भिः	तृ०	ता	द्भ्याम्	द्भिः
भूभृते	,,	भूभृद्भ्यः	च०	ते	,,	द्भ्यः
भूभृतः	,,	,,	पं०	तः	,,	,,
,,	भूभृतोः	भूभृताम्	ष०	,,	तोः	ताम्
भूभृति	भूभृतोः	भूभृत्सु	स०	ति	,,	त्सु
हे भूभृत्	हे भूभृतौ	हे भूभृतः	सं०	त्	तौ	तः

(९) भगवत् (भगवान्) तकारान्त पुं० | (९) भगवत् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० २९)

भगवान्	भगवन्तौ	भगवन्तः	प्र०	आन्	अन्तौ	अन्तः
भगवन्तम्	,,	भगवतः	द्वि०	अन्तम्	,,	अतः
भगवता	भगवद्भ्याम्	भगवद्भिः	तृ०	ता	द्भ्याम्	द्भिः
भगवते	,,	भगवद्भ्यः	च०	ते	,,	द्भ्यः
भगवतः	,,	,,	पं०	तः	,,	,,
,,	भगवतोः	भगवताम्	ष०	,,	तोः	ताम्
भगवति	,,	भगवत्सु	स०	ति	,,	त्सु
हे भगवन्!	हे भगवन्तौ!	हे भगवन्तः!	सं०	अन्	अन्तौ	अन्तः

सूचना—शतृप्रत्ययान्त पठत् आदि के प्र० एक० में आन् के स्थान पर अन् लगेगा, शेष पूर्ववत्।

(१०) करिन् (हाथी) इन्नन्त पुं० — (१०) करिन् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३१)

करी	करिणौ	करिणः	प्र०	ई	इनौ	इनः
करिणम्	,,	,,	द्वि०	इनम्	,,	,,
करिणा	करिभ्याम्	करिभिः	तृ०	इना	इभ्याम्	इभिः
करिणे	,,	करिभ्यः	च०	इने	,,	इभ्यः
करिणः	,,	,,	पं०	इनः	,,	,,
,,	करिणोः	करिणाम्	ष०	,,	इनोः	इनाम्
करिणि	,,	करिषु	स०	इनि	,,	इषु
हे करिन् !	हे करिणौ !	हे करिणः !	सं०	इन्	इनौ	इनः

(११) आत्मन् (आत्मा) अन्नन्त पुं० — (११) आत्मन् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३२)

आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः	प्र०	आ	आनौ	आनः
आत्मानम्	,,	आत्मनः	द्वि०	आनम्	,,	अनः
आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः	तृ०	अना	अभ्याम्	अभिः
आत्मने	,,	आत्मभ्यः	च०	अन	,,	अभ्यः
आत्मनः	,,	,,	पं०	अनः	,,	,,
,,	आत्मनोः	आत्मनाम्	ष०	,,	अनोः	अनाम्
आत्मनि	,,	आत्मसु	स०	अनि	,,	असु
हे आत्मन् !	हे आत्मानौ!	हे आत्मानः!	सं०	अन्	आनौ	आनः

(१२) राजन् (राजा) अन्नन्त पुं० — (१२) राजन् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३३) (सूचना—अन् भाग के स्थान पर। (देखो नियम ७५)

राजा	राजानौ	राजानः	प्र०	आ	आनौ	आनः
राजानम्	,,	राज्ञः	द्वि०	आनम्	,,	नः
राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः	तृ०	ना	अभ्याम्	अभिः
राज्ञे	,,	राजभ्यः	च०	ने	,,	अभ्यः
राज्ञः	,,	,,	पं०	नः	,,	,,
,,	राज्ञोः	राज्ञाम्	ष०	,,	नोः	नाम्
राज्ञि, राजनि	,,	राजसु	स०	नि, अनि	,,	असु
हे राजन् !	हे राजानौ!	हे राजानः !	सं०	अन्	आनौ	आनः

(१३) रमा (लक्ष्मी) आकारान्त स्त्री०			(१३) रमा (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३, ७)			
रमा	रमे	रमाः	प्र०	आ	ए	आः
रमाम्	,,	,,	द्वि०	आम्	,,	,,
रमया	रमाभ्याम्	रमाभिः	तृ०	अया	आभ्याम्	आभिः
रमायै	,,	रमाभ्यः	च०	आयै	,,	आभ्यः
रमायाः	,,	,,	पं०	आयाः	,,	,,
,,	रमयोः	रमाणाम्	ष०	,,	अयोः	आनाम्
रमायाम्	,,	रमासु	स०	आयाम्	,,	आसु
हे रमे	हे रमे	हे रमाः	सं०	ए	ए	आः

(१४) मति (बुद्धि) इकारान्त स्त्री०			(१४) मति (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३४)			
मतिः	मती	मतयः	प्र०	इः	ई	अयः
मतिम्	,,	मतीः	द्वि०	इम्	,,	ईः
मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः	तृ०	या	इभ्याम्	इभिः
मत्यै, मतये	,,	मतिभ्यः	च०	यै, अये	,,	इभ्यः
मत्याः, मतेः	,,	,,	पं०	याः, एः	,,	,,
,, ,,	मत्योः	मतीनाम्	ष०	,, ,,	योः	ईनाम्
मत्याम्, मतौ	,,	मतिषु	स०	याम्, औ	,,	इषु
हे मते	हे मती	हे मतयः	सं०	ए	ई	अयः

(१५) नदी (नदी) ईकारान्त स्त्री०			(१५) नदी (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३५)			
नदी	नद्यौ	नद्यः	प्र०	ई	यौ	यः
नदीम्	,,	नदीः	द्वि०	ईम्	,,	ईः
नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः	तृ०	या	ईभ्याम्	ईभिः
नद्यै	,,	नदीभ्यः	च०	यै	,,	ईभ्यः
नद्याः	,,	,,	पं०	याः	,,	,,
,,	नद्योः	नदीनाम्	ष०	,,	योः	ईनाम्
नद्याम्	,,	नदीषु	स०	याम्	,,	ईषु
हे नदि	हे नद्यौ	हे नद्यः	सं०	इ	यौ	यः

(१६) धेनु (गाय) उकारान्त स्त्री॰

धेनुः	धेनू	धेनवः
धेनुम्	,,	धेनूः
धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
धेन्वै, धेनवे	,,	धेनुभ्यः
धेन्वाः, धेनोः	,,	,,
,, ,,	धेन्वो	धेनूनाम्
धेन्वाम्, धेनौ	,,	धेनुषु
हे धेनो	हे धेनू	हे धेनवः

(१६) धेनु (संक्षिप्त रूप) (देखो अ॰ ३६)

प्र॰	उः	ऊ	अवः
द्वि॰	उम्	,,	ऊः
तृ॰	वा	उभ्याम्	उभिः
च॰	वै, अवे	,,	उभ्यः
पं॰	वाः, ओः	,,	,,
ष॰	,,	वोः	ऊनाम्
स॰	वाम्, औ	,,	उषु
सं॰	ओ	ऊ	अवः

(१७) वधू (बहू) ऊकारान्त स्त्री॰

वधूः	वध्वौ	वध्वः
वधूम्	,,	वधूः
वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
वध्वै	,,	वधूभ्यः
वध्वाः	,,	,,
,,	वध्वोः	वधूनाम्
वध्वाम्	,,	वधूषु
हे वधु	हे वध्वौ	हे वध्वः

(१७) वधू (संक्षिप्त रूप) (देखो अ॰ ३७)

प्र॰	ऊः	वौ	वः
द्वि॰	ऊम्	,,	ऊः
तृ॰	वा	ऊभ्याम्	ऊभिः
च॰	वै	,,	ऊभ्यः
पं॰	वाः	,,	,,
ष॰	,,	वोः	ऊनाम्
स॰	वाम्	,,	ऊषु
सं॰	उ	वौ	वः

(१८) वाच् (वाणी) चकारान्त स्त्री॰

वाक्-ग्	वाचौ	वाचः
वाचम्	,,	,,
वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
वाचे	,,	वाग्भ्यः
वाचः	,,	,,
,,	वाचोः	वाचाम्
वाचि	,,	वाक्षु
हे वाक्-ग्	हे वाचौ	हे वाचः

(१८) वाच् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ॰ ३८)

प्र॰	क्, ग्	चौ	चः
द्वि॰	चम्	,,	,,
तृ॰	चा	ग्भ्याम्	ग्भिः
च॰	चे	,,	ग्भ्यः
पं॰	चः	,,	,,
ष॰	,,	चोः	चाम्
स॰	चि	,,	क्षु
सं॰	क्, ग्	चौ	चः

(१९) सरित् (नदी) तकारान्त स्त्री० (१९) सरित् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ३९)

सरित्	सरितौ	सरितः	प्र०	त्	तौ	तः
सरितम्	,,	,,	द्वि०	तम्	,,	,,
सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः	तृ०	ता	द्भ्याम्	द्भिः
सरिते	,,	सरिद्भ्यः	च०	ते	,,	द्भ्यः
सरितः	,,	,,	पं०	तः	,,	,,
,,	सरितोः	सरिताम्	ष०	,,	तोः	ताम्
सरिति	,,	सरित्सु	स०	ति	,,	त्सु
हे सरित्	हे सरितौ	हे सरितः	सं०	त्	तौ	तः

(२०) गृह (घर) अकारान्त नपुं० (२०) गृह (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० २, ६)

गृहम्	गृहे	गृहाणि	प्र०	अम्	ए	आनि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
गृहेण	गृहाभ्याम्	गृहैः	तृ०	एन	आभ्याम्	ऐः
गृहाय	,,	गृहेभ्यः	च०	आय	,,	एभ्यः
गृहात्	,,	,,	पं०	आत्	,,	,,
गृहस्य	गृहयोः	गृहाणाम्	ष०	अस्य	अयोः	आनाम्
गृहे	,,	गृहेषु	स०	ए	,,	एषु
हे गृह	हे गृहे	हे गृहाणि	सं०	अ	ए	आनि

(२१) वारि (जल) इकारान्त नपुं० (२१) वारि (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ४०)

वारि	वारिणी	वारीणि	प्र०	इ	इनी	ईनि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः	तृ०	इना	इभ्याम्	इभिः
वारिणे	,,	वारिभ्यः	च०	इने	,,	इभ्यः
वारिणः	,,	,,	पं०	इनः	,,	,,
,,	वारिणोः	वारीणाम्	ष०	,,	इनोः	ईनाम्
वारिणि	,,	वारिषु	स०	इनि	,,	इषु
हे वारि, वारे	हे वारिणी	हे वारीणि	सं०	इ, ए	इनी	ईनि

(२२) दधि (दही) इकारान्त नपुं०				(२२) दधि (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ४१)		
दधि	दधिनी	दधीनि	प्र०	इ	इनी	ईनि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः	तृ०	ना	इभ्याम्	इभिः
दध्ने	,,	दधिभ्यः	च०	ने	,,	इभ्यः
दध्नः	,,	,,	पं०	नः	,,	,,
,,	दध्नोः	दध्नाम्	ष०	,,	नोः	नाम्
दध्नि, दधनि	,,	दधिषु	स०	नि, अनि	,,	इषु
हे दधि, दधे	दधिनी	दधीनि	सं०	इ, ए	इनी	ईनि

(२३) मधु (शहद) उकारान्त नपुं०				(२३) मधु (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ४२)		
मधु	मधुनी	मधूनि	प्र०	उ	उनी	ऊनि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः	तृ०	उना	उभ्याम्	उभिः
मधुने	,,	मधुभ्यः	च०	उने	,,	उभ्यः
मधुनः	,,	,,	पं०	उनः	,,	,,
,,	मधुनोः	मधूनाम्	ष०	,,	उनोः	ऊनाम्
मधुनि	,,	मधुषु	स०	उनि	,,	उषु
हे मधु, मधो	हे मधुनी	हे मधूनि	सं०	उ, ओ	उनी	ऊनि

(२४) पयस् (दूध, जल) असन्त नपुं०				(२४) पयस् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ४३)		
पयः	पयसी	पयांसि	प्र०	अः	असी	आंसि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
पयसा	पयोभ्याम्	पयोभिः	तृ०	असा	ओभ्याम्	ओभिः
पयसे	,,	पयोभ्यः	च०	असे	,,	ओभ्यः
पयसः	,,	,,	पं०	असः	,,	,,
,,	पयसोः	पयसाम्	ष०	,,	असोः	असाम्
पयसि	,,	पयस्सु, पयःसु	स०	असि	,,	अःसु, अस्सु
हे पयः	हे पयसी	हे पयांसि	सं०	अः	असी	आंसि

(२५) शर्मन् (सुख) अन्नन्त नपुं०			(२५) शर्मन (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ४४)			
शर्म	शर्मणी	शर्माणि	प्र०	अ	अनी	आनि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
शर्मणा	शर्मभ्याम्	शर्मभिः	तृ०	अना	अभ्याम्	अभिः
शर्मणे	,,	शर्मभ्यः	च०	अने	,,	अभ्यः
शर्मणः	,,	,,	पं०	अनः	,,	,,
,,	शर्मणोः	शर्मणाम्	ष०	,,	अनोः	अनाम्
शर्मणि	,,	शर्मसु	स०	अनि	,,	असु
हे शर्म, शर्मन्	हे शर्मणी	हे शर्माणि	सं०	अ, अन्	अनी	आनि

(२६) जगत् (संसार) तकारान्त नपुं०			(२६) जगत् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ४५)			
जगत्	जगती	जगन्ति	प्र०	अत्	अती	अन्ति
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः	तृ०	अता	अद्भ्याम्	अद्भिः
जगते	,,	जगद्भ्यः	च०	अते	,,	अद्भ्यः
जगतः	,,	,,	पं०	अतः	,,	,,
,,	जगतोः	जगताम्	ष०	,,	अतोः	अताम्
जगति	,,	जगत्सु	स०	अति	,,	अत्सु
हे जगत्	हे जगती	हे जगन्ति	सं०	अत्	अती	अन्ति

(२७) नामन् (नाम) अन्नन्त नपुं०			(२७) नामन् (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ४६)			
नाम	नाम्नी नामनी	नामानि	प्र०	अ	नी, अनी	आनि
,,	,, ,,	,,	द्वि०	,,	,, ,,	,,
नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः	तृ०	ना	अभ्याम्	अभिः
नाम्ने	,,	नामभ्यः	च०	ने	,,	अभ्यः
नाम्नः	,,	,,	पं०	नः	,,	,,
,,	नाम्नोः	नाम्नाम्	ष०	,,	नोः	नाम्
नाम्नि, नामनि	,,	नामसु	स०	नि, अनि	,,	असु
हे नाम, नामन्	हे नाम्नी, नामनी	हे नामानि	सं०	अ, अन्	अनी	आनि

(२८).(क) मनस् (मन) असन्त नपुं० (२८) (क) मनस् (संक्षिप्त रूप)
(देखो अ० ४७)

मनः	मनसी	मनांसि	प्र०	अः	असी	आंसि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
मनसा	मनोभ्याम्	मनोभिः	तृ०	असा	ओभ्याम्	ओभिः
मनसे	,,	मनोभ्यः	च०	असे	,,	ओभ्यः
मनसः	,,	,,	पं०	असः	,,	,,
,,	मनसोः	मनसाम्	ष०	,,	असोः	असाम्
मनसि	,,	मनःसु, स्सु	स०	असि	,,	अःसु, अस्सु
हे मनः	हे मनसी	हे मनांसि	सं०	अः	असी	आंसि

(२८) (ख) हविष् (हवि) इषन्त नपुं० (२८) (ख) हविष् (संक्षिप्त रूप)
(देखो अ० ४७)

हविः	हविषी	हवींषि	प्र०	इः	इषी	ईंषि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
हविषा	हविर्भ्याम्	हविर्भिः	तृ०	इषा	इर्भ्याम्	इर्भिः
हविषे	,,	हविर्भ्यः	च०	इषे	,,	इर्भ्यः
हविषः	,,	,,	पं०	इषः	,,	,,
,,	हविषोः	हविषाम्	ष०	,,	इषोः	इषाम्
हविषि	,,	हविःषु	स०	इषि	,,	इःषु
हे हविः	हे हविषी	हे हवींषि	सं०	इः	इषी	ईंषि

(२९) (क) सर्व (सब) सर्वनाम पुं० (२९) (क) सर्व (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० १०)

सर्वः	सर्वौ	सर्वे	प्र०	अः	औ	ए
सर्वम्	,,	सर्वान्	द्वि०	अम्	,,	आन्
सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः	तृ०	एन	आभ्याम्	ऐः
सर्वस्मै	,,	सर्वेभ्यः	च०	अस्मै	,,	एभ्यः
सर्वस्मात्	,,	,,	पं०	अस्मात्	,,	,,
सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्	ष०	अस्य	अयोः	एषाम्
सर्वस्मिन्	,,	सर्वेषु	स०	अस्मिन्	,,	एषु

(२९) (ख) सर्व (सब) (नपुं०) (२९) (ख) सर्व (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० ११)

सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि	प्र०	अम्	ए	आनि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	,,
सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः	तृ०	एन	आभ्याम्	ऐः

शेष पुंलिंग के तुल्य (देखो २९, क) शेष पुंलिंग के तुल्य (देखो २९, क)।

---

(२९) (ग) सर्वा (सब) स्त्रीलिंग (२९) (ग) सर्वा (संक्षिप्त रूप) (देखो अ० १२)

सर्वा	सर्वे	सर्वाः	प्र०	आ	ए	आः
सर्वाम्	,,	,,	द्वि०	आम्	,,	,,
सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः	तृ०	अया	आभ्याम्	आभिः
सर्वस्यै	,,	सर्वाभ्यः	च०	अस्यै	,,	आभ्यः
सर्वस्याः	,,	,,	पं०	अस्याः	,,	,,
,,	सर्वयोः	सर्वासाम्	ष०	,,	अयोः	आसाम्
सर्वस्याम्	,,	सर्वासु	स०	अस्याम्	,,	आसु

---

(३०) **पूर्व (प्रथम, पूर्व)** (देखो अ० १०–१२)

सूचना—पूर्व के तीनों लिंगों में रूप सर्व के तुल्य चलेंगे। देखो उपर्युक्त २९, क, ख, ग (संक्षिप्त रूप लगाओ)।

---

(३१) **तत् (वह)** (देखो अ० १०–१२

(क) पुंलिंग—सः तौ ते प्र०
तम् ,, तान् द्वि०
शेष सर्व (पुंलिंग) के तुल्य।

(ख) नपुं०—तत् ते तानि प्र०
,, ,, द्वि०
शेष सर्व (नपुं०) के तुल्य।

(ग) स्त्री०—सा ते ताः प्र०
ताम् ,, द्वि०
शेष सर्व (स्त्री०) के तुल्य।

सूचना—तीनों लिंगों में नपुं० एक० को छोड़कर सर्वत्र तत् का 'त' ही शेष रहता है, उसी के रूप चलेंगे।

(३२) **एतत् (यह)** (देखो अ० १०–१२)

(क) पुंलिंग—एषः एतौ एते प्र०
शेष सर्व या तत् (पुंलिंग) के तुल्य।

(ख) नपुं०—एतत् एते एतानि प्र०
,, ,, ,, द्वि०
शेष सर्व या तत् (नपुं०) के तुल्य।

(ग) स्त्री०—एषा एते एताः प्र०
शेष सर्व (स्त्री०) के तुल्य।

सूचना—शेष स्थानों पर 'एत' के रूप चलेंगे।

(३३) यत् (जो) (देखो अ० १०–१२)

(क) पुंलिंग—यः यौ ये प्र०
यम् ,, यान् द्वि०
शेष सर्व (पुं०) के तुल्य।

(ख) नपुं०—यत् ये यानि प्र०
,, ,, ,, द्वि०
शेष सर्व (नपुं०) के तुल्य।

(ग) स्त्री०—या ये याः प्र०
याम् ,, ,, द्वि०
शेष सर्व (स्त्री०) के तुल्य।

सूचना—शेष स्थानों पर 'य' के रूप होंगे।

(३४) किम् (कौन) (देखो अ० १०–१२)

(क) पुं०—कः कौ के प्र०
कम् ,, कान् द्वि०
शेष सर्व (पुं०) के तुल्य।

(ख) नपुं०—किम् के कानि प्र०
,, ,, ,, द्वि०
शेष सर्व (नपुं०) के तुल्य।

(ग) स्त्री०—का के काः प्र०
काम् ,, ,, द्वि०
शेष सर्व (स्त्री०) के तुल्य।

सूचना—शेष स्थानों पर 'क' के रूप चलेंगे।

---

(३५) युष्मद् (तू) (देखो० अ० १६)

त्वम्	युवाम्	यूयम्	प्र०
त्वाम् त्वा	,, वाम्	युष्मान् वः	द्वि०
त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः	तृ०
तुभ्यम् ते	,, वाम्	युष्मभ्यम् वः	च०
त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्	पं०
तव ते	युवयोः वाम्	युष्माकम् वः	ष०
त्वयि	युवयोः	युष्मासु	स०

(३६) अस्मद् (मैं) (देखो अ० १७)

प्र०	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वि०	माम् मा	,, नौ	अस्मान् नः
तृ०	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
च०	मह्यम् मे	,, नौ	अस्मभ्यम् नः
पं०	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
ष०	मम मे	आवयोः नौ	अस्माकम् नः
स०	मयि	आवयोः	अस्मासु

---

(३७) (क) इदम् (यह) (पुं०) (देखो अ० १३)

अयम्	इमौ	इमे	प्र०
इमम्	,,	इमान्	द्वि०
अनेन	आभ्याम्	एभिः	तृ०
अस्मै	,,	एभ्यः	च०
अस्मात्	,,	,,	पं०
अस्य	अनयोः	एषाम्	ष०
अस्मिन्	,,	एषु	स०

(३७) (ख) इदम् (यह) नपुं० (देखो अ० १४)

प्र०	इदम्	इमे	इमानि
द्वि०	,,	,,	,,
तृ०	अनेन	आभ्याम्	एभिः
च०	अस्मै	,,	एभ्यः
पं०	अस्मात्	,,	,,
ष०	अस्य	अनयोः	एषाम्
स०	अस्मिन्	,,	एषु

(३७) (ग) इदम् (स्त्री०) (देखो अ० १५) (३८) (क) अदस् (वह) पुं० (देखो अ० १३)

इयम्	इमे	इमाः	प्र०	असौ	अमू	अमी
इमाम्	,,	,,	द्वि०	अमुम्	,,	अमून्
अनया	आभ्याम्	आभिः	तृ०	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
अस्यै	,,	आभ्यः	च०	अमुष्मै	,,	अमीभ्यः
अस्याः	,,	,,	पं०	अमुष्मात्	,,	,,
,,	अनयोः	आसाम्	ष०	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
अस्याम्	,,	आसु	स०	अमुष्मिन्	,,	अमीषु

(३८) (ख) अदस् नपुं० (देखो अ० १४) (३८) (ग) अदस् स्त्री० (देखो अ० १५)

अदः	अमू	अमूनि	प्र०	असौ	अमू	अमूः
,,	,,	,,	द्वि०	अमुम्	,,	,,
अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः	तृ०	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
अमुष्मै	,,	अमीभ्यः	च०	अमुष्यै	,,	अमूभ्यः
अमुष्मात्	,,	,,	पं०	अमुष्याः	,,	,,
अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्	ष०	,,	अमुयोः	अमूषाम्
अमुष्मिन्	,,	अमीषु	स०	अमुष्याम्	,,	अमूषु

(३९) एक (एक) (देखो अ० १८) (४०) द्वि (दो) (देखो अ० १९)

पुंलिंग	नपुंसक०	स्त्रीलिंग		पुंलिंग	नपुं० स्त्री०
एकः	एकम्	एका	प्र०	द्वौ	द्वे
एकम्	,,	एकाम्	द्वि०	,,	,,
एकेन	एकेन	एकया	तृ०	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
एकस्मै	एकस्मै	एकस्यै	च०	,,	,,
एकस्मात्	एकस्मात्	एकस्याः	पं०	,,	,,
एकस्य	एकस्य	,,	ष०	द्वयोः	द्वयोः
एकस्मिन्	एकस्मिन्	एकस्याम्	स०	,,	,,

सूचना—केवल एकवचन में रूप चलते हैं। **सूचना**—केवल द्विवचन में रूप चलेंगे।

(४१) **त्रि (तीन)** (देखो अ० २०) (४२) **चतुर् (चार)** (देखो अ० २१)

पुं०	नपुं०	स्त्री०		पुं०	नपुं०	स्त्री०
त्रयः	त्रीणि	तिस्रः	प्र०	चत्वारः	चत्वारि	चतस्रः
त्रीन्	,,	,,	द्वि०	चतुरः	,,	,,
त्रिभिः	त्रिभिः	तिसृभिः	तृ०	चतुर्भिः	चतुर्भिः	चतसृभिः
त्रिभ्यः	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	च०	चतुर्भ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः
,,	,,	,,	पं०	,,	,,	,,
त्रयाणाम्	त्रयाणाम्	तिसृणाम्	ष०	चतुर्णाम्	चतुर्णाम्	चतसृणाम्
त्रिषु	त्रिषु	तिसृषु	स०	चतुर्षु	चतुर्षु	चतसृषु

सूचना—३ से १८ तक की संख्याओं के रूप केवल बहुवचन में ही चलते हैं।

---

(४३) **पञ्चन् (पाँच)** (४४) **षष् (छः)** (४५) **सप्तन् (सात)** (४६) **अष्टन् (आठ)**

	पञ्चन्	षष्	सप्तन्	अष्टन्	अष्टन्
प्र०	पञ्च	षट्	सप्त	अष्ट	अष्टौ
द्वि०	पञ्च	,,	,,	,,	,,
तृ०	पञ्चभिः	षड्भिः	सप्तभिः	अष्टभिः	अष्टाभिः
च०	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः	अष्टभ्यः	अष्टाभ्यः
पं०	,,	,,	,,	,,	,,
ष०	पञ्चानाम्	षण्णाम्	सप्तानाम्	अष्टानाम्	अष्टानाम्
स०	पञ्चसु	षट्सु	सप्तसु	अष्टसु	अष्टासु

---

(४७) **नवन् (नौ)** (४८) **दशन् (दस)** (४९) **कति (कितने)** (५०) **उभ (दोनों)**

	नवन्	दशन्	कति	उभ पुं०	उभ नपुं०, स्त्री०
प्र०	नव	दश	कति	उभौ	उभे
द्वि०	,,	,,	,,	,,	,,
तृ०	नवभिः	दशभिः	कतिभिः	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
च०	नवभ्यः	दशभ्यः	कतिभ्यः	,,	,,
पं०	,,	,,	,,	,,	,,
ष०	नवानाम्	दशानाम्	कतीनाम्	उभयोः	उभयोः
स०	नवसु	दशसु	कतिषु	,,	,,

सूचना—पञ्चन् से दशन् तक के लिए देखो अभ्यास २२।

शब्दरूप-संग्रह (ख)

(५१) पति (पति) इकारान्त पुं० | **(५३) विद्वस् (विद्वान्)** सकारान्त पुं०

पतिः	पती	पतयः	प्र०	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
पतिम्	,,	पतीन्	द्वि०	विद्वांसम्	,,	विदुषः
पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः	तृ०	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
पत्ये	,,	पतिभ्यः	च०	विदुषे	,,	विद्वद्भ्यः
पत्युः	,,	,,	पं०	विदुषः	,,	,,
,,	पत्योः	पतीनाम्	ष०	,,	विदुषोः	विदुषाम्
पत्यौ	,,	पतिषु	स०	विदुषि	,,	विद्वत्सु
हे पते	हे पती	हे पतयः	सं०	हे विद्वन्	हे विद्वांसौ	हे विद्वांसः

(५२) भूपति (राजा) शब्द के रूप पूरे हरि (देखो शब्द सं० २) के तुल्य चलेंगे।

(५४) चन्द्रमस् (चन्द्रमा) सकारान्त पुं० | **(५५) श्वन् (कुत्ता)** नकारान्त पुं०

चन्द्रमाः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः	प्र०	श्वा	श्वानौ	श्वानः
चन्द्रमसम्	,,	,,	द्वि०	श्वानम्	,,	शुनः
चन्द्रमसा	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभिः	तृ०	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
चन्द्रमसे	,,	चन्द्रमोभ्यः	च०	शुने	,,	श्वभ्यः
चन्द्रमसः	,,	,,	पं०	शुनः	,,	,,
,,	चन्द्रमसोः	चन्द्रमसाम्	ष०	,,	शुनोः	शुनाम्
चन्द्रमसि	,,	चन्द्रमस्सु	स०	शुनि	,,	श्वसु
हे चन्द्रमः	हे चन्द्रमसौ	हे चन्द्रमसः	सं०	हे श्वन्	हे श्वानौ	हे श्वानः

(५६) युवन् (युवक) पुं० (श्वन् के तुल्य रूप) | **(५७) लक्ष्मी (लक्ष्मी)** ईकारान्त स्त्रीलिंग

युवा	युवानौ	युवानः	प्र०	लक्ष्मीः	लक्ष्म्यौ	लक्ष्म्यः
युवानम्	,,	यूनः	द्वि०	लक्ष्मीम्	,,	लक्ष्मीः
यूना	युवभ्याम्	युवभिः	तृ०	लक्ष्म्या	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभिः
यूने	,,	युवभ्यः	च०	लक्ष्म्यै	,,	लक्ष्मीभ्यः
यूनः	,,	,,	पं०	लक्ष्म्याः	,,	लक्ष्मीभ्यः
,,	यूनोः	यूनाम्	ष०	,,	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीणाम्
यूनि	,,	युवसु	स०	लक्ष्म्याम्	,,	लक्ष्मीषु
हे युवन्	हे युवानौ	हे युवानः	सं०	हे लक्ष्मि	हे लक्ष्म्यौ	हे लक्ष्म्यः

(५८) स्त्री (स्त्री) ईकारान्त स्त्री०

स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः	प्र०
स्त्रियम्, स्त्रीम्	,,	,, स्त्रीः	द्वि०
स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः	तृ०
स्त्रियै	,,	स्त्रीभ्यः	च०
स्त्रियाः	,,	,,	पं०
,,	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्	ष०
स्त्रियाम्	,,	स्त्रीषु	स०
हे स्त्रि	हे स्त्रियौ	हे स्त्रियः	सं०

(५९) श्री (लक्ष्मी) ईकारान्त स्त्री०

श्रीः	श्रियौ	श्रियः
श्रियम्	,,	,,
श्रिया	श्रीभ्याम्	श्रीभिः
श्रियै, श्रिये	,,	श्रीभ्यः
श्रियाः, श्रियः	,,	,,
,, ,,	श्रियोः	श्रीणाम्, श्रियाम्
श्रियाम्, श्रियि	श्रियोः	श्रीषु
हे श्रीः	हे श्रियौ	हे श्रियः

(६०) धनुष् (धनुष) षकारान्त नपुं०

धनुः	धनुषी	धनूंषि	प्र०
,,	,,	,,	द्वि०
धनुषा	धनुर्भ्याम्	धनुर्भिः	तृ०
धनुषे	,,	धनुर्भ्यः	च०
धनुषः	,,	,,	पं०
,,	धनुषोः	धनुषाम्	ष०
धनुषि	,,	धनुष्षु	स०
हे धनुः	हे धनुषी	हे धनूंषि	सं०

(६१) ब्रह्मन् (ब्रह्म, वेद) नपुं०

ब्रह्म	ब्रह्मणी	ब्रह्माणि	प्र०
,,	,,	,,	द्वि०
ब्रह्मणा	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभिः	तृ०
ब्रह्मणे	,,	ब्रह्मभ्यः	च०
ब्रह्मणः	,,	,,	पं०
,,	ब्रह्मणोः	ब्रह्मणाम्	ष०
ब्रह्मणि	,,	ब्रह्मसु	स०
हे ब्रह्म, ब्रह्मन्	हे ब्रह्मणी	हे ब्रह्माणि	सं०

(६२) अप् (जल) स्त्रीलिंग

सूचना—अप् शब्द के रूप केवल बहुवचन में ही चलते हैं। प्रथमा आदि के रूप क्रमशः ये हैं—आपः, अपः, अद्भिः, अद्भ्यः, अद्भ्यः अपाम्, अप्सु, हे आपः।

(६३) भवत् (आप) सर्वनाम पुं०

भवान्	भवन्तौ	भवन्तः
भवन्तम्	,,	भवतः
भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः
भवते	,,	भवद्भ्यः
भवतः	,,	,,
,,	भवतोः	भवताम्
भवति	,,	भवत्सु
हे भवन्	हे भवन्तौ	हे भवन्तः

सूचना—भवत् शब्द के रूप पुंलिंग में भगवत् (शब्द सं० ९) के तुल्य चलते हैं। स्त्रीलिंग में ई अन्त में लगाकर 'भवती' शब्द के रूप नदी (शब्द सं० १५) के तुल्य चलेंगे। नपुंसक में रूप प्रायः नहीं चलता।

(६४) यावत् (जितना) सर्वनाम

सूचना—यावत् शब्द के रूप तीनों लिंगों में चलते हैं। संबोधन नहीं होगा। पुंलिंग में भवत् (शब्द सं० ६३) के तुल्य, स्त्रीलिंग में ई लगाकर यावती के रूप नदी (शब्द सं० १५) के तुल्य और नपुंसक लिंग में जगत् (शब्द सं० २६) के तुल्य चलेंगे।

(२) संख्याएँ

१ एकः, एकम्, एका
२ द्वौ, द्वे, द्वे,
३ त्रयः, त्रीणि, तिस्रः
४ चत्वारः, चत्वारि, चतस्रः
५ पञ्च
६ षट्
७ सप्त
८ अष्ट, अष्टौ
९ नव
१० दश
११ एकादश
१२ द्वादश
१३ त्रयोदश
१४ चतुर्दश
१५ पञ्चदश
१६ षोडश
१७ सप्तदश
१८ अष्टादश
१९ नवदश एकोनविंशतिः
२० विंशतिः
२१ एकविंशतिः
२२ द्वाविंशतिः
२३ त्रयोविंशतिः
२४ चतुर्विंशतिः
२५ पञ्चविंशतिः
२६ षड्विंशतिः
२७ सप्तविंशतिः
२८ अष्टाविंशतिः
२९ नवविंशतिः, एकोनत्रिंशत्
३० त्रिंशत्
३१ एकत्रिंशत्
३२ द्वात्रिंशत्
३३ त्रयस्त्रिंशत्
३४ चतुस्त्रिंशत्
३५ पञ्चत्रिंशत्
३६ षट्त्रिंशत्
३७ सप्तत्रिंशत्
३८ अष्टात्रिंशत्
३९ नवत्रिंशत्, एकोनचत्वारिंशत्
४० चत्वारिंशत्
४१ एकचत्वारिंशत्
४२ द्विचत्वारिंशत्, द्वाचत्वारिंशत्
४३ त्रिचत्वारिंशत्, त्रयश्चत्वारिंशत्
४४ चतुश्चत्वारिंशत्
४५ पञ्चचत्वारिंशत्
४६ षट्चत्वारिंशत्
४७ सप्तचत्वारिंशत्
४८ अष्टचत्वारिंशत्, अष्टाचत्वारिंशत्
४९ नवचत्वारिंशत्, एकोनपञ्चाशत्
५० पञ्चाशत्
५१ एकपञ्चाशत्
५२ द्विपञ्चाशत् द्वापञ्चाशत्
५३ त्रिपञ्चाशत् त्रयःपञ्चाशत्
५४ चतुःपञ्चाशत्
५५ पञ्चपञ्चाशत्
५६ षट्पञ्चाशत्
५७ सप्तपञ्चाशत्
५८ अष्टपञ्चाशत्, अष्टापञ्चाशत्
५९ नवपञ्चाशत्, एकोनषष्टिः
६० षष्टिः
६१ एकषष्टिः
६२ द्विषष्टिः, द्वाषष्टिः
६३ त्रिषष्टिः त्रयःषष्टिः
६४ चतुःषष्टिः
६५ पञ्चषष्टिः
६६ षट्षष्टिः
६७ सप्तषष्टिः
६८ अष्टषष्टिः, अष्टाषष्टिः
६९ नवषष्टिः, एकोनसप्ततिः
७० सप्ततिः
७१ एकसप्ततिः
७२ द्विसप्ततिः, द्वासप्ततिः
७३ त्रिसप्ततिः, त्रयःसप्ततिः
७४ चतुः सप्ततिः
७५ पञ्चसप्ततिः
७६ षट्सप्ततिः
७७ सप्तसप्ततिः
७८ अष्टसप्ततिः, अष्टासप्ततिः

७९ नवसप्ततिः, एकोनाशीतिः
८० अशीतिः
८१ एकाशीतिः
८२ द्व्यशीतिः
८३ त्र्यशीतिः
८४ चतुरशीतिः
८५ पञ्चाशीतिः
८६ षडशीतिः
८७ सप्ताशीतिः
८८ अष्टाशीतिः
८९ नवाशीतिः, एकोननवतिः
९० नवतिः
९१ एकनवतिः
९२ द्विनवतिः, द्वानवतिः
९३ त्रिनवतिः, त्रयोनवतिः
९४ चतुर्नवतिः
९५ पञ्चनवतिः
९६ षण्णवतिः
९७ सप्तनवतिः
९८ अष्टनवतिः, अष्टानवतिः
९९ नवनवतिः, एकोनशतम्
१०० शतम्

१ हजार—सहस्रम् । १० हजार—अयुतम् । १ लाख—लक्षम् । १० लाख—नियुतम्, प्रयुतम् । १ करोड़—कोटिः । १० करोड़—दशकोटिः । १ अरब—अर्बुदम् । १० अरब—दशार्बुदम् । १ खरब—खर्वम् । १० खरब—दशखर्वम् । १ नील—नीलम् । १० नील—दशनीलम् । १ पद्म—पद्मम् । १० पद्म—दशपद्मम् । १ शंख—शंखम् । १० शंख—दशशंखम् । महाशंख—महाशंखम् ।

सूचना—१. (क) १०१ आदि संख्याओं के लिए अधिक शब्द लगाकर संख्या शब्द बनावें । जैसे—१०१ एकाधिकं शतम् । १०२ द्व्यधिकं शतम् आदि । (ख) २०० आदि के लिए दो आदि संख्यावाचक शब्द पहले रखकर बाद में 'शती' रखें, या शत पहले रखकर द्वयम्, त्रयम् आदि रखें । जैसे—२०० द्विशती, शतद्वयम् । ३०० त्रिशती, शतत्रयम्, ४०० चतुःशती, ५०० पञ्चशती, ६०० षट्शती, ७०० सप्तशती (हिन्दी—सतसई) आदि ।

२. त्रि (३) से लेकर अष्टादशन् (१८) तक सारे शब्दों के रूप केवल बहुवचन में चलते हैं । दशन् से अष्टादशन् तक दशन् के तुल्य ।

३. एकोनविंशति से नवविंशति तक सारे शब्द एकवचनान्त स्त्रीलिंग हैं । इनके रूप एकवचन में ही चलते हैं । इकारान्त विंशति, षष्टि, सप्तति, अशीति, नवति तथा जिसके अन्त में ये हों उनके रूप मति के तुल्य चलेंगे । तकारान्त त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत् के रूप सरित् (शब्द सं० १९) के तुल्य चलेंगे ।

४. शतम्, सहस्रम्, अयुतम्, लक्षम्, नियुतम्, प्रयुतम् आदि शब्द सदा एकवचनान्त नपुंसक हैं । गृहवत् एक० में रूप चलेंगे । कोटि के मतिवत् ।

५. संख्येय शब्द (प्रथम, द्वितीय आदि) बनाने के लिए अभ्यास २३ का व्याकरण देखो ।

(३) धातुरूप-संग्रह

आवश्यक निर्देश

(१) संस्कृत की सारी धातुओं को १० विभागों में बाँटा गया है। उन्हें 'गण' कहते हैं, अतः १० गण हैं। धातु और तिङ् (ति, तः, अन्ति आदि) प्रत्यय के बीच में होनेवाले अ, उ, न आदि को 'विकरण' कहते हैं। इनके आधार पर ही ये गण बनाये गये हैं। ये विकरण लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में ही होते हैं, लृट् आदि अन्य लकारों में नहीं। अतः गण के कारण अन्तर भी लट् आदि चार लकारों में ही होते हैं।

(२) १० गणों की मुख्य विशेषताएँ और लृट् आदि लकारों के संक्षिप्त रूप आगे पृष्ठ १४२–१४४ पर दिये गये हैं। उनको सावधानी से स्मरण कर लें। लृट् आदि में सभी धातुओं में वे संक्षिप्त रूप लगेंगे। उन्हें लगाकर लृट् आदि के रूप चलावें।

(३) प्रत्येक गण में तीन प्रकार की धातुएँ होती हैं। इनके नाम और पहचान ये हैं—(क) परस्मैपदी (ति, तः आदि), (ख) आत्मनेपदी (ते, एते आदि), (ग) उभयपदी (दोनों प्रकार के रूप)।

(४) पुस्तक में प्रयुक्त सभी धातुओं के पाँच लकारों के रूप आकारादि-क्रम से 'संक्षिप्त धातुकोष' में दिये गये हैं। (पृष्ठ १९०–२००)। संक्षिप्त रूप अन्त में लगाकर उनके रूप चलावें।

संक्षिप्तरूप (भ्वादिगण)

परस्मैपद				आत्मनेपद		
लट्				लट्		
अति	अतः	अन्ति	प्र०पु०	अते	एते	अन्ते
असि	अथः	अथ	म०पु०	असे	एथे	अध्वे
आमि	आवः	आमः	उ०पु०	ए	आवहे	आमहे
लोट्				लोट्		
अतु	अताम्	अन्तु	प्र०पु०	अताम्	एताम्	अन्ताम्
अ	अतम्	अत	म०पु०	अस्व	एथाम्	अध्वम्
आनि	आव	आम	उ०पु०	ऐ	आवहै	आमहै
लङ् (धातु से पहले अ या आ लगेगा)				लङ् (धातु से पहले अ या आ लगेगा)		
अत्	अताम्	अन्	प्र०पु०	अत	एताम्	अन्त
अः	अतम्	अत	म०पु०	अथाः	एथाम्	अध्वम्
अम्	आव	आम	उ०पु०	ए	आवहि	आमहि
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
एत्	एताम्	एयुः	प्र०पु०	एत	एयाताम्	एरन्
एः	एतम्	एत	म०पु०	एथाः	एयाथाम्	एध्वम्
एयम्	एव	एम	उ०पु०	एय	एवहि	एमहि

१० गणों की मुख्य विशेषताएँ

सूचना—लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् इन चार लकारों में ही विकरण लगते हैं।

सं०	गण-नाम	विकरण	मुख्य विशेषताएँ
१	भ्वादिगण	शप् (अ)	(१) लट् आदि में धातु और प्रत्यय के बीच में 'अ' लगेगा। (२) धातु के अन्तिम स्वर को गुण होगा अर्थात् इ ई को ए, उ ऊ को ओ, ऋ ॠ को अर् होगा। धातु के अन्तिम अक्षर से पूर्व इ को ए, उ को ओ, ऋ को अर् होगा। (३) गुण होने के बाद धातु के अन्तिम ए को अय् और ओ को अव् हो जाता है।
२	अदादिगण	शप् का लोप	(१) धातु और प्रत्यय के बीच में कोई विकरण नहीं लगेगा। धातु में केवल तिः तः आदि लगेंगे। (२) लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में धातु को एक वचन में गुण होता है, अन्यत्र नहीं।
३	जुहोत्यादिगण	(विकरण कुछ नहीं)	(१) धातु और प्रत्यय के बीच में लट् आदि में कोई विकरण नहीं लगता। (२) लट् आदि में धातु को द्वित्व होगा। (३) लट् आदि में धातु को एक० में गुण होता है, अन्यत्र नहीं।
४	दिवादिगण	श्यन् (य)	(१) धातु और प्रत्यय के बीच में लट् आदि में 'य' लगता है। (२) धातु को लट् आदि में गुण नहीं होता। (३) लृट् आदि में गुण होता है।
५	स्वादिगण	श्नु (नु)	(१) लट् आदि में धातु और प्रत्यय के बीच में 'नु' लगता है। (२) धातु को गुण नहीं होता। (३) नु को पर० एक० में प्रायः 'नो' होता है।
६	तुदादिगण	श (अ)	(१) लट् आदि में धातु और प्रत्यय के बीच में 'अ' लगता है। (२) लट् आदि में धातु को गुण नहीं होता। (३) लृट् आदि में धातु को गुण होगा।
७	रुधादिगण	श्नम् (न)	(१) लट् आदि में धातु के प्रथम स्वर के बाद 'न' लगता है। (२) इस न को भी कभी न् हो जाता है। (३) लट् आदि में धातु को गुण नहीं होता।
८	तनादिगण	उ	(१) लट् आदि में धातु और प्रत्यय के बीच में 'उ' लगता है। (२) इस उ को एक० आदि में ओ हो जाता है।
९	क्र्यादिगण	श्ना (ना)	(१) लट् आदि में धातु और प्रत्यय के बीच में 'ना' विकरण लगता है। (२) इसको कभी नी और कभी न् हो जाता है। (३) धातु को गुण नहीं होता। (४) परस्मैपद लोट् म०पु० एक० में व्यंजनान्त धातुओं में 'हि' के स्थान पर 'आन' लगता है।
१०	चुरादिगण	णिच् (अय)	(१) सभी लकारों में धातु के बाद णिच् (अय) लगता है। (२) धातु के अन्तिम इ ई को ऐ, उ ऊ को औ, ऋ ॠ को आर् वृद्धि होती है। उपधा के अ को आ, इ को ए, उ को ओ और ऋ को अर् होता है। (३) कथ्, गण्, रच्, आदि कुछ धातुओं में उपधा के अ को आ नहीं होता।

ऌट् आदि लकारों के संक्षिप्त रूप

(१) १० लकारों के नाम और अर्थ पृष्ठ १ पर आवश्यक निर्देश में दिये गये हैं। वहाँ देखें।

(२) धातुरूपों में लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्, लिट् और लुङ् इन ६ लकारों के पूरे रूप दिये हैं। ऌट्, लुट, आशीर्लिङ् और ऌङ् इन चारों लकारों के केवल प्रारम्भिक रूप दिये गये हैं। इन चार लकारों में सभी गणों में एक ढंग से ही रूप चलते हैं। अतः इनके संक्षिप्त रूप स्मरण करने से सभी धातुओं के इन लकारों में रूप स्वयं सरलता से चलाये जा सकते हैं। उदाहरणार्थ भू और सेव् धातु के दसों लकारों के रूप दिये गये हैं।

(३) सूचना—सेट् धातुओं में कोष्ठ में निर्दिष्ट इ लगेगा, अनिट् में नहीं। सेट् और अनिट् का विवरण पृ० २०० पर दिया गया है। इ के बाद स् को ष् हो जाएगा।

संक्षिप्त रूप

परस्मैपद				आत्मनेपद		
ऌट् (सेट् में इ लगेगा)				ऌट् (सेट् में इ लगेगा)		
(इ) स्यति	(इ) स्यतः	(इ) स्यन्ति	प्र०	(इ) स्यते	(इ) स्येते	(इ) स्यन्ते
(इ) स्यसि	(इ) स्यथः	(इ) स्यथ	म०	(इ) स्यसे	(इ) स्येथे	(इ) स्यध्वे
(इ) स्यामि	(इ) स्यावः	(इ) स्यामः	उ०	(इ) स्ये	(इ) स्यावहे	(इ) स्यामहे
लुट् (सेट् में इ लगेगा)				लुट् (सेट् में इ लगेगा)		
(इ) ता	(इ) तारौ	(इ) तारः	प्र०	(इ) ता	(इ) तारौ	(इ) तारः
(इ) तासि	(इ) तास्थः	(इ) तास्थ	म०	(इ) तासे	(इ) तासाथे	(इ) ताध्वे
(इ) तास्मि	(इ) तास्वः	(इ) तास्मः	उ०	(इ) ताहे	(इ) तास्वहे	(इ) तास्महे
आशीर्लिङ्				आशीर्लिङ् (सेट् में इ लगेगा)		
यात्	यास्ताम्	यासुः	प्र०	(इ) सीष्ट	(इ) सीयास्ताम्	(इ) सीरन्
याः	यास्तम्	यास्त	म०	(इ) सीष्ठाः	(इ) सीयास्थाम्	(इ) सीध्वम्
यासम्	यास्व	यास्म	उ०	(इ) सीय	(इ) सीवहि	(इ) सीमहि
ऌङ् (धातु से पहले अ। सेट् में इ)				ऌङ् (धातु से पहले अ। सेट् में इ)		
(इ) स्यत्	(इ) स्यताम्	(इ) स्यन्	प्र०	(इ) स्यत	(इ) स्येताम्	(इ) स्यन्त
(इ) स्यः	(इ) स्यतम्	(इ) स्यत	म०	(इ) स्यथाः	(इ) स्येथाम्	(इ) स्यध्वम्
(इ) स्यम्	(इ) स्याव	(इ) स्याम	उ०	(इ) स्ये	(इ) स्यावहि	(इ)स्यामहि
लिट् (सेट् में इ लगेगा)				लिट् (सेट् में इ लगेगा)		
अ	अतुः	उः	प्र०	ए	आते	इरे
(इ) थ	अथुः	अ	म०	(इ) से	आथे	(इ) ध्वे
अ	(इ) व	(इ) म	उ०	ए	(इ) वहे	(इ) महे

लुङ् के संक्षिप्त रूप

सूचना—लुङ् लकार सात प्रकार का होता है, अतः उसके ७ भेद हैं। प्रत्येक भेद के संक्षिप्त रूप नीचे दिये हैं। आगे धातुरूपों में लुङ् के आगे संख्या से इसका निर्देश किया गया है कि वह लुङ् का कौन-सा भेद है।

लुङ् (१. स्-लोप वाला भेद) परस्मैपद | **लुङ् (१. स्-लोपवाला भेद)** आ० पद

त्	ताम्	उः (अन्)	प्र०पु०	**सूचना**—यह भेद आत्मनेपद में नहीं होता।
:	तम्	त	म०पु०	
अम्	व	म	उ०पु०	

(२. अ-वाला भेद) परस्मैपद | **(२. अ-वाला भेद)** आ० पद

अत्	अताम्	अन्	प्र०पु०	अत	एताम्	अन्त
अः	अतम्	अत	म०पु०	अथाः	एथाम्	अध्वम्
अम्	आव	आम	उ०पु०	ए	आवहि	आमहि

(३. द्वित्व-वाला भेद) | **(३. द्वित्व-वाला भेद)**

अत्	अताम्	अन्	प्र०पु०	अत	एताम्	अन्त
अः	अतम्	अत	म०पु०	अथाः	एथाम्	अध्वम्
अम्	आव	आम	उ०पु०	ए	आवहि	आमहि

(४. स्-वाला भेद) | **(४. स्-वाला भेद)**

सीत्	स्ताम्	सुः	प्र०पु०	स्त	साताम्	सत
सीः	स्तम्	स्त	म०पु०	स्थाः	साथाम्	ध्वम्
सम्	स्व	स्म	उ०पु०	सि	स्वहि	स्महि

(५. इष्-वाला भेद) | **(५. इष्-वाला भेद)**

ईत्	इष्टाम्	इषुः	प्र०पु०	इष्ट	इषाताम्	इषत
ईः	इष्टम्	इष्ट	म०पु०	इष्ठाः	इषाथाम्	इध्वम्-ढ्वम्
इषम्	इष्व	इष्म	उ०पु०	इषि	इष्वहि	इष्महि

(६. सिष्-वाला भेद) | **(६. सिष्-वाला भेद)**

सीत्	सिष्टाम्	सिषुः	प्र०पु०	**सूचना**—आत्मनेपद में यह भेद नहीं होता।
सीः	सिष्टम्	सिष्ट	म०पु०	
सिषम्	सिष्व	सिष्म	उ०पु०	

(७. स-वाला भेद) | **(७. स-वाला भेद)**

सत्	सताम्	सन्	प्र०पु०	सत	साताम्	सन्त
सः	सतम्	सत	म०पु०	सथाः	साथाम्	सध्वम्
सम्	साव	साम	उ०पु०	सि	सावहि	सामहि

(१) भ्वादिगण (परस्मैपदी धातुएँ)

(१) भू (होना) (देखो अभ्यास १,५-९ में संक्षिप्तरूप)

लट् (वर्तमान)				लुट् (भविष्यत्, अनद्यतन)		
भवति	भवतः	भवन्ति	प्र०पु०	भविता	भवितारौ	भवितारः
भवसि	भवथः	भवथ	म०पु०	भवितासि	भवितास्थः	भवितास्थ
भवामि	भवावः	भवामः	उ०पु०	भवितास्मि	भवितास्वः	भवितास्मः

लोट् (आज्ञा अर्थ)				आशीर्लिङ् (आशीर्वाद)		
भवतु	भवताम्	भवन्तु	प्र०पु०	भूयात्	भूयास्ताम्	भूयासुः
भव	भवतम्	भवत	म०पु०	भूयाः	भूयास्तम्	भूयास्त
भवानि	भवाव	भवाम	उ०पु०	भूयासम्	भूयास्व	भूयास्म

लङ् (भूतकाल, अनद्यतन)				लृङ् (हेतुहेतुमद् भविष्यत्)		
अभवत्	अभवताम्	अभवन्	प्र०पु०	अभविष्यत्	अभविष्यताम्	अभविष्यन्
अभवः	अभवतम्	अभवत	म०पु०	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभविष्यत
अभवम्	अभवाव	अभवाम	उ०पु०	अभविष्यम्	अभविष्याव	अभविष्याम

विधिलिङ् (आज्ञा या चाहिए अर्थ)				लिट् (परोक्ष भूत)		
भवेत्	भवेताम्	भवेयुः	प्र०पु०	बभूव	बभूवतुः	बभूवुः
भवेः	भवेतम्	भवेत	म०पु०	बभूविथ	बभूवथुः	बभूव
भवेयम्	भवेव	भवेम	उ०पु०	बभूव	बभूविव	बभूविम

लृट् (भविष्यत्)				लुङ् (१) (सामान्यभूत)		
भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति	प्र०पु०	अभूत्	अभूताम्	अभूवन्
भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ	म०पु०	अभूः	अभूतम्	अभूत
भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः	उ०पु०	अभूवम्	अभूव	अभूम

सूचनाएँ—(१) भ्वादिगण की परस्मैपदी धातुओं के रूप भू धातु के तुल्य चलते हैं। (२) लङ् लकार अनद्यतन भूतकाल में होता है। आज का भूतकाल होगा तो लङ् नहीं होगा, अपितु लुङ् होगा। लुङ् सभी भूतकालों में हो सकता है। लिट् लकार केवल अनद्यतन परोक्षभूत में ही होगा। (३) लृट् सामान्य भविष्यत् है, सभी भविष्यत् में हो सकता है। लुट् अनद्यतन (आज का छोड़कर) भविष्यत् में ही होगा। लृङ् हेतुहेतुमद् (ऐसा होगा तो ऐसा होगा) भविष्यत् में ही होगा। (४) लोट् आज्ञा अर्थ में होता है। विधिलिङ् आज्ञा और चाहिए दोनों अर्थों में होता है। (५) लुङ् के आगे संख्याएँ दी हुई हैं। वे इस बात का निर्देश करती हैं कि वह धातु लुङ् के ७ भेदों में से कौन-सा भेद है। उस भेद के संक्षिप्त रूप पृष्ठ १४४ पर देखें। (६) सेट् धातुओं में लुट्, लृट् और लृङ् में बीच में 'इ' लगेगा। अनिट् धातुओं में बीच में 'इ' नहीं लगेगा।

(२) हस् (हँसना) (भू के तुल्य)				(३) पठ् (पढ़ना) (भू के तुल्य)		
	लट्				लट्	
हसति	हसतः	हसन्ति	प्र०	पठति	पठतः	पठन्ति
हससि	हसथः	हसथ	म०	पठसि	पठथः	पठथ
हसामि	हसावः	हसामः	उ०	पठामि	पठावः	पठामः
	लोट्				लोट्	
हसतु	हसताम्	हसन्तु	प्र०	पठतु	पठताम्	पठन्तु
हस	हसतम्	हसत	म०	पठ	पठतम्	पठत
हसानि	हसाव	हसाम	उ०	पठानि	पठाव	पठाम
	लङ्				लङ्	
अहसत्	अहसताम्	अहसन्	प्र०	अपठत्	अपठताम्	अपठन्
अहसः	अहसतम्	अहसत	म०	अपठः	अपठतम्	अपठत
अहसम्	अहसाव	अहसाम	उ०	अपठम्	अपठाव	अपठाम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
हसेत्	हसेताम्	हसेयुः	प्र०	पठेत्	पठेताम्	पठेयुः
हसेः	हसेतम्	हसेत	म०	पठेः	पठेतम्	पठेत
हसेयम्	हसेव	हसेम	उ०	पठेयम्	पठेव	पठेम
हसिष्यति	हसिष्यतः	हसिष्यन्ति	लृट्	पठिष्यति	पठिष्यतः	पठिष्यन्ति
हसिता	हसितारौ	हसितारः	लुट्	पठिता	पठितारौ	पठितारः
हस्यात्	हस्यास्ताम्	हस्यासुः	आ० लिङ्	पठ्यात्	पठ्यास्ताम्	पठ्यासुः
अहसिष्यत्	अहसिष्यताम्	अहसिष्यन्	लृङ्	अपठिष्यत्	अपठिष्यताम्	अपठिष्यन्
	लिट्				लिट्	
जहास	जहसतुः	जहसुः	प्र०	पपाठ	पेठतुः	पेठुः
जहसिथ	जहसथुः	जहस	म०	पेठिथ	पेठथुः	पेठ
जहास, जहस	जहसिव	जहसिम	उ०	पपाठ, पपठ	पेठिव	पेठिम
	लुङ् (५)				लुङ् (५) (क)	
अहसीत्	अहसिष्टाम्	अहसिषुः	प्र०	अपाठीत्	अपाठिष्टाम्	अपाठिषुः
अहसीः	अहसिष्टम्	अहसिष्ट	म०	अपाठीः	अपाठिष्टम्	अपाठिष्ट
अहसिषम्	अहसिष्व	अहसिष्म	उ०	अपाठिषम्	अपाठिष्व	अपाठिष्म
			(ख)	अपठीत्	अपठिष्टाम्	अपठिषुः
				अपठीः	अपठिष्टम्	अपठिष्ट
				अपठिषम्	अपठिष्व	अपठिष्म

(४) रक्ष् (रक्षा करना) (भू के तुल्य) (५) वद् (बोलना) (भू के तुल्य)

लट्				लट्		
रक्षति	रक्षतः	रक्षन्ति	प्र०	वदति	वदतः	वदन्ति
रक्षसि	रक्षथः	रक्षथ	म०	वदसि	वदथः	वदथ
रक्षामि	रक्षावः	रक्षामः	उ०	वदामि	वदावः	वदामः
लोट्				**लोट्**		
रक्षतु	रक्षताम्	रक्षन्तु	प्र०	वदतु	वदताम्	वदन्तु
रक्ष	रक्षतम्	रक्षत	म०	वद	वदतम्	वदत
रक्षाणि	रक्षाव	रक्षाम	उ०	वदानि	वदाव	वदाम
लङ्				**लङ्**		
अरक्षत्	अरक्षताम्	अरक्षन्	प्र०	अवदत्	अवदताम्	अवदन्
अरक्षः	अरक्षतम्	अरक्षत	म०	अवदः	अवदतम्	अवदत
अरक्षम्	अरक्षाव	अरक्षाम	उ०	अवदम्	अवदाव	अवदाम
विधिलिङ्				**विधिलिङ्**		
रक्षेत्	रक्षेताम्	रक्षेयुः	प्र०	वदेत्	वदेताम्	वदेयुः
रक्षेः	रक्षेतम्	रक्षेत	म०	वदेः	वदेतम्	वदेत
रक्षेयम्	रक्षेव	रक्षेम	उ०	वदेयम्	वदेव	वदेम

रक्षिष्यति	रक्षिष्यतः	रक्षिष्यन्ति	लृट्	वदिष्यति	वदिष्यतः	वदिष्यन्ति
रक्षिता	रक्षितारौ	रक्षितारः	लुट्	वदिता	वदितारौ	वदितारः
रक्ष्यात्	रक्ष्यास्ताम्	रक्ष्यासुः	आ० लिङ्	उद्यात्	उद्यास्ताम्	उद्यासुः
अरक्षिष्यत्	अरक्षिष्यताम्	अरक्षिष्यन्	लृङ्	अवदिष्यत्	अवदिष्यताम्	अवदिष्यन्

लिट्				लिट्		
ररक्ष	ररक्षतुः	ररक्षुः	प्र०	उवाद	ऊदतुः	ऊदुः
ररक्षिथ	ररक्षथुः	ररक्ष	म०	उवदिथ	ऊदथुः	ऊद
ररक्ष	ररक्षिव	ररक्षिम	उ०	उवाद, उवद	ऊदिव	ऊदिम
लुङ् (५)				**लुङ् (५)**		
अरक्षीत्	अरक्षिष्टाम्	अरक्षिषुः	प्र०	अवादीत्	अवादिष्टाम्	अवादिषुः
अरक्षीः	अरक्षिष्टम्	अरक्षिष्ट	म०	अवादीः	अवादिष्टम्	अवादिष्ट
अरक्षिषम्	अरक्षिष्व	अरक्षिष्म	उ०	अवादिषम्	अवादिष्व	अवादिष्म

(६) पच् (पकाना) (भू के तुल्य) (७) नम् (झुकना, प्रणाम करना) (भू के तुल्य)

	लट्				लट्	
पचति	पचतः	पचन्ति	प्र०	नमति	नमतः	नमन्ति
पचसि	पचथः	पचथ	म०	नमसि	नमथः	नमथ
पचामि	पचावः	पचामः	उ०	नमामि	नमावः	नमामः
	लोट्				लोट्	
पचतु	पचताम्	पचन्तु	प्र०	नमतु	नमताम्	नमन्तु
पच	पचतम्	पचत	म०	नम	नमतम्	नमत
पचानि	पचाव	पचाम	उ०	नमानि	नमाव	नमाम
	लङ्				लङ्	
अपचत्	अपचताम्	अपचन्	प्र०	अनमत्	अनमताम्	अनमन्
अपचः	अपचतम्	अपचत	म०	अनमः	अनमतम्	अनमत
अपचम्	अपचाव	अपचाम	उ०	अनमम्	अनमाव	अनमाम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
पचेत्	पचेताम्	पचेयुः	प्र०	नमेत्	नमेताम्	नमेयुः
पचेः	पचेतम्	पचेत	म०	नमेः	नमेतम्	नमेत
पचेयम्	पचेव	पचेम	उ०	नमेयम्	नमेव	नमेम
पक्ष्यति	पक्ष्यतः	पक्ष्यन्ति	लृट्	नंस्यति	नंस्यतः	नंस्यन्ति
पक्ता	पक्तारौ	पक्तारः	लुट्	नन्ता	नन्तारौ	नन्तारः
पच्यात्	पच्यास्ताम्	पच्यासुः	आ० लिङ्	नम्यात्	नम्यास्ताम्	नम्यासुः
अपक्ष्यत्	अपक्ष्यताम्	अपक्ष्यन्	लृङ्	अनंस्यत्	अनंस्यताम्	अनंस्यन्
	लिट्				लिट्	
पपाच	पेचतुः	पेचुः	प्र०	ननाम	नेमतुः	नेमुः
पेचिथ, पपक्थ	पेचथुः	पेच	म०	नेमिथ, ननन्थ	नेमथुः	नेम
पपाच, पपच	पेचिव	पेचिम	उ०	ननाम, ननम	नेमिव	नेमिम
	लुङ् (४)				लुङ् (६)	
अपाक्षीत्	अपाक्ताम्	अपाक्षुः	प्र०	अनंसीत्	अनंसिष्टाम्	अनंसिषुः
अपाक्षीः	अपाक्तम्	अपाक्त	म०	अनंसीः	अनंसिष्टम्	अनंसिष्ट
अपाक्षम्	अपाक्ष्व	अपाक्ष्म	उ०	अनंसिषम्	अनंसिष्व	अनंसिष्म

सूचना—पच् धातु उभयपदी है। आत्मनेपद में रूप सेव् (धातु १८) के तुल्य चलेंगे। लट् आदि के प्रथम रूप क्रमशः ये हैं। पचते, पचताम्, अपचत, पचेत, पक्ष्यते, पक्ता, पक्षीष्ट, अपक्ष्यत, पेचे, अपक्त।

(८) गम् (जाना) (भू के तुल्य)

सूचना—गम् को लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में गच्छ् हो जाता है।

	लट्		
गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति	प्र०
गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ	म०
गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः	उ०
	लोट्		
गच्छतु	गच्छताम्	गच्छन्तु	प्र०
गच्छ	गच्छतम्	गच्छत	म०
गच्छानि	गच्छाव	गच्छाम	उ०
	लङ्		
अगच्छत्	अगच्छताम्	अगच्छन्	प्र०
अगच्छः	अगच्छतम्	अगच्छत	म०
अगच्छम्	अगच्छाव	अगच्छाम	उ०
	विधिलिङ्		
गच्छेत्	गच्छेताम्	गच्छेयुः	प्र०
गच्छेः	गच्छेतम्	गच्छेत	म०
गच्छेयम्	गच्छेव	गच्छेम	उ०

गमिष्यति	गमिष्यतः	गमिष्यन्ति	लृट्
गन्ता	गन्तारौ	गन्तारः	लुट्
गम्यात्	गम्यास्ताम्	गम्यासुः	आ० लिङ्
अगमिष्यत्	अगमिष्यताम्	अगमिष्यन्	लृङ्
	लिट्		
जगाम	जग्मतुः	जग्मुः	प्र०
जगमिथ, जगन्थ	जग्मथुः	जग्म	म०
जगाम, जगम	जग्मिव	जग्मिम	उ०
	लुङ् (२)		
अगमत्	अगमताम्	अगमन्	प्र०
अगमः	अगमतम्	अगमत	म०
अगमम्	अगमाव	अगमाम	उ०

(९) दृश् (देखना) (भू के तुल्य)

सूचना—दृश् को लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में पश्य् हो जाता है।

		लट्	
प्र०	पश्यति	पश्यतः	पश्यन्ति
म०	पश्यसि	पश्यथः	पश्यथ
उ०	पश्यामि	पश्यावः	पश्यामः
		लोट्	
प्र०	पश्यतु	पश्यताम्	पश्यन्तु
म०	पश्य	पश्यतम्	पश्यत
उ०	पश्यानि	पश्याव	पश्याम
		लङ्	
प्र०	अपश्यत्	अपश्यताम्	अपश्यन्
म०	अपश्यः	अपश्यतम्	अपश्यत
उ०	अपश्यम्	अपश्याव	अपश्याम
		विधिलिङ्	
प्र०	पश्येत्	पश्येताम्	पश्येयुः
म०	पश्येः	पश्येतम्	पश्येत
उ०	पश्येयम्	पश्येव	पश्येम

लृट्	द्रक्ष्यति	द्रक्ष्यतः	द्रक्ष्यन्ति
लुट्	द्रष्टा	द्रष्टारौ	द्रष्टारः
आ० लिङ्	दृश्यात्	दृश्यास्ताम्	दृश्यासुः
लृङ्	अद्रक्ष्यत्	अद्रक्ष्यताम्	अद्रक्ष्यन्
		लिट्	
प्र०	ददर्श	ददृशतुः	ददृशुः
म०	ददर्शिथ, दद्रष्ठ	ददृशथुः	ददृश
उ०	ददर्श	ददृशिव	ददृशिम
		लुङ् (क) (४)	
प्र०	अद्राक्षीत्	अद्राष्टाम्	अद्राक्षुः
म०	अद्राक्षीः	अद्राष्टम्	अद्राष्ट
उ०	अद्राक्षम्	अद्राक्ष्व	अद्राक्ष्म
(ख) (२)	अदर्शत्	अदर्शताम्	अदर्शन्
	अदर्शः	अदर्शतम्	अदर्शत
	अदर्शम्	अदर्शाव	अदर्शाम

(१०) सद् (बैठना) (भू के तुल्य)

सूचना—सद् को लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में सीद् हो जाता है।

लट्

सीदति	सीदतः	सीदन्ति	प्र०
सीदसि	सीदथः	सीदथ	म०
सीदामि	सीदावः	सीदामः	उ०

लोट्

सीदतु	सीदताम्	सीदन्तु	प्र०
सीद	सीदतम्	सीदत	म०
सीदानि	सीदाव	सीदाम	उ०

लङ्

असीदत्	असीदताम्	असीदन्	प्र०
असीदः	असीदतम्	असीदत	म०
असीदम्	असीदाव	असीदाम	उ०

विधिलिङ्

सीदेत्	सीदेताम्	सीदेयुः	प्र०
सीदेः	सीदेतम्	सीदेत	म०
सीदेयम्	सीदेव	सीदेम	उ०

सत्स्यति	सत्स्यतः	सत्स्यन्ति	लृट्
सत्ता	सत्तारौ	सत्तारः	लुट्
सद्यात्	सद्यास्ताम्	सद्यासुः	आ०लिङ्
असत्स्यत्	असत्स्यताम्	असत्स्यन्	लृङ्

लिट्

ससाद	सेदतुः	सेदुः	प्र०
सेदिथ, ससत्थ	सेदथुः	सेद	म०
ससाद, ससद	सेदिव	सेदिम	उ०

लुङ् (२)

असदत्	असदताम्	असदन्	प्र०
असदः	असदतम्	असदत	म०
असदम्	असदाव	असदाम	उ०

(११) स्था (रुकना) (भू के तुल्य)

सूचना—स्था को लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में तिष्ठ् हो जाता है।

लट्

प्र०	तिष्ठति	तिष्ठतः	तिष्ठन्ति
म०	तिष्ठसि	तिष्ठथः	तिष्ठथ
उ०	तिष्ठामि	तिष्ठावः	तिष्ठामः

लोट्

प्र०	तिष्ठतु	तिष्ठताम्	तिष्ठन्तु
म०	तिष्ठ	तिष्ठतम्	तिष्ठत
उ०	तिष्ठानि	तिष्ठाव	तिष्ठाम

लङ्

प्र०	अतिष्ठत्	अतिष्ठताम्	अतिष्ठन्
म०	अतिष्ठः	अतिष्ठतम्	अतिष्ठत
उ०	अतिष्ठम्	अतिष्ठाव	अतिष्ठाम

विधिलिङ्

प्र०	तिष्ठेत्	तिष्ठेताम्	तिष्ठेयुः
म०	तिष्ठेः	तिष्ठेतम्	तिष्ठेत
उ०	तिष्ठेयम्	तिष्ठेव	तिष्ठेम

लृट्	स्थास्यति	स्थास्यतः	स्थास्यन्ति
लुट्	स्थाता	स्थातारौ	स्थातारः
आ०लिङ्	स्थेयात्	स्थेयास्ताम्	स्थेयासुः
लृङ्	अस्थास्यत्	अस्थास्यताम्	अस्थास्यन्

लिट्

प्र०	तस्थौ	तस्थतुः	तस्थुः
म०	तस्थिथ, तस्थाथ	तस्थथुः	तस्थ
उ०	तस्थौ	तस्थिव	तस्थिम

लुङ् (१)

प्र०	अस्थात्	अस्थाताम्	अस्थुः
म०	अस्थाः	अस्थातम्	अस्थात
उ०	अस्थाम्	अस्थाव	अस्थाम

(१२) **पा (पीना)** (भू के तुल्य)

सूचना—पा को लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में पिब् हो जाता है।

(१३) **घ्रा (सूँघना)** (भू के तुल्य)

सूचना—घ्रा को लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में जिघ्र् हो जाता है।

	लट्				लट्	
पिबति	पिबतः	पिबन्ति	प्र०	जिघ्रति	जिघ्रतः	जिघ्रन्ति
पिबसि	पिबथः	पिबथ	म०	जिघ्रसि	जिघ्रथः	जिघ्रथ
पिबामि	पिबावः	पिबामः	उ०	जिघ्रामि	जिघ्रावः	जिघ्रामः
	लोट्				लोट्	
पिबतु	पिबताम्	पिबन्तु	प्र०	जिघ्रतु	जिघ्रताम्	जिघ्रन्तु
पिब	पिबतम्	पिबत	म०	जिघ्र	जिघ्रतम्	जिघ्रत
पिबानि	पिबाव	पिबाम	उ०	जिघ्राणि	जिघ्राव	जिघ्राम
	लङ्				लङ्	
अपिबत्	अपिबताम्	अपिबन्	प्र०	अजिघ्रत्	अजिघ्रताम्	अजिघ्रन्
अपिबः	अपिबतम्	अपिबत	म०	अजिघ्रः	अजिघ्रतम्	अजिघ्रत
अपिबम्	अपिबाव	अपिबाम	उ०	अजिघ्रम्	अजिघ्राव	अजिघ्राम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
पिबेत्	पिबेताम्	पिबेयुः	प्र०	जिघ्रेत्	जिघ्रेताम्	जिघ्रेयुः
पिबेः	पिबेतम्	पिबेत	म०	जिघ्रेः	जिघ्रेतम्	जिघ्रेत
पिबेयम्	पिबेव	पिबेम	उ०	जिघ्रेयम्	जिघ्रेव	जिघ्रेम

पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति	लृट्	घ्रास्यति	घ्रास्यतः	घ्रास्यन्ति
पाता	पातारौ	पातारः	लुट्	घ्राता	घ्रातारौ	घ्रातारः
पेयात्	पेयास्ताम्	पेयासुः	आ० लिङ्	(क) घ्रेयात् (ख) घ्रायात् (दोनों प्रकार से)		
अपास्यत्	अपास्यताम्	अपास्यन्	लृङ्	अघ्रास्यत्	अघ्रास्यताम्	अघ्रास्यन्
	लिट्				लिट्	
पपौ	पपतुः	पपुः	प्र०	जघ्रौ	जघ्रतुः	जघ्रुः
पपिथ, पपाथ	पपथुः	पप	म०	जघ्रिथ, जघ्राथ	जघ्रथुः	जघ्र
पपौ	पपिव	पपिम	उ०	जघ्रौ	जघ्रिव	जघ्रिम
	लुङ् (१)				लुङ् (क) (१)	
अपात्	अपाताम्	अपुः	प्र०	अघ्रात्	अघ्राताम्	अघ्रुः
अपाः	अपातम्	अपात	म०	अघ्राः	अघ्रातम्	अघ्रात
अपाम्	अपाव	अपाम	उ०	अघ्राम्	अघ्राव	अघ्राम
			(ख) (६)	अघ्रासीत्	अघ्रासिष्टाम्	अघ्रासिषुः
				अघ्रासीः	अघ्रासिष्टम्	अघ्रासिष्ट
				अघ्रासिषम्	अघ्रासिष्व	अघ्रासिष्म

(१४) **स्मृ** (स्मरण करना) (भू के तुल्य) (१५) **जि** (जीतना) (भू के तुल्य)

	लट्				लट्	
स्मरति	स्मरतः	स्मरन्ति	प्र०	जयति	जयतः	जयन्ति
स्मरसि	स्मरथः	स्मरथ	म०	जयसि	जयथः	जयथ
स्मरामि	स्मरावः	स्मरामः	उ०	जयामि	जयावः	जयामः
	लोट्				लोट्	
स्मरतु	स्मरताम्	स्मरन्तु	प्र०	जयतु	जयताम्	जयन्तु
स्मर	स्मरतम्	स्मरत	म०	जय	जयतम्	जयत
स्मराणि	स्मराव	स्मराम	उ०	जयानि	जयाव	जयाम
	लङ्				लङ्	
अस्मरत्	अस्मरताम्	अस्मरन्	प्र०	अजयत्	अजयताम्	अजयन्
अस्मरः	अस्मरतम्	अस्मरत	म०	अजयः	अजयतम्	अजयत
अस्मरम्	अस्मराव	अस्मराम	उ०	अजयम्	अजयाव	अजयाम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
स्मरेत्	स्मरेताम्	स्मरेयुः	प्र०	जयेत्	जयेताम्	जयेयुः
स्मरेः	स्मरेतम्	स्मरेत	म०	जयेः	जयेतम्	जयेत
स्मरेयम्	स्मरेव	स्मरेम	उ०	जयेयम्	जयेव	जयेम

स्मरिष्यति	स्मरिष्यतः	स्मरिष्यन्ति	लृट्	जेष्यति	जेष्यतः	जेष्यन्ति
स्मर्ता	स्मर्तारौ	स्मर्तारः	लुट्	जेता	जेतारौ	जेतारः
स्मर्यात्	स्मर्यास्ताम्	स्मर्यासुः	आ० लिङ्	जीयात्	जीयास्ताम्	जीयासुः
अस्मरिष्यत्	अस्मरिष्यताम्	अस्मरिष्यन्	लृङ्	अजेष्यत्	अजेष्यताम्	अजेष्यन्
	लिट्				लिट्	
सस्मार	सस्मरतुः	सस्मरुः	प्र०	जिगाय	जिग्यतुः	जिग्युः
सस्मर्थ	सस्मरथुः	सस्मर	म०	जिगयिथ, जिगेथ	जिग्यथुः	जिग्य
सस्मार, सस्मर	सस्मरिव	सस्मरिम	उ०	जिगाय, जिगय	जिग्यिव	जिग्यिम
	लुङ् (४)				लुङ् (४)	
अस्मार्षीत्	अस्मार्ष्टाम्	अस्मार्षुः	प्र०	अजैषीत्	अजैष्टाम्	अजैषुः
अस्मार्षीः	अस्मार्ष्टम्	अस्मार्ष्ट	म०	अजैषीः	अजैष्टम्	अजैष्ट
अस्मार्षम्	अस्मार्ष्व	अस्मार्ष्म	उ०	अजैषम्	अजैष्व	अजैष्म

(१६) श्रु (सुनना) (लट् आदि में भू के तुल्य) (१७) वस् (रहना) (भू के तुल्य)
सूचना—लट् आदि में श्रु को शृ और नु विकरण ।

	लट्				लट्	
शृणोति	शृणुतः	शृण्वन्ति	प्र०	वसति	वसतः	वसन्ति
शृणोषि	शृणुथः	शृणुथ	म०	वससि	वसथः	वसथ
शृणोमि	शृणुवः,-ण्वः	शृणुमः,-ण्मः	उ०	वसामि	वसावः	वसामः
	लोट्				लोट्	
शृणोतु	शृणुताम्	शृण्वन्तु	प्र०	वसतु	वसताम्	वसन्तु
शृणु	शृणुतम्	शृणुत	म०	वस	वसतम्	वसत
शृणवानि	शृणवाव	शृणवाम	उ०	वसानि	वसाव	वसाम
	लङ्				लङ्	
अशृणोत्	अशृणुताम्	अशृण्वन्	प्र०	अवसत्	अवसताम्	अवसन्
अशृणोः	अशृणुतम्	अशृणुत	म०	अवसः	अवसतम्	अवसत
अशृणवम्	अशृणुव,-ण्व	अशृणुम-ण्म	उ०	अवसम्	अवसाव	अवसाम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
शृणुयात्	शृणुयाताम्	शृणुयुः	प्र०	वसेत्	वसेताम्	वसेयुः
शृणुयाः	शृणुयातम्	शृणुयात	म०	वसेः	वसेतम्	वसेत
शृणुयाम्	शृणुयाव	शृणुयाम	उ०	वसेयम्	वसेव	वसेम
	——				——	
श्रोष्यति	श्रोष्यतः	श्रोष्यन्ति	लृट्	वत्स्यति	वत्स्यतः	वत्स्यन्ति
श्रोता	श्रोतारौ	श्रोतारः	लुट्	वस्ता	वस्तारौ	वस्तारः
श्रूयात्	श्रूयास्ताम्	श्रूयासुः	आ०लिङ्	उष्यात्	उष्यास्ताम्	उष्यासुः
अश्रोष्यत्	अश्रोष्यताम्	अश्रोष्यन्	लृङ्	अवत्स्यत्	अवत्स्यताम्	अवत्स्यन्
	लिट्				लिट्	
शुश्राव	शुश्रुवतुः	शुश्रुवुः	प्र०	उवास	ऊषतुः	ऊषुः
शुश्रोथ	शुश्रुवथुः	शुश्रुव	म०	उवसिथ,उवस्थ	ऊषथुः	ऊष
शुश्राव,शुश्रव	शुश्रुव	शुश्रुम	उ०	उवास,उवस	ऊषिव	ऊषिम
	लुङ् (४)				लुङ् (४)	
अश्रौषीत्	अश्रौष्टाम्	अश्रौषुः	प्र०	अवात्सीत्	अवात्ताम्	अवात्सुः
अश्रौषीः	अश्रौष्टम्	अश्रौष्ट	म०	अवात्सीः	अवात्तम्	अवात्त
अश्रौषम्	अश्रौष्व	अश्रौष्म	उ०	अवात्सम्	अवात्स्व	अवात्स्म

(१८) **सेव् (सेवा करना)** (देखो अभ्यास १९-२०) **आत्मनेपदी धातुएँ**

लट्				लुट्		
सेवते	सेवेते	सेवन्ते	प्र०	सेविता	सेवितारौ	सेवितारः
सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे	म०	सेवितासे	सेवितासाथे	सेविताध्वे
सेवे	सेवावहे	सेवामहे	उ०	सेविताहे	सेवितास्वहे	सेवितास्महे
लोट्				आशीर्लिङ्		
सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्	प्र०	सेविषीष्ट	सेविषीयास्ताम्	सेविषीरन्
सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्	म०	सेविषीष्ठाः	सेविषीयास्थाम्	सेविषीध्वम्
सेवै	सेवावहै	सेवामहै	उ०	सेविषीय	सेविषीवहि	सेविषीमहि
लङ्				लृङ्		
असेवत	असेवेताम्	असेवन्त	प्र०	असेविष्यत	असेविष्येताम्	असेविष्यन्त
असेवथाः	असेवेथाम्	असेवध्वम्	म०	असेविष्यथाः	असेविष्येथाम्	असेविष्यध्वम्
असेवे	असेवावहि	असेवामहि	उ०	असेविष्ये	असेविष्यावहि	असेविष्यामहि
विधिलिङ्				लिट्		
सेवेत	सेवेयाताम्	सेवेरन्	प्र०	सिषेवे	सिषेवाते	सिषेविरे
सेवेथाः	सेवेयाथाम्	सेवेध्वम्	म०	सिषेविषे	सिषेवाथे	सिषेविध्वे
सेवेय	सेवेवहि	सेवेमहि	उ०	सिषेवे	सिषेविवहे	सिषेविमहे
लृट्				लुङ् (५)		
सेविष्यते	सेविष्येते	सेविष्यन्ते	प्र०	असेविष्ट	असेविषाताम्	असेविषत
सेविष्यसे	सेविष्येथे	सेविष्यध्वे	म०	असेविष्ठाः	असेविषाथाम्	असेविध्वम्
सेविष्ये	सेविष्यावहे	सेविष्यामहे	उ०	असेविषि	असेविष्वहि	असेविष्महि

संक्षिप्त रूप (आत्मनेपद)

लट्				लोट्				लङ् (अ +)		
अते	एते	अन्ते	प्र०	अताम्	एताम्	अन्ताम्	प्र०	अत	एताम्	अन्त
असे	एथे	अध्वे	म०	अस्व	एथाम्	अध्वम्	म०	अथाः	एथाम्	अध्वम्
ए	आवहे	आमहे	उ०	ऐ	आवहै	आमहै	उ०	ए	आवहि	आमहि
विधिलिङ्				लृट्				लुट्		
एत	एयाताम्	एरन्	प्र०	स्यते	स्येते	स्यन्ते	प्र०	ता	तारौ	तारः
एथाः	एयाथाम्	एध्वम्	म०	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे	म०	तासे	तासाथे	ताध्वे
एय	एवहि	एमहि	उ०	स्ये	स्यावहे	स्यामहे	उ०	ताहे	तास्वहे	तास्महे

(१९) लभ् (पाना) (सेव् के तुल्य)				(२०) वृध् (बढ़ना) (सेव् के तुल्य)		
	लट्				लट्	
लभते	लभेते	लभन्ते	प्र०	वर्धते	वर्धेते	वर्धन्ते
लभसे	लभेथे	लभध्वे	म०	वर्धसे	वर्धेथे	वर्धध्वे
लभे	लभावहे	लभामहे	उ०	वर्धे	वर्धावहे	वर्धामहे
	लोट्				लोट्	
लभताम्	लभेताम्	लभन्ताम्	प्र०	वर्धताम्	वर्धेताम्	वर्धन्ताम्
लभस्व	लभेथाम्	लभध्वम्	म०	वर्धस्व	वर्धेथाम्	वर्धध्वम्
लभै	लभावहै	लभामहै	उ०	वर्धै	वर्धावहै	वर्धामहै
	लङ्				लङ्	
अलभत	अलभेताम्	अलभन्त	प्र०	अवर्धत	अवर्धेताम्	अवर्धन्त
अलभथाः	अलभेथाम्	अलभध्वम्	म०	अवर्धथाः	अवर्धेथाम्	अवर्धध्वम्
अलभे	अलभावहि	अलभामहि	उ०	अवर्धे	अवर्धावहि	अवर्धामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
लभेत	लभेयाताम्	लभेरन्	प्र०	वर्धेत	वर्धेयाताम्	वर्धेरन्
लभेथाः	लभेयाथाम्	लभेध्वम्	म०	वर्धेथाः	वर्धेयाथाम्	वर्धेध्वम्
लभेय	लभेवहि	लभेमहि	उ०	वर्धेय	वर्धेवहि	वर्धेमहि

लप्स्यते	लप्स्येते	लप्स्यन्ते	लृट्	वर्धिष्यते	वर्धिष्येते	वर्धिष्यन्ते
लब्धा	लब्धारौ	लब्धारः	लुट्	वर्धिता	वर्धितारौ	वर्धितारः
लप्सीष्ट	लप्सीयास्ताम्	लप्सीरन्	आ० लिङ्	वर्धिषीष्ट	वर्धिषीयास्ताम्	वर्धिषीरन्
अलप्स्यत	अलप्स्येताम्	अलप्स्यन्त	लृङ्	अवर्धिष्यत	अवर्धिष्येताम्	अवर्धिष्यन्त
	लिट्				लिट्	
लेभे	लेभाते	लेभिरे	प्र०	ववृधे	ववृधाते	ववृधिरे
लेभिषे	लेभाथे	लेभिध्वे	म०	ववृधिषे	ववृधाथे	ववृधिध्वे
लेभे	लेभिवहे	लेभिमहे	उ०	ववृधे	ववृधिवहे	ववृधिमहे
	लुङ् (४)				लुङ् (क) (५)	
अलब्ध	अलप्साताम्	अलप्सत	प्र०	अवर्धिष्ट	अवर्धिषाताम्	अवर्धिषत
अलब्धाः	अलप्साथाम्	अलब्ध्वम्	म०	अवर्धिष्ठाः	अवर्धिषाथाम्	अवर्धिध्वम्
अलप्सि	अलप्स्वहि	अलप्स्महि	उ०	अवर्धिषि	अवर्धिष्वहि	अवर्धिष्महि
					(ख) (२) (पर०)	
				अवृधत्	अवृधताम्	अवृधन्
				अवृधः	अवृधतम्	अवृधत
				अवृधम्	अवृधाव	अवृधाम

(२१) **मुद् (प्रसन्न होना)** (सेव् के तुल्य) (२२) **सह् (सहन करना)** (सेव् के तुल्य)

लट्

मोदते	मोदेते	मोदन्ते	प्र०	सहते	सहेते	सहन्ते
मोदसे	मोदेथे	मोदध्वे	म०	सहसे	सहेथे	सहध्वे
मोदे	मोदावहे	मोदामहे	उ०	सहे	सहावहे	सहामहे

लोट्

मोदताम्	मोदेताम्	मोदन्ताम्	प्र०	सहताम्	सहेताम्	सहन्ताम्
मोदस्व	मोदेथाम्	मोदध्वम्	म०	सहस्व	सहेथाम्	सहध्वम्
मोदै	मोदावहै	मोदामहै	उ०	सहै	सहावहै	सहामहै

लङ्

अमोदत	अमोदेताम्	अमोदन्त	प्र०	असहत	असहेताम्	असहन्त
अमोदथाः	अमोदेथाम्	अमोदध्वम्	म०	असहथाः	असहेथाम्	असहध्वम्
अमोदे	अमोदावहि	अमोदामहि	उ०	असहे	असहावहि	असहामहि

विधिलिङ्

मोदेत	मोदेयाताम्	मोदेरन्	प्र०	सहेत	सहेयाताम्	सहेरन्
मोदेथाः	मोदेयाथाम्	मोदेध्वम्	म०	सहेथाः	सहेयाथाम्	सहेध्वम्
मोदेय	मोदेवहि	मोदेमहि	उ०	सहेय	सहेवहि	सहेमहि

मोदिष्यते	मोदिष्येते	मोदिष्यन्ते	लृट्	सहिष्यते	सहिष्येते	सहिष्यन्ते
मोदिता	मोदितारौ	मोदितारः	लुट्	सहिता	सहितारौ	सहितारः
				सोढा	सोढारौ	सोढारः
मोदिषीष्ट	मोदिषीयास्ताम्०		आ० लिङ्	सहिषीष्ट	सहिषीयास्ताम्०	
अमोदिष्यत	अमोदिष्येताम्०		लृङ्	असहिष्यत	असहिष्येताम्०	

लिट्

मुमुदे	मुमुदाते	मुमुदिरे	प्र०	सेहे	सेहाते	सेहिरे
मुमुदिषे	मुमुदाथे	मुमुदिध्वे	म०	सेहिषे	सेहाथे	सेहिध्वे
मुमुदे	मुमुदिवहे	मुमुदिमहे	उ०	सेहे	सेहिवहे	सेहिमहे

लुङ् (५)

अमोदिष्ट	अमोदिषाताम्	अमोदिषत	प्र०	असहिष्ट	असहिषाताम्	असहिषत
अमोदिष्ठाः	अमोदिषाथाम्	अमोदिध्वम्	म०	असहिष्ठाः	असहिषाथाम्	असहिध्वम्
अमोदिषि	अमोदिष्वहि	अमोदिष्महि	उ०	असहिषि	असहिष्वहि	असहिष्महि

(२३) याच् (माँगना) (भू और सेव् के तुल्य)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
याचति	याचतः	याचन्ति	प्र०	याचते	याचेते	याचन्ते
याचसि	याचथः	याचथ	म०	याचसे	याचेथे	याचध्वे
याचामि	याचावः	याचामः	उ०	याचे	याचावहे	याचामहे
लोट्				लोट्		
याचतु	याचताम्	याचन्तु	प्र०	याचताम्	याचेताम्	याचन्ताम्
याच	याचतम्	याचत	म०	याचस्व	याचेथाम्	याचध्वम्
याचानि	याचाव	याचाम	उ०	याचै	याचावहै	याचामहै
लङ्				लङ्		
अयाचत्	अयाचताम्	अयाचन्	प्र०	अयाचत	अयाचेताम्	अयाचन्त
अयाचः	अयाचतम्	अयाचत	म०	अयाचथाः	अयाचेथाम्	अयाचध्वम्
अयाचम्	अयाचाव	अयाचाम	उ०	अयाचे	अयाचावहि	अयाचामहि
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
याचेत्	याचेताम्	याचेयुः	प्र०	याचेत	याचेयाताम्	याचेरन्
याचेः	याचेतम्	याचेत	म०	याचेथाः	याचेयाथाम्	याचेध्वम्
याचेयम्	याचेव	याचेम	उ०	याचेय	याचेवहि	याचेमहि

याचिष्यति	याचिष्यतः	याचिष्यन्ति	लृट्	याचिष्यते	याचिष्येते	याचिष्यन्ते
याचिता	याचितारौ	याचितारः	लुट्	याचिता	याचितारौ	याचितारः
याच्यात्	याच्यास्ताम्	याच्यासुः	आ० लिङ्	याचिषीष्ट	याचिषीयास्ताम्०	
अयाचिष्यत्	अयाचिष्यताम्	अयाचिष्यन्	लृङ्	अयाचिष्यत	अयाचिष्येताम्०	

लिट्				लिट्		
ययाच	ययाचतुः	ययाचुः	प्र०	ययाचे	ययाचाते	ययाचिरे
ययाचिथ	ययाचथुः	ययाच	म०	ययाचिषे	ययाचाथे	ययाचिध्वे
ययाच	ययाचिव	ययाचिम	उ०	ययाचे	ययाचिवहे	ययाचिमहे
लुङ् (५)				लुङ् (५)		
अयाचीत्	अयाचिष्टाम्	अयाचिषुः	प्र०	अयाचिष्ट	अयाचिषाताम्	अयाचिषत
अयाचीः	अयाचिष्टम्	अयाचिष्ट	म०	अयाचिष्ठाः	अयाचिषाथाम्	अयाचिध्वम्
अयाचिषम्	अयाचिष्व	अयाचिष्म	उ०	अयाचिषि	अयाचिष्वहि	अयाचिष्महि

(२४) नी (ले जाना) (देखो अभ्यास २१) (भू और सेव् के तुल्य)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
नयति	नयतः	नयन्ति	प्र०	नयते	नयेते	नयन्ते
नयसि	नयथः	नयथ	म०	नयसे	नयेथे	नयध्वे
नयामि	नयावः	नयामः	उ०	नये	नयावहे	नयामहे
लोट्				लोट्		
नयतु	नयताम्	नयन्तु	प्र०	नयताम्	नयेताम्	नयन्ताम्
नय	नयतम्	नयत	म०	नयस्व	नयेथाम्	नयध्वम्
नयानि	नयाव	नयाम	उ०	नयै	नयावहै	नयामहै
लङ्				लङ्		
अनयत्	अनयताम्	अनयन्	प्र०	अनयत	अनयेताम्	अनयन्त
अनयः	अनयतम्	अनयत	म०	अनयथाः	अनयेथाम्	अनयध्वम्
अनयम्	अनयाव	अनयाम	उ०	अनये	अनयावहि	अनयामहि
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
नयेत्	नयेताम्	नयेयुः	प्र०	नयेत	नयेयाताम्	नयेरन्
नयेः	नयेतम्	नयेत	म०	नयेथाः	नयेयाथाम्	नयेध्वम्
नयेयम्	नयेव	नयेम	उ०	नयेय	नयेवहि	नयेमहि

नेष्यति	नेष्यतः	नेष्यन्ति	लृट्	नेष्यते	नेष्येते	नेष्यन्ते
नेता	नेतारौ	नेतारः	लुट्	नेता	नेतारौ	नेतारः
नीयात्	नीयास्ताम्	नीयासुः	आ० लिङ्	नेषीष्ट	नेषीयास्ताम्	नेषीरन्
अनेष्यत्	अनेष्यताम्	अनेष्यन्	लृङ्	अनेष्यत	अनेष्येताम्	अनेष्यन्त
लिट्				लिट्		
निनाय	निन्यतुः	निन्युः	प्र०	निन्ये	निन्याते	निन्यिरे
निनयिथ, निनेथ	निन्यथुः	निन्य	म०	निन्यिषे	निन्याथे	निन्यिध्वे
निनाय, निनय	निन्यिव	निन्यिम	उ०	निन्ये	निन्यिवहे	निन्यिमहे
लुङ् (४)				लुङ् (४)		
अनैषीत्	अनैष्टाम्	अनैषुः	प्र०	अनेष्ट	अनेषाताम्	अनेषत
अनैषीः	अनैष्टम्	अनैष्ट	म०	अनेष्ठाः	अनेषाथाम्	अनेढ्वम्
अनैषम्	अनैष्व	अनैष्म	उ०	अनेषि	अनेष्वहि	अनेष्महि

(२५) हृ (चुराना, ले जाना) (देखो अभ्यास २१) (भू और सेव् के तुल्य)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
हरति	हरतः	हरन्ति	प्र०	हरते	हरेते	हरन्ते
हरसि	हरथः	हरथ	म०	हरसे	हरेथे	हरध्वे
हरामि	हरावः	हरामः	उ०	हरे	हरावहे	हरामहे
	लोट्				लोट्	
हरतु	हरताम्	हरन्तु	प्र०	हरताम्	हरेताम्	हरन्ताम्
हर	हरतम्	हरत	म०	हरस्व	हरेथाम्	हरध्वम्
हराणि	हराव	हराम	उ०	हरै	हरावहै	हरामहै
	लङ्				लङ्	
अहरत्	अहरताम्	अहरन्	प्र०	अहरत	अहरेताम्	अहरन्त
अहरः	अहरतम्	अहरत	म०	अहरथाः	अहरेथाम्	अहरध्वम्
अहरम्	अहराव	अहराम	उ०	अहरे	अहरावहि	अहरामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
हरेत्	हरेताम्	हरेयुः	प्र०	हरेत	हरेयाताम्	हरेरन्
हरेः	हरेतम्	हरेत	म०	हरेथाः	हरेयाथाम्	हरेध्वम्
हरेयम्	हरेव	हरेम	उ०	हरेय	हरेवहि	हरेमहि
हरिष्यति	हरिष्यतः	हरिष्यन्ति	लृट्	हरिष्यते	हरिष्येते	हरिष्यन्ते
हर्ता	हर्तारौ	हर्तारः	लुट्	हर्ता	हर्तारौ	हर्तारः
ह्रियात्	ह्रियास्ताम्	ह्रियासुः	आ० लिङ्	हृषीष्ट	हृषीयास्ताम्	हृषीरन्
अहरिष्यत्	अहरिष्यताम्	अहरिष्यन्	लृङ्	अहरिष्यत	अहरिष्येताम्	अहरिष्यन्त
	लिट्				लिट्	
जहार	जह्रतुः	जह्रुः	प्र०	जह्रे	जह्राते	जह्रिरे
जहर्थ	जह्रथुः	जह्र	म०	जह्रिषे	जह्राथे	जह्रिध्वे
जहार, जहर	जह्रिव	जह्रिम	उ०	जह्रे	जह्रिवहे	जह्रिमहे
	लुङ् (४)				लुङ् (४)	
अहार्षीत्	अहार्ष्टाम्	अहार्षुः	प्र०	अहृत	अहृषाताम्	अहृषत
अहार्षीः	अहार्ष्टम्	अहार्ष्ट	म०	अहृथाः	अहृषाथाम्	अहृढ्वम्
अहार्षम्	अहार्ष्व	अहार्ष्म	उ०	अहृषि	अहृष्वहि	अहृष्महि

(२) अदादिगण (परस्मैपदी धातुएँ)

(२६) अद् (खाना) (देखो अभ्यास २३) (२७) अस् (होना) (देखो अ० ४, २४)

	लट्				लट्	
अत्ति	अत्तः	अदन्ति	प्र०	अस्ति	स्तः	सन्ति
अत्सि	अत्थः	अत्थ	म०	असि	स्थः	स्थ
अद्मि	अद्वः	अद्मः	उ०	अस्मि	स्वः	स्मः
	लोट्				लोट्	
अत्तु	अत्ताम्	अदन्तु	प्र०	अस्तु	स्ताम्	सन्तु
अद्धि	अत्तम्	अत्त	म०	एधि	स्तम्	स्त
अदानि	अदाव	अदाम	उ०	असानि	असाव	असाम
	लङ्				लङ्	
आदत्	आत्ताम्	आदन्	प्र०	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
आदः	आत्तम्	आत्त	म०	आसीः	आस्तम्	आस्त
आदम्	आद्व	आद्म	उ०	आसम्	आस्व	आस्म
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
अद्यात्	अद्याताम्	अद्युः	प्र०	स्यात्	स्याताम्	स्युः
अद्याः	अद्यातम्	अद्यात	म०	स्याः	स्यातम्	स्यात
अद्याम्	अद्याव	अद्याम	उ०	स्याम्	स्याव	स्याम

अत्स्यति	अत्स्यतः	अत्स्यन्ति	लृट्	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
अत्ता	अत्तारौ	अत्तारः	लुट्	भविता	भवितारौ	भवितारः
अद्यात्	अद्यास्ताम्	अद्यासुः	आ० लिङ्	भूयात्	भूयास्ताम्	भूयासुः
आत्स्यत्	आत्स्यताम्	आत्स्यन्	लृङ्	अभविष्यत्	अभविष्यताम्	अभविष्यन्
	लिट् (क) (अद् को घस्)				लिट्	
जघास	जक्षतुः	जक्षुः	प्र०	बभूव	बभूवतुः	बभूवुः
जघसिथ	जक्षथुः	जक्ष	म०	बभूविथ	बभूवथुः	बभूव
जघास, जघस	जक्षिव	जक्षिम	उ०	बभूव	बभूविव	बभूविम
	लिट् (ख)				लुङ् (१)	
आद	आदतुः	आदुः	प्र०	अभूत्	अभूताम्	अभूवन्
आदिथ	आदथुः	आद	म०	अभूः	अभूतम्	अभूत
आद	आदिव	आदिम	उ०	अभूवम्	अभूव	अभूम
	लुङ् (२) (अद् को घस्)					
अघसत्	अघसताम्	अघसन्	प्र०			
अघसः	अघसतम्	अघसत	म०			
अघसम्	अघसाव	अघसाम	उ०			

सूचना—अस् धातु को लृट् आदि ६ लकारों में भू हो जाता है। अतः वहाँ भू के तुल्य रूप चलेंगे।

(२८) (ब्रू कहना) (देखो अभ्यास २५)।

सूचना—दोनों पदों में लट् आदि ६ लकारों में ब्रू को वच् हो जाता है।

परस्मैपद				आत्मनेपद		
लट्				लट्		
ब्रवीति / आह	ब्रूतः / आहतुः	ब्रुवन्ति / आहुः	प्र०	ब्रूते	ब्रुवाते	ब्रुवते
ब्रवीषि / आत्थ	ब्रूथः / आहथुः	ब्रूथ	म०	ब्रूषे	ब्रुवाथे	ब्रूध्वे
ब्रवीमि	ब्रूवः	ब्रूमः	उ०	ब्रुवे	ब्रूवहे	ब्रूमहे
लोट्				लोट्		
ब्रवीतु	ब्रूताम्	ब्रुवन्तु	प्र०	ब्रूताम्	ब्रुवाताम्	ब्रुवताम्
ब्रूहि	ब्रूतम्	ब्रूत	म०	ब्रूष्व	ब्रुवाथाम्	ब्रूध्वम्
ब्रवाणि	ब्रवाव	ब्रवाम	उ०	ब्रवै	ब्रवावहै	ब्रवामहै
लङ्				लङ्		
अब्रवीत्	अब्रूताम्	अब्रुवन्	प्र०	अब्रूत	अब्रुवाताम्	अब्रुवत
अब्रवीः	अब्रूतम्	अब्रूत	म०	अब्रूथाः	अब्रुवाथाम्	अब्रूध्वम्
अब्रवम्	अब्रूव	अब्रूम	उ०	अब्रुवि	अब्रूवहि	अब्रूमहि
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
ब्रूयात्	ब्रूयाताम्	ब्रूयुः	प्र०	ब्रुवीत	ब्रुवीयाताम्	ब्रुवीरन्
ब्रूयाः	ब्रूयातम्	ब्रूयात	म०	ब्रुवीथाः	ब्रुवीयाथाम्	ब्रुवीध्वम्
ब्रूयाम्	ब्रूयाव	ब्रूयाम	उ०	ब्रुवीय	ब्रुवीवहि	ब्रुवीमहि

वक्ष्यति	वक्ष्यतः	वक्ष्यन्ति	लृट्	वक्ष्यते	वक्ष्येते	वक्ष्यन्ते
वक्ता	वक्तारौ	वक्तारः	लुट्	वक्ता	वक्तारौ	वक्तारः
उच्यात्	उच्यास्ताम्	उच्यासुः	आ० लिङ्	वक्षीष्ट	वक्षीयास्ताम्	वक्षीरन्
अवक्ष्यत्	अवक्ष्यताम्	अवक्ष्यन्	लृङ्	अवक्ष्यत	अवक्ष्येताम्	अवक्ष्यन्त
लिट्				लिट्		
उवाच	ऊचतुः	ऊचुः	प्र०	ऊचे	ऊचाते	ऊचिरे
उवचिथ, उवक्थ	ऊचथुः	ऊच	म०	ऊचिषे	ऊचाथे	ऊचिध्वे
उवाच, उवच	ऊचिव	ऊचिम	उ०	ऊचे	ऊचिवहे	ऊचिमहे
लुङ् (२)				लुङ् (२)		
अवोचत्	अवोचताम्	अवोचन्	प्र०	अवोचत	अवोचेताम्	अवोचन्त
अवोचः	अवोचतम्	अवोचत	म०	अवोचथाः	अवोचेथाम्	अवोचध्वम्
अवोचम्	अवोचाव	अवोचाम	उ०	अवोचे	अवोचावहि	अवोचामहि

(२९) दुह् (दुहना) (देखो अभ्यास २७)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
दोग्धि	दुग्धः	दुहन्ति	प्र०	दुग्धे	दुहाते	दुहते
धोक्षि	दुग्धः	दुग्ध	म०	धुक्षे	दुहाथे	धुग्ध्वे
दोह्मि	दुह्वः	दुह्मः	उ०	दुहे	दुह्वहे	दुह्महे
लोट्				लोट्		
दोग्धु	दुग्धाम्	दुहन्तु	प्र०	दुग्धाम्	दुहाताम्	दुहताम्
दुग्धि	दुग्धम्	दुग्ध	म०	धुक्ष्व	दुहाथाम्	धुग्ध्वम्
दोहानि	दोहाव	दोहाम	उ०	दोहै	दोहावहै	दोहामहै
लङ्				लङ्		
अधोक्-ग्	अदुग्धाम्	अदुहन्	प्र०	अदुग्ध	अदुहाताम्	अदुहत
अधोक्-ग्	अदुग्धम्	अदुग्ध	म०	अदुग्धाः	अदुहाथाम्	अधुग्ध्वम्
अदोहम्	अदुह्व	अदुह्म	उ०	अदुहि	अदुह्वहि	अदुह्महि
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
दुह्यात्	दुह्याताम्	दुह्युः	प्र०	दुहीत	दुहीयाताम्	दुहीरन्
दुह्याः	दुह्यातम्	दुह्यात	म०	दुहीथाः	दुहीयाथाम्	दुहीध्वम्
दुह्याम्	दुह्याव	दुह्याम	उ०	दुहीय	दुहीवहि	दुहीमहि
धोक्ष्यति	धोक्ष्यतः	धोक्ष्यन्ति	लृट्	धोक्ष्यते	धोक्ष्येते	धोक्ष्यन्ते
दोग्धा	दोग्धारौ	दोग्धारः	लुट्	दोग्धा	दोग्धारौ	दोग्धारः
दुह्यात्	दुह्यास्ताम्	दुह्यासुः	आ०लिङ्	धुक्षीष्ट	धुक्षीयास्ताम्	धुक्षीरन्
अधोक्ष्यत्	अधोक्ष्यताम्	अधोक्ष्यन्	लृङ्	अधोक्ष्यत	अधोक्ष्येताम्	अधोक्ष्यन्त
लिट्				लिट्		
दुदोह	दुदुहतुः	दुदुहुः	प्र०	दुदुहे	दुदुहाते	दुदुहिरे
दुदोहिथ	दुदुहथुः	दुदुह	म०	दुदुहिषे	दुदुहाथे	दुदुहिध्वे
दुदोह	दुदुहिव	दुदुहिम	उ०	दुदुहे	दुदुहिवहे	दुदुहिमहे
लुङ् (७)				लुङ् (७)		
अधुक्षत्	अधुक्षताम्	अधुक्षन्	प्र०	अधुक्षत	अधुक्षाताम्	अधुक्षन्त
अधुक्षः	अधुक्षतम्	अधुक्षत	म०	अधुक्षथाः	अधुक्षाथाम्	अधुक्षध्वम्
अधुक्षम्	अधुक्षाव	अधुक्षाम	उ०	अधुक्षि	अधुक्षावहि	अधुक्षामहि

सूचना—लुङ् में प्र० एक० में अदुग्ध, म० एक० में अदुग्धाः, म० बहु० में अधुग्ध्वम् और उ० द्वि० में अदुह्वहि, ये रूप भी बनते हैं।

(३०) रुद् (रोना) (देखो अ० २६) (३१) स्वप् (सोना) (देखो अ० २८)

रुद्				स्वप्		
लट्				लट्		
रोदिति	रुदितः	रुदन्ति	प्र०	स्वपिति	स्वपितः	स्वपन्ति
रोदिषि	रुदिथः	रुदिथ	म०	स्वपिषि	स्वपिथः	स्वपिथ
रोदिमि	रुदिवः	रुदिमः	उ०	स्वपिमि	स्वपिवः	स्वपिमः
लोट्				लोट्		
रोदितु	रुदिताम्	रुदन्तु	प्र०	स्वपितु	स्वपिताम्	स्वपन्तु
रुदिहि	रुदितम्	रुदित	म०	स्वपिहि	स्वपितम्	स्वपित
रोदानि	रोदाव	रोदाम	उ०	स्वपानि	स्वपाव	स्वपाम
लङ्				लङ्		
अरोदीत्, अरोदत्	अरुदिताम्	अरुदन्	प्र०	अस्वपीत्, अस्वपत्	अस्वपिताम्	अस्वपन्
अरोदीः, अरोदः	अरुदितम्	अरुदित	म०	अस्वपीः, अस्वपः	अस्वपितम्	अस्वपित
अरोदम्	अरुदिव	अरुदिम	उ०	अस्वपम्	अस्वपिव	अस्वपिम
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
रुद्यात्	रुद्याताम्	रुद्युः	प्र०	स्वप्यात्	स्वप्याताम्	स्वप्युः
रुद्याः	रुद्यातम्	रुद्यात	म०	स्वप्याः	स्वप्यातम्	स्वप्यात
रुद्याम्	रुद्याव	रुद्याम	उ०	स्वप्याम्	स्वप्याव	स्वप्याम
रोदिष्यति	रोदिष्यतः	रोदिष्यन्ति	लृट्	स्वप्स्यति	स्वप्स्यतः	स्वप्स्यन्ति
रोदिता	रोदितारौ	रोदितारः	लुट्	स्वप्ता	स्वप्तारौ	स्वप्तारः
रुद्यात्	रुद्यास्ताम्	रुद्यासुः	आ० लिङ्	सुप्यात्	सुप्यास्ताम्	सुप्यासुः
अरोदिष्यत्	अरोदिष्यताम्	अरोदिष्यन्	लृङ्	अस्वप्स्यत्	अस्वप्स्यताम्	अस्वप्स्यन्
लिट्				लिट्		
रुरोद	रुरुदतुः	रुरुदुः	प्र०	सुष्वाप	सुषुपतुः	सुषुपुः
रुरोदिथ	रुरुदथुः	रुरुद	म०	सुष्वपिथ, सुष्वप्थ	सुषुपथुः	सुषुप
रुरोद	रुरुदिव	रुरुदिम	उ०	सुष्वाप, सुष्वप	सुषुपिव	सुषुपिम
लुङ् (क) (२)				लुङ् (४)		
अरुदत्	अरुदताम्	अरुदन्	प्र०	अस्वाप्सीत्	अस्वाप्ताम्	अस्वाप्सुः
अरुदः	अरुदतम्	अरुदत	म०	अस्वाप्सीः	अस्वाप्तम्	अस्वाप्त
अरुदम्	अरुदाव	अरुदाम	उ०	अस्वाप्सम्	अस्वाप्स्व	अस्वाप्स्म
लुङ् (ख) (५)						
अरोदीत्	अरोदिष्टाम्	अरोदिषुः	प्र०			
अरोदीः	अरोदिष्टम्	अरोदिष्ट	म०			
अरोदिषम्	अरोदिष्व	अरोदिष्म	उ०			

(३२) हन् (मारना) (देखो अ० २९) (३३) इ (जाना) (देखो अ० ३०)

लट्				लट्		
हन्ति	हतः	घ्नन्ति	प्र०	एति	इतः	यन्ति
हन्सि	हथः	हथ	म०	एषि	इथः	इथ
हन्मि	हन्वः	हन्मः	उ०	एमि	इवः	इमः
लोट्				लोट्		
हन्तु	हताम्	घ्नन्तु	प्र०	एतु	इताम्	यन्तु
जहि	हतम्	हत	म०	इहि	इतम्	इत
हनानि	हनाव	हनाम	उ०	अयानि	अयाव	अयाम
लङ्				लङ्		
अहन्	अहताम्	अघ्नन्	प्र०	ऐत्	ऐताम्	आयन्
अहः	अहतम्	अहत	म०	ऐः	ऐतम्	ऐत
अहनम्	अहन्व	अहन्म	उ०	आयम्	ऐव	ऐम
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
हन्यात्	हन्याताम्	हन्युः	प्र०	इयात्	इयाताम्	इयुः
हन्याः	हन्यातम्	हन्यात	म०	इयाः	इयातम्	इयात
हन्याम्	हन्याव	हन्याम	उ०	इयाम्	इयाव	इयाम
हनिष्यति	हनिष्यतः	हनिष्यन्ति	लृट्	एष्यति	एष्यतः	एष्यन्ति
हन्ता	हन्तारौ	हन्तारः	लुट्	एता	एतारौ	एतारः
वध्यात्	वध्यास्ताम्	वध्यासुः	आ० लिङ्	ईयात्	ईयास्ताम्	ईयासुः
अहनिष्यत्	अहनिष्यताम्	अहनिष्यन्	लृङ्	ऐष्यत्	ऐष्यताम्	ऐष्यन्
लिट्				लिट्		
जघान	जघ्नतुः	जघ्नुः	प्र०	इयाय	ईयतुः	ईयुः
जघनिथ, जघन्थ	जघ्नथुः	जघ्न	म०	इययिथ, इयेथ	ईयथुः	ईय
जघान, जघन	जघ्निव	जघ्निम	उ०	इयाय, इयय	ईयिव	ईयिम
लुङ् (५) (हन् को वध्)				लुङ् (१) (इ को गा)		
अवधीत्	अवधिष्टाम्	अवधिषुः	प्र०	अगात्	अगाताम्	अगुः
अवधीः	अवधिष्टम्	अवधिष्ट	म०	अगाः	अगातम्	अगात
अवधिषम्	अवधिष्व	अवधिष्म	उ०	अगाम्	अगाव	अगाम

सूचना – आशीर्लिङ् और लुङ् में हन् को वध् हो जाता है।

सूचना—इ को लुङ् में गा होता है

अदादिगण—आत्मनेपदी धातुएँ

(३४) आस् (बैठना) (देखो अ० ३६) (३५) शी (सोना) (देखो अ० ३७)

आस्				शी		
	लट्				लट्	
आस्ते	आसाते	आसते	प्र०	शेते	शयाते	शेरते
आस्से	आसाथे	आध्वे	म०	शेषे	शयाथे	शेध्वे
आसे	आस्वहे	आस्महे	उ०	शये	शेवहे	शेमहे
	लोट्				लोट्	
आस्ताम्	आसाताम्	आसताम्	प्र०	शेताम्	शयाताम्	शेरताम्
आस्स्व	आसाथाम्	आध्वम्	म०	शेष्व	शयाथाम्	शेध्वम्
आसै	आसावहै	आसामहै	उ०	शयै	शयावहै	शयामहै
	लङ्				लङ्	
आस्त	आसाताम्	आसत	प्र०	अशेत	अशयाताम्	अशेरत
आस्थाः	आसाथाम्	आध्वम्	म०	अशेथाः	अशयाथाम्	अशेध्वम्
आसि	आस्वहि	आस्महि	उ०	अशयि	अशेवहि	अशेमहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
आसीत	आसीयाताम्	आसीरन्	प्र०	शयीत	शयीयाताम्	शयीरन्
आसीथाः	आसीयाथाम्	आसीध्वम्	म०	शयीथाः	शयीयाथाम्	शयीध्वम्
आसीय	आसीवहि	आसीमहि	उ०	शयीय	शयीवहि	शयीमहि
आसिष्यते	आसिष्येते	आसिष्यन्ते	लृट्	शयिष्यते	शयिष्येते	शयिष्यन्ते
आसिता	आसितारौ	आसितारः	लुट्	शयिता	शयितारौ	शयितारः
आसिषीष्ट	आसिषीयास्ताम्	०	आ० लिङ्	शयिषीष्ट	शयिषीयास्ताम्	०
आसिष्यत	आसिष्येताम्	आसिष्यन्त	लृङ्	अशयिष्यत	अशयिष्येताम्	०
	लिट् (आसां + कृ)				लिट्	
आसांचक्रे	आसांचक्राते	आसांचक्रिरे	प्र०	शिश्ये	शिश्याते	शिश्यिरे
—चकृषे	—चक्राथे	—चकृढ्वे	म०	शिश्यिषे	शिश्याथे	शिश्यिध्वे
—चक्रे	—चकृवहे	—चकृमहे	उ०	शिश्ये	शिश्यिवहे	शिश्यिमहे
	लुङ् (५)				लुङ् (५)	
आसिष्ट	आसिषाताम्	आसिषत	प्र०	अशयिष्ट	अशयिषाताम्	अशयिषत
आसिष्ठाः	आसिषाथाम्	आसिध्वम्	म०	अशयिष्ठाः	अशयिषाथाम्	अशयिध्वम्
आसिषि	आसिष्वहि	आसिष्महि	उ०	अशयिषि	अशयिष्वहि	अशयिष्महि

(३) जुहोत्यादिगण (परस्मैपदी धातुएँ)

(३६) हु (हवन करना) (देखो अ० ३८) | (३७) भी (डरना) (देखो अ० ३९)

हु				भी		
	लट्				लट्	
जुहोति	जुहुतः	जुह्वति	प्र०	बिभेति	बिभीतः	बिभ्यति
जुहोषि	जुहुथः	जुहुथ	म०	बिभेषि	बिभीथः	बिभीथ
जुहोमि	जुहुवः	जुहुमः	उ०	बिभेमि	बिभीवः	बिभीमः
	लोट्				लोट्	
जुहोतु	जुहुताम्	जुह्वतु	प्र०	बिभेतु	बिभीताम्	बिभ्यतु
जुहुधि	जुहुतम्	जुहुत	म०	बिभीहि	बिभीतम्	बिभीत
जुहवानि	जुहवाव	जुहवाम	उ०	बिभयानि	बिभयाव	बिभयाम
	लङ्				लङ्	
अजुहोत्	अजुहुताम्	अजुहवुः	प्र०	अबिभेत्	अबिभीताम्	अबिभयुः
अजुहोः	अजुहुतम्	अजुहुत	म०	अबिभेः	अबिभीतम्	अबिभीत
अजुहवम्	अजुहुव	अजुहुम	उ०	अबिभयम्	अबिभीव	अबिभीम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
जुहुयात्	जुहुयाताम्	जुहुयुः	प्र०	बिभीयात्	बिभीयाताम्	बिभीयुः
जुहुयाः	जुहुयातम्	जुहुयात	म०	बिभीयाः	बिभीयातम्	बिभीयात
जुहुयाम्	जुहुयाव	जुहुयाम	उ०	बिभीयाम्	बिभीयाव	बिभीयाम
होष्यति	होष्यतः	होष्यन्ति	लृट्	भेष्यति	भेष्यतः	भेष्यन्ति
होता	होतारौ	होतारः	लुट्	भेता	भेतारौ	भेतारः
हूयात्	हूयास्ताम्	हूयासुः	आ०लिङ्	भीयात्	भीयास्ताम्	भीयासुः
अहोष्यत्	अहोष्यताम्	अहोष्यन्	लृङ्	अभेष्यत्	अभेष्यताम्	अभेष्यन्
	लिट् (क)				लिट् (क)	
जुहाव	जुहुवतुः	जुहुवुः	प्र०	बिभाय	बिभ्यतुः	बिभ्युः
जुहविथ, जुहोथ	जुहुवथुः	जुहुव	म०	बिभयिथ, बिभेथ	बिभ्यथुः	बिभ्य
जुहाव, जुहव	जुहुविव	जुहुविम	उ०	बिभाय, बिभय	बिभ्यिव	बिभ्यिम
	लिट् (ख) (जुहवां + कृ)				लिट् (ख) (बिभयां + कृ)	
जुहवांचकार	-चक्रतुः	चक्रुः	प्र०	बिभयांचकार	-चक्रतुः	-चक्रुः
-चकर्थ	-चक्रथुः	-चक्र	म०	-चकर्थ	-चक्रथुः	-चक्र
-चकार, चकर	-चकृव	-चकृम	उ०	-चकार, चकर	-चकृव	-चकृम
	लुङ् (४)				लुङ् (४)	
अहौषीत्	अहौष्टाम्	अहौषुः	प्र०	अभैषीत्	अभैष्टाम्	अभैषुः
अहौषीः	अहौष्टम्	अहौष्ट	म०	अभैषीः	अभैष्टम्	अभैष्ट
अहौषम्	अहौष्व	अहौष्म	उ०	अभैषम्	अभैष्व	अभैष्म

(३८) दा (देना) (देखो अभ्यास ४०)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
ददाति	दत्तः	ददति	प्र०	दत्ते	ददाते	ददते
ददासि	दत्थः	दत्थ	म०	दत्से	ददाथे	दद्ध्वे
ददामि	दद्वः	दद्मः	उ०	ददे	दद्वहे	दद्महे
	लोट्				लोट्	
ददातु	दत्ताम्	ददतु	प्र०	दत्ताम्	ददाताम्	ददताम्
देहि	दत्तम्	दत्त	म०	दत्स्व	ददाथाम्	दद्ध्वम्
ददानि	ददाव	ददाम	उ०	ददै	ददावहै	ददामहै
	लङ्				लङ्	
अददात्	अदत्ताम्	अददुः	प्र०	अदत्त	अददाताम्	अददत
अददाः	अदत्तम्	अदत्त	म०	अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्
अददाम्	अदद्व	अदद्म	उ०	अददि	अदद्वहि	अदद्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः	प्र०	ददीत	ददीयाताम्	ददीरन्
दद्याः	दद्यातम्	दद्यात	म०	ददीथाः	ददीयाथाम्	ददीध्वम्
दद्याम्	दद्याव	दद्याम	उ०	ददीय	ददीवहि	ददीमहि

दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति	लृट्	दास्यते	दास्येते	दास्यन्ते
दाता	दातारौ	दातारः	लुट्	दाता	दातारौ	दातारः
देयात्	देयास्ताम्	देयासुः	आ० लिङ्	दासीष्ट	दासीयास्ताम्	दासीरन्
अदास्यत्	अदास्यताम्	अदास्यन्	लृङ्	अदास्यत	अदास्येताम्	अदास्यन्त
	लिट्				लिट्	
ददौ	ददतुः	ददुः	प्र०	ददे	ददाते	ददिरे
ददिथ, ददाथ	ददथुः	दद	म०	ददिषे	ददाथे	ददिध्वे
ददौ	ददिव	ददिम	उ०	ददे	ददिवहे	ददिमहे
	लुङ् (१)				लुङ् (४)	
अदात्	अदाताम्	अदुः	प्र०	अदित	अदिषाताम्	अदिषत
अदाः	अदातम्	अदात	म०	अदिथाः	अदिषाथाम्	अदिध्वम्
अदाम्	अदाव	अदाम	उ०	अदिषि	अदिष्वहि	अदिष्महि

(३९) धा (धारण करना) (देखो अभ्यास ४०)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
दधाति	धत्तः	दधति	प्र०	धत्ते	दधाते	दधते
दधासि	धत्थः	धत्थ	म०	धत्से	दधाथे	धद्ध्वे
दधामि	दध्वः	दध्मः	उ०	दधे	दध्वहे	दध्महे
	लोट्				लोट्	
दधातु	धत्ताम्	दधतु	प्र०	धत्ताम्	दधाताम्	दधताम्
धेहि	धत्तम्	धत्त	म०	धत्स्व	दधाथाम्	धद्ध्वम्
दधानि	दधाव	दधाम	उ०	दधै	दधावहै	दधामहै
	लङ्				लङ्	
अदधात्	अधत्ताम्	अदधुः	प्र०	अधत्त	अदधाताम्	अदधत
अदधाः	अधत्तम्	अधत्त	म०	अधत्थाः	अदधाथाम्	अधद्ध्वम्
अदधाम्	अदध्व	अदध्म	उ०	अदधि	अदध्वहि	अदध्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
दध्यात्	दध्याताम्	दध्युः	प्र०	दधीत	दधीयाताम्	दधीरन्
दध्याः	दध्यातम्	दध्यात	म०	दधीथाः	दधीयाथाम्	दधीध्वम्
दध्याम्	दध्याव	दध्याम	उ०	दधीय	दधीवहि	दधीमहि
धास्यति	धास्यतः	धास्यन्ति	लृट्	धास्यते	धास्येते	धास्यन्ते
धाता	धातारौ	धातारः	लुट्	धाता	धातारौ	धातारः
धेयात्	धेयास्ताम्	धेयासुः	आ०लिङ्	धासीष्ट	धासीयास्ताम्	धासीरन्
अधास्यत्	अधास्यताम्	अधास्यन्	लृङ्	अधास्यत	अधास्येताम्	अधास्यन्त
	लिट्				लिट्	
दधौ	दधतुः	दधुः	प्र०	दधे	दधाते	दधिरे
दधिथ, दधाथ	दधथुः	दध	म०	दधिषे	दधाथे	दधिध्वे
दधौ	दधिव	दधिम	उ०	दधे	दधिवहे	दधिमहे
	लुङ् (१)				लुङ् (४)	
अधात्	अधाताम्	अधुः	प्र०	अधित	अधिषाताम्	अधिषत
अधाः	अधातम्	अधात	म०	अधिथाः	अधिषाथाम्	अधिध्वम्
अधाम्	अधाव	अधाम	उ०	अधिषि	अधिष्वहि	अधिष्महि

(४) दिवादिगण (परस्मैपदी धातुएँ)

(४०) दिव् (चमकना आदि) (देखो अ० ४१) (४१) नृत् (नाचना) (देखो अ० ४२)

	लट्				लट्	
दीव्यति	दीव्यतः	दीव्यन्ति	प्र०	नृत्यति	नृत्यतः	नृत्यन्ति
दीव्यसि	दीव्यथः	दीव्यथ	म०	नृत्यसि	नृत्यथः	नृत्यथ
दीव्यामि	दीव्यावः	दीव्यामः	उ०	नृत्यामि	नृत्यावः	नृत्यामः
	लोट्				लोट्	
दीव्यतु	दीव्यताम्	दीव्यन्तु	प्र०	नृत्यतु	नृत्यताम्	नृत्यन्तु
दीव्य	दीव्यतम्	दीव्यत	म०	नृत्य	नृत्यतम्	नृत्यत
दीव्यानि	दीव्याव	दीव्याम	उ०	नृत्यानि	नृत्याव	नृत्याम
	लङ्				लङ्	
अदीव्यत्	अदीव्यताम्	अदीव्यन्	प्र०	अनृत्यत्	अनृत्यताम्	अनृत्यन्
अदीव्यः	अदीव्यतम्	अदीव्यत	म०	अनृत्यः	अनृत्यतम्	अनृत्यत
अदीव्यम्	अदीव्याव	अदीव्याम	उ०	अनृत्यम्	अनृत्याव	अनृत्याम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
दीव्येत्	दीव्येताम्	दीव्येयुः	प्र०	नृत्येत्	नृत्येताम्	नृत्येयुः
दीव्येः	दीव्येतम्	दीव्येत	म०	नृत्येः	नृत्येतम्	नृत्येत
दीव्येयम्	दीव्येव	दीव्येम	उ०	नृत्येयम्	नृत्येव	नृत्येम

देविष्यति	देविष्यतः	देविष्यन्ति	लृट्	(क) नर्तिष्यति	(ख) नर्त्स्यति	(दोनोंप्रकारसे)
देविता	देवितारौ	देवितारः	लुट्	नर्तिता	नर्तितारौ	नर्तितारः
दीव्यात्	दीव्यास्ताम्	दीव्यासुः	आ०लिङ्	नृत्यात्	नृत्यास्ताम्	नृत्यासुः
अदेविष्यत्	अदेविष्यताम्	अदेविष्यन्	लृङ्	(क) अनर्तिष्यत्०	(ख) अनर्त्स्यत्०	आदि
	लिट्				लिट्	
दिदेव	दिदिवतुः	दिदिवुः	प्र०	ननर्त	ननृततुः	ननृतुः
दिदेविथ	दिदिवथुः	दिदिव	म०	ननर्तिथ	ननृतथुः	ननृत
दिदेव	दिदिविव	दिदिविम	उ०	ननर्त	ननृतिव	ननृतिम
	लुङ् (५)				लुङ् (५)	
अदेवीत्	अदेविष्टाम्	अदेविषुः	प्र०	अनर्तीत्	अनर्तिष्टाम्	अनर्तिषुः
अदेवीः	अदेविष्टम्	अदेविष्ट	म०	अनर्तीः	अनर्तिष्टम्	अनर्तिष्ट
अदेविषम्	अदेविष्व	अदेविष्म	उ०	अनर्तिषम्	अनर्तिष्व	अनर्तिष्म

(४२) **नश् (नष्ट होना)** (देखो अ० ४३)

	लट्		
नश्यति	नश्यतः	नश्यन्ति	प्र०
नश्यसि	नश्यथः	नश्यथ	म०
नश्यामि	नश्यावः	नश्यामः	उ०
	लोट्		
नश्यतु	नश्यताम्	नश्यन्तु	प्र०
नश्य	नश्यतम्	नश्यत	म०
नश्यानि	नश्याव	नश्याम	उ०
	लङ्		
अनश्यत्	अनश्यताम्	अनश्यन्	प्र०
अनश्यः	अनश्यतम्	अनश्यत	म०
अनश्यम्	अनश्याव	अनश्याम	उ०
	विधिलिङ्		
नश्येत्	नश्येताम्	नश्येयुः	प्र०
नश्येः	नश्येतम्	नश्येत	म०
नश्येयम्	नश्येव	नश्येम	उ०

(४३) **भ्रम् (घूमना)** (देखो अ० ४४)

	लट्		
प्र०	भ्राम्यति	भ्राम्यतः	भ्राम्यन्ति
म०	भ्राम्यसि	भ्राम्यथः	भ्राम्यथ
उ०	भ्राम्यामि	भ्राम्यावः	भ्राम्यामः
	लोट्		
प्र०	भ्राम्यतु	भ्राम्यताम्	भ्राम्यन्तु
म०	भ्राम्य	भ्राम्यतम्	भ्राम्यत
उ०	भ्राम्याणि	भ्राम्याव	भ्राम्याम
	लङ्		
प्र०	अभ्राम्यत्	अभ्राम्यताम्	अभ्राम्यन्
म०	अभ्राम्यः	अभ्राम्यतम्	अभ्राम्यत
उ०	अभ्राम्यम्	अभ्राम्याव	अभ्राम्याम
	विधिलिङ्		
प्र०	भ्राम्येत्	भ्राम्येताम्	भ्राम्येयुः
म०	भ्राम्येः	भ्राम्येतम्	भ्राम्येत
उ०	भ्राम्येयम्	भ्राम्येव	भ्राम्येम

(क) नशिष्यति (ख) नङ्क्ष्यति (दोनों प्रकार से) लृट् भ्रमिष्यति भ्रमिष्यतः भ्रमिष्यन्ति
(क) नशिता (ख) नंष्टा (,,) लुट् भ्रमिता भ्रमितारौ भ्रमितारः
नश्यात् नश्यास्ताम् नश्यासुः आ० लिङ् भ्रम्यात् भ्रम्यास्ताम् भ्रम्यासुः
(क) अनशिष्यत् (ख) अनङ्क्ष्यत् (दोनों प्रकार से) लृङ् अभ्रमिष्यत् अभ्रमिष्यताम् अभ्रमिष्यन्

	लिट्		
ननाश	नेशतुः	नेशुः	प्र०
नेशिथ / ननंष्ठ	नेशथुः	नेश	म०
ननाश / ननश	नेशिव / नेश्व	नेशिम / नेश्म	उ०
	लुङ् (२)		
अनशत्	अनशताम्	अनशन्	प्र०
अनशः	अनशतम्	अनशत	म०
अनशम्	अनशाव	अनशाम	उ०

	लिट्		
प्र०	बभ्राम	बभ्रमतुः / भ्रेमतुः	बभ्रमुः / भ्रेमुः
म०	बभ्रमिथ / भ्रेमिथ	बभ्रमथुः / भ्रेमथुः	बभ्रम / भ्रेम
उ०	बभ्राम / बभ्रम	बभ्रमिव / भ्रेमिव	बभ्रमिम / भ्रेमिम
	लुङ् (२)		
प्र०	अभ्रमत्	अभ्रमताम्	अभ्रमन्
म०	अभ्रमः	अभ्रमतम्	अभ्रमत
उ०	अभ्रमम्	अभ्रमाव	अभ्रमाम

(४४) युध् (लड़ना) (देखो अ० ४५)   (४५) जन् (उत्पन्न होना) (देखो अ० ४६)

	लट्				लट् (जन् को जा)	
युध्यते	युध्येते	युध्यन्ते	प्र०	जायते	जायेते	जायन्ते
युध्यसे	युध्येथे	युध्यध्वे	म०	जायसे	जायेथे	जायध्वे
युध्ये	युध्यावहे	युध्यामहे	उ०	जाये	जायावहे	जायामहे
	लोट्				लोट् (जन् को जा)	
युध्यताम्	युध्येताम्	युध्यन्ताम्	प्र०	जायताम्	जायेताम्	जायन्ताम्
युध्यस्व	युध्येथाम्	युध्यध्वम्	म०	जायस्व	जायेथाम्	जायध्वम्
युध्यै	युध्यावहै	युध्यामहै	उ०	जायै	जायावहै	जायामहै
	लङ्				लङ् (जन् को जा)	
अयुध्यत	अयुध्येताम्	अयुध्यन्त	प्र०	अजायत	अजायेताम्	अजायन्त
अयुध्यथाः	अयुध्येथाम्	अयुध्यध्वम्	म०	अजायथाः	अजायेथाम्	अजायध्वम्
अयुध्ये	अयुध्यावहि	अयुध्यामहि	उ०	अजाये	अजायावहि	अजायामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ् (जन् को जा)	
युध्येत	युध्येयाताम्	युध्येरन्	प्र०	जायेत	जायेयाताम्	जायेरन्
युध्येथाः	युध्येयाथाम्	युध्येध्वम्	म०	जायेथाः	जायेयाथाम्	जायेध्वम्
युध्येय	युध्येवहि	युध्येमहि	उ०	जायेय	जायेवहि	जायेमहि
योत्स्यते	योत्स्येते	योत्स्यन्ते	लृट्	जनिष्यते	जनिष्येते	जनिष्यन्ते
योद्धा	योद्धारौ	योद्धारः	लुट्	जनिता	जनितारौ	जनितारः
युत्सीष्ट	युत्सीयास्ताम्	०	आ० लिङ्	जनिषीष्ट	जनिषीयास्ताम्	०
अयोत्स्यत	अयोत्स्येताम्	०	लृङ्	अजनिष्यत	अजनिष्येताम्	०
	लिट्				लिट्	
युयुधे	युयुधाते	युयुधिरे	प्र०	जज्ञे	जज्ञाते	जज्ञिरे
युयुधिषे	युयुधाथे	युयुधिध्वे	म०	जज्ञिषे	जज्ञाथे	जज्ञिध्वे
युयुधे	युयुधिवहे	युयुधिमहे	उ०	जज्ञे	जज्ञिवहे	जज्ञिमहे
	लुङ् (४)				लुङ् (५)	
अयुद्ध	अयुत्साताम्	अयुत्सत	प्र०	अजनि, अजनिष्ट	अजनिषाताम्	अजनिषत
अयुद्धाः	अयुत्साथाम्	अयुद्ध्वम्	म०	अजनिष्ठाः	अजनिषाथाम्	अजनिध्वम्
अयुत्सि	अयुत्स्वहि	अयुत्स्महि	उ०	अजनिषि	अजनिष्वहि	अजनिष्महि

सूचना—लट् आदि में जन् को जा हो जाता है।

(५) स्वादिगण (उभयपदी धातु)

(४६) सु (स्नान करना या कराना, रस निकालना) (देखो अ० ४७)

परस्मैपद	लट्			आत्मनेपद	लट्	
सुनोति	सुनुतः	सुन्वन्ति	प्र०	सुनुते	सुन्वाते	सुन्वते
सुनोषि	सुनुथः	सुनुथ	म०	सुनुषे	सुन्वाथे	सुनुध्वे
सुनोमि	सुनुवः, सुन्वः	सुनुमः, सुन्मः	उ०	सुन्वे	सुनुवहे, सुन्वहे	सुनुमहे, सुन्महे
	लोट्				लोट्	
सुनोतु	सुनुताम्	सुन्वन्तु	प्र०	सुनुताम्	सुन्वाताम्	सुन्वताम्
सुनु	सुनुतम्	सुनुत	म०	सुनुष्व	सुन्वाथाम्	सुनुध्वम्
सुनवानि	सुनवाव	सुनवाम	उ०	सुनवै	सुनवावहै	सुनवामहै
	लङ्				लङ्	
असुनोत्	असुनुताम्	असुन्वन्	प्र०	असुनुत	असुन्वाताम्	असुन्वत
असुनोः	असुनुतम्	असुनुत	म०	असुनुथाः	असुन्वाथाम्	असुनुध्वम्
असुनवम्	असुनुव	असुनुम	उ०	असुन्वि	असुनुवहि, असुन्वहि	असुनुमहि, असुन्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
सुनुयात्	सुनुयाताम्	सुनुयुः	प्र०	सुन्वीत	सुन्वीयाताम्	सुन्वीरन्
सुनुयाः	सुनुयातम्	सुनुयात	म०	सुन्वीथाः	सुन्वीयाथाम्	सुन्वीध्वम्
सुनुयाम्	सुनुयाव	सुनुयाम	उ०	सुन्वीय	सुन्वीवहि	सुन्वीमहि
सोष्यति	सोष्यतः	सोष्यन्ति	लृट्	सोष्यते	सोष्येते	सोष्यन्ते
सोता	सोतारौ	सोतारः	लुट्	सोता	सोतारौ	सोतारः
सूयात्	सूयास्ताम्	सूयासुः	आ० लिङ्	सोषीष्ट	सोषीयास्ताम्	सोषीरन्
असोष्यत्	असोष्यताम्	असोष्यन्	लृङ्	असोष्यत	असोष्येताम्	असोष्यन्त
	लिट्				लिट्	
सुषाव	सुषुवतुः	सुषुवुः	प्र०	सुषुवे	सुषुवाते	सुषुविरे
सुषविथ, सुषोथ	सुषुवथुः	सुषुव	म०	सुषुविषे	सुषुवाथे	सुषुविध्वे
सुषाव, सुषव	सुषुविव	सुषुविम	उ०	सुषुवे	सुषुविवहे	सुषुविमहे
	लुङ् (५)				लुङ् (४)	
असावीत्	असाविष्टाम्	असाविषुः	प्र०	असोष्ट	असोषाताम्	असोषत
असावीः	असाविष्टम्	असाविष्ट	म०	असोष्ठाः	असोषाथाम्	असोढ्वम्
असाविषम्	असाविष्व	असाविष्म	उ०	असोषि	असोष्वहि	असोष्महि

परस्मैपदी धातुएँ

(४७) आप् (पाना) (देखो अ० ४८) (४८) शक् (सकना) (देखो अ० ४९)

	लट्				लट्	
आप्नोति	आप्नुतः	आप्नुवन्ति	प्र०	शक्नोति	शक्नुतः	शक्नुवन्ति
आप्नोषि	आप्नुथः	आप्नुथ	म०	शक्नोषि	शक्नुथः	शक्नुथ
आप्नोमि	आप्नुवः	आप्नुमः	उ०	शक्नोमि	शक्नुवः	शक्नुमः
	लोट्				लोट्	
आप्नोतु	आप्नुताम्	आप्नुवन्तु	प्र०	शक्नोतु	शक्नुताम्	शक्नुवन्तु
आप्नुहि	आप्नुतम्	आप्नुत	म०	शक्नुहि	शक्नुतम्	शक्नुत
आप्नवानि	आप्नवाव	आप्नवाम	उ०	शक्नवानि	शक्नवाव	शक्नवाम
	लङ्				लङ्	
आप्नोत्	आप्नुताम्	आप्नुवन्	प्र०	अशक्नोत्	अशक्नुताम्	अशक्नुवन्
आप्नोः	आप्नुतम्	आप्नुत	म०	अशक्नोः	अशक्नुतम्	अशक्नुत
आप्नवम्	आप्नुव	आप्नुम	उ०	अशक्नवम्	अशक्नुव	अशक्नुम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
आप्नुयात्	आप्नुयाताम्	आप्नुयुः	प्र०	शक्नुयात्	शक्नुयाताम्	शक्नुयुः
आप्नुयाः	आप्नुयातम्	आप्नुयात	म०	शक्नुयाः	शक्नुयातम्	शक्नुयात
आप्नुयाम्	आप्नुयाव	आप्नुयाम	उ०	शक्नुयाम्	शक्नुयाव	शक्नुयाम

आप्स्यति	आप्स्यतः	आप्स्यन्ति	लृट्	शक्ष्यति	शक्ष्यतः	शक्ष्यन्ति
आप्ता	आप्तारौ	आप्तारः	लुट्	शक्ता	शक्तारौ	शक्तारः
आप्यात्	आप्यास्ताम्	आप्यासुः	आ० लिङ्	शक्यात्	शक्यास्ताम्	शक्यासुः
आप्स्यत्	आप्स्यताम्	आप्स्यन्	लृङ्	अशक्ष्यत्	अशक्ष्यताम्	अशक्ष्यन्
	लिट्				लिट्	
आप	आपतुः	आपुः	प्र०	शशाक	शेकतुः	शेकुः
आपिथ	आपथुः	आप	म०	शेकिथ, शशक्थ	शेकथुः	शेक
आप	आपिव	आपिम	उ०	शशाक, शशक	शेकिव	शेकिम
	लुङ् (२)				लुङ् (२)	
आपत्	आपताम्	आपन्	प्र०	अशकत्	अशकताम्	अशकन्
आपः	आपतम्	आपत	म०	अशकः	अशकतम्	अशकत
आपम्	आपाव	आपाम	उ०	अशकम्	अशकाव	अशकाम

(६) तुदादिगण

(परस्मैपदी धातुएँ)

(४९) तुद् (दुःख देना) (देखो अ० ५)

सूचना—तुद् उभयपदी है। यहाँ केवल परस्मैपद के रूप दिये हैं। आत्मने० में सेव् के तुल्य।

(५०) इष् (चाहना) (देखो अ० ५)

सूचना—लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में इष् को इच्छ् हो जाता है।

	लट्				लट्	
तुदति	तुदतः	तुदन्ति	प्र०	इच्छति	इच्छतः	इच्छन्ति
तुदसि	तुदथः	तुदथ	म०	इच्छसि	इच्छथः	इच्छथ
तुदामि	तुदावः	तुदामः	उ०	इच्छामि	इच्छावः	इच्छामः
	लोट्				लोट्	
तुदतु	तुदताम्	तुदन्तु	प्र०	इच्छतु	इच्छताम्	इच्छन्तु
तुद	तुदतम्	तुदत	म०	इच्छ	इच्छतम्	इच्छत
तुदानि	तुदाव	तुदाम	उ०	इच्छानि	इच्छाव	इच्छाम
	लङ्				लङ्	
अतुदत्	अतुदताम्	अतुदन्	प्र०	ऐच्छत्	ऐच्छताम्	ऐच्छन्
अतुदः	अतुदतम्	अतुदत	म०	ऐच्छः	ऐच्छतम्	ऐच्छत
अतुदम्	अतुदाव	अतुदाम	उ०	ऐच्छम्	ऐच्छाव	ऐच्छाम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
तुदेत्	तुदेताम्	तुदेयुः	प्र०	इच्छेत्	इच्छेताम्	इच्छेयुः
तुदेः	तुदेतम्	तुदेत	म०	इच्छेः	इच्छेतम्	इच्छेत
तुदेयम्	तुदेव	तुदेम	उ०	इच्छेयम्	इच्छेव	इच्छेम

तोत्स्यति	तोत्स्यतः	तोत्स्यन्ति	लृट्	एषिष्यति	एषिष्यतः	एषिष्यन्ति
तोत्ता	तोत्तारौ	तोत्तारः	लुट्	(क) एषिता (ख) एष्टा (दोनों प्रकार से)		
तुद्यात्	तुद्यास्ताम्	तुद्यासुः	आ०लिङ्	इष्यात्	इष्यास्ताम्	इष्यासुः
अतोत्स्यत्	अतोत्स्यताम्	अतोत्स्यन्	लृङ्	ऐषिष्यत्	ऐषिष्यताम्	ऐषिष्यन्
	लिट्				लिट्	
तुतोद	तुतुदतुः	तुतुदुः	प्र०	इयेष	ईषतुः	ईषुः
तुतोदिथ	तुतुदथुः	तुतुद	म०	इयेषिथ	ईषथुः	ईष
तुतोद	तुतुदिव	तुतुदिम	उ०	इयेष	ईषिव	ईषिम
	लुङ् (४)				लुङ् (५)	
अतौत्सीत्	अतौत्ताम्	अतौत्सुः	प्र०	ऐषीत्	ऐषिष्टाम्	ऐषिषुः
अतौत्सीः	अतौत्तम्	अतौत्त	म०	ऐषीः	ऐषिष्टम्	ऐषिष्ट
अतौत्सम्	अतौत्स्व	अतौत्स्म	उ०	ऐषिषम्	ऐषिष्व	ऐषिष्म

(५१) स्पृश् (छूना) (देखो अ० ५)				(५२) प्रच्छ् (पूछना) (देखो अ० ५)		
	लट्				लट् (प्रच्छ् को पृच्छ्)	
स्पृशति	स्पृशतः	स्पृशन्ति	प्र०	पृच्छति	पृच्छतः	पृच्छन्ति
स्पृशसि	स्पृशथः	स्पृशथ	म०	पृच्छसि	पृच्छथः	पृच्छथ
स्पृशामि	स्पृशावः	स्पृशामः	उ०	पृच्छामि	पृच्छावः	पृच्छामः
	लोट्				लोट् (प्रच्छ् को पृच्छ्)	
स्पृशतु	स्पृशताम्	स्पृशन्तु	प्र०	पृच्छतु	पृच्छताम्	पृच्छन्तु
स्पृश	स्पृशतम्	स्पृशत	म०	पृच्छ	पृच्छतम्	पृच्छत
स्पृशानि	स्पृशाव	स्पृशाम	उ०	पृच्छानि	पृच्छाव	पृच्छाम
	लङ्				लङ् (प्रच्छ् को पृच्छ्)	
अस्पृशत्	अस्पृशताम्	अस्पृशन्	प्र०	अपृच्छत्	अपृच्छताम्	अपृच्छन्
अस्पृशः	अस्पृशतम्	अस्पृशत	म०	अपृच्छः	अपृच्छतम्	अपृच्छत
अस्पृशम्	अस्पृशाव	अस्पृशाम	उ०	अपृच्छम्	अपृच्छाव	अपृच्छाम
	विधिलिङ्				विधिलिङ् (प्रच्छ् को पृच्छ्)	
स्पृशेत्	स्पृशेताम्	स्पृशेयुः	प्र०	पृच्छेत्	पृच्छेताम्	पृच्छेयुः
स्पृशेः	स्पृशेतम्	स्पृशेत	म०	पृच्छेः	पृच्छेतम्	पृच्छेत
स्पृशेयम्	स्पृशेव	स्पृशेम	उ०	पृच्छेयम्	पृच्छेव	पृच्छेम

(क) स्पर्क्ष्यति (ख) स्प्रक्ष्यति (दोनों प्रकार से) लृट् प्रक्ष्यति प्रक्ष्यतः प्रक्ष्यन्ति
(क) स्पर्ष्टा (ख) स्प्रष्टा (,,) लुट् प्रष्टा प्रष्टारौ प्रष्टारः
स्पृश्यात् स्पृश्यास्ताम् स्पृश्यासुः आ० लिङ् पृच्छ्यात् पृच्छ्यास्ताम् पृच्छ्यासुः
(क) अस्पर्क्ष्यत् (ख) अस्प्रक्ष्यत् (दोनों प्रकार से) लृङ् अप्रक्ष्यत् अप्रक्ष्यताम् अप्रक्ष्यन्

	लि				लिट्	
पस्पर्श	पस्पृशतुः	पस्पृशुः	प्र०	पप्रच्छ	पप्रच्छतुः	पप्रच्छुः
पस्पर्शिथ	पस्पृशथुः	पस्पृश	म०	पप्रच्छिथ, पप्रष्ठ	पप्रच्छथुः	पप्रच्छ
पस्पर्श	पस्पृशिव	पस्पृशिम	उ०	पप्रच्छ	पप्रच्छिव	पप्रच्छिम
	लुङ् (क) (४)				लुङ् (४)	
अस्पार्क्षीत्	अस्पार्ष्टाम्	अस्पार्क्षुः	प्र०	अप्राक्षीत्	अप्राष्टाम्	अप्राक्षुः
अस्पार्क्षीः	अस्पार्ष्टम्	अस्पार्ष्ट	म०	अप्राक्षीः	अप्राष्टम्	अप्राष्ट
अस्पार्क्षम्	अस्पार्क्ष्व	अस्पार्क्ष्म	उ०	अप्राक्षम्	अप्राक्ष्व	अप्राक्ष्म

(ख)(४) अस्प्राक्षीत् अस्प्राष्टाम्० (पूर्ववत्)
(ग)(७) अस्पृक्षत् अस्पृक्षताम् अस्पृक्षन् प्र०
अस्पृक्षः अस्पृक्षतम् अस्पृक्षत म०
अस्पृक्षम् अस्पृक्षाव अस्पृक्षाम उ०

सूचना—लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में प्रच्छ् को पृच्छ् हो जाता है।

(५३) लिख् (लिखना) (देखो अ० १)

	लट्					
लिखति	लिखतः	लिखन्ति	प्र०			
लिखसि	लिखथः	लिखथ	म०			
लिखामि	लिखावः	लिखामः	उ०			
	लोट्					
लिखतु	लिखताम्	लिखन्तु	प्र०			
लिख	लिखतम्	लिखत	म०			
लिखानि	लिखाव	लिखाम	उ०			
	लङ्					
अलिखत्	अलिखताम्	अलिखन्	प्र०			
अलिखः	अलिखतम्	अलिखत	म०			
अलिखम्	अलिखाव	अलिखाम	उ०			
	विधिलिङ्					
लिखेत्	लिखेताम्	लिखेयुः	प्र०			
लिखेः	लिखेतम्	लिखेत	म०			
लिखेयम्	लिखेव	लिखेम	उ०			

लेखिष्यति	लेखिष्यतः	लेखिष्यन्ति	लृट्
लेखिता	लेखितारौ	लेखितारः	लुट्
लिख्यात्	लिख्यास्ताम्	लिख्यासुः	आ० लिङ्
अलेखिष्यत्	अलेखिष्यताम्	अलेखिष्यन्	लृङ्

	लिट्		
लिलेख	लिलिखतुः	लिलिखुः	प्र०
लिलेखिथ	लिलिखथुः	लिलिख	म०
लिलेख	लिलिखिव	लिलिखिम	उ०
	लुङ् (५)		
अलेखीत्	अलेखिष्टाम्	अलेखिषुः	प्र०
अलेखीः	अलेखिष्टम्	अलेखिष्ट	म०
अलेखिषम्	अलेखिष्व	अलेखिष्म	उ०

(५४) मृ (मरना) (देखो अ० ५०)

सूचना—लट्, लुट्, लङ् और लिट् में मृ परस्मै० है, अन्यत्र आत्मनेपदी।

	लट्		
प्र०	म्रियते	म्रियेते	म्रियन्ते
म०	म्रियसे	म्रियेथे	म्रियध्वे
उ०	म्रिये	म्रियावहे	म्रियामहे
	लोट्		
प्र०	म्रियताम्	म्रियेताम्	म्रियन्ताम्
म०	म्रियस्व	म्रियेथाम्	म्रियध्वम्
उ०	म्रियै	म्रियावहै	म्रियामहै
	लङ्		
प्र०	अम्रियत	अम्रियेताम्	अम्रियन्त
म०	अम्रियथाः	अम्रियेथाम्	अम्रियध्वम्
उ०	अम्रिये	अम्रियावहि	अम्रियामहि
	विधिलिङ्		
प्र०	म्रियेत	म्रियेयाताम्	म्रियेरन्
म०	म्रियेथाः	म्रियेयाथाम्	म्रियेध्वम्
उ०	म्रियेय	म्रियेवहि	म्रियेमहि

लृट्	मरिष्यति	मरिष्यतः	मरिष्यन्ति
लुट्	मर्ता	मर्तारौ	मर्तारः
आ० लिङ्	मृषीष्ट	मृषीयास्ताम्	मृषीरन्
लृङ्	अमरिष्यत्	अमरिष्यताम्	अमरिष्यन्

	लिट्		
प्र०	ममार	मम्रतुः	मम्रुः
म०	ममर्थ	मम्रथुः	मम्र
उ०	ममार, ममर	मम्रिव	मम्रिम
	लुङ् (४)		
प्र०	अमृत	अमृषाताम्	अमृषत
म०	अमृथाः	अमृषाथाम्	अमृढ्वम्
उ०	अमृषि	अमृष्वहि	अमृष्महि

(५५) मुच् (छोड़ना) (देखो अभ्यास ५१)

परस्मैपद	लट्			आत्मनेपद	लट्	
मुञ्चति	मुञ्चतः	मुञ्चन्ति	प्र०	मुञ्चते	मुञ्चेते	मुञ्चन्ते
मुञ्चसि	मुञ्चथः	मुञ्चथ	म०	मुञ्चसे	मुञ्चेथे	मुञ्चध्वे
मुञ्चामि	मुञ्चावः	मुञ्चामः	उ०	मुञ्चे	मुञ्चावहे	मुञ्चामहे
	लोट्				लोट्	
मुञ्चतु	मुञ्चताम्	मुञ्चन्तु	प्र०	मुञ्चताम्	मुञ्चेताम्	मुञ्चन्ताम्
मुञ्च	मुञ्चतम्	मुञ्चत	म०	मुञ्चस्व	मुञ्चेथाम्	मुञ्चध्वम्
मुञ्चानि	मुञ्चाव	मुञ्चाम	उ०	मुञ्चै	मुञ्चावहै	मुञ्चामहै
	लङ्				लङ्	
अमुञ्चत्	अमुञ्चताम्	अमुञ्चन्	प्र०	अमुञ्चत	अमुञ्चेताम्	अमुञ्चन्त
अमुञ्चः	अमुञ्चतम्	अमुञ्चत	म०	अमुञ्चथाः	अमुञ्चेथाम्	अमुञ्चध्वम्
अमुञ्चम्	अमुञ्चाव	अमुञ्चाम	उ०	अमुञ्चे	अमुञ्चावहि	अमुञ्चामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
मुञ्चेत्	मुञ्चेताम्	मुञ्चेयुः	प्र०	मुञ्चेत	मुञ्चेयाताम्	मुञ्चेरन्
मुञ्चेः	मुञ्चेतम्	मुञ्चेत	म०	मुञ्चेथाः	मुञ्चेयाथाम्	मुञ्चेध्वम्
मुञ्चेयम्	मुञ्चेव	मुञ्चेम	उ०	मुञ्चेय	मुञ्चेवहि	मुञ्चेमहि
	——				——	
मोक्ष्यति	मोक्ष्यतः	मोक्ष्यन्ति	लृट्	मोक्ष्यते	मोक्ष्येते	मोक्ष्यन्ते
मोक्ता	मोक्तारौ	मोक्तारः	लुट्	मोक्ता	मोक्तारौ	मोक्तारः
मुच्यात्	मुच्यास्ताम्	मुच्यासुः	आ० लिङ्	मुक्षीष्ट	मुक्षीयास्ताम्	मुक्षीरन्
अमोक्ष्यत्	अमोक्ष्यताम्	अमोक्ष्यन्	लृङ्	अमोक्ष्यत	अमोक्ष्येताम्	अमोक्ष्यन्त
	लिट्				लिट्	
मुमोच	मुमुचतुः	मुमुचुः	प्र०	मुमुचे	मुमुचाते	मुमुचिरे
मुमोचिथ	मुमुचथुः	मुमुच	म०	मुमुचिषे	मुमुचाथे	मुमुचिध्वे
मुमोच	मुमुचिव	मुमुचिम	उ०	मुमुचे	मुमुचिवहे	मुमुचिमहे
	लुङ् (२)				लुङ् (४)	
अमुचत्	अमुचताम्	अमुचन्	प्र०	अमुक्त	अमुक्षाताम्	अमुक्षत
अमुचः	अमुचतम्	अमुचत	म०	अमुक्थाः	अमुक्षाथाम्	अमुग्ध्वम्
अमुचम्	अमुचाव	अमुचाम	उ०	अमुक्षि	अमुक्ष्वहि	अमुक्ष्महि

(७) रुधादिगण

(उभयपदी धातुएँ)

(५६) रुध् (ढकना, रोकना)

(देखो अभ्यास ५२)

परस्मैपद				आत्मनेपद		
	लट्				लट्	
रुणद्धि	रुन्धः	रुन्धन्ति	प्र०	रुन्धे	रुन्धाते	रुन्धते
रुणत्सि	रुन्धः	रुन्ध	म०	रुन्त्से	रुन्धाथे	रुन्ध्वे
रुणध्मि	रुन्ध्वः	रुन्ध्मः	उ०	रुन्धे	रुन्ध्वहे	रुन्ध्महे
	लोट्				लोट्	
रुणद्धु	रुन्धाम्	रुन्धन्तु	प्र०	रुन्धाम्	रुन्धाताम्	रुन्धताम्
रुन्धि	रुन्धम्	रुन्ध	म०	रुन्त्स्व	रुन्धाथाम्	रुन्ध्वम्
रुणधानि	रुणधाव	रुणधाम	उ०	रुणधै	रुणधावहै	रुणधामहै
	लङ्				लङ्	
अरुणत्	अरुन्धाम्	अरुन्धन्	प्र०	अरुन्ध	अरुन्धाताम्	अरुन्धत
अरुणः	अरुन्धम्	अरुन्ध	म०	अरुन्धाः	अरुन्धाथाम्	अरुन्ध्वम्
अरुणधम्	अरुन्ध्व	अरुन्ध्म	उ०	अरुन्धि	अरुन्ध्वहि	अरुन्ध्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
रुन्ध्यात्	रुन्ध्याताम्	रुन्ध्युः	प्र०	रुन्धीत	रुन्धीयाताम्	रुन्धीरन्
रुन्ध्याः	रुन्ध्यातम्	रुन्ध्यात	म०	रुन्धीथाः	रुन्धीयाथाम्	रुन्धीध्वम्
रुन्ध्याम्	रुन्ध्याव	रुन्ध्याम	उ०	रुन्धीय	रुन्धीवहि	रुन्धीमहि
रोत्स्यति	रोत्स्यतः	रोत्स्यन्ति	लृट्	रोत्स्यते	रोत्स्येते	रोत्स्यन्ते
रोद्धा	रोद्धारौ	रोद्धारः	लुट्	रोद्धा	रोद्धारौ	रोद्धारः
रुध्यात्	रुध्यास्ताम्	रुध्यासुः	आ० लिङ्	रुत्सीष्ट	रुत्सीयास्ताम्	रुत्सीरन्
अरोत्स्यत्	अरोत्स्यताम्	अरोत्स्यन्	लृङ्	अरोत्स्यत	अरोत्स्येताम्	अरोत्स्यन्त
	लिट्				लिट्	
रुरोध	रुरुधतुः	रुरुधुः	प्र०	रुरुधे	रुरुधाते	रुरुधिरे
रुरोधिथ	रुरुधथुः	रुरुध	म०	रुरुधिषे	रुरुधाथे	रुरुधिध्वे
रुरोध	रुरुधिव	रुरुधिम	उ०	रुरुधे	रुरुधिवहे	रुरुधिमहे
	लुङ् (क) (४)				लुङ् (४)	
अरौत्सीत्	अरौद्धाम्	अरौत्सुः	प्र०	अरुद्ध	अरुत्साताम्	अरुत्सत
अरौत्सीः	अरौद्धम्	अरौद्ध	म०	अरुद्धाः	अरुत्साथाम्	अरुद्ध्वम्
अरौत्सम्	अरौत्स्व	अरौत्स्म	उ०	अरुत्सि	अरुत्स्वहि	अरुत्स्महि
	लुङ् (ख) (२)					
अरुधत्	अरुधताम्	अरुधन्	प्र०			
अरुधः	अरुधतम्	अरुधत	म०			
अरुधम्	अरुधाव	अरुधाम	उ०			

सूचना—रुन्धः, रुन्धे आदि दो ध् वाले स्थानों पर 'झरो झरि सवर्णे' से एक ध् का विकल्प से लोप होता है। रुन्द्धः, रुन्द्धे आदि रूप भी बनते हैं।

(५७) भुज् (१. पालन करना, २. भोजन करना) (देखो अ० ५३)

सूचना--भुज् धातु पालन करने अर्थ में परस्मैपदी होती है और भोजन करना, उपभोग करना अर्थ में आत्मनेपदी ही होती है।

परस्मैपद				आत्मनेपद		
	लट्				लट्	
भुनक्ति	भुङ्क्तः	भुञ्जन्ति	प्र०	भुङ्क्ते	भुञ्जाते	भुञ्जते
भुनक्षि	भुङ्क्थः	भुङ्क्थ	म०	भुङ्क्षे	भुञ्जाथे	भुङ्ग्ध्वे
भुनज्मि	भुञ्ज्वः	भुञ्ज्मः	उ०	भुञ्जे	भुञ्ज्वहे	भुञ्ज्महे
	लोट्				लोट्	
भुनक्तु	भुङ्क्ताम्	भुञ्जन्तु	प्र०	भुङ्क्ताम्	भुञ्जाताम्	भुञ्जताम्
भुङ्ग्धि	भुङ्क्तम्	भुङ्क्त	म०	भुङ्क्ष्व	भुञ्जाथाम्	भुङ्ग्ध्वम्
भुनजानि	भुनजाव	भुनजाम	उ०	भुनजै	भुनजावहै	भुनजामहै
	लङ्				लङ्	
अभुनक्	अभुङ्क्ताम्	अभुञ्जन्	प्र०	अभुङ्क्त	अभुञ्जाताम्	अभुञ्जत
अभुनक्	अभुङ्क्तम्	अभुङ्क्त	म०	अभुङ्क्थाः	अभुञ्जाथाम्	अभुङ्ग्ध्वम्
अभुनजम्	अभुञ्ज्व	अभुञ्ज्म	उ०	अभुञ्जि	अभुञ्ज्वहि	अभुञ्ज्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
भुञ्ज्यात्	भुञ्ज्याताम्	भुञ्ज्युः	प्र०	भुञ्जीत	भुञ्जीयाताम्	भुञ्जीरन्
भुञ्ज्याः	भुञ्ज्यातम्	भुञ्ज्यात	म०	भुञ्जीथाः	भुञ्जीयाथाम्	भुञ्जीध्वम्
भुञ्ज्याम्	भुञ्ज्याव	भुञ्ज्याम	उ०	भुञ्जीय	भुञ्जीवहि	भुञ्जीमहि

भोक्ष्यति	भोक्ष्यतः	भोक्ष्यन्ति	लृट्	भोक्ष्यते	भोक्ष्येते	भोक्ष्यन्ते
भोक्ता	भोक्तारौ	भोक्तारः	लुट्	भोक्ता	भोक्तारौ	भोक्तारः
भुज्यात्	भुज्यास्ताम्	भुज्यासुः	आ० लिङ्	भुक्षीष्ट	भुक्षीयास्ताम्	०
अभोक्ष्यत्	अभोक्ष्यताम्	अभोक्ष्यन्	लृङ्	अभोक्ष्यत	अभोक्ष्येताम्	०
	लिट्				लिट्	
बुभोज	बुभुजतुः	बुभुजुः	प्र०	बुभुजे	बुभुजाते	बुभुजिरे
बुभोजिथ	बुभुजथुः	बुभुज	म०	बुभुजिषे	बुभुजाथे	बुभुजिध्वे
बुभोज	बुभुजिव	बुभुजिम	उ०	बुभुजे	बुभुजिवहे	बुभुजिमहे
	लुङ् (४)				लुङ् (४)	
अभौक्षीत्	अभौक्ताम्	अभौक्षुः	प्र०	अभुक्त	अभुक्षाताम्	अभुक्षत
अभौक्षीः	अभौक्तम्	अभौक्त	म०	अभुक्थाः	अभुक्षाथाम्	अभुग्ध्वम्
अभौक्षम्	अभौक्ष्व	अभौक्ष्म	उ०	अभुक्षि	अभुक्ष्वहि	अभुक्ष्महि

(८) तनादिगण (उभयपदी धातुएँ)

(५८) **तन्** (फैलाना) (देखो अभ्यास ५४)

परस्मैपद	लट्			आत्मनेपद	लट्	
तनोति	तनुतः	तन्वन्ति	प्र०	तनुते	तन्वाते	तन्वते
तनोषि	तनुथः	तनुथ	म०	तनुषे	तन्वाथे	तनुध्वे
तनोमि	तनुवः तन्वः	तनुमः तन्मः	उ०	तन्वे	तनुवहे तन्वहे	तनुमहे तन्महे
	लोट्				लोट्	
तनोतु	तनुताम्	तन्वन्तु	प्र०	तनुताम्	तन्वाताम्	तन्वताम्
तनु	तनुतम्	तनुत	म०	तनुष्व	तन्वाथाम्	तनुध्वम्
तनवानि	तनवाव	तनवाम	उ०	तनवै	तनवामहै	तनवामहै
	लङ्				लङ्	
अतनोत्	अतनुताम्	अतन्वन्	प्र०	अतनुत	अतन्वाताम्	अतन्वत
अतनोः	अतनुतम्	अतनुत	म०	अतनुथाः	अतन्वाथाम्	अतनुध्वम्
अतनवम्	अतनुव अतन्व	अतनुम अतन्म	उ०	अतन्वि	अतनुवहि अतन्वहि	अतनुमहि अतन्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
तनुयात्	तनुयाताम्	तनुयुः	प्र०	तन्वीत	तन्वीयाताम्	तन्वीरन्
तनुयाः	तनुयातम्	तनुयात	म०	तन्वीथाः	तन्वीयाथाम्	तन्वीध्वम्
तनुयाम्	तनुयाव	तनुयाम	उ०	तन्वीय	तन्वीवहि	तन्वीमहि

तनिष्यति	तनिष्यतः	तनिष्यन्ति	लृट्	तनिष्यते	तनिष्येते	तनिष्यन्ते
तनिता	तनितारौ	तनितारः	लुट्	तनिता	तनितारौ	तनितारः
तन्यात्	तन्यास्ताम्	तन्यासुः	आ० लिङ्	तनिषीष्ट	तनिषीयास्ताम्	०
अतनिष्यत्	अतनिष्यताम्	अतनिष्यन्	लृङ्	अतनिष्यत	अतनिष्येताम्	०
	लिट्				लिट्	
ततान	तेनतुः	तेनुः	प्र०	तेने	तेनाते	तेनिरे
तेनिथ	तेनथुः	तेन	म०	तेनिषे	तेनाथे	तेनिध्वे
ततान, ततन	तेनिव	तेनिम	उ०	तेने	तेनिवहे	तेनिमहे
	लुङ् (क) (५)				लुङ् (५)	
अतानीत्	अतानिष्टाम्	अतानिषुः	प्र०	अतत, अतनिष्ट	अतनिषाताम्	अतनिषत
अतानीः	अतानिष्टम्	अतानिष्ट	म०	अतथाः, अतनिष्ठाः	अतनिषाथाम्	अतनिध्वम्
अतानिषम्	अतानिष्व	अतानिष्म	उ०	अतनिषि	अतनिष्वहि	अतनिष्महि

(ख) अतनीत्० (रूप अतानीत् के तुल्य चलावें)

(५९) कृ (करना) (देखो अभ्यास २२)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति	प्र०	कुरुते	कुर्वाते	कुर्वते
करोषि	कुरुथः	कुरुथ	म०	कुरुषे	कुर्वाथे	कुरुध्वे
करोमि	कुर्वः	कुर्मः	उ०	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे
	लोट्				लोट्	
करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु	प्र०	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम्
कुरु	कुरुतम्	कुरुत	म०	कुरुष्व	कुर्वाथाम्	कुरुध्वम्
करवाणि	करवाव	करवाम	उ०	करवै	करवावहै	करवामहै
	लङ्				लङ्	
अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्	प्र०	अकुरुत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत	म०	अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म	उ०	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः	प्र०	कुर्वीत	कुर्वीयाताम्	कुर्वीरन्
कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात	म०	कुर्वीथाः	कुर्वीयाथाम्	कुर्वीध्वम्
कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम	उ०	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि
करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति	लृट्	करिष्यते	करिष्येते	करिष्यन्ते
कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः	लुट्	कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः
क्रियात्	क्रियास्ताम्	क्रियासुः	आ० लिङ्	कृषीष्ट	कृषीयास्ताम्	कृषीरन्
अकरिष्यत्	अकरिष्यताम्	अकरिष्यन्	लृङ्	अकरिष्यत	अकरिष्येताम्	अकरिष्यन्त
	लिट्				लिट्	
चकार	चक्रतुः	चक्रुः	प्र०	चक्रे	चक्राते	चक्रिरे
चकर्थ	चक्रथुः	चक्र	म०	चकृषे	चक्राथे	चकृढ्वे
चकार, चकर	चकृव	चकृम	उ०	चक्रे	चकृवहे	चकृमहे
	लुङ् (४)				लुङ् (४)	
अकार्षीत्	अकार्ष्टाम्	अकार्षुः	प्र०	अकृत	अकृषाताम्	अकृषत
अकार्षीः	अकार्ष्टम्	अकार्ष्ट	म०	अकृथाः	अकृषाथाम्	अकृढ्वम्
अकार्षम्	अकार्ष्व	अकार्ष्म	उ०	अकृषि	अकृष्वहि	अकृष्महि

(९) क्र्यादिगण

(उभयपदी धातुएँ)

(६०) क्री (मोल लेना)

(देखो अभ्यास ५५)

परस्मैपद	लट्			आत्मनेपद	लट्	
क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति	प्र०	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ	म०	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः	उ०	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे
	लोट्				लोट्	
क्रीणातु	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु	प्र०	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्
क्रीणीहि	क्रीणीतम्	क्रीणीत	म०	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्
क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम	उ०	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै
	लङ्				लङ्	
अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्	प्र०	अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत
अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत	म०	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम्	अक्रीणीध्वम
अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम	उ०	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
क्रीणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः	प्र०	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्
क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात	म०	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम्
क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम	उ०	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि

क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति	लृट्	क्रेष्यते	क्रेष्येते	क्रेष्यन्ते
क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः	लुट्	क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः
क्रीयात्	क्रीयास्ताम्	क्रीयासुः	आ० लिङ्	क्रेषीष्ट	क्रेषीयास्ताम्	क्रेषीरन्
अक्रेष्यत्	अक्रेष्यताम्	अक्रेष्यन्	लृङ्	अक्रेष्यत	अक्रेष्येताम्	अक्रेष्यन्त
	लिट्				लिट्	
चिक्राय	चिक्रियतुः	चिक्रियुः	प्र०	चिक्रिये	चिक्रियाते	चिक्रियिरे
चिक्रयिथ, चिक्रेथ	चिक्रियथुः	चिक्रिय	म०	चिक्रियिषे	चिक्रियाथे	चिक्रियिध्वे
चिक्राय, चिक्रय	चिक्रियिव	चिक्रियिम	उ०	चिक्रिये	चिक्रियिवहे	चिक्रियिमहे
	लुङ् (४)				लुङ् (५)	
अक्रैषीत्	अक्रैष्टाम्	अक्रैषुः	प्र०	अक्रेष्ट	अक्रेषाताम्	अक्रेषत
अक्रैषीः	अक्रैष्टम्	अक्रैष्ट	म०	अक्रेष्ठाः	अक्रेषाथाम्	अक्रेढ्वम्
अक्रैषम्	अक्रैष्व	अक्रैष्म	उ०	अक्रेषि	[illegible]	[illegible]

(६१) ग्रह् (पकड़ना) (देखो अभ्यास ५६)

सूचना—ग्रह् धातु को दोनों पदों में लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में गृह् हो जाता है।

परस्मैपद	लट्			आत्मनेपद	लट्	
गृह्णाति	गृह्णीतः	गृह्णन्ति	प्र०	गृह्णीते	गृह्णाते	गृह्णते
गृह्णासि	गृह्णीथः	गृह्णीथ	म०	गृह्णीषे	गृह्णाथे	गृह्णीध्वे
गृह्णामि	गृह्णीवः	गृह्णीमः	उ०	गृह्णे	गृह्णीवहे	गृह्णीमहे
	लोट्				लोट्	
गृह्णातु	गृह्णीताम्	गृह्णन्तु	प्र०	गृह्णीताम्	गृह्णाताम्	गृह्णताम्
गृहाण	गृह्णीतम्	गृह्णीत	म०	गृह्णीष्व	गृह्णाथाम्	गृह्णीध्वम्
गृह्णानि	गृह्णाव	गृह्णाम	उ०	गृह्णै	गृह्णावहै	गृह्णामहै
	लङ्				लङ्	
अगृह्णात्	अगृह्णीताम्	अगृह्णन्	प्र०	अगृह्णीत	अगृह्णाताम्	अगृह्णत
अगृह्णाः	अगृह्णीतम्	अगृह्णीत	म०	अगृह्णीथाः	अगृह्णाथाम्	अगृह्णीध्वम्
अगृह्णाम्	अगृह्णीव	अगृह्णीम	उ०	अगृह्णि	अगृह्णीवहि	अगृह्णीमहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
गृह्णीयात्	गृह्णीयाताम्	गृह्णीयुः	प्र०	गृह्णीत	गृह्णीयाताम्	गृह्णीरन्
गृह्णीयाः	गृह्णीयातम्	गृह्णीयात	म०	गृह्णीथाः	गृह्णीयाथाम्	गृह्णीध्वम्
गृह्णीयाम्	गृह्णीयाव	गृह्णीयाम	उ०	गृह्णीय	गृह्णीवहि	गृह्णीमहि

ग्रहीष्यति	ग्रहीष्यतः	ग्रहीष्यन्ति	लृट्	ग्रहीष्यते	ग्रहीष्येते	ग्रहीष्यन्ते
ग्रहीता	ग्रहीतारौ	ग्रहीतारः	लुट्	ग्रहीता	ग्रहीतारौ	ग्रहीतारः
गृह्यात्	गृह्यास्ताम्	गृह्यासुः	आ०लिङ्	ग्रहीषीष्ट	ग्रहीषीयास्ताम्	०
अग्रहीष्यत्	अग्रहीष्यताम्	अग्रहीष्यन्	लृङ्	अग्रहीष्यत	अग्रहीष्येताम्	०
	लिट्				लिट्	
जग्राह	जगृहतुः	जगृहुः	प्र०	जगृहे	जगृहाते	जगृहिरे
जग्रहिथ	जगृहथुः	जगृह	म०	जगृहिषे	जगृहाथे	जगृहिध्वे
जग्राह, जग्रह	जगृहिव	जगृहिम	उ०	जगृहे	जगृहिवहे	जगृहिमहे
	लुङ् (५)				लुङ् (५)	
अग्रहीत्	अग्रहीष्टाम्	अग्रहीषुः	प्र०	अग्रहीष्ट	अग्रहीषाताम्	अग्रहीषत
अग्रहीः	अग्रहीष्टम्	अग्रहीष्ट	म०	अग्रहीष्ठाः	अग्रहीषाथाम्	अग्रहीध्वम्
अग्रहीषम्	अग्रहीष्व	अग्रहीष्म	उ०	अग्रहीषि	अग्रहीष्वहि	अग्रहीष्महि

(६२) ज्ञा (जानना) (देखो अभ्यास ५७)

सूचना—ज्ञा धातु को दोनों पदों में लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में 'जा' हो जाता है।

परस्मैपद	लट्			आत्मनेपद	लट्	
जानाति	जानीतः	जानन्ति	प्र०	जानीते	जानाते	जानते
जानासि	जानीथः	जानीथ	म०	जानीषे	जानाथे	जानीध्वे
जानामि	जानीवः	जानीमः	उ०	जाने	जानीवहे	जानीमहे
	लोट्				लोट्	
जानातु	जानीताम्	जानन्तु	प्र०	जानीताम्	जानाताम्	जानताम्
जानीहि	जानीतम्	जानीत	म०	जानीष्व	जानाथाम्	जानीध्वम्
जानानि	जानाव	जानाम	उ०	जानै	जानावहै	जानामहै
	लङ्				लङ्	
अजानात्	अजानीताम्	अजानन्	प्र०	अजानीत	अजानाताम्	अजानत
अजानाः	अजानीतम्	अजानीत	म०	अजानीथाः	अजानाथाम्	अजानीध्वम्
अजानाम्	अजानीव	अजानीम	उ०	अजानि	अजानीवहि	अजानीमहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
जानीयात्	जानीयाताम्	जानीयुः	प्र०	जानीत	जानीयाताम्	जानीरन्
जानीयाः	जानीयातम्	जानीयात	म०	जानीथाः	जानीयाथाम्	जानीध्वम्
जानीयाम्	जानीयाव	जानीयाम	उ०	जानीय	जानीवहि	जानीमहि

ज्ञास्यति	ज्ञास्यतः	ज्ञास्यन्ति	लृट्	ज्ञास्यते	ज्ञास्येते	ज्ञास्यन्ते
ज्ञाता	ज्ञातारौ	ज्ञातारः	लुट्	ज्ञाता	ज्ञातारौ	ज्ञातारः
(क) ज्ञायात् (ख) ज्ञेयात् (दोनों प्रकार से)			आ० लिङ्	ज्ञासीष्ट	ज्ञासीयास्ताम्	ज्ञासीरन्
अज्ञास्यत्	अज्ञास्यताम्	अज्ञास्यन्	लृङ्	अज्ञास्यत	अज्ञास्येताम्	अज्ञास्यन्त
	लिट्				लिट्	
जज्ञौ	जज्ञतुः	जज्ञुः	प्र०	जज्ञे	जज्ञाते	जज्ञिरे
जज्ञिथ, जज्ञाथ	जज्ञथुः	जज्ञ	म०	जज्ञिषे	जज्ञाथे	जज्ञिध्वे
जज्ञौ	जज्ञिव	जज्ञिम	उ०	जज्ञे	जज्ञिवहे	जज्ञिमहे
	लुङ् (४)				लुङ् (४)	
अज्ञासीत्	अज्ञासिष्टाम्	अज्ञासिषुः	प्र०	अज्ञास्त	अज्ञासाताम्	अज्ञासत
अज्ञासीः	अज्ञासिष्टम्	अज्ञासिष्ट	म०	अज्ञास्थाः	अज्ञासाथाम्	अज्ञाध्वम्
अज्ञासिषम्	अज्ञासिष्व	अज्ञासिष्म	उ०	अज्ञासि	अज्ञास्वहि	अज्ञास्महि

(१०) चुरादिगण (उभयपदी धातुएँ)

(६३) चुर् (चुराना) (देखो अभ्यास ३१–३३)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति	प्र०	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते
चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ	म०	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः	उ०	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे
	लोट्				लोट्	
चोरयतु	चोरयताम्	चोरयन्तु	प्र०	चोरयताम्	चोरयेताम्	चोरयन्ताम्
चोरय	चोरयतम्	चोरयत	म०	चोरयस्व	चोरयेथाम्	चोरयध्वम्
चोरयाणि	चोरयाव	चोरयाम	उ०	चोरयै	चोरयावहै	चोरयामहै
	लङ्				लङ्	
अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्	प्र०	अचोरयत	अचोरयेताम्	अचोरयन्त
अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत	म०	अचोरयथाः	अचोरयेथाम्	अचोरयध्वम्
अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम	उ०	अचोरये	अचोरयावहि	अचोरयामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयुः	प्र०	चोरयेत	चोरयेयाताम्	चोरयेरन्
चोरयेः	चोरयेतम्	चोरयेत	म०	चोरयेथाः	चोरयेयाथाम्	चोरयेध्वम्
चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम	उ०	चोरयेय	चोरयेवहि	चोरयेमहि
चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति	लृट्	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	०
चोरयिता	चोरयितारौ	चोरयितारः	लुट्	चोरयिता	चोरयितारौ	०
चोर्यात्	चोर्यास्ताम्	चोर्यासुः	आ०लिङ्	चोरयिषीष्ट	चोरयिषीयास्ताम्	०
अचोरयिष्यत्	अचारयिष्यताम्	०	लृङ्	अचोरयिष्यत	अचोरयिष्येताम्	०

लिट् (क) (चोरयां + कृ) (कृ लिट् के तुल्य) लिट् (क) (चोरयां + कृ) (कृ लिट्वत्)

चोरयाचकार	-चक्रतुः	-चक्रुः	प्र०	चोरयांचक्रे	-चक्राते	चक्रिरे

(ख) (चोरयां + भू) (भू लिट् के तुल्य) (ख) (चोरयां + भू) (भू लिट् के तुल्य)

चोरयांबभूव	-बभूवतुः	-बभूवुः	प्र०	चोरयांबभूव	-बभूवतुः	-बभूवुः

(ग) (चोरयाम् + अस्) (ग) (चोरयाम् + अस्)

चोरयामास	-आसतुः	-आसुः	प्र०	चोरयामास	(परस्मैपद के तुल्य)	
-आसिथ	-आसथुः	-आस	म०			
-आस	-आसिव	-आसिम	उ०			
	लुङ् (३)				लुङ् (३)	
अचूचुरत्	अचूचुरताम्	अचूचुरन्	प्र०	अचूचुरत	अचूचुरेताम्	अचूचुरन्त
अचूचुरः	अचूचुरतम्	अचूचुरत	म०	अचूचुरथाः	अचूचुरेथाम्	अचूचुरध्वम्
अचूचुरम्	अचूचुराव	अचूचुराम	उ०	अचूचुरे	अचूचुरावहि	अचूचुरामहि

(६४) चिन्त् (सोचना) (चुर् धातु के तुल्य रूप चलेंगे)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
चिन्तयति	चिन्तयतः	चिन्तयन्ति	प्र०	चिन्तयते	चिन्तयेते	चिन्तयन्ते
चिन्तयसि	चिन्तयथः	चिन्तयथ	म०	चिन्तयसे	चिन्तयेथे	चिन्तयध्वे
चिन्तयामि	चिन्तयावः	चिन्तयामः	उ०	चिन्तये	चिन्तयावहे	चिन्तयामहे
लोट्				लोट्		
चिन्तयतु	चिन्तयताम्	चिन्तयन्तु	प्र०	चिन्तयताम्	चिन्तयेताम्	चिन्तयन्ताम्
चिन्तय	चिन्तयतम्	चिन्तयत	म०	चिन्तयस्व	चिन्तयेथाम्	चिन्तयध्वम्
चिन्तयानि	चिन्तयाव	चिन्तयाम	उ०	चिन्तयै	चिन्तयावहै	चिन्तयामहै
लङ्				लङ्		
अचिन्तयत्	अचिन्तयताम्	अचिन्तयन्	प्र०	अचिन्तयत	अचिन्तयेताम्	अचिन्तयन्त
अचिन्तयः	अचिन्तयतम्	अचिन्तयत	म०	अचिन्तयथाः	अचिन्तयेथाम्	अचिन्तयध्वम्
अचिन्तयम्	अचिन्तयाव	अचिन्तयाम	उ०	अचिन्तये	अचिन्तयावहि	अचिन्तयामहि
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
चिन्तयेत्	चिन्तयेताम्	चिन्तयेयुः	प्र०	चिन्तयेत	चिन्तयेयाताम्	चिन्तयेरन्
चिन्तयेः	चिन्तयेतम्	चिन्तयेत	म०	चिन्तयेथाः	चिन्तयेयाथाम्	चिन्तयेध्वम्
चिन्तयेयम्	चिन्तयेव	चिन्तयेम	उ०	चिन्तयेय	चिन्तयेवहि	चिन्तयेमहि

चिन्तयिष्यति	चिन्तयिष्यतः	०	लृट्	चिन्तयिष्यते	चिन्तयिष्येते	०
चिन्तयिता	चिन्तयितारौ	०	लुट्	चिन्तयिता	चिन्तयितारौ	०
चिन्त्यात्	चिन्त्यास्ताम्	०	आ०लिङ्	चिन्तयिषीष्ट	चिन्तयिषीयास्ताम्	०
अचिन्तयिष्यत्	अचिन्तयिष्यताम्	०	लृङ्	अचिन्तयिष्यत	अचिन्तयिष्येताम्	०

लिट् (चुर् लिट् के तुल्य)

(क) चिन्तयांचकार -चक्रतुः ०

(ख) चिन्तयांबभूव -बभूवतुः ०

(ग) चिन्तयामास -आसतुः ०

लिट् (चुर् लिट् के तुल्य)

(क) चिन्तयांचक्रे -चक्राते ०

(ख) चिन्तयांबभूव -बभूवतुः ०

(ग) चिन्तयामास -आसतुः ०

लुङ् (३)			लुङ् (३)		
अचिचिन्तत्	अचिचिन्तताम्	अचिचिन्तन्	अचिचिन्तत	अचिचिन्तेताम्	अचिचिन्तन्त
अचिचिन्तः	अचिचिन्ततम्	अचिचिन्तत	अचिचिन्तथाः	अचिचिन्तेथाम्	अचिचिन्तध्वम्
अचिचिन्तम्	अचिचिन्ताव	अचिचिन्ताम	अचिचिन्ते	अचिचिन्तावहि	अचिचिन्तामहि

(६५) कथ् (कहना) (चुर् धातु के तुल्य रूप चलेंगे)

परस्मैपद लट्				आत्मनेपद लट्		
कथयति	कथयतः	कथयन्ति	प्र०	कथयते	कथयेते	कथयन्ते
कथयसि	कथयथः	कथयथ	म०	कथयसे	कथयेथे	कथयध्वे
कथयामि	कथयावः	कथयामः	उ०	कथये	कथयावहे	कथयामहे
लोट्				लोट्		
कथयतु	कथयताम्	कथयन्तु	प्र०	कथयताम्	कथयेताम्	कथयन्ताम्
कथय	कथयतम्	कथयत	म०	कथयस्व	कथयेथाम्	कथयध्वम्
कथयानि	कथयाव	कथयाम	उ०	कथयै	कथयावहै	कथयामहै
लङ्				लङ्		
अकथयत्	अकथयताम्	अकथयन्	प्र०	अकथयत	अकथयेताम्	अकथयन्त
अकथयः	अकथयतम्	अकथयत	म०	अकथयथाः	अकथयेथाम्	अकथयध्वम्
अकथयम्	अकथयाव	अकथयाम	उ०	अकथये	अकथयावहि	अकथयामहि
विधिलिङ्				विधिलिङ्		
कथयेत्	कथयेताम्	कथयेयुः	प्र०	कथयेत	कथयेयाताम्	कथयेरन्
कथयेः	कथयेतम्	कथयेत	म०	कथयेथाः	कथयेयाथाम्	कथयेध्वम्
कथयेयम्	कथयेव	कथयेम	उ०	कथयेय	कथयेवहि	कथयेमहि

कथयिष्यति	कथयिष्यतः	कथयिष्यन्ति	लृट्	कथयिष्यते	कथयिष्येते	०
कथयिता	कथयितारौ	कथयितारः	लुट्	कथयिता	कथयितारौ	०
कथ्यात्	कथ्यास्ताम्	कथ्यासुः	आ० लिङ्	कथयिषीष्ट	कथयिषीयास्ताम्	०
अकथयिष्यत्	अकथयिष्यताम्	अकथयिष्यन्	लृङ्	अकथयिष्यत	अकथयिष्येताम्	०

लिट् (चुर् लिट् के तुल्य)			लिट् (चुर् के लिट् के तुल्य)		
(क) कथयाचकार	-चक्रतुः	०	(क) कथयांचक्रे	-चक्राते	०
(ख) कथयांबभूव	-बभूवतुः	०	(ख) कथयांबभूव	-बभूवतुः	०
(ग) कथयामास	-आसतुः	०	(ग) कथयामास	-आसतुः	०

लुङ् (३)				लुङ् (३)		
अचकथत्	अचकथताम्	अचकथन्	प्र०	अचकथत	अचकथेताम्	अचकथन्त
अचकथः	अचकथतम्	अचकथत	म०	अचकथथाः	अचकथेथाम्	अचकथध्वम्
अचकथम्	अचकथाव	अचकथाम	उ०	अचकथे	अचकथावहि	अचकथामहि

(६६) भक्ष् (खाना) (चुर् के तुल्य रूप चलेंगे)

परस्मैपद लट् | आत्मनेपद लट्

भक्षयति	भक्षयतः	भक्षयन्ति	प्र०	भक्षयते	भक्षयेते	भक्षयन्ते
भक्षयसि	भक्षयथः	भक्षयथ	म०	भक्षयसे	भक्षयेथे	भक्षयध्वे
भक्षयामि	भक्षयावः	भक्षयामः	उ०	भक्षये	भक्षयावहे	भक्षयामहे
	लोट्				लोट्	
भक्षयतु	भक्षयताम्	भक्षयन्तु	प्र०	भक्षयताम्	भक्षयेताम्	भक्षयन्ताम्
भक्षय	भक्षयतम्	भक्षयत	म०	भक्षयस्व	भक्षयेथाम्	भक्षयध्वम्
भक्षयाणि	भक्षयाव	भक्षयाम	उ०	भक्षयै	भक्षयावहै	भक्षयामहै
	लङ्				लङ्	
अभक्षयत्	अभक्षयताम्	अभक्षयन्	प्र०	अभक्षयत	अभक्षयेताम्	अभक्षयन्त
अभक्षयः	अभक्षयतम्	अभक्षयत	म०	अभक्षयथाः	अभक्षयेथाम्	अभक्षयध्वम्
अभक्षयम्	अभक्षयाव	अभक्षयाम	उ०	अभक्षये	अभक्षयावहि	अभक्षयामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
भक्षयेत्	भक्षयेताम्	भक्षयेयुः	प्र०	भक्षयेत	भक्षयेयाताम्	भक्षयेरन्
भक्षयेः	भक्षयेतम्	भक्षयेत	म०	भक्षयेथाः	भक्षयेयाथाम्	भक्षयेध्वम्
भक्षयेयम्	भक्षयेव	भक्षयेम	उ०	भक्षयेय	भक्षयेवहि	भक्षयेमहि

भक्षयिष्यति	भक्षयिष्यतः	भक्षयिष्यन्ति	लृट्	भक्षयिष्यते	भक्षयिष्येते	०
भक्षयिता	भक्षयितारौ	भक्षयितारः	लुट्	भक्षयिता	भक्षयितारौ	०
भक्ष्यात्	भक्ष्यास्ताम्	भक्ष्यासुः	आ. लिङ्	भक्षयिषीष्ट	भक्षयिषीयास्ताम्	०
अभक्षयिष्यत्	अभक्षयिष्यताम्	अभक्षयिष्यन्	लृङ्	अभक्षयिष्यत	अभक्षयिष्येताम्	०

लिट् (चुर् के तुल्य) | लिट् (चुर् कै तुल्य)

(क) भक्षयांचकार	-चक्रतुः	०	(क) भक्षयांचक्रे	-चक्राते	०
(ख) भक्षयांबभूव	-बभूवतुः	०	(ख) भक्षयांबभूव	-बभूवतुः	०
(ग) भक्षयामास	-आसतुः	०	(ग) भक्षयामास	-आसतुः	०

लुङ् (३) | लुङ् (३)

अबभक्षत्	अबभक्षताम्	अबभक्षन्	प्र०	अबभक्षत	अबभक्षेताम्	अबभक्षन्त
अबभक्षः	अबभक्षतम्	अबभक्षत	म०	अबभक्षथाः	अबभक्षेथाम्	अबभक्षध्वम्
अबभक्षम्	अबभक्षाव	अबभक्षाम	उ०	अबभक्षे	अबभक्षावहि	अबभक्षामहि

प्रेरणार्थक णिच् प्रत्यय (देखो अभ्यास २८-२९)

(६७) कारि (कृ + णिच्, करवाना) (चुर् के तुल्य रूप चलेंगे)

परस्मैपद	लट्			आत्मनेपद	लट्	
कारयति	कारयतः	कारयन्ति	प्र०	कारयते	कारयेते	कारयन्ते
कारयसि	कारयथः	कारयथ	म०	कारयसे	कारयेथे	कारयध्वे
कारयामि	कारयावः	कारयामः	उ०	कारये	कारयावहे	कारयामहे
	लोट्				लोट्	
कारयतु	कारयताम्	कारयन्तु	प्र०	कारयताम्	कारयेताम्	कारयन्ताम्
कारय	कारयतम्	कारयत	म०	कारयस्व	कारयेथाम्	कारयध्वम्
कारयाणि	कारयाव	कारयाम	उ०	कारयै	कारयावहै	कारयामहै
	लङ्				लङ्	
अकारयत्	अकारयताम्	अकारयन्	प्र०	अकारयत	अकारयेताम्	अकारयन्त
अकारयः	अकारयतम्	अकारयत	म०	अकारयथाः	अकारयेथाम्	अकारयध्वम्
अकारयम्	अकारयाव	अकारयाम	उ०	अकारये	अकारयावहि	अकारयामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
कारयेत्	कारयेताम्	कारयेयुः	प्र०	कारयेत	कारयेयाताम्	कारयेरन्
कारयेः	कारयेतम्	कारयेत	म०	कारयेथाः	कारयेयाथाम्	कारयेध्वम्
कारयेयम्	कारयेव	कारयेम	उ०	कारयेय	कारयेवहि	कारयेमहि

कारयिष्यति	कारयिष्यतः	कारयिष्यन्ति	लृट्	कारयिष्यते	कारयिष्येते	०
कारयिता	कारयितारौ	कारयितारः	लुट्	कारयिता	कारयितारौ	०
कार्यात्	कार्यास्ताम्	कार्यासुः	आ०लिङ्	कारयिषीष्ट	कारयिषीयास्ताम्	०
अकारयिष्यत्	अकारयिष्यताम्	अकारयिष्यन्	लृङ्	अकारयिष्यत	अकारयिष्येताम्	०

लिट् (चुर् के तुल्य)			लिट् (चुर् के तुल्य)		
(क) कारयांचकार	-चक्रतु	०	(क) कारयांचक्रे	-चक्राते	०
(ख) कारयांबभूव	-बभूवतुः	०	(ख) कारयांबभूव	-बभूवतुः	०
(ग) कारयामास	-आसतुः	०	(ग) कारयामास	-आसतुः	०

	लुङ् (३)				लुङ् (३)	
अचीकरत्	अचीकरताम्	अचीकरन्	प्र०	अचीकरत	अचीकरेताम्	अचीकरन्त
अचीकरः	अचीकरतम्	अचीकरत	म०	अचीकरथाः	अचीकरेथाम्	अचीकरध्वम्
अचीकरम्	अचीकराव	अचीकराम	उ०	अचीकरे	अचीकरावहि	अचीकरामहि

(४) संक्षिप्त धातुकोष

आवश्यक निर्देश

(पुस्तक में प्रयुक्त धातुओं के रूप, अकारादिक्रम से)

१. इस पुस्तक में जिन धातुओं का प्रयोग हुआ है, उनके प्रारम्भिक रूप यहाँ पर दिये गये हैं। प्रचलित लट् आदि ५ लकारों के ही रूप दिये गये हैं। प्रत्येक लकार का प्रथम रूप अर्थात् प्रथम पुरुष एकवचन का रूप दिया गया है। जो धातु जिस गण की है, उस धातु के रूप उस गण की धातुओं के तुल्य चलेंगे। धातुरूप-संग्रह में उनके संक्षिप्त रूपों का निर्देश किया जा चुका है। जो उभयपदी धातुएँ परस्मैपद में ही अधिक प्रचलित हैं, उनके परस्मैपद के ही रूप दिये गये हैं।

२. प्रत्येक धातु के रूप इस क्रम से दिये गये हैं—लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट्। अन्त में कर्मवाच्य या भाववाच्य का प्र० पु० एक० का रूप दिया गया है।

३. प्रत्येक धातु के बाद कोष्ठ में निर्देश कर दिया गया है कि वह किस गण की है तथा किस पद में उसके रूप चलते हैं। अन्त में कोष्ठ में संख्यायें दी हैं, वे इस बात का निर्देश करती हैं कि उस धातु का उस अभ्यास में प्रयोग हुआ है। सभी धातुएँ अकारादि क्रम से दी गई हैं।

४. संक्षेप के लिए निम्नलिखित संकेतों का प्रयोग किया गया है :—प० परस्मैपदी। आ० = आत्मनेपदी। उ० = उभयपदी। १ = भ्वादिगण। २ = अदादिगण। ३ = जुहोत्यादिगण। ४ = दिवादिगण। ५ = स्वादिगण। ६ = तुदादिगण। ७ = रुधादिगण। ८ = तनादिगण। ९ = क्र्यादिगण। १० = चुरादिगण। ११ = कण्ड्वादिगण।

५. धातु के साथ उपसर्ग हो तो लङ् में शुद्ध धातु से पहले अ या आ लगावें। उपसर्ग से पूर्व नहीं। (देखो नियम ९६)।

अद् (२ प०, खाना) अत्ति, अत्तु, आदत्, अद्यात्, अत्स्यति। अद्यते। (२३)
अय् (१ आ०, जाना) अयते, अयताम्, आयत, अयेत, अयिष्यते। अय्यते (१८)
अर्च् (१ प०, पूजना) अर्चति, अर्चतु, आर्चत्, अर्चेत्, अर्चिष्यति। अर्च्यते। (१४)
अश् (९प०, खाना) अश्नाति, अश्नातु, आश्नात्, अश्नीयात्, अशिष्यति। अश्यते (५५)
अस् (२ प०, होना) अस्ति, अस्तु, आसीत्, स्यात्, भविष्यति। भूयते (४)
अस् (४प०, फेंकना) अस्यति, अस्यतु, आस्यत्, अस्येत्, असिष्यति। अस्यते। (१७,४१)
असूय (११प०, द्रोह०) असूयति, असूयतु, आसूयत्, असूयेत्, असूयिष्यति। असूय्यते (११)
आप् (५प०, पाना) आप्नोति, आप्नोतु, आप्नोत्, आप्नुयात्, आप्स्यति। आप्यते। (२८,४८)

आस् (२ अ०, बैठना) आस्ते, आस्ताम्, आस्त, आसीत, आसिष्यते । आस्यते । (३६)
इ (अधि +, २ आ०, पढ़ना) अधीते, अधीताम्, अध्यैत, अधीयीत, अध्येष्यते । अधीयते । (१२) ।
इ (२ प०, जाना) एति, एतु, ऐत्, इयात्, एष्यति । ईयते । (३०)
इष् (६ प०, चाहना) इच्छति, इच्छतु, ऐच्छत्, इच्छेत एषिष्यति । इष्यते । (५)
ईक्ष् (१ आ०, देखना) ईक्षते, ईक्षताम्, ऐक्षत, ईक्षेत, ईक्षिष्यते । ईक्ष्यते । (१६)
ईर् (१० उ०, प्रेरणा०) ईरयति, ईरयतु, ऐरयत्, ईरयेत्, ईरयिष्यति । ईर्यते । (३१)
ईर्ष्य् (१ प०, ईर्ष्या०) ईर्ष्यति, ईर्ष्यतु, ऐर्ष्यत्, ईर्ष्येत्, ईर्ष्यिष्यति । ईर्ष्यते । (११)
ईह् (१ आ०, चाहना) ईहते, ईहताम्, ऐहत, ईहेत, ईहिष्यते । ईह्यते । (१६)
कथ् (१० उ०, कहना) प०—कथयति, कथयतु, अकथयत्, कथयेत्, कथयिष्यति । आ०—कथयते, कथयताम्, अकथयत, कथयेत, कथयिष्यते । कथ्यते । (४)
कम्प् (१आ०, काँपना) कम्पते, कम्पताम्, अकम्पत, कम्पेत, कम्पिष्यते । कम्प्यते । (१६)
कुप् (४ प०, क्रोध०) कुप्यति, कुप्यतु, अकुप्यत्, कुप्येत्, कोपिष्यति । कुप्यते । (११)
कुर्द् (१ आ०, कूदना) कूर्दते, कूर्दताम्, अकूर्दत, कूर्देत, कूर्दिष्यते । कूर्द्यते । (१६)
कृ (८ उ०, करना) प०—करोति, करोतु, अकरोत्, कुर्यात्, करिष्यति ।
आ०—कुरुते, कुरुताम्, अकुरुत, कुर्वीत, करिष्यते । क्रियते । (४, २२)
क्लृप् (१ आ०, समर्थ होना) कल्पते, कल्पताम्, अकल्पत, कल्पेत, कल्पिष्यते । कल्प्यते । (१८)
कृष् (१ प०, खींचना) कर्षति, कर्षतु, अकर्षत्, कर्षेत्, कर्क्ष्यति । कृष्यते । (७)
कॄ (६ प०, बखेरना) किरति, किरतु, अकिरत्, किरेत्, करिष्यति । कीर्यते । (५०)
कॄत् (१० उ०, नाम लेना) कीर्तयति, कीर्तयतु, अकीर्तयत्, कीर्तयेत्, कीर्तयिष्यति । कीर्त्यते । (३३)
क्रन्द् (१ प०, रोना) क्रन्दति, क्रन्दतु, अक्रन्दत्, क्रन्देत्, क्रन्दिष्यति । क्रन्द्यते । (११)
क्रम् (१ प०, चलना) क्रामति, क्रामतु, अक्रामत्, क्रामेत्, क्रमिष्यति । क्रम्यते । (२९)
क्री (९ उ०, खरीदना) प० —क्रीणाति, क्रीणातु, अक्रीणात्, क्रीणीयात्, क्रेष्यति ।
आ०—क्रीणीते, क्रीणीताम्, अक्रीणीत, क्रीणीत, क्रेष्यते । क्रीयते । (५५)
क्रीड् (१ प०, खेलना) क्रीडति, क्रीडतु, अक्रीडत्, क्रीडेत्, क्रीडिष्यति । क्रीड्यते । (६)
क्रुध् (४प०, क्रुद्ध होना) क्रुध्यति, क्रुध्यतु, अक्रुध्यत्, क्रुध्येत्, क्रोत्स्यति । क्रुध्यते । (११)
क्लम् (४ प०, थकना) क्लाम्यति, क्लाम्यतु, अक्लाम्यत्, क्लाम्येत्, क्लमिष्यति । क्लम्यते । (४४)
क्लिश् (४आ०, खिन्न होना) क्लिश्यते, क्लिश्यताम्, अक्लिश्यत, क्लिश्येत, क्लेशिष्यते । क्लिश्यते । (४५)
क्लिश् (९ प०, दुःख देना) क्लिश्नाति, क्लिश्नातु, अक्लिश्नात्, क्लिश्नीयात्, क्लेशिष्यति । क्लिश्यते । (५५)
क्षम् (१ आ०, क्षमा करना) क्षमते, क्षमताम्, अक्षमत, क्षमेत, क्षमिष्यते । क्षम्यते । (१९)

क्षल् (१० उ०, धोना) प०—क्षालयति, क्षालयतु, अक्षालयत्, क्षालयेत्, क्षालयिष्यति।
आ०—क्षालयते, क्षालयताम्, अक्षालयत, क्षालयेत, क्षालयिष्यते। क्षाल्यते (३१)
क्षिप् (६ उ०, फेंकना) क्षिपति, क्षिपतु, अक्षिपत्, क्षिपेत्, क्षेप्स्यति। क्षिप्यते। (१७,५०)
क्षुभ् (१आ०,क्षुब्ध होना) क्षोभते,क्षोभताम्, अक्षोभत, क्षोभेत, क्षोभिष्यते। क्षुभ्यते। (२४)
खण्ड् (१० उ०, खंडन करना) खण्डयति, खण्डयतु, अखण्डयत्, खण्डयेत्, खण्डयिष्यति।
खण्ड्यते। (३२)
खन् (१ उ०, खोदना) खनति, खनतु, अखनत्, खनेत्, खनिष्यति। खन्यते। (१४)
खाद् (१ प०, खाना) खादति, खादतु, अखादत्, खादेत्, खादिष्यति। खाद्यते। (६)
गण् (१०उ०,गिनना)गणयति,गणयतु, अगणयत्, गणयेत्, गणयिष्यति। गण्यते। (३१)
गम् (१ प०, जाना) गच्छति, गच्छतु, अगच्छत्, गच्छेत्, गमिष्यति। गम्यते। (१)
गर्ज् (१ प०, गरजना) गर्जति, गर्जतु, अगर्जत्, गर्जेत्, गर्जिष्यति। गर्ज्यते। (१५)
गर्ह् (१० उ०, निन्दा करना) गर्हयति, गर्हयतु, अगर्हयत्, गर्हयेत्, गर्हयिष्यति।
गर्ह्यते। (३३)
गवेष् (१० उ०, खोजना) गवेषयति, गवेषयतु, अगवेषयत्, गवेषयेत्, गवेषयिष्यति।
गवेष्यते (३३)
गाह् (१ आ०, घुसना) गाहते, गाहताम्, अगाहत, गाहेत, गाहिष्यते। गाह्यते। (१९)
गुप् (१ आ०, निन्दा करना) जुगुप्सते, जुगुप्सताम्, अजुगुप्सत, जुगुप्सेत, जुगुप्सिष्यते।
जुगुप्स्यते। (१३)
गॄ (६ प०, निगलना) गिरति, गिरतु, अगिरत्, गिरेत्, गरिष्यति। गीर्यति। (२७,५०)
गै (१ प०, गाना) गायति, गायतु, अगायत्, गायेत्, गास्यति। गीयते। (८)
ग्रस् (१ आ०, खाना) ग्रसते, ग्रसताम्, अग्रसत, ग्रसेत, ग्रसिष्यते। ग्रस्यते। (२३)
ग्राह् (९ उ०, पकड़ना) प०—गृह्णाति, गृह्णातु, अगृह्णात्, गृह्णीयात्, ग्रहीष्यति।
आ०—गृह्णीते, गृह्णीताम्, अगृह्णीत, गृह्णीत, ग्रहीष्यते। गृह्यते। (२७,५६)
घट् (१ आ०, लगना) घटते, घटताम्, अघटत, घटेत, घटिष्यते। घट्यते। (२९)
घुष् (१० उ०, घोषित करना) घोषयति, घोषयतु, अघोषयत्, घोषयेत्, घोषयिष्यति।
घोष्यते। (३२)
घ्रा (१ प०, सूँघना) जिघ्रति, जिघ्रतु, अजिघ्रत्, जिघ्रेत्, घ्रास्यति। घ्रायते। (३)
चर् (१ प०, चलना) चरति, चरतु, अचरत्, चरेत्, चरिष्यते। चर्यते। (८)
चल् (१ प०, चलना) चलति, चलतु, अचलत्, चलेत्, चलिष्यति। चल्यते। (६)
चि (५ उ०, चुनना) चिनोति, चिनोतु, अचिनोत्, चिनुयात्, चेष्यति। चीयते। (७)
चिन्त् (१०उ०, सोचना) प०—चिन्तयति,चिन्तयतु,अचिन्तयत्,चिन्तयेत्, चिन्तयिष्यति।
आ०—चिन्तयते, चिन्तयताम्, अचिन्तयत, चिन्तयेत, चिन्तयिष्यते। चिन्त्यते। (४)
चुर् (१० उ०, चुराना) प०—चोरयति, चोरयतु, अचोरयत्, चोरयेत्, चोरयिष्यति।
आ०—चोरयते, चोरयताम्, अचोरयत, चोरयेत, चोरयिष्यते। चोर्यते। (४)

चेष्ट् (१ आ०, चेष्टा करना) चेष्टते, चेष्टताम्, अचेष्टत, चेष्टेत, चेष्टिष्यते। चेष्ट्यते। (१८)

छिद् (७ उ०, काटना) छिनत्ति, छिनत्तु, अच्छिनत्, छिन्द्यात्, छेत्स्यति। छिद्यते। (५२)

जन् (४ आ०, पैदा होना) जायते, जायताम्, अजायत, जायेत, जनिष्यते। जायते। (१३, २९, ४६)

जप् (१ प०, जपना) जपति, जपतु, अजपत्, जपेत्, जपिष्यति। जप्यते। (१४)

जि (१ प०, जीतना) जयति, जयतु, अजयत्, जयेत्, जेष्यति। जीयते। (३)

जीव् (१ प०, जीना) जीवति, जीवतु, अजीवत्, जीवेत्, जीविष्यति। जीव्यते। (१४)

जृ (४ प०, वृद्ध होना) जीर्यति, जीर्यतु, अजीर्यत्, जीर्येत्, जरिष्यति। जीर्यते। (२७)

ज्ञा (९ उ०, जानना) प०—जानाति, जानातु, अजानात्, जानीयात्, ज्ञास्यति।
आ०—जानीते, जानीताम्, अजानीत, जानीत, ज्ञास्यते। ज्ञायते। (५७)

ज्वल् (१ प०, जलना) ज्वलति, ज्वलतु, अज्वलत्, ज्वलेत्, ज्वलिष्यति। ज्वल्यते। (८)

डी (४ आ०, उड़ना) डीयते, डीयताम्, अडीयत, डीयेत, डयिष्यते। डीयते। (४५)

तड् (१० उ०, पीटना) ताडयति, ताडयतु, अताडयत्, ताडयेत्, ताडयिष्यति। ताड्यते। (३२)

तन् (८ उ०, फैलाना) प०—तनोति, तनोतु, अतनोत्, तनुयात्, तनिष्यति।
आ०—तनुते, तनुताम्, अतनुत, तन्वीत, तनिष्यते। तायते-तन्यते। (५४)

तप् (१ प०, तपना) तपति, तपतु, अतपत्, तपेत्, तप्स्यति। तप्यते। (८)

तर्क् (१० उ०, सोचना) तर्कयति, तर्कयतु, अतर्कयत्, तर्कयेत्, तर्कयिष्यति। तर्क्यते। (३३)

तर्ज् (१० आ०, डाँटना) तर्जयते, तर्जयताम्, अतर्जयत्, तर्जयेत, तर्जयिष्यते। तर्ज्यते। (३३)

तुद् (६ उ०, दुःख देना) तुदति-ते, तुदतु, अतुदत्, तुदेत्, तोत्स्यति। तुद्यते। (५)

तुल् (१० उ०, तोलना) तोलयति, तोलयतु, अतोलयत्, तोलयेत्, तोलयिष्यति। तोल्यते। (३२)

तुष् (४ प०, तुष्ट होना) तुष्यति, तुष्यतु, अतुष्यत्, तुष्येत्, तोक्ष्यति। तुष्यते। (४२)

तृप् (४ प०, तृप्त होना) तृप्यति, तृप्यतु, अतृप्यत्, तृप्येत्, तर्पिष्यति। तृप्यते। (४२)

तृप् (१० उ०, तृप्त करना) तर्पयति–ते, तर्पयतु, अतर्पयत्, तर्पयेत्, तर्पयिष्यति। तर्प्यते (३२)। (१०, १४)

तॄ (१ प०, तैरना) तरति, तरतु, अतरत्, तरेत्, तरिष्यति। तीर्यते। (७)

त्यज् (१ प०, छोड़ना) त्यजति, त्यजतु, अत्यजत्, त्यजेत्, त्यक्ष्यति। त्यज्यते। (१८)

त्रप् (१ आ०, लजाना) त्रपते, त्रपताम्, अत्रपत, त्रपेत, त्रपिष्यते। त्रप्यते। (१२)

त्रै (१ आ०, बचाना) त्रायते, त्रायताम्, अत्रायत, त्रायेत, त्रास्यते। त्रायते। (२४)

त्वर् (१ आ०, जल्दी करना) त्वरते, त्वरताम्, अत्वरत, त्वरेत, त्वरिष्यते। त्वर्यते।

दण्ड् (१० उ०, दंड देना) दण्डयति-ते, दण्डयतु, अदण्डयत्, दण्डयेत्, दण्डयिष्यति। दण्ड्यते। (७)

दम् (४ प०, दमन करना) दाम्यति, दाम्यतु, अदाम्यत्, दाम्येत्, दमिष्यति। दम्यते। (२९,४४)

दह् (१ प०, जलाना) दहति, दहतु, अदहत्, दहेत्, धक्ष्यति। दह्यते। (८)

दा (३ उ०, देना) प०—ददाति, ददातु, अददात्, दद्यात्, दास्यति।
आ०—दत्ते, दत्ताम्, अदत्त, ददीत, दास्यते। दीयते। (१०, ४०)

दिव् (४ प०, जुआ खेलना) दीव्यति, दीव्यतु, अदीव्यत्, दीव्येत्, देविष्यति। दीव्यते। (४१)

दिश् (६ उ०, देना, कहना) दिशति-ते, दिशतु, अदिशत्, दिशेत्, देक्ष्यति। दिश्यते। (११, ५०)

दीक्ष् (१ आ०, दीक्षा देना) दीक्षते, दीक्षताम्, अदीक्षत, दीक्षेत, दीक्षिष्यते। दीक्ष्यते। (१९)

दीप् (४आ०, चमकना) दीप्यते, दीप्यताम्, अदीप्यत, दीप्येत, दीपिष्यते। दीप्यते। (४५)

दुह् (२ उ०, दुहना) दोग्धि, दोग्धु, अधोक्, दुह्यात्, धोक्ष्यति। दुह्यते। (७, २७)

दृ (६ आ०, आदर करना) आ +, आद्रियते, आद्रियताम्, आद्रियत, आद्रियेत, आदरिष्यते। आद्रियते। (१७)

दृश् (१ प०, देखना) पश्यति, पश्यतु, अपश्यत्, पश्येत्, द्रक्ष्यति। दृश्यते। (३)

द्युत् (१ आ०, चमकना) द्योतते, द्योतताम्, अद्योतत, द्योतेत, द्योतिष्यते। द्युत्यते। (१८)

द्रुह् (४प०, द्रोह करना) द्रुह्यति, द्रुह्यतु, अद्रुह्यत्, द्रुह्येत्, द्रोहिष्यति। द्रुह्यते। (११)

धा (३ उ०, धारण करना) प०-दधाति, दधातु, अदधात्, दध्यात्, धास्यति।
आ०-धत्ते, धत्ताम्, अधत्त, दधीत, धास्यते। धीयते। (२७, ४०)

धाव् (१ उ०, दौड़ना) धावति-ते, धावतु, अधावत्, धावेत्, धाविष्यति। धाव्यते। (६)

धृ (१० उ०, पहनना, रखना) धारयति, धारयतु, अधारयत्, धारयेत्, धारयिष्यति। धार्यते। (११)

ध्यै (१ प०, ध्यान करना) ध्यायति, ध्यायतु, अध्यायत्, ध्यायेत्, ध्यास्यति। ध्यायते। (१४)

ध्वंस् १ आ०, नष्ट होना) ध्वंसते, ध्वंसताम्, अध्वंसत, ध्वंसेत, ध्वंसिष्यते। ध्वस्यते। (१९)

नम् (१ प०, झुकना) नमति, नमतु, अनमत्, नमेत्, नंस्यति। नम्यते। (२)

नश् (४ प०, नष्ट होना) नश्यति, नश्यतु, अनश्यत्, नश्येत्, नशिष्यति। नश्यते। (४३)

निन्द् (१ प०, निन्दा करना) निन्दति, निन्दतु, अनिन्दत्, निन्देत्, निन्दिष्यति। निन्द्यते। (१४)

नी (१ उ०, ले जाना) प०—नयति, नयतु, अनयत्, नयेत्, नेष्यति।
आ०—नयते, नयताम्, अनयत, नयेत, नेष्यते। नीयते। (७, १२, २१)

नुद् (६ उ०, प्रेरणा देना) नुदति-ते, नुदतु, अनुदत्, नुदेत्, नोत्स्यति। नुद्यते। (५०)

नृत् (४ प०, नाचना) नृत्यति, नृत्यतु, अनृत्यत्, नृत्येत्, नर्तिष्यति। नृत्यते। (४२)

पच् (१ उ०, पकाना) पचति-ते, पचतु, अपचत्, पचेत्, पक्ष्यति। पच्यते। (२)
पठ् (१ प०, पढ़ना) पठति, पठतु, अपठत्, पठेत्, पठिष्यति। पठ्यते। (१)
पत् (१ प०, गिरना) पतति, पततु, अपतत्, पतेत्, पतिष्यति। पत्यते। (२)
पद् (४ आ०, जाना) पद्यते, पद्यताम्, अपद्यत, पद्येत, पत्स्यते। पद्यते। (४६)
पा (१ प०, पीना) पिबति, पिबतु, अपिबत्, पिबेत्, पास्यति। पीयते। (३)
पा (२ प०, रक्षा करना) पाति, पातु, अपात्, पायात्, पास्यति। पायते। (२९)
पाल् (१० उ०, रक्षा करना) पालयति ते, पालयतु, अपालयत्, पालयेत्, पालयिष्यति। पाल्यते। (३१)
पीड् (१० उ०, दुःख देना) पीडयति-ते, पीडयतु, अपीडयत्, पीडयेत्, पीडयिष्यति। पीड्यते। (३१)
पुष् (४ प०, पुष्ट करना) पुष्यति, पुष्यतु, अपुष्यत्, पुष्येत्, पोक्ष्यति। पुष्यते। (३२,४२)
पृ (१० उ०, पालना) पारयति-ते, पारयतु, अपारयत्, पारयेत्, पारयिष्यति। पार्यते। (२७)
प्रच्छ् (६ प०, पूछना) पृच्छति, पृच्छतु, अपृच्छत्, पृच्छेत्, प्रक्ष्यति। पृच्छ्यते। (५)
प्रथ् (१ आ०, फैलना) प्रथते, प्रथताम्, अप्रथत, प्रथेत, प्रथिष्यते। प्रथ्यते (२४)
प्र + ईर् (१० उ०, प्रेरणा देना) प्रेरयति, प्रेरयतु, प्रेरयत्, प्रेरयेत्, प्रेरयिष्यति। प्रेर्यते। (२७, ५५) (३१)
बन्ध (९ प०, बाँधना) बध्नाति, बध्नातु, अबध्नात्, बध्नीयात्, भन्त्स्यति। बध्यते।
बाध् (१आ०, पीड़ा देना) बाधते, बाधताम्, अबाधत, बाधेत, बाधिष्यते। बाध्यते। (२३)
बुध् (४ आ०, जानना) बुध्यते, बुध्यताम्, अबुध्यत, बुध्येत, भोत्स्यते। बुध्यते। (२९)
ब्रू (२ उ०, बोलना) ब्रवीति, ब्रवीतु, अब्रवीत्, ब्रूयात्, वक्ष्यति। उच्यते। (७,२५)
भक्ष् (१० उ०, खाना) प०—भक्षयति, भक्षयतु, अभक्षयत्, भक्षयेत्, भक्षयिष्यति। आ०—भक्षयते, भक्षयताम्, अभक्षयत, भक्षयेत, भक्षयिष्यते। भक्ष्यते। (४)
भज् (१ उ०, सेवा करना) भजति-ते, भजतु, अभजत्, भजेत्, भक्ष्यति। भज्यते। (११, २७)
भा (२ प०, चमकना) भाति, भातु, अभात्, भायात्, भास्यति। भायते। (२९)
भाष् (१आ०, बोलना) भाषते, भाषताम्, अभाषत, भाषेत, भाषिष्यते। भाष्यते। (१६)
भास् (१आ०, चमकना) भासते, भासताम्, अभासत, भासेत, भासिष्यते। भास्यते (१९)
भिक्ष् (१आ०,माँगना) भिक्षते, भिक्षताम्, अभिक्षत, भिक्षेत, भिक्षिष्यते। भिक्ष्यते। (१६)
भिद् (७ उ०, तोड़ना) भिनत्ति, भिनत्तु, अभिनत्, भिन्द्यात्, भेत्स्यति। भिद्यते। (५२)
भी (३ प०, डरना) बिभेति, बिभेतु, अबिभेत्, बिभीयात्, भेष्यति। भीयते। (१२)
भुज् (७ उ०, पालना) प०—भुनक्ति, भुनक्तु, अभुनक्, भुञ्ज्यात्, भोक्ष्यति। (७ आ०, खाना) आ०—भुङ्क्ते, भुङ्क्ताम्, अभुङ्क्त, भुञ्जीत, भोक्ष्यते। भुंज्यते। (२८, ५३)
भू (१ प०, होना) भवति, भवतु, अभवत्, भवेत्, भविष्यति। भूयते। (१)

भृ (१उ०, पालन करना) भरति-ते, भरतु, अभरत्, भरेत्, भरिष्यति। भ्रियते। (१५)
भ्रम् (१ प०, घूमना) भ्रमति, भ्रमतु, अभ्रमत्, भ्रमेत्, भ्रमिष्यति। भ्रम्यते। (७)
भ्रम् (४ प०, घूमना) भ्राम्यति, भ्राम्यतु, अभ्राम्यत्, भ्राम्येत्, भ्रमिष्यति। भ्रम्यते। (४४)
भ्रंश् (१आ०, गिरना) भ्रंशते, भ्रंशताम्, अभ्रंशत, भ्रंशेत, भ्रंशिष्यते। भ्रंश्यते। (२४)
भ्राज् (१आ०, चमकना) भ्राजते, भ्राजताम्, अभ्राजत, भ्राजेत, भ्राजिष्यते। भ्राज्यते। (२४)
मण्ड् (१० उ०, मंडन करना) मण्डयति, मण्डयतु, अमण्डयत्, मण्डयेत्, मण्डयिष्यति। मण्ड्यते। (३२)
मथ् (१ प०, मथना) मथति, मथतु, अमथत्, मथेत्, मथिष्यति। मथ्यते। (७)
मद् (४ प०, खुश होना) माद्यति, माद्यतु, अमाद्यत्, माद्येत्, मदिष्यति। मद्यते। (१३)
मन् (४ आ, मानना) मन्यते, मन्यताम्, अमन्यत, मन्येत, मंस्यते। मन्यते। (४६)
मन्त्र् (१ आ०, मन्त्रणा करना) मन्त्रयते, मन्त्रयताम्, अमन्त्रयत, मन्त्रयेत, मन्त्रयिष्यते। मन्त्र्यते। (परस्मै०) मन्त्रयति, मन्त्रयतु, अमन्त्रयत्, मन्त्रयेत्, मन्त्रयिष्यति। (३३)
मन्थ् (९ प०, मथना) मथ्नाति, मथ्नातु, अमथ्नात्, मथ्नीयात्, मन्थिष्यति। मथ्यते। (२७, ५५)
मा (२ प०, नापना) माति, मातु, अमात्, मायात्, मास्यति। मीयते। (२७)
मुच् (६ उ०, छोड़ना) प०—मुञ्चति, मुञ्चतु, अमुञ्चत्, मुञ्चेत्, मोक्ष्यति।
आ०—मुञ्चते, मुञ्चताम्, अमुञ्चत, मुञ्चेत, मोक्ष्यते। मुच्यते। (१७,५१)
मुद् (१आ०,खुश होना) मोदते, मोदताम्, अमोदत, मोदेत, मोदिष्यते। मुद्यते। (१६)
मुष् (९ प०, चुराना) मुष्णाति, मुष्णातु, अमुष्णात्, मुष्णीयात्, मोषिष्यति। मुष्यते। (७, ५५)
मुह् (४प०,मुग्ध होना) मुह्यति, मुह्यतु, अमुह्यत्, मुह्येत्, मोहिष्यति। मुह्यते। (४३)
मूर्च्छ् (१ प०, मूर्छित होना) मूर्च्छति, मूर्च्छतु, अमूर्च्छत्, मूर्च्छेत्, मूर्च्छिष्यति। मूर्च्छ्यते। (१५)
मृ (६आ०, मरना) म्रियते, म्रियताम्, अम्रियत्, म्रियेत्, मरिष्यति। म्रियते। (५०)
म्लै (१प०, मुरझाना) म्लायति, म्लायतु, अम्लायत्, म्लायेत्, म्लास्यति। म्लायते। (३१)
यज् (१ उ०, यज्ञ करना) यजति-ते, यजतु, अजयत्, यजेत्, यक्ष्यति। इज्यते। (२७)
यत् (१ आ०, यत्न करना) यतते, यतताम्, अयतत, यतेत, यतिष्यते। यत्यते। (१६)
या (२ प०, जाना) याति, यातु, अयात्, यायात्, यास्यति। यास्यते। (२९)
याच् (१ उ०, माँगना) प०—याचति, याचतु, अयाचत्, याचेत्, याचिष्यति।
आ०—याचते, याचताम्, अयाचत, याचेत, याचिष्यते। याच्यते। (७)
यापि (या + णिच्, प०, बिताना) यापयति, यापयतु, अयापयत्, यापयेत्, यापयिष्यति। याप्यते। (२९)

युज् (१० उ०, लगाना) योजयति, योजयतु, अयोजयत्; योजयेत्, योजयिष्यति। योज्यते। (३१)
युध् (४ आ०, लड़ना), युध्यते, युध्यताम्, अयुध्यत, अयुध्येत, योत्स्यते। युध्यते। (४५)
रक्ष् (१ प०, रक्षा करना), रक्षति, रक्षतु, अरक्षत्, रक्षेत्, रक्षिष्यति। रक्ष्यते। (२)
रच् (१० उ०, बनाना) रचयति-ते, रचयतु, अरचयत्, रचयेत्, रचयिष्यति। रच्यते। (३१)
रञ्ज् (४उ०, खुश होना) रज्यति-ते, रज्यतु, अरज्यत्, रज्येत्, रंक्ष्यति। रज्यते। (४२)
रम् (१ आ०, रमना) रमते, रमताम्, अरमत, रमेत, रंस्यते। रम्यते। (१६)
(वि + रम्, पर०) विरमति, विरमतु, व्यरमत्, विरमेत्, विरंस्यति। (१३)
राज् (१ उ०, चमकना) प०—राजति, राजतु, अराजत्, राजेत्, राजिष्यति।
आ०—राजते, राजताम्, अराजत, राजेत, राजिष्यति। राज्यते। (२३)
रुच् (१ आ०, अच्छा लगना) रोचते, रोचताम्, अरोचत, रोचेत, रोचिष्यते। रुच्यते। (११)
रुद् (२ प०, रोना) रोदिति, रोदितु, अरोदीत्, रुद्यात्, रोदिष्यति। रुद्यते। (२६)
रुध् (७ उ०, रोकना) प०—रुणद्धि, रुणद्धु, अरुणत्, रुन्ध्यात्, रोत्स्यति।
आ०—रुन्धे, रुन्धाम्, अरुन्ध, रुन्धीत, रोत्स्यते। रुध्यते। (७, ५२)
रुह् (१ प०, उगना) रोहति, रोहतु, अरोहत्, रोहेत्, रोक्ष्यति। रुह्यते। (७)
लङ्घ् (१ आ०, लाँघना) लङ्घते, लङ्घताम्, अलङ्घत, लङ्घेत, लङ्घिष्यते। लङ्घ्यते। (२३)
लप् (१ प०, बोलना) लपति, लपतु, अलपत्, लपेत्, लपिष्यति। लप्यते। (१४)
लभ् (१ आ०, पाना) लभते, लभताम्, अलभत, लभेत, लप्स्यते। लभ्यते (१६)
लम्ब् (१ आ०, लटकना) लम्बते, लम्बताम्, अलम्बत, लम्बेत, लम्बिष्यते। लम्ब्यते। (१९)
लष् (१ उ०, चाहना) लषति-ते, लषतु, अलषत्, लषेत्, लषिष्यति। लष्यते। (१४)
लिख् (६ प०, लिखना) लिखति, लिखतु, अलिखत्, लिखेत्, लेखिष्यति। लिख्यते। (१)
लिप् (६ उ०, लीपना) लिम्पति-ते, लिम्पतु, अलिम्पत्, लिम्पेत्, लेप्स्यति। लिप्यते। (५१)
ली (४ आ०, लीन होना) लीयते, लीयताम्, अलीयत, लीयेत, लेष्यते। लीयते। (१३)
लुप् (६ उ०, नष्ट करना) लुम्पति-ते, लुम्पतु, अलुम्पत्, लुम्पेत्, लोप्स्यति। लुप्यते। (५१)
लुभ् (४ प०, लोभ करना) लुभ्यति, लुभ्यतु, अलुभ्यत्, लुभ्येत्, लोभिष्यति। लुभ्यते। (४४)
[लोक्यते। (३२)
लोक् (१० उ०, देखना) लोकयति-ते, लोकयतु, अलोकयत्, लोकयेत्, लोकयिष्यति।
लोच् (१० उ०, देखना) लोचयति-ते, लोचयतु, अलोचयत्, लोचयेत्, लोचयिष्यति। लोच्यते। (३२)
वद् (१ प०, बोलना) वदति, वदतु, अवदत्, वदेत्, वदिष्यति। उद्यते। (२)
वन्द् (१ आ०, प्रणाम करना) वन्दते, वंदताम्, अवन्दत, वन्देत, वन्दिष्यते। वन्द्यते। (१६)

वप् (१ उ०, बोना) वपति-ते, वपतु, अवपत्, वपेत्, वप्स्यति। उप्यते। (२७, ४९)
वस् (१ प०, रहना) वसति, वसतु, अवसत्, वसेत्, वत्स्यति। उष्यते। (७)
वह् (१ उ०, ढोना) वहति-ते, वहतु, अवहत्, वहेत्, वक्ष्यति। उह्यते। (७)
वा (२ प०, हवा चलना) वाति, वातु, अवात्, वायात्, वास्यति। वायते। (२९)
विद् (२ प०, जानना) वेत्ति, वेत्तु, अवेत्, विद्यात्, वेदिष्यति। विद्यते। (२९)
विद् (४ आ०, होना) विद्यते, विद्यताम्, अविद्यत, विद्येत, वेत्स्यते। विद्यते। (४६)
विद् (६ उ०, पाना) विन्दति-ते, विन्दतु, अविन्दत्, विन्देत्, वेदिष्यति। विद्यते। (५१)
विद् (१० आ, कहना) वेदयते, वेदयताम्, अवेदयत, वेदयेत, वेदयिष्यते। वेद्यते। (११)
विश् (६ प०, घुसना) विशति, विशतु, अविशत्, विशेत्, वेक्ष्यति। विश्यते। (२८)
वृ (५ उ०, चुनना) वृणोति, वृणोतु, अवृणोत्, वृणुयात्, वरिष्यति। व्रियते। (२७)
वृत् (१ आ०, होना) वर्तते, वर्तताम्, अवर्तत, वर्तेत, वर्तिष्यते। वृत्यते। (१६)
वृध् (१ आ०, बढ़ना) वर्धते, वर्धताम्, अवर्धत, वर्धेत, वर्धिष्यते। वृध्यते (१६)
वृष् (१ प०, बरसना) वर्षति, वर्षतु, अवर्षत्, वर्षेत्, वर्षिष्यति। वृष्यते। (८)
वे (१ उ०, बुनना) वयति-ते, वयतु, अवयत्, वयेत्, वास्यति। ऊयते। (१५)
वेप् (१ आ०, काँपना) वेपते, वेपताम्, अवेपत, वेपेत, वेपिष्यते। वेप्यते। (१८)
व्यथ् (१ आ०, दुःखित होना) व्यथते, व्यथताम्, अव्यथत, व्यथेत, व्यथिष्यते। व्यथ्यते। (१९)
व्यध् (४ प०, बींधना) विध्यति, विध्यतु, अविध्यत्, विध्येत्, व्यत्स्यति। विध्यते। (४२)
शक् (५ प०, सकना) शक्नोति, शक्नोतु, अशक्नोत्, शक्नुयात्, शक्ष्यति। शक्यते। (४९)
शंक् (१ आ०, शंका करना) शंकते, शंकताम्, अशंकत, शंकेत, शंकिष्यते। शंक्यते। (१९)
शप् (१ उ०, शाप देना) शपति-ते, शपतु, अशपत्, शपेत्, शप्स्यति। शप्यते। (२७)
शम् (४ प०, शान्त होना) शाम्यति, शाम्यतु, अशाम्यत्, शाम्येत्, शमिष्यति। शम्यते। (२९, ४४)
शास् (२ प०, शिक्षा देना) शास्ति, शास्तु, अशात्, शिष्यात्, शासिष्यति। शिष्यते। (७)
शिक्ष् (१ आ०, सीखना) शिक्षते, शिक्षताम्, अशिक्षत, शिक्षेत, शिक्षिष्यते। शिक्ष्यते। (१६)
शी (२ आ०, सोना) शेते, शेताम्, अशेत, शयीत, शयिष्यते। शय्यते। (६, ३७)
शुच् (१ प०, शोक करना) शोचति, शोचतु, अशोचत्, शोचेत, शोचिष्यति। शुच्यते। (१४)
शुध् (४ प०, शुद्ध होना) शुध्यति, शुध्यतु, अशुध्यत्, शुध्येत्, शोत्स्यति। शुध्यते। (४२)
शुभ् (१ आ०, अच्छा लगना) शोभते, शोभताम्, अशोभत, शोभेत, शोभिष्यते। शुभ्यते। (१६)
शुष् (४ प०, सूखना) शुष्यति, शुष्यतु, अशुष्यत्, शुष्येत्, शोक्ष्यति। शुष्यते। (४२)
शॄ (९ प०, नष्ट करना) शृणाति, शृणातु, अशृणात्, शृणीयात्, शरिष्यति। शीर्यते (२७)
श्रि (१ उ०, आश्रय लेना) श्रयति-ते, श्रयतु, अश्रयत्, श्रयेत्, श्रयिष्यति। श्रीयते। (१५)

श्रु (१ प०, सुनना) शृणोति, शृणोतु, अशृणोत्, शृणुयात्, श्रोष्यति। श्रूयते। (२८, ४९)

श्लिष् (४ प०, आलिंगन करना) श्लिष्यति, श्लिष्यतु, अश्लिष्यत्, श्लिष्येत्, श्लेषिष्यति। श्लिष्यते। (३१, ४२)

श्वस् (२ प०, साँस लेना) श्वसिति, श्वसितु, अश्वसीत्, श्वस्यात्, श्वसिष्यति। श्वस्यते (१७)

सद् (१ प०, बैठना) सीदति, सीदतु, असीदत्, सीदेत्, सत्स्यति। सद्यते। (३)

सह् (१ आ०, सहना) सहते, सहताम्, असहत, सहेत, सहिष्यते। सह्यते। (१६)

सान्त्व् (१० उ०, धैर्य बँधाना) सान्त्वयति, सान्त्वयतु, असान्त्वयत्, सान्त्वयेत्, सान्त्वयिष्यति। सान्त्व्यते। (३२) (५१)

सिच् (६ उ०, सींचना) सिंचति-ते, सिंचतु, असिंचत्, सिंचेत्, सेक्ष्यति। सिच्यते। (४१)

सिव् (४प०, सीना) सीव्यति, सीव्यतु, असीव्यत्, सीव्येत्, सेविष्यति। सीव्यते। (४१)

सु (५ उ०, निचोड़ना) प०—सुनोति, सुनोतु, असुनोत्, सुनुयात्, सोष्यति।

आ०—सुनुते, सुनुताम्, असुनुत, सुन्वीत, सोष्यते। सूयते। (४७)

सृ (१ प०, चलना) सरति, सरतु, असरत्, सरेत्, सरिष्यति। स्रियते। (१५)

सृज् (६ प०, बनाना) सृजति, सृजतु, असृजत्, सृजेत्, स्रक्ष्यति। सृज्यते। (५०)

सेव् (१ आ०, सेवा करना) सेवते, सेवताम्, असेवत, सेवेत, सेविष्यते। सेव्यते। (१६)

सो (४ प०, नष्ट होना) स्यति, स्यतु, अस्यत्, स्येत्, सास्यति। सीयते। (२७)

स्तु (२ उ०, स्तुति करना) स्तौति, स्तौतु, अस्तौत्, स्तुयात्, स्तोष्यति। स्तूयते। (२७)

स्था (१ प०, रुकना) तिष्ठति, तिष्ठतु, अतिष्ठत्, तिष्ठेत्, स्थास्यति। स्थीयते। (३, ६)

स्ना (२ प०, नहाना) स्नाति, स्नातु, अस्नात्, स्नायात्, स्नास्यति। स्नायते। (२९)

स्निह् (४ प०, स्नेह करना) स्निह्यति, स्निह्यतु, अस्निह्यत्, स्निह्येत्, स्नेहिष्यति। स्निह्यते। (१७)

स्पन्द् (१ आ०, हिलना) स्पन्दते, स्पन्दताम्, अस्पन्दत, स्पन्देत, स्पन्दिष्यते। स्पन्द्यते। (२४) (१८)

स्पर्ध् (१आ०, स्पर्धा करना) स्पर्धते, स्पर्धताम्, अस्पर्धत, स्पर्धेत, स्पर्धिष्यते। स्पर्ध्यते। (५)

स्पृश् (६ प०, छूना) स्पृशति, स्पृशतु, अस्पृशत्, स्पृशेत्, स्पर्क्ष्यति। स्पृश्यते। (५)

स्पृह् (१० उ०, चाहना) स्पृहयति, स्पृहयतु, अस्पृहयत्, स्पृहयेत्, स्पृहयिष्यति। स्पृह्यते। (११)

स्मृ (१ प०, सोचना) स्मरति, स्मरतु, अस्मरत्, स्मरेत्, स्मरिष्यति। स्मर्यते। (३)

स्रंस् (१ आ०, गिरना) स्रंसते, स्रंसताम्, अस्रंसत, स्रंसेत, स्रंसिष्यते। स्रस्यते। (१९)

स्वाद् (१० उ०, स्वाद लेना) आ +, आस्वादयति, आस्वादयतु, आस्वादयत्, आस्वादयेत्, आस्वादयिष्यति। आस्वाद्यते। (३३)

स्वप् (२ प०, सोना) स्वपिति, स्वपितु, अस्वपत्, स्वप्यात्, स्वप्स्यति। सुप्यते। (२८)
हन् (२ प०, मारना) हन्ति, हन्तु, अहन्, हन्यात्, हनिष्यति। हन्यते। (२९)
हस् (१ प०, हसना) हसति, हसतु, अहसत्, हसेत्, हसिष्यति। हस्यते। (१)
हा (३ प०, छोड़ना) जहाति, जहातु, अजहात्, जह्यात्, हास्यति। हीयते। (२७)
हु (३ प०, यज्ञ करना) जुहोति, जुहोतु, अजुहोत्, जुहुयात्, होष्यति। हूयते। (२७)
हृ (१ उ०, ले जाना, चुराना) प०—हरति, हरतु, अहरत्, हरेत्, हरिष्यति।
आ०—हरते, हरताम्, अहरत, हरेत, हरिष्यते। ह्रियते। (७, २१)
हृष् (४ प०, खुश होना) हृष्यति, हृष्यतु, अहृष्यत्, हृष्येत्, हर्षिष्यति। हृष्यते। (४४)
ह्वे (१ उ०, बुलाना) आ +, आह्वयति, आह्वयतु, आह्वयत्, आह्वयेत्, आह्वयिष्यति। आहूयते (१४)

(१) अकर्मक धातुएँ

लज्जासत्तास्थितिजागरणं, वृद्धिक्षयभयजीवतिमरणम्।
शयनक्रीडारुचिदीप्त्यर्थं, धातुगणं तमकर्मकमाहुः॥

इन अर्थोंवाली धातुएँ साधारणतया अकर्मक (कर्मरहित) होती हैं—लज्जा, होना, रुकना या बैठना, जागना, बढ़ना, घटना, डरना, जीना, मरना, सोना, खेलना, अच्छा लगना, चमकना।

(२) अनिट् धातुएँ (जिनमें बीच में इ नहीं लगता)

ऊ ऋदन्त औ' शी श्रि डी को छोड़कर एकाच् सब।
शक् पच् वच मुच् सिच् प्रच्छ् त्यज् भज्, भुज यज् सृज् मस्ज युज॥
अद् पद्य खिद् छिद् विद्य तुद् नुद्, भिद् सद क्रुध् क्षुध् बुध।
बन्ध् युध् रुध् साध् व्यध् शुध्, सिध् मन्य हन् क्षिप् आप तप॥१॥
तृप्य दृप् लिप् लुप् वप स्वप्, शप् सृप रभ् लभ् गम।
नम् यम् रम क्रुश् दंश् दिश् दृश्, मृश् विश स्पृश् पुष्य दुष॥
कृष् तुष् द्विष् श्लिष शुष्य शिष् वस्, दह् लिह औ' रूह वह।
धातु ये सब अनिट् हैं, परिगणन इनका है यह॥२॥

सूचना—अन्त्याक्षरों के क्रम से ये धातुएँ पद्यबद्ध हैं। दिवादिगणी धातुओं में, इस प्रकार की अन्य धातुओं से अन्तर के लिए, अन्त में य लगा है। पहले क् अन्तवाली शक् धातु, बाद में च् अन्तवाली, इसी प्रकार क्रमशः धातुएँ हैं। अजन्त धातुओं में ऊकारान्त और दीर्घ ऋकारान्त तथा शी श्रि डी धातु सेट् हैं, शेष अनिट् हैं। जैसे चि, जि, कृ, हृ, भृ आदि। केवल विशेष प्रचलित धातुओं का ही संग्रह है। अप्रचलित ३० धातुओं का संग्रह नहीं है।

(५) प्रत्यय-विचार

(१) क्त, (२) क्तवतु प्रत्यय (देखो अभ्यास ३१, ३२, ३३)

सूचना—क्त और क्तवतु प्रत्यय भूतकाल में होते हैं। क्त का त और क्तवतु का तवत् शेष रहता है। क्त कर्मवाच्य या भाववाच्य में होता है, क्तवतु कर्तृवाच्य में। धातु को गुण या वृद्धि नहीं होती है। संप्रसारण होता है। अन्य नियमों के लिए देखो अभ्यास ३१-३३। क्त-प्रत्यान्त के रूप पुंलिंग में रामवत्, स्त्रीलिंग में आ लगाकर रमावत् और नपुंसकलिंग में गृहवत् चलेंगे। यहाँ केवल पुंलिंग के ही रूप दिये गये हैं। क्त-प्रत्ययान्त का क्तवतु-प्रत्ययान्त रूप बनाने का सरल प्रकार यह है कि क्त-प्रत्ययान्त के बाद में 'वत्' और जोड़ दो। अभ्यास ३३ में दिए नियमानुसार तीनों लिंगों में रूप चलाओ। धातुएँ अकारादिक्रम से दी गई हैं।

धातु	रूप	धातु	रूप	धातु	रूप	धातु	रूप
अद्	जग्धः (अन्नम्)	कृष्	कृष्टः	घ्रा	घ्रातः, घ्राणः	त्यज्	त्यक्तः
अधि + इ	अधीतः	कॄ	कीर्णः	चर्	चरितः	त्रै	त्रातः
अर्च्	अर्चितः	क्रन्द्	क्रन्दितः	चल्	चलितः	दंश्	दष्टः
अस् (२ प.)	भूतः	क्रम्	क्रान्तः	चि	चितः	दण्ड्	दण्डितः
आप्	आप्तः	क्री	क्रीतः	चिन्त्	चिन्तितः	दम्	दान्तः
आ + रभ्	आरब्धः	क्रीड्	क्रीडितः	चुर्	चोरितः	दय्	दयितः
आलम्ब्	आलम्बितः	क्रुध्	क्रुद्धः	चेष्ट्	चेष्टितः	दह्	दग्धः
आ ह्वे	आहूतः	क्षि	क्षीणः	छिद्	छिन्नः	दा	दत्तः
इ	इतः	क्षिप्	क्षिप्तः	जन्	जातः	दिव्	द्यूनः, द्यूतः
इष्	इष्टः	क्षुभ्	क्षुब्धः	जि	जितः	दिश्	दिष्टः
ईक्ष्	ईक्षितः	खन्	खातः	जीव्	जीवितः	दीप्	दीप्तः
उत् + डी	उड्डीनः	खाद्	खादितः	जॄ	जीर्णः	दुह्	दुग्धः
कथ्	कथितः	गण्	गणितः	ज्ञा	ज्ञातः	दृश्	दृष्टः
कम्	कान्तः	गम्	गतः	ज्वल्	ज्वलितः	दो (दा)	दितः
कम्प्	कम्पितः	गर्ज्	गर्जितः	तन्	ततः	द्युत्	द्योतितः
कुप्	कुपितः	गॄ	गीर्णः	तप्	तप्तः	धा	हितः
कूर्द्	कूर्दितः	गै (गा)	गीतः	तुष्	तुष्टः	धाव्	धावितः
कृ	कृतः	ग्रस	ग्रस्तः	तृप्	तृप्तः	धृ	धृतः
		ग्रह्	गृहीतः			ध्मा	ध्मातः

ध्यै	ध्यातः	भुज्	भुक्तः	लिख्	लिखितः	श्रु	श्रुतः
ध्वंस्	ध्वस्तः	भू	भूतः	लिह्	लीढः	श्लिष्	श्लिष्टः
नम्	नतः	भृ	भृतः	लुभ्	लुब्धः	सद्	सन्नः
नश्	नष्टः	भ्रम्	भ्रान्तः	वच् (ब्रू)	उक्तः	सन्	सातः
निन्द्	निन्दितः	मद्	मत्तः	वद्	उदितः	सह्	सोढः
नी	नीतः	मन्	मतः	वन्द्	वन्दितः	साध्	साधितः
नृत्	नृत्तः	मन्थ्	मन्थितः	वप्	उप्तः	सिच्	सिक्तः
पच्	पक्वः	मा	मितः	वस्	उषितः	सिध्	सिद्धः
पठ्	पठितः	मिल्	मिलितः	वह्	ऊढः	सिव्	स्यूतः
पत्	पतितः	मुच्	मुक्तः	वा	वातः	सृज्	सृष्टः
पद्	पन्नः	मुद्	मुदितः	वि + कस्	विकसितः	सेव्	सेवितः
पलाय्	पलायितः	मुह	मुग्धः, मूढः	विद् (२प)	विदितः	सो (सा)	सितः
पा (१प.)	पीतः	मूर्च्छ्	मूर्च्छितः	विद् (१०)	वेदितः	स्तु	स्तुतः
पाल्	पालितः	मृज्	मृष्टः	विश्	विष्टः	स्था	स्थितः
पुष्	पुष्टः	यज्	इष्टः	वृत्	वृत्तः	स्ना	स्नातः
पूज्	पूजितः	यत्	यतितः	वृध्	वृद्धः	स्निह्	स्निग्धः
पॄ	पूर्णः	यम्	यतः	वे	उतः	स्पृश्	स्पृष्टः
प्रच्छ्	पृष्टः	या	यातः	व्यथ्	व्यथितः	स्वप्	सुप्तः
प्रथ्	प्रथितः	याच्	याचितः	व्यध्	विद्धः	स्वाद्	स्वादितः
प्र + हि	प्रहितः	युज्	युक्तः	शक्	शक्तः	स्विद्	स्विन्नः
प्रेर्	प्रेरितः	युध्	युद्धः	शङ्क्	शङ्कितः	हन्	हतः
बन्ध्	बद्धः	रक्ष्	रक्षितः	शप्	शप्तः	हस्	हसितः
बुध्	बुद्धः	रच्	रचितः	शम्	शान्तः	हा (३ प.)	हीनः
ब्रू	उक्तः	रञ्ज्	रक्तः	शास्	शिष्टः	हा (३आ.)	हानः
भक्ष्	भक्षितः	रम	रतः	शिक्ष्	शिक्षितः	हिंस्	हिंसितः
भज्	भक्तः	रुच्	रुचितः	शी	शयितः	हु	हुतः
भञ्ज्	भग्नः	रुद्	रुदितः	शुच्	शुचितः	हृ	हृतः
भण्	भणितः	रुध्	रुद्धः	शुभ्	शोभितः	हृष्	हृष्टः
भाष्	भाषितः	रुह्	रूढः	शुष्	शुष्कः	ह्रस्	ह्रसितः
भिद्	भिन्नः	लभ्	लब्धः	शॄ	शीर्णः	ह्री	ह्रीतः, ह्रीणः
भी	भीतः	लष	लषितः	श्रि	श्रितः	ह्वे	हूतः

(३) शतृ प्रत्यय (देखो अभ्यास ३४)

सूचना—परस्मैपदी धातुओं को लट् के स्थान पर शतृ होता है। शतृ का अत् शेष रहता है। पुंलिंग में पठत् के तुल्य, स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य और नपुंसकलिंग में जगत् के तुल्य रूप चलेंगे। यहाँ पर केवल पुंलिंग के रूप दिए हैं। रूप बनाने के नियमों के लिए देखो अभ्यास ३४। **धातुएँ अकारादिक्रम से दी गई हैं।**

अद्	अदन्	चल्	चलन्	पत्	पतन्	व्यध्	विध्यन्
अर्च	अर्चन्	चि	चिन्वन्	पा (१ प०)	पिबन्	शक्	शक्नुवन्
अस् (२प.)	सन्	छिद्	छिन्दन्	पाल्	पालयन्	शप्	शपन्
आप्	आप्नुवन्	जप्	जपन्	पूज्	पूजयन्	शम्	शाम्यन्
आ + रुह्	आरोहन्	जि	जयन्	प्रच्छ्	पृच्छन्	शुष्	शुष्यन्
आ + ह्वे	आह्वयन्	जीव्	जीवन्	प्रेर्	प्रेरयन्	श्रि	श्रयन्
इ	यन्	ज्वल्	ज्वलन्	बन्ध्	बध्नम्	श्रु	शृण्वन्
इष्	इच्छन्	तप्	तपन्	भक्ष्	भक्षयन्	सद्	सीदन्
कुप्	कुप्यन्	तुद्	तुदन्	भज्	भजन्	सिच्	सिञ्चन्
कृष्	कर्षन्	तुष्	तुष्यन्	भिद्	भिन्दन्	सिव्	सीव्यन्
कॄ	किरन्	तॄ	तरन्	भृ	भरन्	सृ	सरन्
क्रन्द्	क्रन्दन्	त्यज्	त्यजन्	भू	भवन्	सृज्	सृजन्
क्रम्	क्राम्यन्	दण्ड्	दण्डयन्	भ्रम्	भ्रमन्, भ्राम्यन्	सृप्	सर्पन्
क्रीड्	क्रीडन्	दह्	दहन्	मिल्	मिलन्	स्तु	स्तुवन्
क्रुध्	क्रुध्यन्	दिव्	दीव्यन्	रक्ष्	रक्षन्	स्था	तिष्ठन्
क्षम्	क्षाम्यन्	दिश्	दिशन्	रच्	रचयन्	स्पृश्	स्पृशन्
क्षिप्	क्षिपन्	दुह्	दुहन्	रुद्	रुदन्	स्मृ	स्मरन्
खन्	खनन्	दृश्	पश्यन्	लष्	लषन्	स्वप्	स्वपन्
खाद्	खादन्	धाव्	धावन्	लिख्	लिखन्	हन्	घ्नन्
गण्	गणयन्	धृ	धरन्	लिह्	लिहन्	हस्	हसन्
गम्	गच्छन्	ध्यै	ध्यायन्	वद्	वदन्	हा (३ प०)	जहन्
गर्ज्	गर्जन्	नम्	नमन्	वस्	वसन्	हिंस्	हिंसन्
गॄ	गिरन्	नश्	नश्यन्	वह्	वहन्	हु	जुह्वन्
गै	गायन्	निन्द्	निन्दन्	विश्	विशन्	हृ	हरन्
घ्रा	जिघ्रन्	नृत्	नृत्यन्	वृष्	वर्षन्	हृष्	हृष्यन्
चर्	चरन्	पठ्	पठन्			ह्वे	ह्वयन्

(४) शानच् प्रत्यय (देखो अभ्यास ३५)

सूचना—आत्मनेपदी धातुओं के लट् के स्थान पर शानच् होता है। उभयपदी धातुओं के लट् के स्थान पर शतृ और शानच् दोनों होते हैं। शानच् का आन शेष रहता है। शानच्-प्रत्ययान्त के रूप पुं० में रामवत्, स्त्री० में आ लगाकर रमावत् और नपुं० में गृहवत् चलेंगे। यहाँ पर पुंलिंग के ही रूप दिए गए हैं। **धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।**

आत्मनेपदी धातुएँ **उभयपदी धातुएँ**

अधि + इ	अधीयानः	मन्	मन्यमानः	कथ्	कथयन्	कथयमानः
आ + रभ्	आरभमाणः	मुद्	मोदमानः	कृ	कुर्वन्	कुर्वाणः
आ + लम्ब्	आलम्बमानः	मृ	म्रियमाणः	क्री	क्रीणन्	क्रीणानः
आस्	आसीनः	यत्	यतमानः	ग्रह्	गृह्णन्	गृह्णानः
ईक्ष्	ईक्षमाणः	याच्	याचमानः	चि	चिन्वन्	चिन्वानः
ईह्	ईहमानः	युध्	युध्यमानः	चिन्त्	चिन्तयन्	चिन्तयमानः
उद् + डी	उड्डयमानः	रुच्	रोचमानः	चुर्	चोरयन्	चोरयमाणः
कम्प्	कम्पमानः	लभ्	लभमानः	ज्ञा	जानन्	जानानः
कूर्द्	कूर्दमानः	वन्द्	वन्दमानः	तन्	तन्वन्	तन्वानः
गाह्	गाहमानः	वि + राज्	विराजमानः	दा	ददत्	ददानः
ग्रस्	ग्रसमानः	वृत्	वर्तमानः	धा	दधत्	दधानः
चेष्ट्	चेष्टमानः	वृध्	वर्धमानः	नी	नयन्	नयमानः
जन्	जायमानः	व्यथ्	व्यथमानः	पच्	पचन्	पचमानः
त्रै	त्रायमाणः	शङ्क्	शङ्कमानः	ब्रू	ब्रुवन्	ब्रुवाणः
त्वर्	त्वरमाणः	शिक्ष्	शिक्षमाणः	भुज्	भुञ्जन्	भुञ्जानः
दय्	दयमानः	शी	शयानः	मुच्	मुञ्चन्	मुञ्चमानः
द्युत्	द्योतमानः	शुच्	शोचमानः	यज्	यजन्	यजमानः
ध्वंस्	ध्वंसमानः	शुभ्	शोभमानः	युज्	युञ्जन्	युञ्जानः
पलाय्	पलायमानः	श्लाघ्	श्लाघमानः	रुध्	रुन्धन्	रुन्धानः
प्रथ्	प्रथमानः	सं + पद्	संपद्यमानः	वह्	वहन्	वहमानः
बाध्	बाधमानः	सह्	सहमानः	श्रि	श्रयन्	श्रयमाणः
भास्	भासमानः	सेव्	सेवमानः	सु	सुन्वन्	सुन्वानः
भिक्ष्	भिक्षमाणः	स्मि	स्मयमानः	हृ	हरन्	हरमाणः

(५) तुमुन्, (६) तव्यत् , (७) तृच् प्रत्यय (देखो अभ्यास ३६, ३९, ४२)

सूचना—(क) तुमुन् प्रत्यय 'को', 'के लिए' अर्थ में होता है । तुमुन् का तुम् शेष रहता है । तुमुन्-प्रत्ययान्त अव्यय होता है, अतः रूप नहीं चलते। धातु को गुण होता है। विशेष नियमों के लिए देखो अभ्यास ३६ । (ख) तव्यत् प्रत्यय लगाकर रूप बनानेका सरल उपाय यह है कि तुम्-प्रत्यय वाले रूप में तुम् के स्थान पर तव्य लगा दो । तव्यत् प्रत्यय 'चाहिए' अर्थ में होता है । तव्यत् का तव्य शेष रहता है । पुं० में तव्य-प्रत्ययान्त के रूप रामवत् , स्त्री० में आ लगाकर रमावत् , नपुं० में गृहवत् चलेंगे। विशेष नियमों के लिए देखो अभ्यास ३९। (ग) तृच् प्रत्यय कर्ता या 'वाला' अर्थ में होता है। तृच् का तृ शेष रहता है । तृच् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि तुम् प्रत्यय वाले रूप में तुम् के स्थान पर तृ लगा दो। तृच्-प्रत्ययान्त के रूप पुं० में कर्तृ के तुल्य, स्त्री० में ई लगाकर नदी के तुल्य और नपुं० में कर्तृ के तुल्य चलेंगे। तृच् प्रत्यय के विशेष नियमों के लिए देखो अभ्यास ४२ । उदाहरणार्थ—तुम् , तव्य, तृ लगाकर इन धातुओं के ये रूप होंगे। कृ—कर्तुम् , कर्तव्य, कर्तृ । हृ—हर्तुम, हर्तव्य, हर्तृ। लिख्—लेखितुम्, लेखितव्य, लेखितृ । तव्य और तृच् में तुम् के तुल्य ही सन्धि के कार्य होंगे। **धातुएँ अकारादिक्रम से दी गयी हैं।**

अद्	अत्तुम्	ईक्ष्	ईक्षितुम्	क्री	क्रेतुम्	ग्रस्	ग्रसितुम्
अधि + इ	अध्येतुम्	कथ्	कथयितुम्	क्रीड्	क्रीडितुम्	ग्रह्	ग्रहीतुम्
अर्च्	अर्चितुम्	कम्	कमितुम्	क्रुध्	क्रोद्धुम्	घ्रा	घ्रातुम्
अस् (२ प.)	भवितुम्	कम्प्	कम्पितुम्	क्षम्	क्षमितुम्	चर्	चरितुम्
आप्	आप्तुम्	कुप्	कोपितुम्	क्षिप्	क्षेप्तुम्	चल्	चलितुम्
आ + रभ्	आरब्धुम्	कूर्द	कूर्दितुम्	खन्	खनितुम्	चि	चेतुम्
आ + रुह्	आरोढुम्	कृ	कर्तुम्	खाद्	खादितुम्	चिन्त्	चिन्तयितुम्
आ + लप्	आलपितुम्	क्लृप्	कल्पितुम्	गण्	गणयितुम्	चुर्	चोरयितुम्
आस्	आसितुम्	कृष्	कर्ष्टुम्	गम्	गन्तुम्	चेष्ट्	चेष्टितुम्
आ + ह्वे	आह्वातुम्	कॄ	करितुम्	गर्ज्	गर्जितुम्	छिद्	छेत्तुम्
इ	एतुम्	क्रन्द्	क्रन्दितुम्	गॄ	गरितुम्	जन्	जनितुम्
इष्	एषितुम्	क्रम्	क्रमितुम्	गै	गातुम्	जप्	जपितुम्

जि	जेतुम्
जीव्	जीवितुम्
ज्ञा	ज्ञातुम्
ज्वल्	ज्वलितुम्
डी	डयितुम्
तप्	तप्तुम्
तृप्	तर्पितुम्
तॄ	तरितुम्
त्यज्	त्यक्तुम्
त्रै	त्रातुम्
दंश्	दंष्टुम्
दह्	दग्धुम्
दा	दातुम्
दिश्	देष्टुम्
दीक्ष्	दीक्षितुम्
दुह्	दोग्धुम्
द्युत्	द्योतितुम्
द्रुह्	द्रोग्धुम्
धा	धातुम्
धाव्	धावितुम्
धृ	धर्तुम्
ध्यै	ध्यातुम्
ध्वंस्	ध्वंसितुम्
नम्	नन्तुम्
नश्	नंष्टुम्
निन्द्	निन्दितुम्
नी	नेतुम्
नृत्	नर्तितुम्
पच्	पक्तुम्
पठ्	पठितुम्
पत्	पतितुम्
पद्	पत्तुम्
पलाय्	पलायितुम्
पा (१, २)	पातुम्
पाल्	पालयितुम्
पुष्	पोषितुम्
पूज्	पूजयितुम्
प्रच्छ्	प्रष्टुम्
प्रेर्	प्रेरयितुम्
बन्ध्	बन्धुम्
बाध्	बाधितुम्
बुध्	बोद्धुम्
ब्रू	वक्तुम्
भक्ष्	भक्षयितुम्
भज्	भक्तुम्
भाष्	भाषितुम्
भिद्	भेत्तुम्
भी	भेतुम्
भुज्	भोक्तुम्
भू	भवितुम्
भृ	भर्तुम्
भ्रम्	भ्रमितुम्
मन्	मन्तुम्
मा	मातुम्
मिल्	मेलितुम्
मुच्	मोक्तुम्
मुद्	मोदितुम्
मृ	मर्तुम्
यंज्	यष्टुम्
यत्	यतितुम्
यम्	यन्तुम्
या	यातुम्
याच्	याचितुम्
युज्	योक्तुम्
युध्	योद्धुम्
रक्ष्	रक्षितुम्
रच्	रचयितुम्
रम्	रन्तुम्
राज्	राजितुम्
रुच्	रोचितुम्
रुद्	रोदितुम्
रुध्	रोद्धुम्
लभ्	लब्धुम्
लम्ब्	लम्बितुम्
लष्	लषितुम्
लिख्	लेखितुम्
लिह्	लेढुम्
लुभ्	लोभितुम्
वच्	वक्तुम्
वद्	वदितुम्
वन्द्	वन्दितुम्
वप्	वप्तुम्
वस्	वस्तुम्
वह्	वोढुम्
विद् (४, ६, ७)	वेत्तुम्
विश्	वेष्टुम्
वृ (१०)	वारयितुम्
वृत्	वर्तितुम्
वृध्	वर्धितुम्
वृष्	वर्षितुम्
वे	वातुम्
शक्	शक्तुम्
शंक्	शंकितुम्
शप्	शप्तुम्
शम्	शमितुम्
शिक्ष्	शिक्षितुम्
शी	शयितुम्
शुच्	शोचितुम्
शुभ्	शोभितुम
श्रि	श्रयितुम्
श्रु	श्रोतुम्
श्लिष्	श्लेष्टुम्
सह्	सोढुम्
सिच्	सेक्तुम्
सिध्	सेद्धुम्
सिव्	सेवितुम्
सु	सोतुम्
सृ	सर्तुम्
सृज्	स्रष्टुम्
सृप्	सर्प्तुम्
सेव्	सेवितुम्
स्तु	स्तोतुम्
स्था	स्थातुम्
स्ना	स्नातुम्
स्पर्ध्	स्पर्धितुम्
स्पृश्	स्प्रष्टुम्
स्मृ	स्मर्तुम्
हन्	हन्तुम्
हस्	हसितुम्
हा	हातुम्
हिंस्	हिंसितुम्
हु	होतुम्
हृ	हर्तुम्
हृष्	हर्षितुम्

(८) क्त्वा, (९) ल्यप् प्रत्यय (देखो अभ्यास ३७, ३८)

सूचना—'कर' या 'करके' अर्थ में क्त्वा और ल्यप् प्रत्यय होते हैं। क्त्वा का त्वा और ल्यप् का य शेष रहता है। धातु से पहले उपसर्ग नहीं होगा तो क्त्वा होगा। यदि उपसर्ग पहले होगा तो ल्यप् होगा। दोनों प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं, अतः इनके रूप नहीं चलते। दोनों प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के नियमों के लिए देखो अभ्यास ३७ और ३८। जिन उपसर्गों के साथ ल्यप् रूप वाला अधिक प्रचलित है, वही यहाँ दिए गए हैं। **धातुएँ अकारादिक्रम से दी गयी हैं।**

अद्	जग्ध्वा	प्रजग्ध्य
अधि इ	——	अधीत्य
अर्च्	अर्चित्वा	समर्च्य
अस् (२प०)	भूत्वा	सम्भूय
अस् (४प०)	असित्वा	प्रास्य
आ + दृ-	——	आदृत्य
आप्	आप्त्वा	प्राप्य
आस्	आसित्वा	उपास्य
इ	इत्वा	प्रेत्य
इष्	इष्ट्वा	समिष्य
ईक्ष्	ईक्षित्वा	समीक्ष्य
उत् + डी	—	उड्डीय
कम्	कमित्वा	संकाम्य
कूर्द्	कूर्दित्वा	प्रकूर्द्य
कृ	कृत्वा	उपकृत्य
कृष्	कृष्ट्वा	आकृष्य
कॄ	कीर्त्वा	विकीर्य
क्रन्द्	क्रन्दित्वा	आक्रन्द्य
क्रम्	क्रमित्वा, क्रान्त्वा	संक्रम्य
क्री	क्रीत्वा	विक्रीय
क्रीड्	क्रीडित्वा	प्रक्रीड्य
क्रुध्	क्रुद्ध्वा	संक्रुध्य
क्षम्	क्षमित्वा	संक्षम्य
क्षिप्	क्षिप्त्वा	प्रक्षिप्य
क्षुभ्	क्षुभित्वा	प्रक्षुभ्य
खन्	खनित्वा, खात्वा	उत्खाय
गण्	गणयित्वा	विगणय्य
गम्	गत्वा	आगम्य, आगत्य
गॄ	गीर्त्वा	उद्गीर्य
गै	गीत्वा	प्रगाय
ग्रस्	ग्रसित्वा	संग्रस्य
ग्रह्	गृहीत्वा	संगृह्य
घ्रा	घ्रात्वा	आघ्राय
चर्	चरित्वा	आचर्य
चल्	चलित्वा	प्रचल्य
चि	चित्वा	संचित्य
चिन्त्	चिन्तयित्वा	संचिन्त्य
चुर्	चोरयित्वा	संचोर्य
छिद्	छित्वा	उच्छिद्य
जन्	जनित्वा	संजाय
जप्	जपित्वा	संजप्य
जि	जित्वा	विजित्य
जीव्	जीवित्वा	संजीव्य

ज्ञा	ज्ञात्वा	विज्ञाय	पलाय्	——	पलाय्य
ज्वल्	ज्वलित्वा	प्रज्वल्य	पा (१ प.)	पीत्वा	निपाय
तन्	तनित्वा	वितत्य	पाल्	पालयित्वा	संपाल्य
तप्	तप्त्वा	संतप्य	पुष्	पुष्ट्वा	संपुष्य
तुष्	तुष्ट्वा	संतुष्य	पूज्	पूजयित्वा	संपूज्य
तॄ	तीर्त्वा	उत्तीर्य	पॄ	पूर्त्वा	आपूर्य
त्यज्	त्यक्त्वा	परित्यज्य	प्रच्छ्	पृष्ट्वा	संपृच्छ्य
दंश्	दष्ट्वा	संदश्य	बन्ध्	बद्ध्वा	आबध्य
दह्	दग्ध्वा	संदह्य	बुध्	बुद्ध्वा	प्रबुध्य
दा	दत्त्वा	आदाय	ब्रू	उक्त्वा	प्रोच्य
दिव्	देवित्वा	संदीव्य	भक्ष्	भक्षयित्वा	संभक्ष्य
दिश्	दिष्ट्वा	उपदिश्य	भज्	भक्त्वा	विभज्य
दीप्	दीपित्वा	संदीप्य	भञ्ज्	भङ्क्त्वा	विभज्य
दुह्	दुग्ध्वा	संदुह्य	भाष्	भाषित्वा	संभाष्य
दृश्	दृष्ट्वा	संदृश्य	भिद्	भित्वा	प्रभिद्य
द्युत्	द्योतित्वा	विद्युत्य	भी	भीत्वा	संभीय
धा	हित्वा	विधाय	भुज्	भुक्त्वा	उपभुज्य
धाव्	धावित्वा	प्रधाव्य	भू	भूत्वा	संभूय
धृ	धृत्वा	आधृत्य	भृ	भृत्वा	संभृत्य
ध्मा	ध्मात्वा	आध्माय	भ्रंश्	भ्रष्ट्वा	प्रभ्रश्य
ध्यै	ध्यात्वा	संध्याय	भ्रम्	भ्रमित्वा, भ्रान्त्वा	संभ्रम्य
नम्	नत्वा	प्रणम्य	मथ्	मथित्वा	विमथ्य
नश्	नष्ट्वा	विनश्य	मन्	मत्वा	अनुमत्य
नि + वृ	——	निवृत्य	मा	मित्वा	प्रमाय
नी	नीत्वा	आनीय	मिल्	मिलित्वा	संमिल्य
नुद्	नुत्त्वा	प्रणुद्य	मुच्	मुक्त्वा	विमुच्य
नृत्	नर्तित्वा	प्रनृत्य	मुह्	मुग्ध्वा	संमुह्य
पच्	पक्त्वा	संपच्य	यज्	इष्ट्वा	समिज्य
पठ्	पठित्वा	संपठ्य	यम्	यत्वा	संयम्य
पत्	पतित्वा	निपत्य	या	[illegible]	[illegible]
पद्	पत्त्वा	संपद्य			

याच्	याचित्वा	अनुयाच्य	शम्	शान्त्वा	निशम्य
युज्	युक्त्वा	प्रयुज्य	शास्	शिष्ट्वा	अनुशिष्य
युध्	युद्ध्वा	प्रयुध्य	शी	शयित्वा	संशय्य
रक्ष्	रक्षित्वा	संरक्ष्य	शुष्	शुष्ट्वा	परिशुष्य
रच्	रचयित्वा	विरचय्य	श्रि	श्रित्वा	आश्रित्य
रभ्	रब्ध्वा	आरभ्य	श्रु	श्रुत्वा	संश्रुत्य
रम्	रत्वा	विरम्य	श्लिष्	श्लिष्ट्वा	आश्लिष्य
रुद्	रुदित्वा	विरुद्य	श्वस्	श्वसित्वा	विश्वस्य
रुध्	रुद्ध्वा	विरुध्य	सद्	सत्त्वा	निपद्य
रुह्	रुढ्वा	आरुह्य	सह्	सहित्वा	संसह्य
लप्	लपित्वा	विलप्य	साध्	साद्ध्वा	प्रसाध्य
लभ्	लब्ध्वा	उपलभ्य	सिच्	सिक्त्वा	अभिषिच्य
लम्ब्	लम्बित्वा	आलम्ब्य	सिध्	सिद्ध्वा	निषिध्य
लष्	लषित्वा	अभिलष्य	सिव्	सेवित्वा	संसीव्य
लिख्	लिखित्वा	आलिख्य	सृज्	सृष्ट्वा	विसृज्य
लिह्	लीढ्वा	आलिह्य	सेव्	सेवित्वा	निषेव्य
ली	लीत्वा	निलीय	सो	सित्वा	अवसाय
लुभ्	लुब्ध्वा	प्रलुभ्य	स्तु	स्तुत्वा	प्रस्तुत्य
वद्	उदित्वा	अनूद्य	स्था	स्थित्वा	प्रस्थाय
वन्द्	वन्दित्वा	अभिवन्द्य	स्ना	स्नात्वा	प्रस्नाय
वप्	उप्त्वा	समुप्य	स्निह्	स्निग्ध्वा	उपस्निह्य
वस्	उषित्वा	उपोष्य	स्पृश्	स्पृष्ट्वा	संस्पृश्य
वह्	ऊढ्वा	प्रोह्य	स्मृ	स्मृत्वा	विस्मृत्य
विद् (२ प०)	विदित्वा	संविद्य	स्वप	सुप्त्वा	संषुप्य
विद् (१०)	वेदयित्वा	निवेद्य	हन्	हत्वा	निहत्य
विश्	विष्ट्वा	प्रविश्य	हस्	हसित्वा	विहस्य
वृत्	वर्तित्वा	निवृत्य	हा	हित्वा	विहाय
वृध्	वर्धित्वा	संवृध्य	हु	हुत्वा	आहुत्य
वृष्	वर्षित्वा	प्रवृष्य	हृ	हृत्वा	प्रहृत्य
व्यध्	विद्ध्वा	आविध्य	हृष्	हृषित्वा	प्रहृष्य
शप्	शप्त्वा	अभिशप्य	ह्वे	हूत्वा	आहूय

(१०) ल्युट्, (११) अनीयर् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ३९, ४३)

सूचना—(क) ल्युट् प्रत्यय भाववाचक शब्द बनाने के लिए धातु से लगता है। ल्युट् का 'अन' शेष रहता है। धातु को गुण होता है। ल्युट् प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिंग होता है। अन्य नियमों के लिए देखो अभ्यास ४३। (ख) 'चाहिए' अर्थ में अनीयर् प्रत्यय होता है। अनीयर् का 'अनीय' शेष रहता है। अनीयर् प्रत्ययवाला रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि ल्युट् के अन के स्थान पर अनीय लगा दो। अन्य नियमों के लिए देखो अभ्यास ३९। जैसे—कृ का करण, करणीय। दा-दान, दानीय। पठ्-पठन, पठनीय। **धातुएँ अकारादि क्रम से दी गई हैं।**

अद्	अदनम्	कूर्द्	कूर्दनम्	ग्रस्	ग्रसनम्	त्रै	त्राणम्
अधि+इ	अध्ययनम्	कृ	करणम्	ग्रह्	ग्रहणम्	दंश्	दंशनम्
अन्विष्	अन्वेषणम्	कृप्	कल्पनम्	घ्रा	घ्राणम्	दण्ड्	दण्डनम्
अर्च्	अर्चनम्	कृष्	कर्षणम्	चर्	चरणम्	दम्	दमनम्
अर्ज्	अर्जनम्	कॄ	करणम्	चल्	चलनम्	दह्	दहनम्
अस् (२)	भवनम्	क्रन्द्	क्रन्दनम्	चि	चयनम्	दा	दानम्
अस् (४)	असनम्	क्रम्	क्रमणम्	चिन्त्	चिन्तनम्	दिव्	देवनम्
आ+क्रम्	आक्रमणम्	क्री	क्रयणम्	चुर्	चोरणम्	दिश्	देशनम्
आ+चर्	आचरणम्	क्रीड्	क्रीडनम्	चेष्ट्	चेष्टनम्	दीप्	दीपनम्
आ+रभ्	आरभणम्	क्रुध्	क्रोधनम्	छिद्	छेदनम्	दुह्	दोहनम्
आ+रुह्	आरोहणम्	क्लिश्	क्लेशनम्	जन्	जननम्	दृश्	दर्शनम्
आ+लप्	आलपनम्	क्षम्	क्षमणम्	जप्	जपनम्	द्युत्	द्योतनम्
आस्	आसनम्	क्षिप्	क्षेपणम्	जि	जयनम्	द्रुह्	द्रोहणम्
आ+ह्वे	आह्वानम्	खन्	खननम्	जीव्	जीवनम्	धा	धानम्
इ	अयनम्	खाद्	खादनम्	ज्ञा	ज्ञानम्	धाव्	धावनम्
इष्	एषणम्	गण्	गणनम्	ज्वल्	ज्वलनम्	धृ	धरणम्
ईक्ष्	ईक्षणम्	गम्	गमनम्	डी	डयनम्	ध्यै	ध्यानम्
उद्+डी	उड्डयनम्	गर्ज्	गर्जनम्	तप्	तपनम्	ध्वंस्	ध्वंसनम्
कथ्	कथनम्	गाह्	गाहनम्	तुष्	तोषणम्	नन्द्	नन्दनम्
कम्	कमनम्	गॄ	गरणम्	तृप्	तर्पणम्	नम्	नमनम्
कम्प्	कम्पनम्	गै (गा)	गानम्	तॄ	तरणम्	नश्	नशनम्
कुप्	कोपनम्	ग्रन्थ्	ग्रन्थनम्	त्यज्	त्यजनम्	नि+गॄ	निगरणम्

निन्द्	निन्दनम्	भुज्	भोजनम्	लभ्	लभनम्	शम्	शमनम्
नि+यम्	नियमनम्	भू	भवनम्	लम्ब्	लम्बनम्	शास्	शासनम्
नि + वस्	निवसनम्	भृ	भरणम्	लष्	लषणम्	शिक्ष्	शिक्षणम्
नि + विद्	निवेदनम्	भ्रंश्	भ्रंशनम्	लस्	लसनम्	शी	शयनम्
नि + सिध्	निषेधनम्	भ्रम्	भ्रमणम्	लिख्	लेखनम्	शुभ्	शोभनम्
नी	नयनम्	मद्	मदनम्	लिह्	लेहनम्	शुष्	शोषणम्
नृत्	नर्तनम्	मन्	मननम्	ली	लयनम्	श्रि	श्रयणम्
पच्	पचनम्	मन्थ्	मन्थनम्	लुट्	लोटनम्	श्रु	श्रवणम्
पठ्	पठनम्	मा	मानम्	लुप्	लोपनम्	सं+मिल्	संमेलनम्
पत्	पतनम्	मिल्	मेलनम्	लुभ्	लोभनम्	सद्	सदनम्
पलाय्	पलायनम्	मुच्	मोचनम्	लोक्	लोकनम्	सह्	सहनम्
पा (१प.)	पानम्	मुद्	मोदनम्	लोच्	लोचनम्	साध्	साधनम्
पाल्	पालनम्	मुष्	मोषणम्	वच्	वचनम्	सिच्	सेचनम्
पुष्	पोषणम्	मुह्	मोहनम्	वञ्च्	वञ्चनम्	सिव्	सेवनम्
पूज्	पूजनम्	मृ	मरणम्	वद्	वदनम्	सु	सवनम्
प्र + काश्	प्रकाशनम्	यज्	यजनम्	वन्द्	वन्दनम्	सृ	सरणम्
प्रच्छ्	प्रच्छनम्	यत्	यतनम्	वप्	वपनम्	सृज्	सर्जनम्
प्र + आप्	प्रापणम्	यम्	यमनम्	वर्ण्	वर्णनम्	सृप्	सर्पणम्
प्र + विश्	प्रवेशनम्	या	यानम्	वह्	वहनम्	सेव्	सेवनम्
प्र + हस्	प्रहसनम्	याच्	याचनम्	वि + कस्	विकसनम्	स्तु	स्तवनम्
प्रेर्	प्रेरणम्	युज्	योजनम्	विद्	वेदनम्	स्था	स्थानम्
प्रेष्	प्रेषणम्	युध्	योधनम्	वि + धा	विधानम्	स्ना	स्नानम्
बन्ध्	बन्धनम्	रक्ष्	रक्षणम्	वि + नश्	विनशनम्	स्निह्	स्नेहनम्
बाध्	बाधनम्	रच	रचनम्	वि + लप्	विलपनम्	स्पृश्	स्पर्शनम्
बुध्	बोधनम्	रञ्ज्	रञ्जनम्	वि + श्वस्	विश्वसनम्	स्मृ	स्मरणम्
ब्रू	वचनम्	रम्	रमणम्	वृ	वरणम्	स्रंस्	स्रंसनम्
भक्ष्	भक्षणम्	राज	राजनम्	वृत्	वर्तनम्	स्वप्	स्वपनम्
भज्	भजनम्	रुच्	रोचनम्	वृध्	वर्धनम्	हन्	हननम्
भञ्ज्	भञ्जनम्	रुद्	रोदनम्	वृष्	वर्षणम्	हु	हवनम्
भाष्	भाषणम्	रुध्	रोधनम्	वेप्	वेपनम्	हृ	हरणम्
भिद्	भेदनम्	लप्	लपनम्	शप्	शपनम्	हृष्	हर्षणम्

(१२) घञ् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४१)

सूचना—भाव अर्थ में घञ् प्रत्यय होता है। घञ् का 'अ' शेष रहता है। घञन्त शब्द पुंलिंग होता है। घञ् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के नियमों के लिए देखो अभ्यास ४१। घञ् प्रत्ययान्त शब्द उपसर्गों के साथ बहुत प्रचलित हैं। स्वयं उपसर्ग लगाकर अन्य रूप बनावें। **धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।**

अधि + इ	अध्यायः	चर्	चारः	प्र + भू	प्रभावः	वि + लप्	विलापः
अभि+लष्	अभिलाषः	चल्	चालः	प्र + विश्	प्रवेशः	वि + वह्	विवाहः
अव + तॄ	अवतारः	चि	कायः	प्र + सद्	प्रसादः	वि + श्रम्	विश्रामः
अव+लिह्	अवलेहः	चुर्	चोरः	प्र + सृ	प्रसारः	वि+श्वस्	विश्वासः
अस् (२प.)	भावः	छिद्	छेदः	प्र + स्तु	प्रस्तावः	वि + सृज्	विसर्गः
आ + क्षिप्	आक्षेपः	जप्	जापः	प्र + हृ	प्रहारः	वृष्	वर्षः
आ + गम्	आगमः	तप्	तापः	बुध्	बोधः	शप्	शापः
आ + चर्	आचारः	यज्	यागः	भज्	भागः	शम्	शमः
आ + दृश्	आदर्शः	दह्	दाहः	भिद्	भेदः	शुच्	शोकः
आ + धृ	आधारः	दा	दायः	भुज्	भोगः	शुष्	शोषः
आ + मुद्	आमोदः	दिव्	देवः	मिल्	मेलः	श्रि	श्रायः
आ + रुह्	आरोहः	दुह्	दोहः	मुह्	मोहः	श्रु	श्रावः
आ + वृत्	आवर्तः	द्रुह्	द्रोहः	मृज्	मार्गः	श्लिष्	श्लेषः
आ + हन्	आघातः	धा	धायः	यज्	यागः	सं + कृ	संस्कारः
उत् + पद्	उत्पादः	नश्	नाशः	युज्	योगः	सं + तन्	सन्तानः
उत् + सह्	उत्साहः	नि + इ	न्यायः	युध्	योधः	सं + तुष्	सन्तोषः
उप + दिश्	उपदेशः	नि + वस्	निवासः	रञ्ज्	रागः	सं + मन्	संमानः
कम्	कामः	नि + सिध्	निषेधः	रम्	रामः	सं + यम्	संयमः
कुप्	कोपः	पच्	पाकः	रुध्	रोधः	सिच्	सेकः
कृ	कारः	पठ्	पाठः	लभ्	लाभः	सृज्	सर्गः
कृष्	कर्षः	पत्	पातः	लिख्	लेखः	स्निह्	स्नेहः
क्षिप्	क्षेपः	पुष्	पोषः	लुभ्	लोभः	स्पृश्	स्पर्शः
क्षुभ्	क्षोभः	प्र + काश्	प्रकाशः	वद्	वादः	स्वप्	स्वापः
गम्	गमः	प्र + कृ	प्रकारः	वि + कस्	विकासः	हस्	हासः
ग्रस्	ग्रासः	प्र + कृष्	प्रकर्षः	वि + क्लृप्	विकल्पः	हृ	हारः
ग्रह्	ग्राहः	प्र + नम्	प्रणामः	विद्	वेदः	हृष्	हर्षः

(१३) ण्वुल् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४३)

सूचना—कर्ता या 'वाला' अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय होता है। ण्वुल् के स्थान पर 'अक' शेष रहता है। धातु को गुण या वृद्धि होगी। विशेष्य के अनुसार तीनों लिंग होते हैं। विशेष नियम के लिए देखो अभ्यास ४३। **धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।**

अध्यापि	अध्यापकः	द्विष्	द्वेषकः	प्र + विश्	प्रवेशकः	रुध्	रोधकः
अन्विष्	अन्वेषकः	धा	धायकः	प्र + सृ	प्रसारकः	लिख्	लेखकः
उत्+पद्	उत्पादकः	धाव्	धावकः	प्र + स्तु	प्रस्तावकः	वच्	वाचकः
उद् + धृ	उद्धारकः	धृ	धारकः	प्रेर्	प्रेरकः	वह्	वाहकः
उद् + मद्	उन्मादकः	ध्यै	ध्यायकः	बन्ध्	बन्धकः	वि + कस्	विकासकः
उप + दिश्	उपदेशकः	ध्वंस्	ध्वंसकः	बाध्	बाधकः	वि + आप्	व्यापकः
उप + आस्	उपासकः	नश्	नाशकः	बुध्	बोधकः	वि + धा	विधायकः
कृ	कारकः	निन्द्	निन्दकः	ब्रू	वाचकः	वि + भज्	विभाजकः
कृष्	कर्षकः	नि + विद्	निवेदकः	भक्ष्	भक्षकः	वि + स्कम्भ्	विष्कम्भकः
क्रीड्	क्रीडकः	नि + वृ	निवारकः	भज्	भाजकः	वृध्	वर्धकः
खाद्	खादकः	नि + सिध्	निषेधकः	भाष्	भाषकः	वृष्	वर्षकः
गण्	गणकः	नी	नायकः	भिद्	भेदकः	शास्	शासकः
गम्	गमकः	नृत्	नर्तकः	भुज्	भोजकः	शिक्ष्	शिक्षकः
गै	गायकः	पच्	पाचकः	भू	भावकः	शुष्	शोषकः
ग्रह्	ग्राहकः	पठ्	पाठकः	मुच्	मोचकः	श्रु	श्रावकः
चि	चायकः	पत्	पातकः	मुद्	मोदकः	सं + चल्	संचालकः
चिन्त्	चिन्तकः	परि + ईक्ष्	परीक्षकः	मुह्	मोहकः	सं + तप्	संतापकः
छिद्	छेदकः	पा(१प.)	पायकः	मृ	मारकः	सं + युज्	संयोजकः
जन्	जनकः	पाल्	पालकः	यज्	याजकः	सं + हृ	संहारकः
तृ	तारकः	पुष्	पोषकः	यम्	यामकः	साध्	साधकः
दह्	दाहकः	पूज्	पूजकः	याच्	याचकः	सिच्	सेचकः
दीप्	दीपकः	प्र + काश्	प्रकाशकः	युज्	योजकः	सेव्	सेवकः
दुह्	दोहकः	प्र + क्षिप्	प्रक्षेपकः	युध्	योधकः	स्था	स्थापकः
दृश्	दर्शकः	प्र + चर्	प्रचारकः	रक्ष्	रक्षकः	स्मृ	स्मारकः
द्युत्	द्योतकः	प्रच्छ्	प्रच्छकः	रञ्ज्	रञ्जकः	हन्	घातकः
द्रुह्	द्रोहकः	प्र + दा	प्रदायकः	रुच्	रोचकः	हृष्	हर्षकः

(१४) क्तिन्, (१५) यत् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४५, ४०)

सूचना—(क) भाववाचक संज्ञा बनाने के लिए धातु से क्तिन् प्रत्यय होता है। क्तिन् का 'ति' शेष रहता है। 'ति'-प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिंग होते हैं। विशेष नियमों के लिए देखो अभ्यास ४५। (ख) 'चाहिए' अर्थ में अजन्त धातुओं से यत् प्रत्यय होता है। यत् का 'य' शेष रहता है। तीनों लिंगों के रूप चलते हैं। विशेष नियमों के लिए देखो अभ्यास ४०। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

क्तिन् प्रत्यय						यत् प्रत्यय	
अधि + इ	अधीतिः	तृप्	तृप्तिः	यम्	यतिः	अधि + इ	अध्येयम्
अस् (२५०)	भूतिः	दीप्	दीप्तिः	युज्	युक्तिः	आ+ख्या	आख्येयम्
आप्	आप्तिः	दृश्	दृष्टिः	रम्	रतिः	उप + मा	उपमेयम्
आ + संज्	आसक्तिः	धृ	धृतिः	रुह्	रूढिः	क्री	क्रेयम्
आ + सद्	आसत्तिः	नम्	नतिः	वि + आप्	व्याप्तिः	क्षि	क्षेयम्
आ + हु	आहुतिः	नी	नीतिः	वि + नश्	विनष्टिः	गै (गा)	गेयम्
इष्	इष्टिः	पच्	पक्तिः	वि + श्रम्	विश्रान्तिः	घ्रा	घ्रेयम्
उप + लभ्	उपलब्धिः	पा (१५०)	पीतिः	वृत्	वृत्तिः	चि	चेयम्
ऋध्	ऋद्धिः	पुष्	पुष्टिः	वृध्	वृद्धिः	जि	जेयम्
कम्	कान्तिः	पॄ	पूर्तिः	वृष्	वृष्टिः	ज्ञा	ज्ञेयम्
कृ	कृतिः	प्र + आप्	प्राप्तिः	शक्	शक्तिः	दा	देयम्
कृष्	कृष्टिः	प्री	प्रीतिः	शम्	शान्तिः	धा	धेयम्
कॄ	कीर्तिः	बुध्	बुद्धिः	शुध्	शुद्धिः	ध्यै (ध्या)	ध्येयम्
कॄत्	कीर्तिः	ब्रू	उक्तिः	श्रु	श्रुतिः	नी	नेयम्
क्रम्	क्रान्तिः	भज्	भक्तिः	सं + पद्	संपत्तिः	पा (१५०)	पेयम्
क्षम्	क्षान्तिः	भी	भीतिः	सं + सृ	संसृतिः	भू	भव्यम्
गम्	गतिः	भुज्	भुक्तिः	सं + हृ	संहृतिः	मा	मेयम्
गै (गा)	गीतिः	भू	भूतिः	सिध्	सिद्धिः	वि + धा	विधेयम्
चि	चितिः	भ्रम्	भ्रान्तिः	सृज्	सृष्टिः	श्रु	श्रव्यम्
छिद्	छित्तिः	मन्	मतिः	स्तु	स्तुतिः	सु	सव्यम्
जन्	जातिः	मा	मितिः	स्था	स्थितिः	स्था	स्थेयम्
ज्ञा	ज्ञातिः	मुच्	मुक्तिः	स्मृ	स्मृतिः	हा	हेयम्
तुष्	तुष्टिः	यज्	इष्टिः	स्वप्	सुप्तिः	हु	हव्यम्

(६) सन्धि-विचार (क)

(क) स्वर-सन्धि (१) यण्-सन्धि (देखो अभ्यास १०)

(इको यणचि) इ ई को य्, उ ऊ को व्, ऋ ॠ को र्, ऌ को ल् हो जाता है, यदि बाद में कोई स्वर हो तो। सवर्ण (वैसा ही) स्वर हो तो नहीं। जैसे :—

(१)	(२)	(३)
प्रति + एकः = प्रत्येकः	पठतु + एकः = पठत्वेकः	पितृ + आ = पित्रा
पठति + अत्र = पठत्यत्र	अनु + अयः = अन्वयः	मातृ + ए = मात्रे
इति + अत्र = इत्यत्र	मधु + अरिः = मध्वरिः	धातृ + अंशः = धात्रंशः
इति + आह = इत्याह	गुरु + आज्ञा = गुर्वाज्ञा	कर्तृ + आ = कर्त्रा
यदि + अपि = यद्यपि	पठतु + अत्र = पठत्वत्र	कर्तृ + ई = कर्त्री
नदी + औ = नद्यौ	वधू + औ = वध्वौ	
सुधी + उपास्यः = सुध्युपास्यः		(४) ऌ + आकृतिः = लाकृतिः

(२) अयादिसन्धि (देखो अभ्यास ११)

(एचोऽयवायावः) ए को अय्, ओ को अव्, ऐ को आय्, औ को आव् हो जाता है, बाद में कोई स्वर हो तो। (पदान्त ए या ओ के बाद अ होगा तो नहीं)। जैसे—

(१)	(२)	(३)
हरे + ए = हरये	भो + अति = भवति	नै + अकः = नायकः
कवे + ए = कवये	पो + अनः = पवनः	गै + अकः = गायकः
ने + अनम् = नयनम्	गुरो + ए = गुरवे	गै + अति = गायति
शे + अनम् = शयनम्	भानो + ए = भानवे	(४) द्वौ + एतौ = द्वावेतौ
जे + अः = जयः	भो + अनम् = भवनम्	पौ + अकः = पावकः
संचे + अः = संचयः	श्रो + अणम् = श्रवणम्	भौ + अकः = भावकः

(३) गुणसन्धि (देखो अभ्यास १२)

(आद्गुणः) (१) अ या आ के बाद इ या ई हो तो दोनों को 'ए' होगा। (२) अ या आ के बाद उ या ऊ हो तो दोनों को 'ओ' होगा। (३) अ या आ के बाद ऋ या ॠ हो तो दोनों को 'अर्' होगा। (४) अ या आ के बाद ऌ होगा तो दोनों को अल् होगा। जैसे—

(१)	(२)	(३)
महा + ईशः = महेशः	पर + उपकारः = परोपकारः	महा + ऋषिः = महर्षिः
गण + ईशः = गणेशः	महा + उत्सवः = महोत्सवः	राज + ऋषिः = राजर्षिः
रमा + ईशः = रमेशः	हित + उपदेशः = हितोपदेशः	ग्रीष्म + ऋतुः = ग्रीष्मर्तुः
तथा + इति = तथेति	गंगा + उदकम् = गंगोदकम्	ब्रह्म + ऋषिः = ब्रह्मर्षिः
न + इदम् = नेदम्	पश्य + उपरि = पश्योपरि	(४) तव + ऌकारः = तवल्कारः

(४) वृद्धिसन्धि

(देखो अभ्यास १३)

(वृद्धिरेचि) (१) अ या आ के बाद ए या ऐ हो तो दोनों को 'ऐ' होगा। (२) अ या आ के बाद ओ या औ होगा तो दोनों को 'औ' होगा। जैसे—

(१)		(२)	
अत्र + एकः	= अत्रैकः	तण्डुल + ओदनम्	= तण्डुलौदनम्
पश्य + एतम्	= पश्यैतम्	जल + ओघः	= जलौघः
सा + एषा	= सैषा	महा + ओषधिः	= महौषधिः
राज + ऐश्वर्यम्	= राजैश्वर्यम्	देव + औदार्यम्	= देवौदार्यम्

(५) पूर्वरूपसन्धि

(देखो अभ्यास १४)

(एङः पदान्तादति) पद (अर्थात् सुबन्त या तिङन्त) के अन्तिम ए या ओ के बाद अ हो तो उसको पूर्वरूप (अर्थात् ए या ओ जैसा रूप) हो जाता है। (अ हटा है, इस बात के सूचनार्थ ऽ (अवग्रह चिह्न) लगा दिया जाता है।) जैसे—

(१)		(२)	
हरे + अव	= हरेऽव	विष्णो + अव	= विष्णोऽव
लोके + अस्मिन्	= लोकेऽस्मिन्	रामो + अधुना	= रामोऽधुना
विद्यालये + अस्मिन्	= विद्यालयेऽस्मिन्	लोको + अयम्	= लोकोऽयम्

(६) सवर्णदीर्घसन्धि

(देखो अभ्यास १५)

(अकः सवर्णे दीर्घः) अ इ उ ऋ के बाद कोई सवर्ण (सदृश) अक्षर हो तो दोनों के स्थान पर उसी वर्ण का दीर्घ अक्षर हो जाता है। अर्थात् (१) अ या आ + अ या आ = आ। (२) इ या ई + इ या ई = ई। (३) उ या ऊ + उ या ऊ = ऊ। (४) ऋ या ॠ + ऋ या ॠ = ॠ।

(१)	(२)	(३)
हिम + आलयः = हिमालयः	गिरि + ईशः = गिरीशः	गुरु + उपदेशः = गुरूपदेशः
विद्या + आलयः = विद्यालयः	श्री + ईशः = श्रीशः	भानु + उदयः = भानूदयः
तथा + अपि = तथापि	इति + इदम् = इतीदम्	लघु + ऊर्मिः = लघूर्मिः
शिष्टः + आचारः = शिष्टाचारः	पठति + इदम् = पठतीदम्	(४) होतृ + ऋकारः = होतॄकारः

(ख) हल्सन्धि

(७) श्चुत्वसन्धि

(देखो अभ्यास १६)

(स्तोः श्चुना श्चुः) स् या तवर्ग से पहले या बाद में श् या चवर्ग कोई भी हो तो स् और तवर्ग को क्रमशः श् और चवर्ग हो जाता है। जैसे—

रामस् + च = रामश्च	तत् + च = तच्च	सद् + जनः = सज्जनः
कस् + चित् = कश्चित्	सत् + चित् = सच्चित्	उद् + ज्वलः = उज्ज्वलः
दुस् + चरित्रः = दुश्चरित्रः	सत् + चरित्रः = सच्चरित्रः	याच् + ना = याच्ञा
हरिस् + शेते = हरिश्शेते	उत् + चारणम् = उच्चारणम्	शार्ङ्गिन् + जयः = शार्ङ्गिञ्जयः

(८) ष्टुत्वसन्धि (देखो अभ्यास १७)

(ष्टुना ष्टुः) स् या तवर्ग के पहले या बाद में ष् या टवर्ग कोई भी हो तो स् और तवर्ग को क्रमशः ष् और टवर्ग हो जाता है। जैसे,

इष् + तः = इष्टः	रामस् + षष्ठः = रामष्षष्ठः	विष् + नुः = विष्णुः
पेष् + ता = पेष्टा	उद् + डीनः = उड्डीनः	कृष् + नः = कृष्णः
दुष् + तः = दुष्टः	तत् + टीका = तट्टीका	उष् + त्रः = उष्ट्रः

(९) जश्त्वसन्धि (१) (देखो अभ्यास १८)

(झलां जशोऽन्ते) झलों (वर्ग के १, २, ३, ४ और ऊष्म) को जश् (३ अर्थात् अपने वर्ग के तृतीय अक्षर) होते हैं, झल् पद के अन्तिम अक्षर हों तो। (पद अर्थात् सुबन्त या तिङन्त)। जैसे,

सुप् + अन्तः = सुबन्तः	चित् + आनन्दः = चिदानन्दः	षट् + एव = षडेव
अच् + अन्तः = अजन्तः	दिक् + अम्बरः = दिगम्बरः	षट् + आननः = षडाननः
जगत् + ईशः = जगदीशः	उत् + देश्यम् = उद्देश्यम्	दिक् + गजः = दिग्गजः

(१०) जश्त्वसन्धि (२) (देखो अभ्यास १९)

(झलां जश् झशि) झलों (वर्ग के १, २, ३, ४, ऊष्म) को जश् (३, अपने वर्ग के तृतीय अक्षर) होते हैं, बाद में झश् (वर्ग के ३, ४) हों तो। (यह नियम पद के बीच में लगता है, पहला नियम (९) पद के अन्त में।)

बुध् + धि = बुद्धिः	दघ् + धः = दग्धः	युध् + धम् = युद्धम्
सिध् + धिः = सिद्धिः	दुघ् + धम् = दुग्धम्	वृध् + धिः = वृद्धिः
क्षुभ् + धः = क्षुब्धः	लभ् + धः = लब्धः	शुध् + धिः = शुद्धिः

(११) चर्त्व सन्धि (देखो अभ्यास २०)

(खरि च) झलों (वर्ग के १, २, ३, ४, ऊष्म) को चर् (१, उसी वर्ग के प्रथम अक्षर होते हैं, बाद में खर् (१, २, श, ष, स) हों तो। जैसे,

सद् + कारः = सत्कारः	तद् + परः = तत्परः	सद् + पुत्रः = सत्पुत्रः
उद् + पन्नः = उत्पन्नः	उद् + साहः = उत्साहः	तज् + छिवः = तच्छिवः

(१२) अनुस्वार सन्धि (देखो अभ्यास ९)

(मोऽनुस्वारः) पदान्त म् के बाद कोई हल् (व्यंजन) हो तो म् को अनुस्वार (ं) हो जाता है, बाद में स्वर हो तो नहीं। जैसे,

हरिम् + वन्दे = हरिं वन्दे	कम् + चित् = कंचित्	सत्यम् + वद = सत्यं वद
गुरुम् + नमति = गुरुं नमति	कार्यम् + कुरु = कार्यं कुरु	धर्मम् + चर = धर्मं चर

(ग) विसर्गसन्धि (१३) विसर्गसन्धि (देखो अभ्यास २१)

(विसर्जनीयस्य सः) विसर्ग के बाद खर् (वर्ग के १, २, श, ष, स) हो तो विसर्ग को स् हो जाता है। (श् या चवर्ग बाद में हो तो श्चुत्व सन्धि भी)। जैसे,

हरिः + त्रायते = हरिस्त्रायते।	बालः + चलति = बालश्चलति।
रामः + तिष्ठति = रामस्तिष्ठति।	रामः + शेते = रामश्शेते।
कः + चित् = कश्चित्।	जनाः + तिष्ठन्ति = जनास्तिष्ठन्ति।
निः + चलः = निश्चलः।	रामः + च = रामश्च।

(१४), (१५) उत्व सन्धि (१) (देखो अभ्यास २२)

(१४) (**ससजुषो रुः**) पद के अन्तिम स् को रु (:) होता है। सजुष् शब्द के ष् को भी रु होता है। (**सूचना**—इस रु का साधारणतया विसर्ग (:) ही बचता है। इसी रु को सन्धिनियम १५, १६ और १७ से उ या य् होता है। जहाँ उ या य् नहीं होगा, वहाँ पर या तो विसर्ग बचेगा या र् बचेगा।)

(१५) (**अतो रोरप्लुतादप्लुते**) ह्रस्व अ के बाद रु (: या र्) को उ हो जाता है, बाद में ह्रस्व अ हो तो। **सूचना**—इस उ को पूर्ववर्ती अ के साथ सन्धि-नियम ३ से गुणसन्धि करके ओ हो जाता है और बाद के अ को सन्धि-नियम ५ से पूर्वरूप सन्धि होती है। अतएव अः + अ = ओऽ होता है।) जैसे,

रामः + अस्ति = रामोऽस्ति।	रामः + अवदत् = रामोऽवदत्।
कः + अपि = कोऽपि।	नृपः + अगच्छत् = नृपोऽगच्छत्।
सः + अपि = सोऽपि।	देवः + अधुना = देवोऽधुना।
सः + अपठत् = सोऽपठत्।	कः + अयम् = कोऽयम्।

सूचना—स्मरण रखें कि रामः, कः आदि में सब स्थानों पर स् का ही सन्धि-नियम १४ के अनुसार विसर्ग (:) दीखता है। यह विसर्ग मूलरूप में सु (स्) है, उसी को रु (र् या :) होता है। जहाँ पर उ या य् नहीं होगा, वहाँ पर र् शेष रहता है। अतः सन्धि-नियम १४ से अ आ के अतिरिक्त अन्य स्वरों के बाद विसर्ग का 'र्' शेष रहता है, बाद में कोई स्वर या व्यंजन (३, ४, ५) हो तो। जैसे,

हरिः + अवदत् = हरिरवदत्।	लक्ष्मीः + इयम् = लक्ष्मीरियम्।
गुरुः + अस्ति = गुरुरस्ति।	वधूः + एषा = वधूरेषा।
शिशुः + आगच्छत् = शिशुरागच्छत्।	गुरोः + भाषणम् = गुरोर्भाषणम्।
पितुः + इच्छा = पितुरिच्छा।	हरेः + द्रव्यम् = हरेर्द्रव्यम्।

(१६) उत्व सन्धि (देखो अभ्यास २३)

(हशि च) ह्रस्व अ के बाद रु (र् या :) को उ होता जाता है, बाद में हश् (वर्ग के ३, ४, ५, ह, य, व, र, ल) हो तो। (सूचना—सन्धि-नियम १५ बाद में अ हो तब लगता है, यह बाद में हश् हो तो। उ करने के बाद सन्धि-नियम ३ से गुण होकर ओ होगा। अतः अः + हश् = ओ + हश् होगा, अर्थात् अः को ओ)। जैसे :—

रामः + वन्द्यः = रामो वन्द्यः।	देवः + गच्छति = देवो गच्छति।
कृष्णः + वदति = कृष्णो वदति।	बालः + हसति = बालो हसति।
बालः + लिखति = बालो लिखति।	नृपः + रक्षति = नृपो रक्षति।
रामः + जयति = रामो जयति।	शिष्यः + जयति = शिष्यो जयति।

(१७) यत्वसन्धि (देखो अभ्यास २४)

(भोभगोअघोअपूर्वस्य योऽशि) भोः, भगोः, अघोः शब्द और अ या आ के बाद रु (र् या :) को य् होता है, बाद में अश् (स्वर, ह, य, व, र, ल, वर्ग के ३, ४, ५) हो तो। (सूचना—१. हलि सर्वेषाम्, २. लोपः शाकल्यस्य। य् के बाद यदि कोई व्यंजन होगा तो य् का लोप अवश्य होगा। य् के बाद यदि कोई स्वर होगा तो य् का लोप ऐच्छिक है। यदि लोप करेंगे तो कोई दीर्घ, गुण, वृद्धि आदि सन्धि कार्य नहीं होगा। अर्थात् अः या आः + अश् = अ या आ + अश्।) जैसे,

देवाः + गच्छन्ति = देवा गच्छन्ति।	रामः + इच्छति = राम इच्छति।
नराः + हसन्ति = नरा हसन्ति।	शिष्याः + एते = शिष्या एते।
देवाः + इह = देवा इह, देवायिह।	छात्राः + लिखन्ति = छात्रा लिखन्ति।
कन्याः + इच्छन्ति = कन्या इच्छन्ति।	पुत्रः + आगच्छति = पुत्र आगच्छति।

(१८) सुलोपसन्धि (देखो अभ्यास २५)

(एतत्तदोः सुलोपोऽकोरनञ् समासे हलि) सः और एषः के विसर्ग का लोप होता है, बाद में कोई हल् (व्यंजन) हो तो। (सकः, एषकः, असः, अनेषः के विसर्ग का लोप नहीं होगा)। (सूचना—सः, एषः के बाद अ होगा तो सन्धि-नियम १५ से 'ओऽ' होगा। अन्य स्वर बाद में होंगे तो संधिनियम १७ से विसर्ग का लोप)।

(१) सः + पठति = स पठति।	(२) सः + अयम् = सोऽयम्।
सः + लिखति = स लिखति।	सः + आगत = स आगतः।
एषः + वदति = एष वदति।	सः + इच्छति = स इच्छति।
एषः + गच्छति = एष गच्छति।	एषः + अपि = एषोऽपि।

सन्धि-विचार (ख)

(१९) (एङि पररूपम्) अकारान्त उपसर्ग के बाद धातु का ए या ओ हो तो दोनों के स्थान पर पररूप (अर्थात् ए या ओ जैसा रूप) हो जाता है। अर्थात् (१) अ + ए = ए, (२) अ + आ = ओ। जैसे—(१) प्र + एजते = प्रेजते। (२) उप + ओषति = उपोषति।

(२०) (ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्) ईकारान्त, उकारान्त और एकारान्त द्विवचन के रूप की प्रगृह्य संज्ञा होती है अर्थात् उनके साथ कोई सन्धि का कार्य नहीं होगा। जैसे—

हरी + एतौ = हरी एतौ।	गङ्गे + अमू = गङ्गे अमू।
विष्णू + इमौ = विष्णू इमौ।	पचेते + इमौ = पचेते इमौ।

(२१) (यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा) पदान्त यर् (ह को छोड़कर सभी व्यंजन) के बाद अनुनासिक (वर्ग का पञ्चम अक्षर) हो तो यर् को अपने वर्ग का पंचम अक्षर हो जायगा। यह नियम ऐच्छिक है। जैसे—

वाक् + मयम् = वाङ्मयम्।	सद् + मतिः = सन्मतिः।
दिक् + नागः = दिङ्नागः।	पद् + नगः = पन्नगः।
तत् + न = तन्न।	षट् + मुखः = षण्मुखः।
तत् + मयम् = तन्मयम्।	अप् + मयम् = अम्मयम्।

(२२) (तोर्लि) तवर्ग के बाद ल हो तो तवर्ग को भी ल् हो जाता है। अर्थात् (१) त् या द् + ल = ल्ल, (२) न् + ल = ँल्ल। जैसे—

उत् + लेखः = उल्लेखः।	पद + लवः = पल्लवः।
तत् + लीनः = तल्लीनः।	विद्वान् + लिखति = विद्वाँल्लिखति।

(२३) (शश्छोऽटि) पदान्त झय् (वर्ग के १, २, ३, ४) के बाद श् हो तो उसको छ् हो जाता है, यदि उस श् के बाद अट् (स्वर, ह्, य्, व्, र्) हो तो। यह नियम ऐच्छिक है। श् को छ् होने पर पूर्ववर्ती त् को श्चुत्वसन्धि (नियम ७) से च् हो जायेगा। जैसे—

तत् + शिवः = तच्छिवः	सत् + शीलः = सच्छीलः।
तत् + शिला = तच्छिला।	उत् + श्रायः = उच्छ्रायः।

(२४) (**अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः**) अनुस्वार के बाद यय् (य, र, ल, व, वर्ग के १, २, ३, ४, ५) हो तो अनुस्वार को परसवर्ण (अगले वर्ण का पंचम अक्षर) हो जाता है। जैसे—

अं + कः = अङ्कः ।	अं + चितः = अञ्चितः ।	शां + तः = शान्तः ।
शं + का = शङ्का ।	कं + ठः = कण्ठः ।	सं + मानः = सम्मानः ।

(२५) (**नश्छव्यप्रशान्**) पदान्त न् को रु (:, स्) होता है, यदि छव् (च्, छ्, ट्, ठ्, त्, थ्) बाद में हो और छव् के बाद अम् (स्वर, ह, अन्तःस्थ, वर्ग के पंचम अक्षर) हो तो। प्रशान् शब्द में नियम नहीं लगेगा। इस नियम के साथ कुछ अन्य नियम भी लगते हैं, अतः इस नियम का रूप होगा—न् + छव् = ँस् + छव् या ंस्+छव्। श्चुत्व-नियम यदि प्राप्त होगा तो लगेगा। जैसे—

कस्मिन् + चित् = कस्मिंश्चित् ।	शार्ङ्गिन् + छिन्धि = शार्ङ्गिंश्छिन्धि ।
धीमान् + च = धीमांश्च ।	चक्रिन् + त्रायस्व = चक्रिंस्त्रायस्व ।
अस्मिन् + तरौ = अस्मिंस्तरौ ।	तस्मिन् + तथा = तस्मिंस्तथा ।

(२६) (**वा शरि**) विसर्ग के बाद शर् (श, ष, स) हो तो विसर्ग को विसर्ग और स् दोनों होते हैं। श्चुत्व या ष्टुत्व (नियम ७, ८) यदि प्राप्त होंगे तो लगेंगे। जैसे—

हरिः + शेते = हरिः शेते, हरिश्शेते ।	रामः + षष्ठः = रामष्षष्ठः ।
रामः + शेते = रामः शेते, रामश्शेते ।	बालः + स्वपिति = बालस्स्वपिति ।

(२७) (**रो रि**) र् के बाद र् हो तो पहले र् का लोप हो जाता है।

(२८) (**ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः**) ढ् या र् का लोप हुआ हो तो उससे पूर्ववर्ती अ, इ, उ को दीर्घ हो जाता है। जैसे—

पुनर् + रमते = पुना रमते ।	शम्भुर् + राजते = शम्भू राजते ।
हरिर् + रम्यः = हरी रम्यः ।	अन्तर् + राष्ट्रियः = अन्ताराष्ट्रियः ।

(७) पत्रादिलेखनप्रकार

आवश्यक-निर्देश

पत्रों के लेखन में निम्नलिखित बातों का अवश्य ध्यान रखें :—

१. पत्र-लेखन बहुत सरल और स्पष्ट भाषा में होना चाहिए। इसमें प्रायः वार्तालाप में व्यवहृत भाषा का ही रूप अपनाया जाता है, जिससे पत्र का भाव सरलता से हृदयंगम हो सके।

२. पत्रों में अनावश्यक विशेषणों का परित्याग करना चाहिए। पाण्डित्य-प्रदर्शन का प्रयत्न पत्र में अनुचित है, यह निबन्ध आदि का विषय है।

३. जिस उद्देश्य से पत्र लिखा गया है, उसका स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए।

४. पत्र यथासंभव संक्षिप्त होना चाहिए। उसमें आवश्यक बातों का ही उल्लेख करना चाहिए। अनावश्यक बातों का उल्लेख और विस्तार उचित नहीं है।

५. साधारणतया पत्रों को ४ श्रेणी में बाँट सकते हैं। तदनुसार ही उनका लेखन होता है। (क) अतिपरिचित व्यक्तियों को। (ख) सामान्यतया परिचित व्यक्तियों को। (ग) अपरिचित व्यक्तियों को। (घ) केवल व्यावहारिक पत्र।

(क) १. पिता, पुत्र, माता, मित्र, पत्नी, पति आदि के लिए ऐसे पत्र होते हैं। इनमें प्रारम्भ में ऊपर दाहिनी ओर स्व-स्थान-नाम तथा तिथि या दिनांक देना चाहिए। २. उसके नीचे अपने से बड़े को 'प्रणामः', 'नमस्कारः', 'नमस्ते' आदि। समान आयुवालों को 'नमस्ते', छोटों को 'स्वस्ति', 'आशीर्वादः' आदि। ३. पत्र के अन्त में बड़ों के लिए 'भवदाज्ञाकारी', 'भवत्कृपाकांक्षी' आदि, समान आयुवालों को 'भवदीयः', 'भावत्कः' आदि, छोटों को 'शुभाकांक्षी', 'शुभचिन्तकः' आदि लिखना चाहिए। ४. पत्र का पता लिखने में पहली पंक्ति में व्यक्ति का नाम लिखना चाहिए, उसके नीचे उपाधि आदि। दूसरी पंक्ति में ग्राम-नाम आदि, तीसरी पंक्ति में पोस्ट ऑफिस (डाकखाना) का नाम, चौथी पंक्ति में जिले का नाम। यदि दूसरे प्रान्त या देश के लिए हो तो अन्त में प्रान्त या देश का नाम।

(ख) सामान्य परिचित के सम्बोधन में व्यक्ति का नाम-निर्देश करें। शेष पूर्ववत्।

(ग) अपरिचितों को सम्बोधन में 'श्रीमान्', 'महोदय' आदि लिखें। अन्त में 'भवदीयः'। शेष पूर्ववत्।

(घ) केवल व्यावहारिक पत्रों में (१) प्रारम्भ में अधिकारी व्यक्ति या कम्पनी आदि का नाम एवं कार्यालय सम्बन्धी पता लिखें। (२) तदनन्तर संबोधन में 'श्रीमन्' या 'महोदयः'। (३) प्रणाम, नमस्ते आदि न लिखें। (४) अन्त में 'भवदीयः'। (५) केवल कार्य-सम्बन्धी बात लिखें। पारिवारिक या वैयक्तिक नहीं।

(१) पिता को पत्र ।

प्रयागतः

तिथिः चैत्र शुक्ला ९, २०२२ वि०

श्रीमतो मान्यस्य पितृवर्यस्य पादपद्मेषु सादरं प्रणतिः ।

अत्र शं तत्रास्तु । मया भवदीयं कृपापत्रं प्राप्तम् । अखिलं च वृत्तं ज्ञातम् । अद्यत्वे मम वार्षिकी परीक्षा भवति । अहम् अध्ययने सम्यक्तया दत्तचित्तोऽस्मि । साम्प्रतं यावत् परीक्षायाः प्रश्नपत्राणि साधु लिखितानि सन्ति । आशासे परीक्षायामवश्यं सफलो भविष्यामि । परीक्षानन्तरं शीघ्रमेव गृहं प्रति प्रस्थास्ये । पूज्याया मातुश्चरणयोः मम प्रणतिः कथनीया ।

भवदाज्ञाकारी पुत्रः—

देवदत्तः ।

(२) मित्र को पत्र ।

गुरुकुल-महाविद्यालय-ज्वालापुरतः

दिनांकः २–११–६४ ईसवीयः

प्रियमित्र शिवकुमार ! सप्रेम नमस्ते ।

अत्र कुशलं तत्रास्तु । भवत्पत्रं समासाद्य मम चेतोऽतीव हर्षमनुभवति । अद्य दीपमालिकायाः पर्व विद्यते । सर्वेऽपि छात्रा अद्य प्रसन्नचेतसो दीपमालिकामहोत्सव-सम्पादनसंलग्नाः सन्ति । एतत् ज्ञात्वा सर्वेऽपि प्रसन्नाः सन्ति यद् भवान् बी० ए० परीक्षा-मुत्तीर्णः । सर्वे छात्राः अध्यापकाश्च साधुवादान् वितरन्ति । शेषमन्यत् कुशलम् । सद्य एव पत्रोत्तरं प्रेषणीयम् ।

भवद्बन्धुः—

रामदत्तः ।

(३) विश्वविद्यालय के एक छात्र को

काशी-विश्वविद्यालयतः,

दिनाङ्कः १०–७–६४ ई०

श्रीयुत सन्तोषकुमार ! नमस्ते ।

अत्र शं तत्रास्तु । अहमद्यैव गृहात् समायातोऽस्मि । एतत्तु भवतो ज्ञातमेवास्ति यत् ममानुजः विज्ञानविषयमङ्गीकृत्य इण्टरपरीक्षामुत्तीर्णः । स दुर्भाग्यवशात् तृतीय-श्रेण्यामुत्तीर्णः, अतएव तस्य प्रवेशो नात्र आशास्यते । भवतो महती कृपा भविष्यति यदि भवान् स्वीये प्रयागविश्वविद्यालये तस्य बी० एस-सी० कक्षायां प्रवेशार्थं प्रयतिष्यते । भवतो गृहे सर्वेऽपि कुशलिनः सन्ति । पत्रं सद्य एव प्रेष्यम् ।

भावत्कः—विनयकुमारः ।

(४) अवकाश के लिए आचार्य को प्रार्थना-पत्र

श्रीमन्तः प्रधानाचार्यमहोदयाः,

राजकीयमहाविद्यालयः, वाराणसी।

मान्यवर !

अहमद्य दिनद्वयाद् अतीव रुग्णोऽस्मि। विद्यालयमागन्तुं न शक्नोमि। अतो दिवसद्वयस्यावकाशं स्वीकृत्य मामनुग्रहीष्यन्ति श्रीमन्तः।

भवतामाज्ञाकारी शिष्यः

दिनाङ्कः—४-११-६४ ई०

प्रेमनाथः (इण्टर० प्रथमवर्षस्थः)

(५) पुस्तक के लिए प्रकाशक को पत्र

श्रीप्रबन्धकमहोदयः,

विश्वविद्यालय-प्रकाशनम्, वाराणसी।

श्रीमन् !

मया भवत्प्रकाशितं 'रचनानुवादकौमुदी' नाम पुस्तकं दृष्टम्। कृपया पञ्च पुस्तकानि अधोनिर्दिष्टस्थाने वी० पी० पी० द्वारा शीघ्रमेव प्रेषणीयानि।

दिनाङ्कः—१-७-६५ ई०

भवदीय—रूपनारायणशास्त्री, प्रकाशन-विभागः,

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनम्, प्रयागः।

(६) निमन्त्रणपत्रम्

श्रीमन्महोदय !

एतद् विदित्वा भवन्तो नूनं हर्षं प्राप्स्यन्ति यत् परेशस्य महत्याऽनुकम्पया मम ज्येष्ठाया दुहितुः कुमार्यां विमलादेव्याः शुभपाणिग्रहणसंस्कारः काशीवास्तव्यस्य श्रीमतः निखिलचन्द्रशर्मणो ज्येष्ठपुत्रेण सुरेशचन्द्रशर्मणा सह २०-७-६५ ई० दिनांके रात्रौ १० वादने सम्पत्स्यते। भवन्तः सपरिवारं निर्दिष्टसमये समागत्यास्मान् अनुग्रहीष्यन्ति।

६०० मुट्ठीगंज,

प्रयागः।

भवद्दर्शनाभिलाषी—

दीनबन्धुः शर्मा

दिनाङ्कः—२५-६-६५ ई०।

(स्वीकृति-सूचनयाऽनुग्राह्यः)

(७) परिषद् की सूचना

श्रीमन्तो मान्याः !

सविनयमेतद् निवेद्यते यद् आस्माकीनाया विद्यालयीयसंस्कृतपरिषदः साप्ताहिक-मधिवेशनम् आगामिनि शुक्रवासरे (दिनांकः २२–१–६५ ई०) सायंकाले चतुर्वादने विद्यालयस्य महाकक्षे (हॉल) भविष्यति। सर्वेषामपि छात्राणाम् अध्यापकानां च उपस्थितिः सविनयं सादरं च प्रार्थ्यते।

निवेदकः—

दिनाङ्कः—१८–१–६५ ई० गणेशदत्तपाण्डेयः (मन्त्री)

(८) (क) प्रस्ताव, (ख) अनुमोदन, (ग) समर्थन

(क) (१) आदरणीयाः सभासदः, प्रियाः विद्यार्थिबन्धवश्च !

अद्य सौभाग्यमेतद् अस्माकं यद्......(गुरुकुलमहाविद्यालय-ज्वालापुरस्य आचार्य-वर्याः डॉ० श्रीमन्तो हरिदत्तशास्त्रिणः, सप्ततीर्थाः, व्याकरणवेदान्ताचार्याः, एम० ए०, पी-एच० डी० आदि विविधोपाधिविभूषिताः) अत्र समायाताः सन्ति। अतोऽहं प्रस्तावं करोमि यत् श्रीमन्तो मान्या विद्वद्वरेण्या आचार्यवर्याः अद्यतन्या अस्याः सभायाः सभापतिपदमलङ्कुर्वन्तु इति। आशासे एतेषां सभापतित्वे सभायाः सर्वमपि कार्यं सुचारुरूपेण सम्पत्स्यते इति। आशासे अन्येऽपि अस्य प्रस्तावस्य अनुमोदनं समर्थनं च करिष्यन्ति।

(क) (२) मान्याः सभासदः !

अहमेतस्याः सभाया मन्त्रिपदार्थं (सभापतिपदार्थम्, उपसभापतिपदार्थम्, कोषाध्यक्ष-पदार्थम्) श्रीमतः......नाम प्रस्तवीमि।

(ख) अहमेतस्य प्रस्तावस्य हृदयेन अनुमोदनं करोमि।

(ग) अहमेतस्य प्रस्तावस्य हार्दिकं समर्थनं करोमि।

(९) व्याख्यान

श्रीमन्तः परमसंमाननीयाः सभापतिमहोदयाः ! आदरणीयाः सभासदश्च !

अद्य अहं भवतां पुरस्तात्...(विद्या, अहिंसा, सत्य, परोपकार) विषयमङ्गीकृत्य किंचिद् वक्तुमिच्छामि। संस्कृतभाषाभाषणस्य अनभ्यासवशाद् याः काश्चन त्रुट्यो भवेयुः, ता भवद्भिः क्षन्तव्याः। ......(तदनन्तरं व्याख्यानस्य प्रारम्भः।)

(८) निबन्ध-माला

आवश्यक-निर्देश

१. किसी विषय पर अपने विचारों और भावों को सुन्दर, सुगठित, सुबोध एवं क्रमबद्ध भाषा में लिखने को निबन्ध कहते हैं। निबन्ध के लिए दो बातों की आवश्यकता होती है :—१. निबन्ध की सामग्री। २. निबन्ध की शैली।

निबन्ध की सामग्री एकत्र करने के ३ साधन हैं—१. निरीक्षण अर्थात् प्रकृति को स्वयं देखना और ज्ञान एकत्र करना। २. अध्ययन अर्थात् पुस्तकों आदि से उस विषय का ज्ञान प्राप्त करना। ३. मनन अर्थात् स्वयं उस विषय पर विचार करना।

२. निबन्ध-लेखन में इन बातों का सदा ध्यान रखें :—१. प्रस्तावना या आरम्भ—प्रारम्भ में विषय का निर्देश, उसका लक्षण आदि रखें। २. विवेचन—बीच में विषय का विस्तृत विवेचन करें। उस वस्तु के लाभ, हानि, गुण, अवगुण, उपयोगिता, अनुपयोगिता आदि का विस्तृत विचार करें। अपने कथन की पुष्टि में सूक्ति, पद्य या श्लोक उद्धरणरूप में दे सकते हैं। ३. उपसंहार—अन्त में अपने कथन का सारांश संक्षेप में दें। प्रस्तावना और उपसंहार एक या दो सन्दर्भ (पैराग्राफ) में ही हों। अधिक स्थान विवेचन में दें।

३. निबन्ध की शैली के विषय में इन बातों का ध्यान रखें :—१. भाषा व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध हो। २. भाषा प्रारम्भ से अन्त तक एक-सी हो। ३. भाषा में प्रवाह हो, स्वाभाविकता हो। ४. उपयुक्त और असंदिग्ध शब्दों का प्रयोग करें। ५. भाषा सरल, सरस, सुबोध और आकर्षक हो। ६. लोकोक्ति एवं अलंकारों को भी स्थान दें। ७. अनावश्यक विस्तार, पुनरुक्ति, पाण्डित्य-प्रदर्शन तथा क्लिष्टता का त्याग करें।

४. निबन्ध के मुख्यतया तीन भेद हैं :—

१. वर्णनात्मक निबन्ध—इनमें पशु, पक्षी, नदी, ग्राम, नगर, पर्वत, समुद्र, ऋतु-वर्णन, यात्रा, पर्व, रेल, तार, विमान आदि का स्पष्ट एवं विस्तृत वर्णन होता है।

२. विवरणात्मक निबन्ध—इनमें घटित घटनाओं, युद्धों, प्राचीन कथाओं, ऐतिहासिक वर्णनों, जीवन-चरितों आदि का संग्रह होता है।

३. विचारात्मक निबन्ध—इनमें आध्यात्मिक, मनोविज्ञान-सम्बन्धी, सामाजिक, राजनीतिक तथा अमूर्त विषयों, चिन्ता, क्रोध, अहिंसा, सत्य, परोपकार, आदि का संग्रह होता है। इन निबन्धों में इन विषयों के गुण, दोष, लाभ, हानि आदि का विचार होता है।

उदाहरण के लिए २० निबन्ध अतिप्रसिद्ध विषयों पर सरल संस्कृत में दिये जाते हैं।

१. विद्याविहीनः पशुः । (विद्या)

[१. प्रस्तावना, २. विद्याया लाभाः, ३. विद्यांया महत्त्वम्, ४. विद्याप्राप्तेरुपायाः, ५. उपसंहारः ।]

ज्ञानार्थकविद्धातोः विद्याशब्दः सिध्यति । यस्य कस्यचिदपि वस्तुनः सम्यक्तया ज्ञानं विद्येति कथ्यते । वेददर्शनसाहित्यविज्ञानादीनां विषयाणां पठनं सम्यग् ज्ञानं च विद्येति अभिधीयते ।

यद्यपि संसारे बहूनि वस्तूनि सन्ति, परन्तु विद्यैव सर्वश्रेष्ठं धनमस्ति । अत एवोच्यते—'विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्' । विद्यया मनुष्यः स्वकीय कर्तव्यं जानाति । विद्ययैव मनुष्यो जानाति यत् को धर्मः, कोऽधर्मः, किं कर्तव्यम्, किम् अकर्तव्यम्, किं पुण्यम्, किं पापम्, किं कृत्वा लाभो भविष्यति, केन कार्येण वा हानिः भविष्यति । स विद्याप्राप्त्या सन्मार्गम् अनुवर्तितुं प्रयतते । एवं विद्ययैव मनुष्यो मनुष्योऽस्ति । यो मनुष्यो विद्याहीनोऽस्ति स कर्तव्याकर्तव्यस्य अज्ञानात् पशुवद् आचरति, अतः स पशुरित्यभिधीयते । 'विद्याविहीनः पशुः' इति ।

विद्या सर्वेषु धनेषु श्रेष्ठमस्ति, यतो हिं विद्यैव व्यये कृते वर्धते । अन्यद् धनं व्यये कृते क्षयं प्राप्नोति । अत एवोक्तम्—

अपूर्वः कोऽपि कोशोऽयं विद्यते तव भारति ।
व्ययतो वृद्धिमायाति क्षयमायाति संचयात् ॥१॥

न चोरहार्यं न च भ्रातृभाज्यं, न राजहार्यं न च भारकारि ।
व्यये कृते वर्धत एव नित्यं, विद्याधनं सर्वधनप्रधानम् ॥२॥

विद्यैव जगति मनुष्यस्य उन्नतिं करोति । दुःखेषु विपत्तिषु च तस्य रक्षां करोति । विद्यैव कीर्तिं धनं च ददाति । विद्या वस्तुतः कल्पलता विद्यते ।

मातेव रक्षति पितेव हिते नियुङ्क्ते, कान्तेव चाभिरमयत्यपनीय खेदम् ।
लक्ष्मीं तनोति वितनोति च दिक्षु कीर्तिं, किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या॥३॥

विद्ययैव मनुष्यः सर्वत्र संमानं प्राप्नोति । राजानोऽपि तस्य पुरस्तात् नतशिरसो भवन्ति । विद्वांस एव संसारस्य दुःखानि दूरीकुर्वन्ति । त एव उपदेशका विचारका ऋषयो महर्षयो मन्त्रिणो नेतारश्च भवन्ति । विद्वांस एव विविधान् आविष्कारान् कृत्वा संसारस्य श्रियं वर्धयन्ति, लोकान् च सुखिनः कुर्वन्ति । अतः सर्वैरपि आलस्यप्रमादादिकं त्यक्त्वा विद्याध्ययनम् अवश्यं कर्तव्यम् । विद्ययैव मोक्षप्राप्तिः भवति । उक्तं च—'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः' ।

२. सत्यमेव जयते नानृतम् । (सत्यम्)

[(१) प्रस्तावना, (२) सत्यस्योपयोगिता, (३) दृष्टान्ताः, (४) सत्यत्यागे हानयः, (५) उपसंहारः ।]

सते अर्थात् कल्याणाय हितं सत्यं भवति। यद् वस्तु यथा विद्यते, तस्य तेनैव रूपेण कथनं प्रकाशनं लेखनं वा सत्यमिति अभिधीयते। परमेश्वरेण जिह्वा सदुपयोगार्थं दत्ता, अतः जिह्वायाः सदुपयोगः सत्यभाषणेन कर्तव्यः।

जगति सत्यस्य यादृशी आवश्यकता विद्यते, न तादृशी अन्यस्य कस्यचिद् वस्तुनः। सत्येनैव समाजस्य स्थितिः वर्तते। यदि सर्वेऽसत्यवादिनो भवेयुस्तर्हि न लोकस्य स्थितिः क्षणमात्रमपि भवितुं शक्नोति। सत्यस्यैव एष महिमा यद् वयं समाजे मनुष्येषु विश्वासं कुर्मः। अतः सिध्यति यत् सत्यं लोकस्याधारोऽस्ति। अत एवोच्यते—

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः।
अलुब्धैर्दानशूरैश्च सप्तभिर्धार्यते मही ॥१॥

सत्यभाषणेन मनुष्यो निर्भीको भवति। सत्यभाषणेन तस्य तेजो यशः कीर्तिः विद्या गौरवं च वर्धन्ते। यः सत्यं वदति, स सर्वेभ्यः पापेभ्योऽपि निवृत्तो भवति। यदा स कस्मिंश्चित् पापे प्रवर्तते, तदा स चिन्तयति यद् अहं सत्यमेव वदिष्यामि, अतः सर्वेषां दृष्टिषु हीनो भविष्यामि, एवं स पापाद् विरमति। सत्यभाषणं वस्तुतो जीवने सर्वोत्तमं तपो वर्तते। अत एवोक्तम्—

अश्वमेधसहस्रं च सत्यं च तुलया धृतम्।
अश्वमेधसहस्राद् हि सत्यमेव विशिष्यते ॥२॥

सत्यस्य प्रतिष्ठयैव संसारस्य कल्याणम्, अभ्युदयः, उन्नतिश्च भवन्ति। यः कश्चित् सत्यमाश्रयति, तस्य जीवनं सफलं भवति। अत उच्यते—'सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्'। ये सत्यं पालयन्ति, ते सर्वोत्तमं धर्मं कुर्वन्ति। ये च सत्यं परित्यज्य असत्यं भजन्ते, ते महापातकं कुर्वन्ति। यतो हि असत्यभाषणेन स्वस्य हानिः नाशश्च भवतः। समाजस्य देशस्य लोकस्य च मिथ्याभाषणेन नाशो भवति। अत एवोच्यते—नहि सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम्।

सत्यस्य पालनार्थमेव महाराजो दशरथः प्रियं पुत्रं रामं वनं प्रैषयत्। राजा हरिश्चन्द्रः सत्यपालनार्थमेव सर्वाणि दुःखानि असहत। युधिष्ठिरः सत्यभाषणस्य प्रभावादेव विजयमलभत। महात्मा गांधिमहोदयः सत्यस्यैव सदा शिक्षामदात्। भारतस्य राजचिह्नेऽपि 'सत्यमेव जयते' इत्यादरेण उल्लिख्यते।

अतः सर्वैरपि लौकिकपारलौकिकाभ्युदयाय सत्यमेव सदा भाषणीयम्।

३. अहिंसा परमो धर्मः । (अहिंसा)

[१. प्रस्तावना, २. अहिंसाया उपयोगिता लाभाश्च, ३. दृष्टान्ताः, ४. हिंसाया दोषाः, ५. उपसंहारः ।]

हिंसनं हिंसेति । कस्यापि पीडनं दुःखदानं वा हिंसेति कथ्यते । हिंसा त्रिविधा भवति—मनसा, वाचा, कर्मणा च । मनुष्यो यदि कस्यचित् जनस्य अशुभं हानिं वा चिन्तयति, सा मानसिकी हिंसा वर्तते । यदि कठोरभाषणेन, कटुप्रलापेन, दुर्वचनेन, असत्यभाषणेन वा कमपि दुःखितं करोति, तर्हि सा वाचिकी हिंसा भवति । यदि जनः कस्यापि जीवस्य हननं करोति, ताडनादिना वा दुःखं ददाति, तर्हि सा कायिकी हिंसा भवति । एतासां तिसृणां हिंसानां परित्यागोऽहिंसेति निगद्यते ।

संसारेऽहिंसाया महती उपयोगिता वर्तते । गवादीनां पशूनां यदि हनन न स्यात्तर्हि देशे धनधान्यस्य दुग्धादीनां च न्यूनता न स्यात् । अहिंसया पशवोऽपि मनुष्येषु प्रेम कुर्वन्ति । शत्रवोऽपि अहिंसया मित्राणि भवन्ति । मनुष्यस्य आत्माऽपि अहिंसया सुखमनुभवति । अहिंसायाः प्रतिष्ठायां सर्वे सर्वत्र ससुखं निर्भयं च विचरन्ति । एतत्तु सर्वैरनुभूयते एव यत् न कोऽपि जगति स्वविनाशमिच्छति । सर्वे जनाः सुखमिच्छन्ति । यदि एवमेव पशुपक्षिणामपि विषये चिन्त्येत तर्हि न कस्यचिद् हननं कश्चित् करिष्यति । अत एव ऋषिभिः महर्षिभिश्च 'अहिंसा परमो धर्म' इत्यङ्गीकृतः । उच्यते च--

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम् ।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ॥१॥
आत्मौपम्येन भूतेषु दयां कुर्वन्ति साधवः ॥२॥
आत्मवत्सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति ॥३॥

अहिंसैव धर्ममार्गः । अतएव भगवान् बुद्धः, भगवान् महावीरः, महात्मा गान्धिमहोदयश्च अहिंसाया एवोपदेशं दत्तवन्तः । अहिंसायाः प्रचारे एवैतेषां जीवनं व्यतीतम् । महात्मनो गांधिमहोदयस्य संरक्षणे अहिंसाशस्त्रेणैव भारतवर्ष पराधीनतापाशं छित्वा स्वतन्त्रतामलभत । अहिंसाशस्त्रेणैव भीता विदेशीया भारतं त्यक्त्वा पलायिताः । एषोऽहिंसाया एव महिमाऽस्ति ।

यदि संसारे हिंसायाः प्रसारः स्यात् तदा न कोऽपि मनुष्यो देशो वा संसारे सुखेन शान्त्या च स्थातुं शक्नोति । हिंसया मनुष्यः क्रूरः निर्दयः सद्भावहीनश्च भवति । हिंसके सत्यं त्यागः तपस्या दया क्षमा प्रेम पवित्रता विमलबुद्धिश्च न भवन्ति ।

अतः सर्वैरपि सर्वदा सर्वभावेन अहिंसाधर्मः पालनीयः, लोकस्य च कल्याणं कर्तव्यम् ।

४. परोपकाराय सतां विभूतयः। (परोपकारः)

[१. प्रस्तावना, २. परोपकारस्य लाभाः, गुणाः, महत्त्वं च, ३. दृष्टान्ताः, ४. उपसंहारः।]

परेषाम् उपकारः परोपकारोऽस्ति। अन्येभ्यो मनुष्येभ्यो जीवेभ्यो वा तेषां हितसम्पादनार्थं यत् किंचिद् दीयते, तेषां साहाय्यं वा क्रियते, तत् सर्वं परोपकारशब्देन गृह्यते।

संसारे परोपकार एव स गुणो विद्यते, येन मनुष्येषु जीवेषु वा सुखस्य प्रतिष्ठा वर्तते। समाजसेवाया भावना, देशप्रेमभावना, देशभक्तिभावना, दीनोद्धरणभावना, परदुःखकातरता, सहानुभूतिगुणस्य सत्ता च परोपकारगुणस्य ग्रहणेनैव भवति। परोपकारकरणेन हृदयं पवित्रं सत्त्वभावसमन्वितं सरलं विनयोपेतं सरसं सदयं च भवति। परोपकारिणः परेषां दुःखं स्वीयं दुखं मत्वा तन्नाशाय यतन्ते। ते दीनेभ्यो दानं ददति, निर्धनेभ्यो धनम्, वस्त्रहीनेभ्यो वस्त्रम्, पिपासितेभ्यो जलम्, बुभुक्षितेभ्योऽन्नम्, अशिक्षितेभ्यश्च शिक्षाम्। सज्जनाः परोपकारेणैव प्रसन्ना भवन्ति। ते परोपकरणे स्वीयं दुःखं न गणयन्ति। उच्यते च—

श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन, दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन।
विभाति कायः खलु सज्जनानां, परोपकारेण न चन्दनेन ॥१॥

प्रकृतिरपि परोपकारस्यैव शिक्षां ददाति। परोपकारार्थमेव सूर्यः तपति, चन्द्रो ज्योत्स्नां वितरति, वृक्षाः फलानि वितरन्ति, नद्यो वहन्ति, मेघाश्च वर्षन्ति। उक्तं च—

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः, परोपकाराय वहन्ति नद्यः।
परोपकाराय दुहन्ति गावः, परोपकारार्थमिदं शरीरम् ॥२॥
भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः, नवाम्बुभिर्भूरिविलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः, स्वभाव एवैष परोपकारिणम् ॥३॥

शास्त्रेषु परोपकारस्य बहु महत्त्वं गीतमस्ति। परोपकारः सर्वेषामुपदेशानां सारो वर्तते। परोपकारेणैव जगतोऽभ्युदयो भवति, शान्तिः सुखं च वर्धेते। उक्तं च—

अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥४॥

परोपकारभावनयैव महाराजो दधीचिः देवानां हिताय स्वीयानि अस्थीनि ददौ। महाराजः शिविः कपोतरक्षणार्थं स्वमांसं श्येनाय प्रादात्। महर्षिः दयानन्दः, महात्मा गांधिश्च भारतभूमिहितायैव प्राणान् दत्तवन्तौ। अतः सर्वैरपि सर्वदा सर्वथा परोपकारः करणीयः। निगदितं चैतत्—

धनानि जीवितं चैव परार्थे प्राज्ञ उत्सृजेत्।
सन्निमित्ते वरं त्यागो विनाशे नियते सति ॥५॥
परोपकारः कर्तव्यः प्राणैरपि धनैरपि।
परोपकारजं पुण्यं न स्यात् क्रतुशतैरपि ॥६॥

५. उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः। (उद्योगः)

[१. प्रस्तावना, २. उद्योगस्योपयोगिता, लाभाश्च, ३. दृष्टान्ताः, ४. अनुद्योगेन हानयः, ५. उपसंहारः।]

संसारे सर्वेऽपि जनाः सुखं शान्तिं चेच्छन्ति। सुखं शान्तिश्च विना उद्योगेन पुरुषार्थेन वा न सिध्यतः। उद्योगेनैव मनुष्यो धनं विद्यां कलासु कुशलतां च लभते। येऽनुद्योगिनः सन्ति, ते सुखं शान्तिं समृद्धिं च न जातु लभन्ते। अत उच्यते—

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीर्दैवेन देयमिति कापुरुषा वदन्ति।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या, यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः ॥१॥

भगवद्गीतायां भगवता कृष्णेन प्रतिपादितमेतद् यद् मनुष्यैः संसारेऽवश्यमेव कर्म कर्तव्यम्। अकर्मणि कदापि प्रवृत्तिर्न कर्तव्या। पुरुषार्थेनैव जीवनं चलति।

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिध्येदकर्मणः ॥२॥

संसारेऽनुद्योग आलस्यं वा मनुष्यस्य महाशत्रुः वर्तते, येन मनुष्यः सदा दुःखं प्राप्नोति। उद्यमिन एव दुःखानि त्यक्त्वा सुखं समृद्धिं च प्राप्नुवन्ति। उक्तं च—

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः।
नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कृत्वा यं नावसीदति ॥३॥

जगति दृश्यते एतद्यद् जनाः सर्वविधसुखं कांक्षन्ति, परन्तु तदर्थं यत्नं न कुर्वन्ति। विना प्रयत्नेन किंचिदपि कदाचिदपि न सिध्यतीति सुनिश्चितम्। अत एवोक्तम्—

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः ॥४॥
योजनानां सहस्रं तु शनैर्गच्छेत् पिपीलिका।
अगच्छन् वैनतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति ॥५॥

उद्यमेनैव निर्धना धनिनो भवन्ति, अज्ञानिनो ज्ञानवन्तः, अकुशलाः कुशलाः, निर्बलाः सबलाः, दीनाः हीनाश्च सर्वविधसम्पत्तिसमन्विताः भवन्ति। महाकविः कालिदास उद्यमेनैव कविकुलगुरुः बभूव, वाल्मीकिव्यासादयश्च कविवराः संजाताः। सर्वमुद्योगेनैव सिध्यति। अनुद्योगेन भाग्यनिर्भरतया च दुःखमेव प्राप्नोति। अतः सर्वैः सर्वदा उद्योगः करणीयः। परेशोऽपि उद्योगिन एव साहाय्यं करोति। उक्तं च—

न दैवमिति संचिन्त्य त्यजेदुद्योगमात्मनः।
अनुद्योगेन तैलानि तिलेभ्यो नाप्तुमर्हति ॥६॥
उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र साहाय्यकृद् विभुः ॥७॥

६. धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम् । (आरोग्यम्)

[१. प्रस्तावना, २. आरोग्यस्योपयोगिता, लाभाः, प्रकाराश्च, ३. तदभावे दोषाः, ४. उपसंहारः ।]

संसारे सर्वे जनाः सुखार्थं प्रयतन्ते । मनुष्यः तदैव सुखी भवति, यदा स नीरोगो भवति । तदैव स प्रयत्नं पुरुषार्थमपि कर्तुं शक्नोति । यो मनुष्यो रुग्णो वर्तते, यस्य शरीरे वा शक्तिर्नास्ति, स कथमपि संसारस्य सुखमनुभवितुं न शक्नोति । शरीरस्यारोग्यं नीरोगता वा व्यायामेन भवति । स्वस्था एव जनाः सर्वमपि कार्यकलापं धर्मादिकं च कुर्वन्ति । अत एवोक्तं महाकविना कालिदासेन—

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।

स्वास्थ्यस्योपयोगिता सर्वत्रैव दृश्यते । ये स्वस्था हृष्टाः पुष्टाश्च भवन्ति, ते सोत्साहं स्वीयं कर्म कुर्वन्ति । ते न कुतश्चिद् भीता भवन्ति । सभासु समाजेषु च तेषां शरीरं वीक्ष्य जनाः प्रसन्ना भवन्ति । ये रुग्णा निर्बला भवन्ति, ते सर्वत्र हीनदृष्ट्याऽवलोक्यन्ते । तेषां सर्वत्रापमानो भवति । ते निर्बलत्वात् सदा दुःखमेव लभन्ते । अतो यथा विद्याध्ययनादिकमावश्यकम्, तथैव स्वास्थ्यरक्षापि अतीवावश्यकी विद्यते ।

स्वास्थ्यलाभाय व्यायामा बहुविधाः सन्ति । भ्रमणं धावनं क्रीडनं तरणम् अश्वारोहणं मल्लयुद्धम् इत्यादयः । बालकेभ्यः क्रीडनं धावनं तरणं च विशेषतो हितकराणि सन्ति । क्रीडासु च पादकन्दुकेन क्रीडनं, यष्टिकया (हॉकी) क्रीडनम्, करकन्दुकेन (वॉली बॉल) वा क्रीडनं विशेषतो रुचिकरं स्वास्थ्यवर्धकं चास्ति । प्रातः सायं च भारतीया व्यायामा अपि करणीयाः, यथा—दण्डसाधनम् (डंड), उत्थानोपवेशनक्रिया (बैठक), योगासनेषु च कानिचिदासनानि । योगासनेषु पश्चिमोत्तानासनं मयूरासनं शरीरासनं धनुरासनं सर्वांगासनं शीर्षासनं च सर्वेभ्य एव मनुष्येभ्यः स्वास्थ्यलाभाय विशेषतो हितकराणि सन्ति । बालिकाभ्यः स्त्रीभ्यश्च भ्रमणं विशेषोपयोगि वर्तते । युवकेभ्योऽश्वारोहणमपि हितकरमस्ति । वृद्धेभ्यो भ्रमणं योगासनानि च लाभप्रदानि सन्ति । प्राणायामस्तु सर्वैरपि अवश्यमेव स्वास्थ्यलाभाय करणीयः । अन्ये व्यायामाः शक्त्यनुसारं करणीयाः । स्वास्थ्यलाभाय शरीरस्य स्वच्छताऽपि अत्यावश्यकी वर्तते । अतः प्रतिदिनं स्नानमपि अवश्यं करणीयम् ।

सर्वैश्वर्यसमन्विताः धनधान्यपरिपूर्णा अपि जनाः स्वास्थ्यस्याभावे स्वकीयस्य ऐश्वर्यस्य सुखं नानुभवितुं शक्नुवन्ति । अतः सर्वैरपि स्वास्थ्यलाभाय नीरोगतायै च प्रतिदिनमवश्यं व्यायामः करणीयः ।

७. आचारः परमो धर्मः। (सदाचारः)

[१. प्रस्तावना, २. सदाचारस्योपयोगिता, लाभाः, तत्साधनोपायाः, ३. दृष्टान्ताः, ४. उपसंहारः।]

सताम् आचार सदाचारः इत्युच्यते। सज्जनाः विद्वांसो यथा आचरन्ति तथैव आचरणं सदाचारो भवति। सज्जनाः स्वकीयानि इन्द्रियाणि वशे कृत्वा सर्वैः सह शिष्टतापूर्वकं व्यवहारं कुर्वन्ति। ते सत्यं वदन्ति, असत्यभाषणाद् विरमन्ति, मातुः पितुः गुरुजनानां वृद्धानां ज्येष्ठानां च आदरं कुर्वन्ति, तेषाम् आज्ञां पालयन्ति, सत्कर्मणि प्रवृत्ता भवन्ति, असत्कर्मभ्यश्च निवृत्ता भवन्ति। तद्वत् आचरणेन मनुष्यः सदाचारी धार्मिकः शिष्टो विनीतो बुद्धिमान् च भवति।

सदाचारस्य सत्तयैव संसारे जन उन्नतिं करोति। देशस्य राष्ट्रस्य समाजस्य जनस्य च उन्नत्यै सदाचारस्य महती आवश्यकता वर्तते। सदाचारेणैवं जना ब्रह्मचारिणो भवन्ति। सदाचारेणैव शरीरं परिपुष्टं भवति। सदाचारेण बुद्धिः वर्धते। सदाचारेणैव मनुष्यः परोपकारकरणं सत्यभाषणम् अन्यच्च सत्कर्म कर्तुं प्रवृत्तो भवति। सदाचारी न पापानि चिन्तयति, अतः तस्य बुद्धिः निर्मला भवति। निर्मलबुद्धिश्च लोकस्य देशस्य च हित-चिन्तने प्रवृत्तो भवति। अत एव पूर्वैः महर्षिभिः 'आचारः परमो धर्मः' इत्युक्तम्। संसारे सदाचारस्यैव महत्त्वं दृश्यते। ये सदाचारिणो भवन्ति, त एव सर्वत्र आदरं लभन्ते। महाभारतेऽपि अत एवोक्तं यद् मनुष्यैः सदा स्ववृत्तस्य रक्षा कार्या, धनमायाति याति च। यः सदाचारेण हीनोऽस्ति स वस्तुतः पतितोऽस्ति, धनहीनो न पतितोऽस्ति।

वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमेति च याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः ॥१॥

ब्रह्मचर्यस्य वेदेऽपि महिमा वर्णितोऽस्ति यद् ब्रह्मचर्यस्य सदाचारस्य वा महिम्ना देवा मृत्युमपि स्ववशेऽकुर्वन्।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत ॥२॥

मनुष्यस्तदा सच्चरित्रो भवति यदा स मातृवत् परदारेषु व्यवहरति, कन्याः बालिकाश्च स्वभगिनीवत् पश्यति। कामवासनां निगृह्य संयत इवाचरति। यो नैवमाचरति स दुश्चरित्रः दुराचार इति कथ्यते।

सदाचारपालनेनैव श्रीरामचन्द्रो मर्यादापुरुषोत्तमोऽभवत्। एतदर्थमेव लक्ष्मणेन शूर्पणखाया नासिका छिन्ना। सदाचाराभावेनैव चतुर्वेदविदपि रावणो राक्षस इति कथ्यते। अतः सर्वैः स्वोन्नत्यै सदा सदाचारः पालनीयः।

८. सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम् । (सत्संगतिः)

[१. प्रस्तावना, २. सत्संगतेरुपयोगिता लाभाश्च, ३. तदभावे दोषाः, ४. उपसंहारः ।]

सतां सज्जनानां संगतिः सत्संगतिः कथ्यते । ये सज्जनाः साधवः पवित्रात्मनाः सन्ति, तेषां संगत्या मनुष्यः सज्जनः साधुः शिष्टश्च भवति । ये दुर्जनाः सन्ति तेषां संगत्या मनुष्यो दुर्जनो भवति, पतनं विनाशं च प्राप्नोति । ये सज्जनैः सह उपविशन्ति उत्तिष्ठन्ति खादन्ति पिबन्ति च, ते तथैव स्वभावं धारयन्ति । मनुष्यस्योपरि संगतेः महान् प्रभावो भवति । यादृशैः पुरुषैः सह स निवसति, तादृश एव स भवति । अत एवोच्यते—

संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति ॥१॥

हीयते हि मतिस्तात हीनैः सह समागमात् ।
समैश्च समतामेति विशिष्टैश्च विशिष्टताम् ॥२॥

सज्जनानां संगत्या मनुष्य उन्नतिं प्राप्नोति । तस्य विद्या कीर्तिश्च वर्धेते । अतएव नीतिकारैः वारंवारम् एतदुक्तमस्ति यत्—

सद्भिरेव सहासीत सद्भिः कुर्वीत संगतिम् ।
सद्भिर्विवादं मैत्रीं च नासद्भिः किंचिदाचरेत् ॥३॥
पण्डितैः सह सांगत्यं पण्डितैः सह संकथाः ।
पण्डितैः सह मित्रत्वं कुर्वाणो नावसीदति ॥४॥

बाल्यकाले विशेषतो बालकस्योपरि संसर्गस्य प्रभावो भवति । बालको यादृशैः बालकैः सह संगतिं करिष्यति तादृश एव भविष्यति । अतो बाल्यकाले दुर्जनैः सह संगतिः कदापि न करणीया । दुर्जनानां संसर्गेण बहवो हानयो भवन्ति, यथा—दुर्जनसंसर्गेण मनुष्योऽसद्-वृत्तो भवति, दुर्विचारयुक्तो भवति, तस्य बुद्धिर्दूषिता भवति, अतः बुद्धिः क्षीयते, दुर्व्यसनग्रस्तो भवति, अतस्तस्य शरीरं क्षीणं निर्बलं च भवति, तस्य कीर्तिः नश्यति, सर्वत्रानादरो भवति, सर्वत्राप्रतिष्ठाभाजनं च भवति ।

अतः स्वयशोवृद्धये ज्ञानवृद्धये सुखस्य शान्तेश्च प्राप्तये सर्वैरपि सर्वदा सत्संगतिः करणीया, दुर्जनसंगतिश्च हेया । अत एव सत्संगतिमाहात्म्ये एवम् उच्यते—

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति ।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम् ॥५॥

९. संघे शक्तिः कलौ युगे । (एकता)

[१. प्रस्तावना, २. एकताया उपयोगिता लाभाश्च, तत्साधनोपायाः, ३. तदभावे दोषाः, ४. उपसंहारः ।

एकमुद्देश्यं लक्ष्यीकृत्य बहूनां जनानाम् एकत्वभावनया कार्यकरणम् 'एकता' इत्युच्यते । एकता मनुष्ये शक्तिमादधाति, एकतयैव देशः समाजो लोकश्च उन्नतिपथं प्राप्नुवन्ति । यस्मिन् देशे समाजे वा एकताऽस्ति, स एव देशः सकललोकसम्माननीयो भवति ।

संसारे एकतायाः अतीवावश्यकता वर्तते, विशेषतश्चाद्यत्वे । अद्यत्व संसारे यस्मिन् राष्ट्रे एकताया अभावोऽस्ति, तद् राष्ट्रं सद्य एव परतन्त्रतापाशबद्धं भवति । भारतवर्षम् एवैकताया अभावात् कतिपयवर्षपूर्वं यावत् पराधीनं आसीत् । यदा भारतीयेषु एकता-भावनाया जागृतिरभूत्, तदा ते स्वाधीनतामलभन्त । अत एवोच्यते—'संघे शक्तिः कलौ युगे ।'

ऋग्वेदस्यान्तिमसूक्ते एकताया महत्यावश्यकता महत्त्वं च प्रतिपादिते वर्तेते । सर्वे जना एकत्वभावनया युक्ताः स्युः । तेषां गमनं भाषणं मनांसि हृदयानि संकल्पा विचाराः मन्त्रणादिकम् चैकत्वभावेनैव प्रेरितानि स्युः । एवंकरणेनैव जगति सुखस्य शान्तेश्च संप्राप्तिः संभवति । उक्तं च—

> सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ॥ १ ॥
> समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम ।
> समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥ २ ॥
> समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
> समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥ ३ ॥

हितोपदेशे मित्रलाभप्रकरणे एकताया लाभाः साधु प्रतिपादिताः सन्ति । क्षुद्राणि तृणानि यदा रज्जुभावं प्राप्नुवन्ति, तदा गजोऽपि तेन बन्द्धुं शक्यते । जलबिन्दुसमूह एव नदी सागरश्च भवति । मृत्तिकाकणसमूह एव महापर्वतो भवति । तन्तुसमूह एव सुदृढः पटो भवति । इत्येष एकताया एव महिमा । अत एवोक्तम्—'संहतिः श्रेयसी पुंसाम् ।'

> अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका ।
> तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्तदन्तिनः ॥४॥

यत्रैकताया अभावोऽस्ति, तत्र क्षयो नाशो विनाशोऽधोगतिः हानिश्च दृश्यन्ते । अतः सुखशान्तिसमृद्धिप्राप्त्यै एकता धारणीया । उक्तं चापि महाभारते —

> न वै भिन्ना जातु चरन्ति धर्मं, न वै सुखं प्राप्नुवन्तीह भिन्नाः ।
> न वै भिन्ना गौरवं प्राप्नुवन्ति, न वै भिन्नाः प्रशमं रोचयन्ति ॥५॥

१०. जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।

[१. प्रस्तावना, २. मातृभक्तेः देशभक्तेश्चोपयोगिता, लाभाश्च, ३. तदभावे दोषाः, ४. उपसंहारः ।]

अस्मिन् संसारे माता मातृभूमिश्च एवैते सर्वोत्तमे स्तः । बालकस्योपरि मातुः यादृशं नैसर्गिकं प्रेम भवति, न तादृशं क्वापि शक्यते । माता बालकस्य कृते सर्वस्वमपि त्यक्तुं शक्नोति । मातुः सर्वदैव एषेच्छा भवति यद् बालकः सदा सुखी समृद्धो गुणगणविभूषितश्च भवेत् । सा स्वीयं कष्टजातं नैव चिन्तयति, बालकस्य सुखचिन्तैव सदा तस्याः समक्षं भवति । अतएव पुत्रस्यापि मातुरुपरि नैसर्गिकमसाधारणं च प्रेम भवति । स बाल्यकालात् प्रभृति मातरमेव सर्वतोऽधिकं मन्यते । बालकस्य कृते मातैव सर्वस्वमस्ति । मनुष्यः कदाचिदपि मातुरनृणतां प्राप्तुं न शक्नोति । अत एवोपनिषत्सु आदिश्यते— 'मातृदेवो भव' । अत एव मनुनाऽप्युक्तम्—

यं मातापितरौ क्लेशं सहेते संभवे नृणाम् ।
न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि ॥

अत एव मनुष्यैः मातृपूजा मातृभक्तिश्च सर्वदा करणीया ।

यो मनुष्यो यत्र जन्म लभते, सा तस्य जन्मभूमिः । जन्मभूमिः मनुष्यस्य सर्वदैव आदरस्य पात्रं भवति । यत्र कुत्रापि गतो मनुष्यो जन्मभूमिं सदा स्मरत्येव, तद्दर्शनस्याभिलाषः तस्य हृदये वर्तते । भारतवर्षमिदमस्माकं जन्मभूमिः । भारतवर्षञ्चास्माकं देशः । स्वदेशस्य कृते सर्वेषां हृदये संमान आदरश्च भवतः । अद्यत्वे संसारे सर्वे देशाः स्वदेशस्योन्नतिसाधने संलग्नाः सन्ति । ते साभिमानमेतद् वदन्ति यद् वयम् एतद्देशीयाः स्मः । वयं भारतीया अपि साम्प्रतं स्वाधीनाः स्मः । सर्वस्मिन् संसारे भारतवर्षस्य साम्प्रतमादरो भवति ।

देशस्योन्नत्यै देशभक्तिभावनाया महत्यावश्यकता भवति । देशभक्तिभावनयैव मनुष्यो देशस्योन्नत्यै यतते, समाजस्योद्धारं करोति, अशिक्षितान् शिक्षितान् करोति, देशस्य दरिद्रतां हीनावस्थां च दूरीकरोति, स्वदेशीयव्यापारस्योन्नतिं करोति, स्वदेशनिर्मितानि वस्तूनि उपयुङ्क्ते, आवश्यकतायां सत्यां स्वकीयान् प्राणानपि मातृभूमिरक्षार्थे परित्यजति । यदा सर्वेष्वपि देशवासिषु एतादृशी भावना भवति, तदा देशो नूनमुन्नतिं प्राप्नोति । भारतीयेषु स्वदेशाभिमानः सर्वदा आसीत्, अस्ति च । अस्माभिरपि देशभक्तैः भाव्यम्, देशस्य चोन्नतिः करणीया । लक्ष्यं च स्यात्—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

११. संस्कृतभाषायाः महत्त्वम् ।

[१. प्रस्तावना, २. संस्कृतभाषाया उपयोगिता, महत्त्वं लाभाश्च, ३. तत्साहित्यम्, ४. उपसंहारः ।]

संस्कृता परिष्कृता परिशुद्धा व्याकरणसम्बन्धिदोषादिरहिता भाषा संस्कृतभाषेति निगद्यते । सर्वविधदोषशून्यत्वादियं भाषा देवभाषा, गीर्वाणगीः इत्यादिभिः शब्दैः संबोध्यते । अतोऽन्या भाषा प्राकृतभाषापदवीं प्राप्ता ।

संस्कृतभाषा विश्वस्य सर्वासु भाषासु प्राचीनतमा सर्वोत्तमसाहित्यसंयुक्ता चास्ति । संस्कृतभाषाया उपयोगिता एतस्मात् कारणाद् वर्तते यद् एषैव सा भाषाऽस्ति यतः सर्वासां भारतीयानाम् आर्यभाषाणाम् उत्पत्तिर्बभूव । सर्वासामेतासां भाषाणाम् इयं जननी । सर्वभाषाणां मूलरूपज्ञानाय एतस्या आवश्यकता भवति । प्राचीने समये एषैव भाषा सर्वसाधारणा आसीत् , सर्वे जनाः सस्कृतभाषाम् एव वदन्ति स्म । अतः ईसवीयसंवत्सरात्पूर्वं प्रायः समग्रमपि साहित्यं संस्कृतभाषायामेव उपलभ्यते । संस्कृत-भाषायाः सर्वे जनाः प्रयोगं कुर्वन्ति स्म, इति तु निरुक्तमहाभाष्यादिग्रन्थेभ्यः सर्वथा सिद्धमेव । आधुनिकं भाषाविज्ञानमपि एतदेव सनिश्चयं प्रमाणयति ।

संस्कृतभाषायामेव विश्वसाहित्यस्य सर्वप्राचीनग्रन्थाः चत्वारो वेदाः सन्ति, येषां महत्त्वमद्यापि सर्वोपरि वर्तते । वेदेषु मनुष्याणां कर्तव्याकर्तव्यस्य सम्यक्तया निर्धारणं वर्तते । वेदानां व्याख्यानभूता ब्राह्मणग्रन्थाः सन्ति । तदनन्तरम् अध्यात्मविषयप्रतिपा-दिका उपनिषदः सन्ति, यासां महिमा पाश्चात्त्यैरपि निःसंकोचं गीयते । ततश्च भारत-गौरवभूताः षड्दर्शनग्रन्थाः सन्ति, ये विश्वसाहित्येऽद्यापि सर्वमान्याः सन्ति । ततश्च-श्रौतसूत्राणां गृह्यसूत्राणां, धर्मसूत्राणां, वेदस्य व्याख्यानभूतानां षडङ्गानां च गणना भवति । महर्षिवाल्मीकिकृतवाल्मीकीयरामायणस्य, महर्षिव्यासकृतमहाभारतस्य च रचना विश्वसाहित्येऽपूर्वा घटना आसीत् । सर्वप्रथमं विशदस्य कवित्वस्य, प्रकृतिसौन्दर्यस्य, नीतिशास्त्रस्य, अध्यात्मविद्यायाः तत्र दर्शनं भवति । तदनन्तरं कौटिल्यसदृशाः अर्थ-शास्त्रकाराः, भासकालिदासाश्वघोषभवभूतिदण्डिसुबन्धुबाणजयदेवप्रभृतयो महाकवयो नाट्यकाराश्च पुरतः समायान्ति, येषां जन्मलाभेन न केवलं भारतभूमिरेव, अपितु समस्तं विश्वमेतद् धन्यमस्ति । एतेषां कविवराणां गुणगणस्य वर्णने महाविद्वांसोऽपि असमर्थाः सन्ति, का गणना साधारणाना जनानाम् । भगवद्गीता, पुराणानि, स्मृतिग्रन्थाः अन्यद्विषयकं च सर्वं साहित्यं संस्कृतस्य माहात्म्यमेवोद्घोषयति ।

संस्कृतभाषैव भारतस्य प्राणभूता भाषाऽस्ति । एषैव समस्तं भारतवर्षमेकसूत्रे बध्नाति । भारतीयगौरवस्य रक्षणाय एतस्याः प्रचारः प्रसारश्च सर्वैरेव कर्तव्यः ।

१२. आर्याणां संस्कृतिः ।

[१. प्रस्तावना, २. आर्यसंस्कृतेः विशेषताः, तदुपयोगिता, महत्त्वं च, ३. उपसंहारः।]

संस्करणं परिष्करणं संस्कृतिः भवति । सा संस्कृतिः कथ्यते या दुर्गुणान् दुर्व्यसनानि पापानि पापभावनाश्च हृदयेभ्यो निस्सार्य हृदयानि निष्पापानि निर्मलानि सत्त्वभावोपेतानि च करोति । प्राचीनानाम् आर्याणां संस्कृतेः एता एव विशेषताः सन्ति । तेषां संस्कृतिः मनुष्यान् सर्वविधपापेभ्यो निवारयति, तान् सन्मार्गमुपनयति, तेषां हृदयेषु सत्यस्य अहिंसायाः धर्मस्य दयायाः परोपकारस्य धैर्यस्य त्यागस्य शीलस्य सहानुभूतेः दानादिगुणानां च स्थापनां करोति ।

आर्यसंस्कृतेः विशेषगुणाः संक्षेपत एते सन्तिः—१. **धर्मप्राधान्यम्**—'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः' इति लक्षणानुसारं यतो लौकिकं पारलौकिकं च कल्याणं भवति, तदेव कर्म कर्तव्यम्, नान्यत् । धर्म एव मनुष्येषु पशुभ्यो विशेषोऽस्ति, इति तेषां मतम् । २. **वर्णव्यवस्था**—ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः चत्वारो वर्णाः सन्ति । ते स्वं स्वं कर्म कुर्युः । वर्णव्यवस्था गुणकर्मानुसारं आसीत्, न तु जन्ममात्रेण । ३. **आश्रमव्यवस्था**—ब्रह्मचर्यगृहस्थवानप्रस्थसंन्यासाः चत्वारः आश्रमाः सन्ति, ते सर्वैरपि पालनीयाः । ४. **कर्मवादः**—मनुष्यः स्वकर्मानुसारं फलं प्राप्नोति, पुण्यकर्मणा पुण्यं पापकर्मणा च पापम् । 'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्' । 'पुण्यो वै पुण्येन कर्मणा भवति पापः पापेनैवेति' (बृहदारण्यकम्) । ५. **पुनर्जन्मवादः**—मनुष्यस्य कर्मानुसारं पुनर्जन्म भवति । उक्तं च गीतायाम्—'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः, ध्रुवं जन्म मृतस्य च' । ६. **मोक्षः**—मनुष्यो ज्ञानाग्निना सर्वकर्माणि प्रदह्य मोक्षं लभते । मोक्षप्राप्तौ जीवस्य पुनरावृत्तिर्न भवति । मोक्ष एव परमः पुरुषार्थः । ७. **श्रुतीनां प्रामाण्यम्**—वेदाः परमप्रमाणभूताः सन्ति । वेदोक्तमार्गेण सदा प्रवर्तितव्यम् । ८. **यज्ञस्य महत्त्वम्**—सर्वैर्मनुष्यैः पञ्च यज्ञा अवश्यं कार्याः । ९. **अध्यात्मप्रवृत्तिः**—भौतिकवादं त्यक्त्वा अध्यात्मे प्रवृत्तिः कार्या । १०—**त्यागः**—जनः संसारे विषयेषु असक्तो भूत्वा कर्म कुर्यात् । यथा च गीतायां निष्कामकर्मयोगः प्रतिपादितः । उक्तं च वेदेऽपि 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ।' ११. **तपोमयं जीवनम्**—मनुष्याणां जीवनं तपोमयं स्यात्, न तु भोगप्रधानम् । १२. **तपोवनानां महत्त्वम्**—मनुष्यो ब्रह्मचर्यवानप्रस्थसंन्यासाश्रमकाले तपोवनं सेवेत । १३. **मातृपितृगुरुभक्तिः**—'मातृदेवो भव', 'पितृदेवो भव', 'आचार्यदेवो भव' इति । १४. **सत्यनिष्ठता**—सत्यमेव ग्राह्यम्, नासत्यम् । 'सत्यमेव जयते नानृतम्' इति । १५. **अहिंसापालनम्**—'अहिंसा परमो धर्मः' इति ।

एतस्मात् स्पष्टमेतदस्ति यदार्यसंस्कृत्यैव विश्वस्य कल्याणं भविष्यतीति ।

१३. गीताया उपदेशामृतम् ।

[१. प्रस्तावना, २. गीताया मुख्या उपदेशाः, तेषां व्यवहारोपयोगिता, लाभाश्च, ३. उपसंहारः ।]

महाभारतस्य युद्धे अर्जुनं विषण्णहृदयं दृष्ट्वा तस्य कर्तव्यबोधनार्थं भगवता कृष्णेन य उपदेशो दत्तः, स एव 'श्रीमद्भगवद्गीता' इति नाम्ना प्रसिद्धोऽस्ति । गीतायां भगवता कृष्णेन प्रायः सर्वमपि मनुष्यस्य आवश्यकं कर्तव्यं प्रतिपादितमस्ति । गीतायां ये उपदेशाः सन्ति, तेषां मुख्या एते सन्ति—

(१) अयमात्माऽजरोऽमरश्चास्ति । नायं जायते न च म्रियते । केनापि प्रकारेण नायं नाशं प्राप्नोति । यथा जीर्णवस्त्रमुत्तार्य नवं वस्त्रं धार्यते, तथैव नवशरीरधारणमस्ति ।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥१॥
नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥२॥

आत्माऽयम् अजरोऽमरश्चास्ति । अतः कदाचिदपि शोको न करणीयः ।

(२) मनुष्यः स्वकर्मानुसारं पुनर्जन्म प्राप्नोति । मर्त्यः कर्मानुसारं म्रियते च ।

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥३॥

(३) मनुष्यैः सदा निष्कामभावनया कर्म करणीयम् । कर्म कदापि न त्याज्यम् ।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥४॥
नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ।
शरीरयात्राऽपि च ते न प्रसिध्येदकर्मणः ॥५॥

(४) सर्वैः मनुष्यैः सदा स्वकर्म पालनीयम् । स्वधर्मो न कदाचिदपि त्याज्यः ।

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥६॥

(५) मनुष्यैः सदा स्वकीर्तिरक्षा करणीया । मरणं वरमस्ति, परन्तु न कीर्तिनाशः ।

संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥७॥

(६) शुभाशुभकर्मणः कदापि नाशो न भवति । शुभं कर्म सदा भयात् त्रायते ।

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते ।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥८॥

गीतायां ये उपदेशा दत्ताः सन्ति, ते सर्व एव जीवनस्योन्नतिकारकाः । गीताया उपदेशानुकूलम् आचरणं कृत्वा सर्वैरपि स्वजीवनमुन्नतं कर्तव्यम् । एतदर्थं गीतायाः पठनं पाठनं चापि कार्यम् । 'गीता सुगीता कर्तव्या' इति ।

१४. स्त्रीशिक्षाया आवश्यकता।

[१. प्रस्तावना, २. स्त्रीशिक्षाया आवश्यकता, लाभाः, हानयश्च, ३. स्त्रीशिक्षायाः रूपम्, ४. उपसंहारः।]

शिक्षा मनुष्ये स्वकर्तव्याकर्तव्यस्य ज्ञानमादधाति। शिक्षयैव जनाः शुभं कर्म कुर्वन्ति, अशुभं च परित्यजन्ति। शिक्षिता एव जना देशसेवां राष्ट्ररक्षां राष्ट्रसंचालनं पठनं पाठनं विज्ञानोन्नतिं च कुर्वन्ति। यथा पुरुषेभ्यः शिक्षा श्रेयस्करी वर्तते, तथैव स्त्रीभ्योऽपि शिक्षाया महती आवश्यकता वर्तते।

स्त्रीणां कृते शिक्षाया महती आवश्यकता एतस्मात् कारणाद् वर्तते यत् ता एव समये प्राप्ते मातरो भवन्ति। यथा मातरो भवन्ति, तथैव सन्ततिर्भवति। यदि मातरोऽशिक्षिताः विद्याशून्याः कर्तव्यज्ञानहीनाश्च सन्ति, तर्हि पुत्राः पुत्र्यश्च तथैवाविद्याग्रस्ताः कुशलता-रहिताश्च भविष्यन्ति। यदि नार्यः शिक्षिताः सन्ति, तर्हि ताः स्वपुत्राणां पालनं रक्षणं शिक्षणादिकं च सम्यक्तया करिष्यन्ति, एवं तासां सन्ततिः विद्यायुक्ता हृष्टा पुष्टा सद्गुणोपेता च भविष्यति। अत एव महानिर्वाणतन्त्रेऽप्युक्तमस्ति—

कन्याऽप्येवं लालनीया शिक्षणीया प्रयत्नतः ॥१॥

विवाहे संजाते कन्याः गृहस्थाश्रमं प्रविशन्ति। यदि पुरुषो विद्वान् स्त्री च विद्या-शून्या भवति तर्हि तयोः दाम्पत्यजीवनं सुखकरं न भवति। विद्याया अभावात् स्त्री स्वकीयं कर्तव्यं न जानाति, अत एव बहवो रोगा व्याधयश्च तत्र स्थानं कुर्वन्ति। अतः स्त्रीणामपि शिक्षा पुत्राणां शिक्षावदेव आवश्यकी वर्तते। स्त्रियो मातृशक्तेः प्रतीकभूताः सन्ति, अतस्तासां सदा सम्मानः करणीयः। यस्मिन् देशे समाजे च स्त्रीणामादरो भवति, स देशः समाजश्चोन्नतिं प्राप्नुतः। उक्तं च मनुना—

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' ॥२॥

बालिकानां शिक्षा बालकैः सहैव स्यात्, पृथग् वा, इत्येष विषयः साम्प्रतं यावद् विवादास्पदमेवास्ति। स्त्रीशिक्षाया भारते प्रथमं बहुविरोधोऽभवत्। साम्प्रतं स समाप्त-प्राय एव। स्त्रीशिक्षायाः काश्चन हानयोऽपि दृश्यन्ते, तासां परिमार्जनं कर्तव्यम्। शिक्षिताः स्त्रियः प्रायोऽधिकं सुकुमार्यो भवन्ति। तासां चेतो गृहकर्मसम्पादने न तथा संलग्नं भवति यथा विलासे आमोदे प्रमोदे च रमते। एतास्त्रुटयः परिमार्जनीयाः। स्त्रीणां सा शिक्षाऽद्यत्वे विशेषतो लाभप्रदा विद्यते, यया ताः गृहकर्मप्रवीणाः कुलाङ्गनाः सत्यः पतिव्रताः साध्व्यो विदुष्यो मातरश्च भवन्ति। यथा ता देशस्य समाजस्य च कल्याणसम्पादने प्रवृत्ता भवन्ति, सैव शिक्षा हितकरी वर्तते।

देशस्य समाजस्य चोन्नत्यै श्रीवृद्धये च स्त्रीशिक्षाऽत्यावश्यकी वर्तते।

१५. शठे शाठ्यं समाचरेत् ।

[१. प्रस्तावना, २. शाठ्यस्यावश्यकता, उपयोगिता, लाभाः, हानयश्च, ३. दृष्टान्ताः, ४. उपसंहारः ।] ।

यो जनः परस्यापकारं हानिं वा करोति, शिष्टाचारस्य सदाचारस्य च नियमान् न पालयति, दुर्वृत्तः कुकर्मसु प्रवृत्तश्च भवति, स 'शठ' इत्युच्यते । एतादृशाः पुरुषाः समाजस्य हानिं कुर्वन्ति, देशस्योन्नतिमार्गे बाधामुपस्थापयन्ति, जातेः समाजस्य राष्ट्रस्य चावनतेः कारणं भवन्ति, अत एतादृशानां पुरुषाणां नियन्त्रणं दण्डनं ताडनादिकं चावश्यकमस्ति ।

मनुना मनुस्मृतौ ये महापातकिनः सन्ति, तेषां गणना आततायिषु कृता वर्तते । तेषां वधे न कोऽपि दोषो भवति । आततायिनश्च षड्विधा भवन्ति—गृहादिदाहकः, विषप्रदः, वधकर्ता, धनहर्ता, क्षेत्रहर्ता, स्त्रीहर्ता च ।

अततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन् ॥१॥
अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रोन्मत्तो धनापहः ।
क्षेत्रदारहरश्चैतान् षड् विद्यादाततायिनः ॥२॥

लोके सदा दृश्यत एतद् ये जना अतीव साधवः सरला भवन्ति, तेषामादरो न भवति । दुष्टास्तेषां धनादिकमपि हरन्ति, कार्यबाधां च कुर्वन्ति । अत एवोच्यते—'मृदुर्हि परिभूयते' । राजनीतौ च विशेषतः शठेषु शठतायाः प्रयोगः करणीयः । अन्यथा कार्यसिद्धिर्न भविष्यति । उक्तं च नैषधचरिते—"आर्जवं हि कुटिलेषु न नीतिः ।" महाकविभारविनाऽपि किरातार्जुनीये एतस्यैव प्रतिपादनं कृतमस्ति ।

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः ।
प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधानसंवृताङ्गान् निशिता इवेषवः ॥३॥
अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः ।
अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः ॥४॥

इमां नीतिमेव स्वीकृत्य रामः पापिनो रावणस्य वधमकरोत्, पाण्डवाश्च दुर्योधनादीनां कौरवाणाम् । एषा नीतिः शठेष्वेव प्रयोज्या, न तु सज्जनेषु । ये सज्जनाः सन्ति तैः सह सद्भावपूर्वकमेव व्यवहर्तव्यम् । उक्तं च महाभारतेऽपि—

यस्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्यस्तस्मिन् तथा वर्तितव्यं स धर्मः ।
मायाचारो मायया वर्तितव्यः साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः ॥५॥
अन्या चापि सूक्तिरस्ति—पयःपानं भुजंगानां केवलं विषवर्धनम् ॥६॥

अतो मनुष्यैः स्वकल्याणाय शठेषु शठतापूर्ण एव व्यवहारः कार्यः, सज्जनेषु च सज्जनतापूर्णः । एषैव नीतिविदां संमतिरस्ति । उक्तं च कालिदासेन—

शाम्येत् प्रत्यपकारेण नोपकारेण दुर्जनः ।

१६. मानवजीवनस्योद्देश्यम् ।

[१. प्रस्तावना, २. जीवनोद्देश्यं परोपकरणं समाजसेवादि, ३. उद्देश्याभावे दोषाः, ४. उपसंहारः ।]

विदुषां कथनमस्ति यत् 'प्रयोजनमनुद्दिश्य मन्दोऽपि न प्रवर्तते'। साधारणो जनोऽपि प्रयोजनं विना कस्मिंश्चिदपि कार्ये न प्रवृत्तो भवति । मनुष्यो जन्म धारयति । तस्य जीवनस्य किंचिदुद्देश्यमवश्यमेव भवेत् । संसारे ये उद्देश्यहीना भवन्ति, ते कदापि सफला न भवन्ति ।

जीवनस्य किमुद्देश्यं स्यादिति विचारे प्रथममेतत् समक्षं समायाति यत् जीवनस्योद्देश्यं समुन्नतं स्यात्, येन जीवनस्य सफलता स्यात् । समुन्नतेषु उद्देश्येषु देशसेवायाः समाजसेवायाः परोपकारस्य जातेरुद्धरणस्य विद्योन्नतेश्च भावना सम्मुखमायाति । मनुष्यः सामाजिकः प्राणी वर्तते, अतो यदि समाजः समुन्नतोऽस्ति तर्हि सर्वेऽपि सुखिनो भविष्यन्ति । यदि समाजो न समुन्नतोऽस्ति तर्हि सर्वेऽपि विपत्तिग्रस्ता दीना हीनाश्च भविष्यन्ति । यदि देशः पराधीनोऽस्ति तहि मनुष्येषु स्वाभिमानस्य भावना न भविष्यति । अतो मनुष्यजीवनस्य मुख्यमुद्देश्यं भवति यत् स मानवजीवनस्य साफल्याय परोपकारं कुर्यात्, देशसेवां कुर्यात्, समाजसेवां कुर्यात्, विद्यायाश्चोन्नतिं कुर्यात् । एवंप्रकारेणैव जीवनं सफलं भवति ।

जीवनस्य सफलतायै एतदपि सदा प्रयतनीयं यत् स कदाचिदपि पापं न कुर्यात्, कुत्सितं कर्म न कुर्यात् । पवित्रजीवनस्य यापनेनैव जीवनं सफलं भवति । उक्तं च—

मुहूर्तमपि जीवेत नरः शुक्लेन कर्मणा ।
न कल्पमपि कृष्णेन लोकद्वयविरोधिना ॥१॥

मनुष्यजीवने सदा सर्वैरेव प्रयत्नः करणीयो यत् स महाविद्वान् महापराक्रमी महायशस्वी सच्चरित्रो दानी परोपकारी समाजसेवी लोकहितकारी धर्मात्मा च स्याद्, अन्यथा मनुष्यजीवने पशुजीवने च न कोऽपि भेदोऽस्ति । साधूक्तं च—

यज्जीव्यते क्षणमपि प्रथितं मनुष्यैर्विज्ञानविक्रमयशोभिरभज्यमानम् ।
तन्नाम जीवितमिह प्रवदन्ति तज्ज्ञाः, काकोऽपि जीवति चिराय बलिं च भुङ्क्ते ॥२॥

यो नात्मजे न च गुरौ न च भृत्यवर्गे, दीने दयां न कुरुते न च बन्धुवर्गे ।
किं तस्य जीवितफलन मनुष्यलोके, काकोऽपि जीवति चिराय बलिं च भुङ्क्ते ॥३॥

मनुष्यो जीवननिर्वाहाय यां कामपि आजीविकां ग्रहीतुं शक्नोति, पठनं पाठनं कृषिं वाणिज्यं सेवाकर्म समाजसेवादिकं वा ! परन्तु स सदा जीवनसाफल्याय सत्कर्म अवश्यं कुर्यात् । निरुद्देश्यं जीवनं विनश्यति । अतः कदाचिदपि उद्देश्यत्यागो न विधेयः । मनुष्यस्य सदुद्योगेन सदुद्देश्यमपि अवश्यं पूर्णं भवति ।

१७. आचार्यदेवो भव।

[१. प्रस्तावना, २. गुरुभक्तेरुपयोगिता लाभाश्च, ३. तदभावे दोषाः, ४. दृष्टान्ताः, ५. उपसंहारः।]

भारतीयशास्त्रेषु गुरोर्माहात्म्यं बहु गीतमस्ति। स ईश्वरस्य प्रतिमूर्तिरिति मन्यते। अत एवोच्यते—'आचार्यदेवो भव' इति। आचार्यो देवतावत् पूज्यो मान्यश्च। यः शिष्येभ्यो विद्यां ददाति, कर्तव्याकर्तव्यं च बोधयति, सदाचारस्य संयमस्य त्यागस्य तपसश्च शिक्षां ददाति, स आचार्यो गुरुर्वा भवति।

गुरोर्माहात्म्यमेतस्माद् ज्ञायते यद् बालको यदा गुरोः समीपं शिक्षार्थं याति, यज्ञोपवीतं च धारयति, शिक्षां च प्राप्नोति, तदैव स द्विजो द्विजन्मा द्विजातिर्वा भवति। अन्यथा स शूद्र एव भवति। माता पिता च बालकस्य शरीरमेव सृजतः, गुरुस्तु तं विद्यया शिक्षया दीक्षया कर्तव्योद्बोधनेन च मनुष्य करोति। अतो मातुः पितुश्च गुरुः गरीयान् भवति। उक्तं च महाभारते—

शरीरमेव सृजतः पिता माता च भारत।
आचार्यशिष्टा जातिः सा दिव्या सा चाऽजराऽमरा ॥१॥
गुरुर्गरीयान् पितृतो मातृतश्चेति मे मतिः ॥२॥

गुरुः भक्त्या सेवया शुश्रूषया च तुष्यति, आज्ञापालनेन तत्कथनानुरूपव्यवहारेण च स प्रीतो भवति। गुरुः यदा प्रीतो भवति, स यत् किंचिदपि जानाति, तत्सर्वं स्वशिष्याय समर्पयितुमिच्छति। अतो विद्याप्राप्त्यै गुरुभक्तेः महती आवश्यकता वर्तते। सत्यमेतदुक्तं च—

गुरुशुश्रूषया विद्या पुष्कलेन धनेन वा।
अथवा विद्यया विद्या चतुर्थान्नोपलभ्यते ॥३॥

न केवलमेतदेव, अपि तु गुरुभक्त्या मनुष्यस्य चतुर्मुखी उन्नतिर्भवति। उक्तं च—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥४॥

गुरुभक्त्यैव आरुणिः ब्रह्मज्ञः संजातः, एकलव्यश्च महाधनुर्धरो जातः। गुरुशुश्रूषया गुरुभक्त्यैव च कालिदासादयो महाकवयो जाताः, अन्ये च केचन ऋषयो महर्षयः सिद्धाः कलाविदो विविधशास्त्रविशारदाश्च समभवन्। एष गुरुभक्तेरेव महिमा। ये गुरुभक्तिं न कुर्वन्ति, न वा जानन्ति, तेषां विद्या न प्रकाशते, तेषां यशो न वर्धते, तेषां तेजः क्षीयते, शरीरमायुश्चापि क्षयमुपेतः। ये गुरुभक्ता भवन्ति तेषां विद्या सदा प्रकाशते, तेषां यशश्च प्रथते, तेषां तेजो विराजते, शरीरमायुश्चापि वृद्धिमेतः। अतः सर्वे सर्वदा गुरवः पूज्या मान्याश्च।

१८. मम महाविद्यालयः ।

[१. प्रस्तावना, २. विद्यालयस्य शिक्षा, छात्राणां गुरूणां च संख्यादिकम्, विशेषताश्च, ३. उपसंहारः ।]

मम महाविद्यालयो नगराद् बहिः एकान्ते सुन्दरे प्रदेशे स्थितोऽस्ति । महाविद्यालयस्य भवनं निरीक्ष्य चेतो नितान्तं हर्षमनुभवति । महाविद्यालयस्य रमणीयता च न कस्य चेतो बलाद् हरति ? महाविद्यालयोऽस्माकं कृते न केवलं पाठशालाऽस्ति, अपि तु अस्माकं सर्वस्वमस्ति । अस्माभिरत्रैव अध्ययनं क्रियते, सदाचारस्य पाठः पठ्यते, विनयस्य अनुशासनस्य च शिक्षणं गृह्यते, समाजसेवाया देशभक्तेश्च भावनाऽत्रैव प्राप्यते। किमन्यत्, जीवनस्य यत् कर्तव्यमस्ति, तत् सर्वमपि अत्रैव लभ्यते । अत एव महाविद्यालयोऽयम् अस्माकं कृते 'विद्यामन्दिरम्' अस्ति ।

मम महाविद्यालयेऽध्यापकानां प्राध्यापकानां च संख्या पञ्चाशतोऽधिका वर्तते । छात्राणां च संख्या सहस्रादधिका विद्यते । प्रायः शतद्वयी बालिकानामपि वर्तते । महाविद्यालयस्य आचार्यवर्या अतीव प्रखरा विविधविद्यापारंगता विद्वांसः सन्ति । तेषां तेजोमयं वदनं वीक्ष्य छात्राः श्रद्धावनता भक्तिभावोपेताश्च भवन्ति । अध्यापकेषु च बहवो महाविद्वांसः सन्ति । सर्वेऽपि स्वस्वविषयेऽतीव विशारदाः सन्ति । तेषां शिक्षापद्धतिरपि बहु मनोरमा वर्तते । छात्रा अपि प्रायो व्युत्पन्नबुद्धयः सन्ति । शिक्षायाः समीचीनत्वादेव अन्यप्रान्तेभ्योऽपि छात्रा अत्रैवाध्ययनार्थमागच्छन्ति । राजकीयपरीक्षासु च विशिष्टं स्थानम् अस्मद्विद्यालयीयाः छात्रा लभन्ते । न केवलं पठने एव छात्रा योग्यतमाः सन्ति, अपि तु क्रीडने तरणे धावने वाक्प्रतियोगितासु अनुशासने संयमे समाजसेवायां देशसेवायामपि च तेषां स्थानं सर्वप्रथममेव विद्यते । अस्माकं महाविद्यालये विद्यार्थिनां क्रीडनार्थं क्रीडाक्षेत्रं सुविस्तृतमस्ति । विविधभाषासु भाषणपाटवार्थं विविधाः परिषदः सन्ति । सैनिकशिक्षाया अपि प्रबन्धोऽस्ति । ये क्रीडनादिषु प्रथमस्थानं लभन्ते, ते पुरस्कारादिकमपि लभन्ते । ये किमपि शोभनं कर्म कुर्वन्ति, ते सदा पुरस्कृता भवन्ति, विद्यालये संमानमादरं च लभन्ते । छात्राणां स्वास्थ्यवृद्धयर्थं व्यायामस्य, मल्लयुद्धस्य, अन्येषां चोपयोगिवस्तूनां प्रबन्धोऽस्ति, अत एव छात्रा हृष्टाः पुष्टाश्च सन्ति । छात्राणां स्वास्थ्यं निरीक्ष्य सर्वेषामपि जनानां चेतः प्रहर्षमाप्नोति ।

साम्प्रतमस्माकमेतत् कर्तव्यं भवति यत् सर्वथा वयं महाविद्यालयस्य कीर्तिं दिक्षु विस्तृतां कुर्याम । एवमस्माकमपि यशो वृद्धिं प्राप्स्यति ।

१९. सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति। (धनोपार्जनम्)

[१. प्रस्तावना, २. धनस्योपयोगिता, लाभाश्च, ३. निर्धनताया हानयः; ४. उपसंहारः।]

सर्वे जनाः संसारे सुखमिच्छन्ति। सुखं च धनेनैव प्राप्तुं शक्यते। अतो धनोपार्जनस्य महत्यावश्यकता भवति। अद्यत्वे यत्र कुत्रचिदपि गच्छामस्तत्र सर्वत्रैव धनस्य माहात्म्यं पश्यामः। धनेन विना न विद्योपार्जनं कर्तुं शक्यते, न जीविकानिर्वाहश्च भवति। सुखार्थं परोपकारार्थं त्यागार्थं दानार्थं भोगार्थं विवाहार्थं पुत्रादिसंरक्षणार्थं गार्हस्थ्य-संचालनार्थं भोजनार्थं भवननिर्माणार्थं सर्वत्रैव धनस्यावश्यकता भवति। यस्य समीपे धनं नास्ति तस्य कश्चिदपि अभिलाषो न पूर्तिमेति। साधूक्तं केनापि कविना—

बुभुक्षितैर्व्याकरणं न भुज्यते, पिपासितैः काव्यरसो न पीयते।
न छन्दसा केनचिदुद्धृतं कुलं, हिरण्यमेवार्जय निष्फला गुणाः ॥१॥

वेदेऽपि धनोपार्जनस्य धनस्वामित्वस्य च आदेशः प्राप्यते—

वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥२॥

यस्य समीपे धनं भवति स एव सुखेन शेते। स एव संसारे कुलीनो विद्वान् गुणज्ञो दानी वक्ता प्रभुः इति कथ्यते। अत एवोच्यते—

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः, स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥३॥

धनैर्निष्कुलीनाः कुलीना भवन्ति, धनैरापदं मानवा निस्तरन्ति।
धनेभ्यः परो बान्धवो नास्ति लोके, धनान्यर्जयध्वं धनान्यर्जयध्वम् ॥४॥

यस्य समीपे धनं भवति, तस्यैव मित्राण्यपि भवन्ति, न तु निर्धनस्य। यतो हि—

यस्यार्थास्तस्य मित्राणि यस्यार्थास्तस्य बान्धवाः।
यस्यार्थाः स पुमाँल्लोके यस्यार्थाः स च पण्डितः ॥५॥

प्राचीनैः मुनिभिरपि धनस्योपयोगिता स्वीकृता आसीत्। अत एव तैः धर्मार्थकाम-मोक्षात्मके चतुर्वर्गे अर्थस्य धर्मानन्तरं स्थानं कृतमस्ति।

धनोपार्जनस्य बहूनि साधनानि सन्ति सदोषाणि निर्दोषाणि च चौर्येण, कपटेन, छलप्रपञ्चेन, मिथ्याभाषणेन, उत्कोचग्रहणेन, अन्यैश्चानुचितसाधनैर्धनं प्राप्तुं शक्यते, परन्तु तद्धनं विनाशकरमेव भविष्यति। अतः सर्वैः सर्वदा सदुपायैरेव धनोपार्जनं कर्तव्यम्। विद्याध्यापनेन, कृषिकर्मणा, व्यापारेण, सेवया, परिश्रमेण वा यद् धनमुपार्जितं भवति, तत् फलति। तेनैव मनुष्यस्य श्रीवृद्धिर्भवति। अतः सर्वैः सदुपायैरेव सदा धनोपार्जनं कर्तव्यम्, सत्कर्मसु च तस्य व्ययः करणीयः।

२०. सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम्।

[१. प्रस्तावना, २. सन्तोषस्योपयोगिता लाभाश्च, ३. असन्तोषेण हानयः, ४. उपसंहारः।]

संसारे सर्वे जनाः सुखमिच्छन्ति। सुखं शान्तिश्च तदैव भवतो यदा मनुष्यः सन्तुष्टो भवति। यत् किंचित् स्वकीयेन परिश्रमेण प्रयत्नेन च प्राप्नोति, तत्रैव सुखानुभूतिकरणं सन्तोष इत्युच्यते। ये जनाः सन्तोषहीना भवन्ति, ते धनलाभेऽपि पर्याप्तसुखसामग्री-सत्त्वेऽपि असन्तुष्टा सन्तोऽन्यदपि धनं प्राप्तुमिच्छन्तो भ्रमन्ति। एवं तेषां जीवनं दुःखमयम् अशान्तियुक्तं च भवति।

जीवने सुखशान्तिलाभाय सन्तोषस्य महत्यावश्यकता वर्तते। सन्तोषस्य सद्भावादेव ऋषयो मुनयो महर्षयश्च जगद्वन्द्या भवन्ति। सन्तोष एव सुखमस्ति, न चासन्तोषे। असन्तुष्टा मृगतृष्णिकामिव मायामनुसरन्तः सदा दुःखिता भवन्ति। उक्तं च—

सन्तोषामृततृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
कुतस्तद्धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम् ॥१॥

महाभारते भगवता व्यासेनापि सन्तोषस्य महत्त्वं प्रतिपादयतोक्तमस्ति—

अन्तो नास्ति पिपासायाः सन्तोषः परमं सुखम् ॥२॥

ये एवं विचारयन्ति यद् यदि वयं सन्तोषमाश्रयिष्यामस्तर्हि अस्माकमुन्नतिर्न भविष्यतीति ते वस्तुतो मूर्खा एव सन्ति। सन्तोषोऽपि महती श्रीरस्ति। तथा हि—

सर्पाः पिबन्ति पवनं न च दुर्बलास्ते, शुष्कैस्तृणैर्वनगजा बलिनो भवन्ति।
कन्दैः फलैर्मुनिवराः क्षपयन्ति कालं, सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम् ॥३॥

ये सन्तोषयुक्ता भवन्ति तेषां कृते जगदेतत् सुखमयं भवति। यतो हि—

वयमिह परितुष्टा वल्कलैस्त्वं च लक्ष्म्या, सममिह परितोषो निर्विशेषो विशेषः।
स हि भवति दरिद्रो यस्य तृष्णा विशाला, मनसि च परितुष्टे कोऽर्थवान् को दरिद्रः ॥४॥

अपि च— अकिंचनस्य दान्तस्य शान्तस्य समचेतसः।
सदा सन्तुष्टमनसः सर्वाः सुखमया दिशः ॥५॥

केचन सन्तोषस्य इममर्थं गृह्णन्ति यद् मनुष्यः सर्वं कर्म त्यजेत्, तेऽपि अतत्त्वज्ञाः सन्ति। सन्तोषस्य केवलमयं भावोऽस्ति यद् यत्किंचित् श्रमेण प्राप्नुयात्, तत्रैव सन्तोषं कुर्यात्। अनुचितैः प्रकारैः धनस्योपार्जने यत्नं न कुर्यात्। धनस्य कृते वा स्वकीयं स्वास्थ्यं न विनाशयेत्, सर्वेषामप्रियो न स्यात्। धनं सुखार्थं शान्त्यर्थं चास्ति, धनं चास्माकं कृते वर्तते, न तु वयं धनार्थं सः। अतस्तावदेव धनं हितकरं वर्तते, यतः स्वास्थ्यमपि सुरक्षितं भवति, सुखं शान्तिं च प्राप्नोति। अतः सर्वैरपि सुखशान्तिप्राप्त्यै सन्तोष उपादेयः।

(९) अनुवादार्थ गद्य-संग्रह

(१) संस्कृत-भाषा

शुद्ध और परिष्कृत भाषा को संस्कृत कहते हैं। इसी के नाम देवभाषा, देववाणी, गीर्वाणवाणी आदि हैं। यह भारत की एक अमूल्य और अनुपम निधि है। भारतवर्ष का समस्त प्राचीन ज्ञान-भण्डार इसी भाषा में सुरक्षित है। वेद, उपनिषद्, दर्शन, रामायण, महाभारत, गीता आदि ग्रन्थ इसी भाषा में हैं। **कुछ विद्वानों को** यह भ्रम है कि संस्कृत भाषा केवल ग्रन्थों की ही भाषा थी और इसका केवल पठन-पाठन में ही उपयोग होता था। जिस प्रकार आज-कल खड़ी बोली नामक साहित्यिक हिन्दी शिष्ट-समाज के व्यवहार और उपयोग की भाषा है, उसी प्रकार प्राचीन समय में संस्कृत-भाषा शिष्ट-वर्ग के दैनिक व्यवहार की भाषा थी। यास्क के निरुक्त, पाणिनि की अष्टाध्यायी और पतञ्जलि के महाभाष्य के अध्ययन से यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि उनके समय में संस्कृत दैनिक व्यवहार की भाषा थी। यास्क और पाणिनि ने वेदों की भाषा से **इसको पृथक् करते हुए** इसको 'भाषा' अर्थात् दैनिक व्यवहार की भाषा कहा है। जिस प्रकार आजकल जन-साधारण में प्रचलित भाषा साहित्यिक हिन्दी से भिन्न है, उसी प्रकार प्राचीन समय में जन-साधारण में व्यवहृत भाषा को प्राकृत कहते थे।

(२) रामायण

रामायण संस्कृत-साहित्य का उच्च कोटि का महाकाव्य है। इसके रचयिता महर्षि वाल्मीकि हैं। इसमें मर्यादापुरुषोत्तम राम के जीवन-चरित्र का वर्णन है। यह संस्कृत में सर्व-प्रथम लौकिक भावों से युक्त काव्य-ग्रन्थ है, अतः इसको आदि-काव्य कहा जाता है। इसमें भारतीय संस्कृति का सुन्दरतम रूप वर्णित है। काव्य की दृष्टि से यह बहुत सुन्दर काव्य है। इसकी भाषा प्रारम्भ से अन्त तक परिष्कृत और प्रसाद-गुण-युक्त है। इसमें भाव बहुत उच्च और मनोरम हैं। कविता **सरल, सरस और मनोहर है**। अलंकारों का सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है और रसों का परिपाक भी उत्तम हुआ है। इसमें करुणरस प्रधान है। यह हिन्दुओं का आचारशास्त्र है। इसकी शिक्षाएँ व्यावहारिक हैं। **परकालीन** कवियों और नाटककारों पर इसका बहुत गम्भीर प्रभाव पड़ा है। उन्होंने इससे भाव लिये हैं। इस पर आश्रित बहुत से काव्य और नाटक हैं। संसार की बहुत-सी भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। वाल्मीकि की कीर्ति आज भी अजर और अमर है।

संकेत—(१) केषाञ्चिद् विदुषाम्। अद्यत्वे। इमां पृथक् कुर्वन्तौ। उक्तवन्तौ। (२) सरला, सरसा, मनोहरा च। परकालिकेषु।

(३) भास

आजतक जो साहित्य उपलब्ध हुआ है, उसकी दृष्टि से भास को सर्वप्रथम नाटककार **कहा जा सकता है।** उसने १३ नाटक लिखे हैं। ये नाटक विभिन्न विषयों पर हैं। इससे ज्ञात होता है कि वह एक सफल और कुशल नाटककार था। उसके नाटकों में जो विशेषताएँ विशेष रूप से दृष्टिगोचर होती हैं, वे हैं—भाषा की सरलता, अकृत्रिम शैली, वर्णनों में यथार्थता, नाटकीय पात्रों के चरित्र-चित्रण में वैयक्तिकता और नाटकीय गुण-प्रवाह, सजीवता और शक्तिमत्ता की सत्ता। उसके नाटक अत्यन्त रोचक और रंगमंच की दृष्टि से विशेष सफल हुए हैं। उसके नाटकों में मौलिकता और कल्पना-वैचित्र्य विशेष रूप से **प्राप्त होता है।** संस्कृत में सर्वप्रथम एकांकी नाटक लिखने का **श्रेय** भास को है। उसने ५ **एकांकी नाटक** लिखे हैं। उसकी शैली में **माधुर्य, ओज** और **प्रसाद** ये तीनों गुण हैं। उसकी भाषा में सरसता, सरलता, सुबोधता, स्वाभाविकता और प्रवाह है। वह मनोवैज्ञानिक विवेचन से बहुत दक्ष है। वह भारतीय भावों का कवि है।

(४) कालिदास

महाकवि कालिदास संस्कृत के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। वे नाटककार, महाकाव्य-निर्माता और गीतिकाव्य-कर्ता थे। उनके प्रमुख ग्रन्थ ये हैं—(क) नाटक—मालविकाग्निमित्र, विक्रमोर्वशीय, अभिज्ञानशाकुन्तल। (ख) महाकाव्य—कुमारसंभव, रघुवंश। (ग) गीतिकाव्य—ऋतुसंहार, मेघदूत। वे वैदर्भी **रीति के** सर्वोत्तम कवि थे। उनकी प्रतिभा **सर्वतोमुखी** थी। उनकी कृतियों में प्रसाद और माधुर्य गुणों का अपूर्व सम्मिश्रण है। उनमें कृत्रिमता और क्लिष्टता का अभाव है। उनके काव्यों में उच्चकोटि की व्यंजकता है। रसों का परिपाक भी उत्तम रूप से हुआ है। वे नीरस कथानक को भी सरस और मनोरम **बना देते हैं।** उनकी लोकप्रियता का कारण उनकी प्रसाद-गुण-युक्त ललित और परिष्कृत शैली है। उनके काव्यों में **शब्द-लाघव** उनकी **कलात्मक रुचि का** परिचायक है। वे चरित्र-चित्रण में असाधारण पटु हैं। उनकी भाषा और भाव पात्रों के अनुकूल हैं। वे उपमाओं के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। उनका **मत** है कि तपस्या से प्रेम निर्मल और पुष्ट होता है। परकालीन **कवियों के लिए** उनके ग्रन्थ **आदर्श रहे हैं।**

संकेत—(३) अद्यावधि। वक्तुं शक्यते। प्राप्यते। श्रेयः। एकाङ्कीनि नाटकानि। माधुर्यम्। ओजः। प्रसादः (४) रीत्याः। विदधाति। शब्दलाघवम्। कलात्मिकया रुचेः। मतम्। कवीनां कृते। आदर्शरूपा अभवन्।

(५) बाण भट्ट

संस्कृत-साहित्य में गद्य-लेखकों में महाकवि बाणभट्ट का स्थान सर्वोत्कृष्ट है। उन्होंने दो गद्य-ग्रन्थ लिखे हैं—हर्षचरित और कादम्बरी। ये दोनों ही ग्रन्थ गद्य की दृष्टि से अनुपम हैं। हर्षचरित में कुछ क्लिष्टता दृष्टिगोचर होती है। कवि की प्रतिभा का चरम उत्कर्ष कादम्बरी में दिखाई देता है। उनकी शैली में शब्द और अर्थ, भाव और भाषा का सुन्दर समन्वय है। उन्होंने विषय के अनुकूल शब्दावली का ही प्रयोग किया है। अलंकारों का भी उचित रूप से समावेश किया है। उनका प्रकृति-चित्रण विशद, सजीव और अलंकृत होता है। प्रकृति-वर्णनों में उन्होंने अपनी सूक्ष्म-निरीक्षण शक्ति का परिचय दिया है। वे पांचाली रीति के कवि हैं। प्रसंग के अनुसार कहीं लम्बे समासयुक्त पद देते हैं और कहीं बहुत छोटे-छोटे वाक्य। उनके वर्णन सर्वाङ्गीण और पूर्ण होते हैं। उनका भाषा और शब्दकोष पर असाधारण अधिकार था।

(६) ग्राम्य-जीवन

भारतवर्ष ग्राम-प्रधान देश है। अधिक जनता गाँवों में ही रहती है। ग्राम-निवासियों को ग्रामीण कहा जाता है। इनका जीवन बहुत सरल और निष्कपट होता है। इनकी वेशभूषा भी साधारण होती है। इनका लक्ष्य होता है—सादा जीवन और उच्च विचार। ये बहुत परिश्रमी होते हैं। इनके कठोर परिश्रम का ही फल है कि हमें अनायास अन्नादि प्राप्त होते हैं। ग्रामों की जलवायु स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभप्रद होती है। अतएव ग्रामीण जन स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट होते हैं।

(७) शिष्टाचार

शिष्टों अर्थात् सज्जनों के आचार को शिष्टाचार कहते हैं। सज्जन पुरुष सदा दूसरों का उपकार करते हैं। अपने से बड़ों का आदर और सम्मान करते हैं। दूसरों के दुःख में दुःखी होते हैं। अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए दूसरों को हानि नहीं पहुँचाते। मधुर वचन बोलते हैं। प्रत्येक मनुष्य को शिष्टाचार का पालन करना चाहिए। उसका कर्तव्य है कि वह बड़ों की आज्ञा का पालन करे, उनका आदर करे। अपने संबन्धियों से प्रेम करे। असत्य न बोले। निरर्थक विवाद न करे। सबसे स्नेह का व्यवहार करे।

संकेत :—(५) दृश्यते। दीर्घसमासयुक्तानि पदानि प्रयुङ्क्ते। लघूनि। (६) कथ्यन्ते। सरलम्। वयं ̈ ̈प्राप्नुमः। (७) उपकुर्वन्ति। ज्येष्ठानाम्। परेषां न अपकुर्वन्ति। शिष्टाचारः पालनीयः। ज्येष्ठानाम्। स्वसम्बन्धिषु। सर्वेषु स्नेहेन व्यवहरेत्।

(८) महर्षि दयानन्द

महर्षि दयानन्द का जन्म १८२४ ई० में गुजरात प्रान्त के टंकारा नगर में हुआ था। इनके पिता श्री करसनजी तिवारी शिवभक्त ब्राह्मण थे। अपने चाचा और बहिन की मृत्यु को देखकर इनके हृदय में वैराग्य उत्पन्न हुआ। ये सत्यं शिवं को ढूँढ़ने के लिए घर से निकल पड़े। इन्होंने वेदोक्त परम्परा की प्रतिष्ठा के लिए आर्यसमाज की स्थापना की। वेदों का भाष्य करके वेदों का महत्त्व प्रदर्शित किया। इन्होंने समाज-सुधार के अनेक कार्य किये हैं। जैसे—अस्पृश्यों का उद्धार, स्त्री-शिक्षा का प्रचार, गोशाला और अनाथालयों की स्थापना, गोरक्षा आदि कार्य। ये पूर्ण ब्रह्मचारी, त्यागी, तपस्वी, देशभक्त, समाज-सुधारक, वेदों में अद्वितीय विद्वान्, असाधारण वक्ता और निर्भीक संन्यासी थे।

(९) महात्मा गांधी

महात्मा गांधी का जन्म २ अक्टूबर, १८६९ ई० को काठियावाड़ के पोरबन्दर स्थान में हुआ था। आपके पिता कर्मचन्द गांधी और माता पुतलीबाई थीं। ये दोनों बहुत सज्जन प्रकृति के थे। गांधीजी भी बचपन से ही अत्यन्त साधु स्वभाव के थे। भारतवर्ष और विदेश में शिक्षा प्राप्त करके ये देश-सेवा के कार्य में लग गये। इन्होंने भारतवर्ष को स्वतन्त्र करने का प्रण किया। इनके ही भगीरथ प्रयत्न से भारतवर्ष स्वतन्त्र हुआ है। अतएव इनको 'राष्ट्रपिता' कहा जाता है। ये सत्य और अहिंसा की साक्षात् मूर्ति थे। इन्होंने हरिजनोद्धार, स्त्री-शिक्षा, भारतीय कला-कौशल की उन्नति आदि अनेक प्रशंसनीय कार्य किये हैं। भारतवर्ष सदा इनका ऋणी रहेगा।

(१०) श्री जवाहरलाल नेहरू

श्री नेहरूजी का जन्म १४ नवम्बर, १८८९ ई० को पवित्र प्रयाग नगर में हुआ। इनके पिता श्री मोतीलाल नेहरू और माता स्वरूपरानी थीं। इनकी अधिकांश शिक्षा विदेश में हुई थी। महात्मा गांधी के सम्पर्क में आकर ये देश-सेवा में लग गये। उस समय से लेकर मृत्यु तक देश-सेवा में ही लगे रहे। इनमें असाधारण प्रतिभा और कार्य-शक्ति थी। इनके त्याग, तपस्या और देश-सेवा से भारतीय इन पर इतने मुग्ध थे कि ये जहाँ भी जाते थे, वहाँ लाखों की भीड़ एकत्र हो जाती थी। ये चार बार कांग्रेस के अध्यक्ष रहे थे। इनकी कीर्ति देश और विदेश में सर्वत्र व्याप्त थी। ये भारत के प्रधान मन्त्री थे।

संकेत :—(८) पितृव्यस्य। उदभवत्। अन्वेष्टुम्। निरगच्छत्। अस्थापयत्। प्रादर्शयत्। (९) सरलस्वभावौ। उच्यते। भविष्यति। (१०) संपर्कं प्राप्य। संलग्नः। तदाप्रभृति निधनं यावत्। लक्षशो नराणां समवायः।

(११) श्रावणी पर्व

श्रावणी हिन्दुओं के मुख्य पर्वों में से एक है। यह पर्व श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन होता है। यह ब्राह्मणों का मुख्य पर्व है। इस अवसर पर वे वेदों का पठन-पाठन और वैदिक साहित्य का स्वाध्याय करते हैं। नवीन यज्ञोपवीत धारण करते हैं। इस समय वर्षा ऋतु के आगमन के कारण यातायात की असुविधा के कारण ऋषि-मुनि भी गाँवों और नगरों में रहकर चातुर्मास्य बिताते हैं और जनता को वैदिक धर्म की शिक्षा देते हैं। आर्य-संस्कृति में स्वाध्याय का बहुत महत्त्व है। इसको रक्षाबन्धन-पर्व भी कहते हैं। इस अवसर पर बहनें भाइयों के हाथों में स्व-रक्षार्थ रक्षाबन्धन बाँधती हैं।

(१२) दशहरा

दशहरा आर्यों का सबसे बड़ा पर्व है। इसको विजय-दशमी भी कहते हैं। यह पर्व आश्विन मास में शुक्ल-पक्ष की दशमी को होता है। यह क्षत्रियों का मुख्य पर्व माना जाता है। इस पर्व के विषय में जनश्रुति है कि श्री रामचन्द्रजी ने राक्षसों के राजा रावण पर इसी दिन विजय पायी थी। अतएव इस पर्व पर रामलीला का आयोजन करके राम की विजय और पापी रावण का वध दिखाया जाता है। यह पर्व शिक्षा देता है कि धर्मात्मा की सदा विजय और पापी का नाश होता है। क्षत्रिय इस अवसर पर अपने शस्त्रों और अस्त्रों की पूजा करते हैं। क्षात्र बल की उन्नति से ही देश की सुरक्षा होती है। बंगाल में इस अवसर पर दुर्गापूजा विशेष रूप से होती है।

(१३) दीपावली

दीपावली भी आर्यों का अत्यन्त प्रसिद्ध और मुख्य पर्व है। इसको दीपमालिका भी कहते हैं। यह कार्तिक मास की अमावस्या के दिन विशेष समारोह के साथ मनाई जाती है। यह वैश्यों का मुख्य पर्व है। इस अवसर पर रात्रि में सभी छोटे और बड़े घर दीपों की माला से सुशोभित और अलंकृत होते हैं। चारों ओर दीपकों की पंक्तियाँ ही दिखाई देती हैं। इस पर्व के विषय में जनश्रुति है कि राम रावण को जीतकर जब अयोध्या लौटे, तब इसी दिन विजय-महोत्सव का आयोजन हुआ था। इस अवसर पर सभी हिन्दू, अपने मकानों की स्वच्छता और पुताई करते हैं। वैश्य इस दिन लक्ष्मी-पूजा करते हैं और श्री-वृद्धि के लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

संकेत :—(११) आर्याणाम्। पर्वसु। मुख्यं पर्व (पर्वन्)। धारयन्ति। यापयन्ति। बध्नन्ति। (१२) गण्यते। पर्वणः। प्राप्नोत्। पर्वणि। प्रदर्श्यते। वङ्गप्रान्ते। (१३) आयोज्यते। सर्वतः। दृश्यन्ते। विजित्य। न्यवर्तत। सुधालेपनम्।

(१४) स्वदेश-प्रेम

जिस देश में हमने जन्म **लिया है**, जिसकी **गोद में** निरन्तर खेले हैं, जिसके अन्न और जल से पालित और पोषित हुए हैं, जिसकी वायु ने हमारे अन्दर जीवन का संचार किया है, उसके ऋण से हम कभी भी **उऋण नहीं हो सकते हैं**। इसीलिए कहा गया है कि माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी **बढ़कर हैं**। पशुओं और पक्षियों में भी अपने जन्म-स्थान के लिए प्रेम **देखा जाता है**। अपने देश की उन्नति स्वदेश-प्रेम पर ही अवलम्बित है। अपने तुच्छ स्वार्थ को **छोड़कर** जीवन में सत्य-व्यवहार को अपनाने से ही देश उन्नत होता है। महात्मा गांधी, सुभाष बोस, नेहरूजी आदि ने अपना सम्पूर्ण जीवन देश के लिए दे दिया, अतः वे महापुरुष हो गए हैं।

(१५) स्वावलम्बन

स्वावलम्बन एक दिव्य गुण है, जो **बड़े-से बड़े** विघ्नों और कष्टों को **नष्ट करके** जीवन के मार्ग को सुखमय **बना देता** है। यह एक ऐसी अपूर्व शक्ति है, जिसके आगे संसार की सभी शक्तियाँ **तुच्छ हैं**। जहाँ स्वावलम्बन है वहाँ उन्नति है, जहाँ परमुखापेक्षिता है, वहाँ अवनति है। इसीलिए कहा गया है कि परमात्मा भी उसकी ही सहायता करता है, जो अपनी सहायता स्वयं करता है। जो मनुष्य, जो समाज, जो राष्ट्र स्वावलम्बी होता है, वही संसार में उन्नति के **शिखर पर चढ़ता है। जो दूसरों पर आश्रित रहते हैं**, वे कभी भी उन्नति नहीं कर सकते। प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है कि वह स्वावलम्वी, पुरुषार्थी और अध्यवसायी हो। परिश्रम करने में गौरव **समझे** और अपनी तथा देश की उन्नति करे।

(१६) कर्तव्य-पालन

कर्तव्य-पालन जीवन की आधार-शिला है। संसार की प्रत्येक वस्तु अपने कर्तव्य का पालन करती है। सूर्य निरन्तर प्रकाश देता है, हवा **चलती है** और पृथ्वी प्राणिमात्र को **धारण करती है**। सभी अपने-अपने कर्तव्य का पालन कर रहे हैं। जीवन को सुखमय **बनाने के लिए** प्रत्येक मनुष्य के लिए कुछ कर्तव्य **निश्चित किए गए हैं**। प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने कर्तव्यों का पालन करे। माता-पिता-गुरुओं की सेवा, विद्याध्ययन, चरित्र की उन्नति, देश-जाति और समाज की सेवा, सदाचार का पालन, **परोपकार करना**, ये सभी के कर्तव्य हैं। कर्तव्य-पालन से ही सदा उन्नति होती है, अतः कर्तव्य-पालन में कभी भी आलस्य नहीं करना चाहिए।

संकेतः—(१४) गृहीतवन्तः। अङ्के। अनृणाः भवितुं न शक्नुमः। गरीयसी। दृश्यते। परित्यज्य। आश्रयेण। (१५) गुरुतमान्। विनाश्य। विदधाति। हीनाः। शिखरम् आरोहति। पराश्रिताः भवन्ति। गणयेत्। (१६) वाति। धारयति। निर्मातुम्। निर्धारितानि सन्ति। परोपकरणम्।

(१७) समाज-सेवा

मनुष्य समाज का एक अंग है। समाज की उन्नति के साथ उसकी उन्नति होती है और समाज की अवनति से उसकी भी अवनति होती है। अतः प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह ऐसा कार्य करे, जिससे समाज सदा उन्नति की ओर अग्रसर हो। समाज-सेवा का भाव बाल्यकाल से ही जागृत करना चाहिए। समाजसेवक विनम्र होता है। वह दूसरों की सहायता और सेवा से प्रसन्न होता है। उसका लक्ष्य सदा यह रहता है कि समाज के सभी व्यक्ति सदा सुखी, स्वस्थ और प्रसन्न रहें। वह समाज और देश की उन्नति के सभी कार्यों में अतिप्रसन्नता से भाग लेता है। समाज-सेवा एक महान् व्रत है। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उन सबने समाज-सेवा का व्रत मुख्य रूप से लिया था, अतएव वे अपने समाज को उन्नत कर सके।

(१८) अतिथि-सेवा

अतिथि-सेवा का अर्थ है आगन्तुक व्यक्ति का स्वागत और सत्कार करना। अतिथि-सत्कार एक सामाजिक, नैतिक और धार्मिक कार्य माना गया है। शास्त्रों ने अतिथि को देवता माना है। अतः अतिथि की यथाशक्ति पूजा करनी चाहिए। कुछ विशेष परिस्थितियों में ही व्यक्ति किसी के घर अतिथि के रूप में पहुँचता है, अतः उसका जैसा स्वागत होता है, तदनुसार वह उस व्यक्ति के विषय में अपने विचार बनाता है। सभी व्यक्ति किसी न किसी समय अतिथि के रूप में किसी के यहाँ जाते हैं। अतः अतिथि-सत्कार का भाव जागृत होने से सभी व्यक्तियों को लाभ होता है। संसार में भारतीय अतिथि-सेवा के कार्य में सदा अग्रणी रहे हैं।

(१९) नम्रता

नम्रता एक दिव्य गुण है। दूसरों के साथ शिष्ट और विनीत व्यवहार का नाम नम्रता है। नम्र व्यक्ति दूसरों का सदा हित चाहता है और प्रयत्न करता है कि उसके किसी भी कार्य से किसी को हानि न पहुँचे। विनीत व्यक्ति परोपकारी, परहितचिन्तक, और परदुःखकातर होता है। वह अपने से बड़ों की आज्ञा का पालन करता है। ऐसे वचन कभी भी उच्चारण नहीं करता है, जिससे किसी की आत्मा को दुःख पहुँचे। विद्या का लक्ष्य बताया गया है कि वह मनुष्य को नम्रता प्रदान करती है। वस्तुतः शिक्षित व्यक्ति वही है, जिसमें नम्रता है। नम्रता मनुष्य को लोकप्रिय बना देती है। नम्र व्यक्ति सदा उन्नति की ओर अग्रसर होता है। सभी उसके शुभचिन्तक होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह विनम्र हो।

संकेत :—(१७) अङ्गम्। जागरणीयः। प्रसीदति। सर्वे जनाः। भवेयुः। प्रवर्तते। यावन्तोऽपि। अगृह्णन्। (१८) शास्त्रेषु। मन्यते। पूजनीयः। जनः। कस्यापि गृहम्। (१९) प्रयतते। स्यात्। न उच्चरति। हृदयं दूयेत। वर्ण्यते। करोति।

(२०) मित्रता

दो हृदयों के निःस्वार्थ भाव से **मिलन** का नाम मित्रता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह चाहता है कि जीवन में उसका ऐसा कोई **साथी** हो, जो सुख और दुःख में सदा उसका **साथ** दे। जिसको अपने सुख और दुःख की सभी बातें निःसंकोच **बता सके**। अतएव आवश्यकता होती है कि मनुष्य का का कोई मित्र अवश्य होना चाहिए। मित्र का **निर्णय करते समय इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए** कि वह स्वार्थी न हो, दुर्जन न हो और वंचक न हो। सच्चा मित्र वही है जो बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी **साथ न छोड़े**। दुःख में **साथ दे** और सुख में **प्रसन्न हो**। सदा उत्तम सम्मति दे, कुमार्ग से **हटाकर** सन्मार्ग पर **लावे**। विपत्ति में धन और अपने प्राणों से भी सहायता करे। दुर्जनों से कभी भी मित्रता न करे। सदा सज्जन से ही मित्रता करे। **समान आयु,** समान बल और समान गुणवालों की ही मित्रता **स्थायी** होती है।

(२१) मधुर-भाषण

किसी भी मनुष्य को कोई **कटु वचन न कहना** ही मधुर-भाषण कहा जाता है। मधुर-भाषण वह गुण है, जिससे मनुष्य संसार भर को अपने वश में **कर सकता है**। मधुरभाषी **व्यक्ति** को सभी मनुष्य प्रेम, श्रद्धा, प्रतिष्ठा और विश्वास की दृष्टि से देखते हैं। वह **सबसे** प्रेम करता है और सब **उससे प्रेम करते हैं**। मधुर-भाषण सब गुणों की आधार-शिला है। भाषण में मधुरता के साथ ही सत्य का भी सम्मिश्रण **होना चाहिए**। मधुर और सत्य वचन ही बोलना चाहिए। ऐसे वचन को **सूनृत** कहते हैं। मधुर-भाषण से अपना भी **मन प्रसन्न रहता है** और दूसरों की आत्मा को भी **सुख पहुँचता है**।

(२२) अनुशासन-पालन

निर्धारित नियमों के पालन और **अपने से बड़ों की** आज्ञा के पालन को अनुशासन-पालन कहते हैं। अनुशासन-पालन जीवन की सफलता की **कुंजी** है। अनुशासन-पालन का अभ्यास बाल्यकाल से ही करना चाहिए। अनुशासन या नियन्त्रण के पालन से ही मनुष्य का जीवन उच्च होता है। जो देश और समाज अनुशासन का पालन करता है, वही उन्नति को प्राप्त करता है। घर, महाविद्यालय और समाज में सर्वत्र ही अनुशासन-पालन की आवश्यकता है। जहाँ अनुशासन नहीं है, वहाँ अव्यवस्था का निवास होता है। अतः देश और समाज की उन्नति के लिए अनुशासन-पालन अनिवार्य है।

संकेत :—(२०) मेलनस्य। सहयोगी। सहयोगम्। बोधयेत्। निर्णयकाले एतद् अवश्यम् अवधेयम्। सङ्गं न जह्यात्। सहयोगं दद्यात्। प्रसीदेत्। निवार्य। आनयेत्। समवयस्कानाम्। स्थायिनी। (२१) कटुवचनस्य नोच्चारणम्। कर्तुं प्रभवति। जनम्। सर्वेषु। तस्मिन् स्निह्यन्ति। आवश्यकम्। सूनृतम्। प्रसीदति। सुखं प्राप्नोति। (२२) स्वज्येष्ठानाम्। कुञ्जिका।

(२३) धैर्य

विपत्ति के समय भी अपने मन को स्थिर रखना धैर्य कहलाता है। मन चंचल है, अतः विपत्ति के समय वह और अधिक चंचल हो उठता है। संसार में मनुष्य को प्रायः सभी कार्यों में विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। जो मनुष्य कोई भी बड़ा काम करना चाहते हैं, उनमें धैर्य गुण का होना अनिवार्य है। धैर्य ही वह गुण है, जो विपत्ति में मनुष्य को मार्ग दिखाता है। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उनमें धैर्य असाधारण कोटि का था। धैर्यवान् मनुष्य विपत्ति में चंचल नहीं होता है और शान्तिपूर्वक अपने कर्तव्य का निश्चय करता है। बड़े-से-बड़े विघ्न भी धीर मनुष्य के सामने नष्ट हो जाते हैं। जीवन की सफलता के लिए धैर्य को धारण करना अत्यावश्यक है।

(२४) विद्यार्थि-जीवन

प्राचीन शास्त्रों के अनुसार जीवन को चार भागों में बाँटा गया है—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम है, यही विद्यार्थि-जीवन का काल है। विद्यार्थि-जीवन जीवन की आधार-शिला है। मनुष्य अपने भावी जीवन के लिए इस काल में ही ज्ञान, आचार-विचार, संयम, शील, सत्य तथा अन्य सभी गुणों का संग्रह करता है। यही समय है जब विद्यार्थी अपनी आध्यात्मिक, नैतिक, शारीरिक और मानसिक शक्तियों का विकास करता है। विद्यार्थी अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का जितनी सावधानी और तत्परता के साथ उपयोग करेगा, उतना ही वह महान् पुरुष होगा। विद्या और सद्‌गुण के संग्रह का यही शुभ अवसर है।

(२५) प्रकृति-सौन्दर्य

सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य का प्रकृति के साथ अटूट सम्बन्ध है। प्रकृति मनुष्य को जीवन-शक्ति प्रदान करती है। निराश, खिन्न और असहाय हृदय में भी आशा का अपूर्व संचार करती है। एक ओर प्रकृति-नटी हमारे सुख-साधन के लिए नदी, वृक्ष, फूल और फलों का साज लेकर खड़ी है, दूसरी ओर विविध पशु और पक्षी अपने मनोरम कार्यों से हमको सदा के लिए ऋणी बना रहे हैं। वाटिका में फूलों और फलों का अनुपम सौन्दर्य किसके मन को मुग्ध नहीं करता है। सूर्योदय और सूर्यास्त की निराली छटा निर्जीव हृदय को भी सजीव बना देती है। रात्रि में आकाश की अपूर्व छटा, चन्द्रोदय, शुभ्र ज्योत्स्ना, मुक्तासदृश हिमकण-पात, मन्दस्मित करती हुई तारापंक्ति किस सहृदय के हृदय को आवर्जित नहीं करती है।

संकेतः—(२३) मनसः स्थिरीकरणम्। भवति। सांमुख्यं लभते। महत्। चिकीर्षन्ति। दर्शयति। गुरुतमाः। पुरतः। विनश्यन्ति। (२४) विभज्यते। विद्यार्थि-जीवनस्य। संगृह्णाति। उपयोक्ष्यते। तावानेव। (२५) अभेद्यः। प्रददाति। एकतः। वैभवम् आदाय तिष्ठति। अपरतः। शाश्वतभावेन ऋणवन्तः कुर्वन्ति। न मोहयति। अनुपमा। कुर्वती।

(२६) शिक्षा का उद्देश्य

शिक्षा मनुष्य की **आन्तरिक प्रवृत्तियों को विकसित करती है**। शिक्षा के द्वारा मनुष्य में विवेकशक्ति आती है, जिसके द्वारा वह अपने कर्तव्य और अकर्तव्य को समुचित रूप से **समझ पाता है**। शिक्षा ही मनुष्य की पाशविक प्रवृत्तियों को **दूर करके** उसे मनुष्य बनाती है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है—मनुष्य में विवेकशक्ति को **जागृत करना**, उसके चरित्र को शुद्ध और पवित्र **बनाना**, उसकी बौद्धिक शक्ति का **विकास करना**, शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति करना, निकृष्ट स्वार्थभाव को **नष्ट करके** निःस्वार्थभाव को **जागृत करना** और जीवन को सर्वप्रकारेण **उन्नत करना**। शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति से ही मनुष्य की पूर्ण उन्नति होती है। अतः **तीनों** शक्तियों का विकास अनिवार्य है।

(२७) आत्म-संयम

आत्म-संयम का अर्थ है, अपने **मन** और इन्द्रियों को विषयों से रोकना और अपनी इच्छाओं को **वश में रखना**। मन ही सब इन्द्रियों का स्वामी है, वही अपनी इच्छा के अनुसार इन्द्रियों को **चलाता है**। अतएव आवश्यक है कि मन को विशेषरूप से वश में **किया जाए**। शास्त्रों में कहा गया है कि मन ही मनुष्य के **बन्धन और मोक्ष का** कारण है। मन को वश में रखने से मनुष्य की सदा उन्नति होती है और वह मोक्ष को प्राप्त करता है। यदि मनुष्य मन के वश में **रहता** है तो वह सदा दुःखित रहता है और बन्धन में **पड़ता है**। मन इन साधनों से वश में किया जा सकता है—विषयों से विरक्ति, नियम से रहना, आत्मचिन्तन, मन को सत्कार्य में **लगाना**, सद्ग्रन्थों का अध्ययन और आस्तिकता। आत्म-संयम से ही मनुष्य उन्नति कर सकता है, अन्यथा नहीं।

(२८) ईश्वर-भक्ति

ईश्वर सृष्टि का कर्ता, धर्ता और संहर्ता है। वही जगत् का नियन्ता है। मनुष्य-जीवन को शुद्ध और पवित्र **बनाने के लिए** ईश्वर-भक्ति अत्यावश्यक और अनिवार्य है। ईश्वर-भक्ति का अर्थ है ईश्वर के प्रति अनुराग। संसार में **सबसे बड़ी** वही शक्ति है। उसके चिन्तन से मनुष्य अपने अन्दर सभी उत्तम गुणों का समावेश करता है। ईश्वर सर्वव्यापक है, अतः ईश्वर-भक्त किसी भी पाप-कर्म को नहीं करता। निष्काम-भाव से ही ईश्वर की भक्ति सर्वश्रेष्ठ है। ईश्वर-भक्ति के बिना मनुष्य-जीवन ऐसा ही है, जैसे बिना गन्ध का फूल। ईश्वर-भक्ति से सद्गुणों का विकास होता है।

संकेत :—(२६) आन्तरिकीः। विकासयति। अवगच्छति। विनाश्य। जागरणम्। करणम्। विकासनम्। विनाश्य। जागरणम्। उन्नयनम्। तिसृणाम्। (२७) मनसः। निवारणम्। वशे करणम्। चालयति। क्रियेत। बन्धमोक्षयोः। भवति। निपतति। नियोजनम्। (२८) निर्मातुम्। सर्वोत्तमा।

१०. छन्दःपरिचय

१. छन्द का अर्थ—'छन्दस्' शब्द के दो अर्थ हैं :—१. आच्छादन। छन्दांसि छादनात्। इसके द्वारा भाव या रस को आच्छादित किया जाता है। २. आह्लादन। आह्लादन अर्थ वाली चन्द् धातु से भी छन्दस् शब्द बनता है। इसके द्वारा पाठकों का आह्लादन होता है।

२. छन्दःशास्त्र के प्रसिद्ध आचार्य और उनके ग्रन्थ—(१) पिंगल (लगभग ३०० ई० पू०)—छन्दःसूत्रम्, (२) कालिदास (५७ ई० पू०)—श्रुतबोध, (३) क्षेमेन्द्र (१०५० ई०)—सुवृत्ततिलक, (४) हेमचन्द्र (१०८८–११७२ ई०)—छन्दोऽनुशासन, (५) केदारभट्ट, (१२वीं शताब्दी)—वृत्तरत्नाकर, (६) प्राकृतपैंगलम् (१२वीं शताब्दी)—इसके लेखक का नाम अज्ञात है, (७) जयदेव (१४वीं शताब्दी)—छन्दोऽनुशासन, (८) गंगादास (१५वीं शताब्दी)—छन्दोमंजरी, (९) दामोदर मिश्र (१६वीं शताब्दी)—वाणीभूषण, (१०) दुःखभंजन (१९वीं शताब्दी)—वाग्वल्लभ।

३. छन्द के प्रकार—छन्द दो प्रकार के होते हैं—१. वृत्त, २. जाति। १. वृत्त को वर्णवृत्त या वर्णिक छन्द कहते हैं। इसमें प्रत्येक पाद में गणों के अनुसार वर्णों की गणना की जाती है। जैसे—इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा आदि। २. जाति को मात्रिक छन्द भी कहते हैं। इसमें प्रत्येक पाद में मात्रागणों के अनुसार मात्राओं की गणना की जाती है। जैसे—आर्या। प्रत्येक श्लोक में ४ पाद या चरण होते हैं। श्लोक के चतुर्थांश को पाद या चरण कहते हैं।

४. छन्द के भेद—वृत्त (छन्द) के तीन भेद हैं :—**(१) समवृत्त**—इसमें चारों पादों में वर्णों की संख्या बराबर होती है। जैसे—इन्द्रवज्रा, वसन्ततिलका आदि। **(२) अर्धसमवृत्त**—इसमें प्रथम-तृतीय और द्वितीय-चतुर्थ चरण में समानता होती है। जैसे—वियोगिनी, पुष्पिताग्रा आदि। **(३) विषमवृत्त**—इसमें प्रत्येक पाद में वर्णों की संख्या विषम होती है। जैसे—उद्गता और गाथा छन्द।

५. लघु-गुरु विचार—(१) ह्रस्व स्वर को लघु कहते हैं। लघु स्वर ये हैं—अ, इ, उ ऋ, ऌ। (२) दीर्घ स्वर को गुरु कहते हैं। गुरु स्वर ये हैं—आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ। (३) लघु स्वर के बाद यदि अनुस्वार, विसर्ग या कोई संयुक्त व्यंजन होगा तो वह लघु स्वर भी गुरु माना जाता है। (४) पाद का अन्तिम लघु स्वर आवश्यकता के अनुसार गुरु भी माना जाता है।

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत्।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा ॥

लक्षणों में ल का अर्थ है एक लघु, लौ = २ लघु। ग = १ गुरु, गौ = २ गुरु।

६. गण-विचार—(क) **वर्णिक गण**—वर्णिक छन्दों की गणना के लिए गणों का उपयोग किया जाता है। एक 'गण' में तीन अक्षर होते हैं। लघु वर्ण के लिए '।' सीधी लकीर चिह्न है और गुरु वर्ण के लिए 'ऽ' चिह्न है। अंग्रेजी छन्द-विचार के अनुसार क्रमशः— ˘ चिह्न हैं। गण ८ हैं। इनके नाम और लक्षण निम्नलिखित श्लोक में दिए हैं।

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो, भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः, सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः॥

मगण ऽऽऽ नगण ।।।, भगण ऽ।।, यगण ।ऽऽ,
जगण ।ऽ।, रगण ऽ।ऽ, सगण ।।ऽ, तगण ऽऽ।

अर्थात्—१. मगण—तीनों गुरु वर्ण, २. नगण—तीनों लघु वर्ण, ३. भगण—प्रथम गुरु, अन्य दो लघु, ४. यगण—प्रथम लघु, शेष दो गुरु, ५. जगण—मध्यम वर्ण गुरु, शेष दो लघु, ६. रगण—मध्यम वर्ण लघु, शेष दो गुरु, ७. सगण—अन्तिम वर्ण गुरु, शेष दो लघु, ८. तगण—अन्तिम वर्ण लघु, शेष दो गुरु।

निम्नलिखित श्लोक से भी इन गणों को समझ सकते हैं :—

आदिमध्यावसानेषु य-र-ता यान्ति लाघवम्।
भ-ज-सा गौरवं यान्ति, म-नौ तु गुरुलाघवम्॥

अर्थात्—यगण, रगण, तगण में क्रमशः प्रथम, मध्यम और अन्तिम वर्ण लघु होते हैं। भगण, जगण, सगण में क्रमशः प्रथम, मध्यम और अन्तिम वर्ण गुरु होते हैं। मगण में तीनों गुरु और नगण में तीनों लघु होते हैं।

गणों को जानने का एक प्रकार यह भी है :—

यमाताराजभानसलगम्।

इसमें ८ गणों और लघु गुरु का नाम है। जो गण गिनना हो, उसके लिए उस गण के अक्षर को लेकर आगे के दो वर्ण और ले लें। वे जैसे वर्ण हैं, वैसा ही गण समझना चाहिए। जैसे—मगण—मातारा, तीनों गुरु हैं। नगण—न स ल, तीनों लघु हैं।

(ख) **मात्रिक गण**—मात्रिक छन्दों में प्रत्येक पाद की मात्राएँ गिनी जाती हैं। प्रत्येक मात्रिक गण में ४ मात्राएँ होती हैं। लघु (ह्रस्व) स्वर की १ मात्रा मानी जाती है और गुरु (दीर्घ) की २ मात्राएँ। मात्रागण ५ हैं। उनके नाम और चिह्न ये हैं :—

म ऽऽ, न ।।।।, भ ऽ।।, ज ।ऽ।, स ।।ऽ

७. यति और गति—(क) यति—श्लोक के एक पाद के पढ़ने में जितने अक्षरों के बाद अल्प-विराम होता है, उसे यति कहते हैं। यति का अर्थ है—विराम या विश्राम। लक्षणों में इस बात का निर्देश किया गया है कि कितने वर्णों के बाद यति आती है। लक्षणों के साथ कोष्ठ में यति का संकेत है। (ख) गति—गति का अर्थ है प्रवाह। श्लोक का धाराप्रवाह पढ़ा जाना।

छन्दों के लक्षण और उदाहरण

(१) आर्या—

यस्याः प्रथमे पादे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या॥

यह मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम पाद में १२ मात्राएँ, द्वितीय में १८, तृतीय में १२ और चतुर्थ में १५ मात्राएँ होती हैं। जैसे—शाकुन्तल, अधरः०, १–२१, गच्छति० १–३४, का कथा० ३–१, अभ्यक्त० ५–११।

२ १ १ २ २ १ १ २ १ २ १ २ २ १ २ १ २ २ २
आ प रि तो षाद् वि दु षां, न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्।
११११ २ १ २ २ २ २ २२१२ २२
बलवदपि शिक्षितानाम्, आत्मन्यप्रत्ययं चेतः॥ (शाकु० १-२)

(२) श्लोक (अनुष्टुप्) (८)

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं, सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं, सप्तमं दीर्घमन्ययोः॥

इसमें प्रत्येक पाद में ८ अक्षर होते हैं। इसमें षष्ठ अक्षर सदा गुरु होता है और पंचम सदा लघु। सप्तम अक्षर द्वितीय और चतुर्थ पाद में लघु होता है और प्रथम तथा तृतीय में गुरु। शेष अक्षर लघु या गुरु हो सकते हैं। जैसे—शाकुन्तल, आखण्डल० ७–२८, दिष्ट्या० ७–२९।

। SS ।S ।
अतः परीक्ष्य कर्तव्यं, विशेषात् संगतं रहः।
। SS । ।S
अज्ञातहृदयेष्वेवं, वैरीभवति सौहृदम्॥ (शाकु० ५–२४)

(३) इन्द्रवज्रा (११)

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।

इन्द्रवज्रा के प्रत्येक पाद में ११ वर्ण होते हैं। क्रमशः २ तगण, १ जगण, २ गुरु। जैसे—शाकुन्तल, भानुः सकृत्० ५–४।

त त ज ग ग
S S । S S । । S । S S
अ र्थो हि कन्या प र की य ए व,
तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातो ममायं विशदः प्रकामं,
प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा॥ (शाकु० ४–२२)

(४) उपेन्द्रवज्रा (११)

उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ ।

उपेन्द्रवज्रा के प्रत्येक पाद में ११ वर्ण होते हैं । क्रमशः १ जगण, १ तगण, १ जगण, २ गुरु । जैसे—त्वमेव माता च पिता त्वमेव ० ।

ज त ज ग ग
। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
पि ता स खा यो गु र वः स्त्रि य श्च,
न निर्गुणानां हि भवन्ति लोके ।
अनन्यसक्ताः प्रियवादिनश्च,
हिताश्च वश्याश्च भवन्ति राजन् ॥
(महाभारत, शान्तिपर्व, २९७-१)

(५) उपजाति (११)

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ, पादौ यदीयावुपजातयस्ताः ।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु स्मरन्ति जातिष्विदमेव नाम ॥

उपजाति के प्रत्येक पाद में ११ वर्ण होते हैं । यह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा दोनों छन्दों के मिश्रण से बनता है । किसी चरण में इन्द्रवज्रा छन्द होता है और किसी में उपेन्द्रवज्रा । उदाहरण—शाकुन्तल, कृताभिमर्शा० ५-२०, स्वप्नो नु० ६-१०, यथा गजो० ७-३१ ।

त त ज ग ग
ऽ ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ । ऽ ऽ
आ ज न्म नः शाठ्य म शि क्षि तो यः
तस्याप्रमाणं वचनं जनस्य ।
परातिसन्धानमधीयते यै-
र्विद्येति ते सन्तु किलाप्तवाचः ॥ (शाकु० ५-२५)

यहाँ १, २, ४ पाद में इन्द्रवज्रा है, पाद ३ में उपेन्द्रवज्रा ।

(६) वियोगिनी (सुन्दरी) (१० या ११ वर्ण)

विषमे ससजा गुरुः समे, सभरा लोऽथ गुरुर्वियोगिनी ।

यह अर्धसम वृत्त है । इसमें १ और ३ पाद में १० वर्ण होते हैं । क्रमशः २ सगण, १ जगण, १ गुरु । २ और ४ पाद में ११ वर्ण होते हैं । क्रमशः १ सगण, १ भगण, १ रगण, १ लघु, १ गुरु । जैसे—शाकु० प्रथमोपकृतं० ७-१ ।

क्व वयं क्व परोक्षमन्मथो
मृगशावैः सममेधितो जनः ॥
परिहासविजल्पितं सखे,
परमार्थेन न गृह्यतां वचः ॥ (शाकु० २-१८)

(७) वंशस्थ (१२)

जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ ।

वंशस्थ के प्रत्येक पाद में १२ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ जगण, १ तगण, १ जगण, १ रगण। जैसे—शाकु०, इदं किलाव्याज० १–१८, असंशयं० १–२२, भवन्ति नम्रा० ५–१२ ।

ज त ज र

। ऽ । । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

उ दे ति पू र्वं कु सु मं त तः फ लं

घनोदयः प्राक् तदनन्तरं पयः ।

निमित्तनैमित्तिकयोरयं क्रम-

स्तव प्रसादस्य पुरस्तु सम्पदः ॥ (शाकु० ७–३०)

(८) द्रुतविलम्बित (१२)

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ

द्रुतविलम्बित के प्रत्येक पाद में १२ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ नगण, २ भगण, १ रगण। जैसे—शाकु०, यदि यथा०—५–२७, मुनिसुता० ६–८ ।

न भ भ र

। । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

अ भि मु खे म यि सं हृ त मी क्षि तं

हसितमन्यनिमित्तकृतोदयम् ।

विनयवारितवृत्तिरतस्तया

न विवृतो मदनो न च संवृतः ॥ (शाकु० २–११)

(९) वसन्ततिलका (१४)

उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः ।

वसन्ततिलका छन्द के प्रत्येक पाद में १४ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ तगण, १ भगण, २ जगण, २ गुरु। जैसे—शाकु०, चित्रे निवेश्य० २–९, दर्भाकुरेण० २–१२, अन्तर्हिते० ४–३, भूत्वा चिराय० ४–२०, रम्याणि वीक्ष्य० ५–२, औत्सुक्यमात्र० ५–६ ।

त भ ज ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

या त्ये क तो ऽस्त शि ख रं प ति रो ष धी नाम्,

आविष्कृतोऽरुणपुरःसर एकतोऽर्कः ।

तेजोद्वयस्य युगपद् व्यसनोदयाभ्यां

लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु ॥ (शाकु० ४–२)

(१०) मालिनी (८, ७ = १५)

ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।

मालिनी छन्द के प्रत्येक पाद में १५ वर्ण होते हैं। क्रमशः २ नगण, १ मगण, २ यगण। इसमें ८–७ पर यति होती है, अर्थात् आठवें और १५ वें वर्ण पर। (भोगिलोकैः–भोगी = ८, लोक = ७)। जैसे—शाकु०, न खलु न खलु० १–१०, स्वसुख० ५–७; नियमयसि० ५–८।

न न म य य
। । । । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ
स र सि ज म नु वि द्धं शै व ले ना पि र म्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्॥ (शाकु० १-२०)

(११) मन्दाक्रान्ता (४, ६, ७ = १७)

मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद् गुरू चेत्।

मन्दाक्रान्ता के प्रत्येक पाद में १७ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ मगण, १ भगण, १ नगण, २ तगण, २ गुरु। इसमें ४–६–७ पर यति होती है, अर्थात् चौथे, १० वें और १७ वें वर्णपर। (जलधिषडगैः—जलधि = ४, षट् = ६, अग = ७)। जैसे—शाकु०, कुल्याम्भोभिः० १–१५, तीव्राघात० १–३३, अध्याक्रान्ता० २–१४।

म भ न त त ग ग
ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ
नै त च्चि त्रं य द य मु द धि श्या म सी मां ध रि त्री-
मेकः कृत्स्नां नगरपरिघप्रांशुबाहुर्भुनक्ति।
आशंसन्ते समितिषु सुरा बद्धवैरा हि दैत्यै-
रस्याधिज्ये धनुषि विजयं पौरुहूते च वज्रे॥ (शाकु० २-१५)

(१२) शिखरिणी (६, ११ = १७)

रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी।

शिखारणा छन्द के प्रत्येक पाद में १७ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ यगण, १ मगण, १ नगण, १ सगण, १ भगण, १ लघु, १ गुरु। इसमें ६–११ पर यति होती है, अर्थात् ६ठे और १७ वें वर्ण पर। (रसैः रुद्रैः—रस = ६, रुद्र = ११)। जैसे—शाकु०, यदालोके० १–९, चलापाङ्गां० १–२४।

य म न स भ ल ग
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ । । । ऽ
अ ना घ्रा त पु ष्पं कि स ल य म लू नं क र रु है-
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः॥ (शाकु० २-१०)

(१३) हरिणी (६,४,७ = १७)

नसमरसला गः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता।

हरिणी छन्द के प्रत्येक पाद में १७ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ नगण, १ सगण, १ मगण, १ रगण, १ सगण, १ लघु, १ गुरु। इसमें ६–४–७ पर यति होती है, अर्थात् छठे, १० वें और १७ वें पर। (षड्वेदैर्हयैः—षट् = ६, वेद = ४, हय = ७)। जैसे—शाकु०, इदनशिशिरै० ३–१०, सुतनु० ७–२४)।

न   स   म   र   स   ल ग

। । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ । । ऽ । ।

अ भि ज न व तो भ र्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणी पदे

विभवगुरुभिः कृत्यैस्तस्य प्रतिक्षणमाकुला।

तनयमचिरात् प्राचीवार्क प्रसूय च पावनं

मम विरहजां न त्वं वत्से शुचं गणयिष्यसि॥ (शाकु० ४-१९)

(१४) शार्दूलविक्रीडित (१२,७ = १९)

सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्।

शार्दूलविक्रीडित छन्द के प्रत्येक पाद में १९ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ मगण, १ सगण, १ जगण, १ सगण, २ तगण, १ गुरु। इसमें १२–७ पर यति होती है, अर्थात् १२ वें और १९ वें पर। (सूर्याश्वैः—सूर्य = १२, अश्व = ७)। जैसे—शाकु०, नीवाराः० १–१४, मेदश्छेद० २–५, क्षौमं० ४–५, पातुं न० ४–९। या कुन्देन्दुतुषारहारधवला०।

म   स   ज   स   त   त ग

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

या स्य त्य द्य श कु न्त ले ति हृ द यं संस्पृष्टमुत्कण्ठया

कण्ठः स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।

वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः

पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः॥ (शा० ४-६)

(१५) स्रग्धरा (७,७,७ = २१)

म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।

स्रग्धरा छन्द के प्रत्येक पाद में २१ वर्ण होते हैं। क्रमशः १ मगण, १ रगण, १ भगण, १ नगण, ३ यगण। इसमें ७–७–७ पर यति होती है, अर्थात् ७ वें, १४ वें और २१ वें पर। (त्रिमुनि०—मुनि = ७, तीन बार)। जैसे–शाकु०, या सृष्टिः० १–१।

म   र   भ   न   य   य   य

ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने दत्तदृष्टिः

पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्।

दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा,

पश्योदग्रप्लुतत्वाद् वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति (शा० १-७)

———

११. प्रत्यय-परिचय

(धातु का मूलरूप कोष्ठ में है)

धातु	अर्थ	क्त	क्तवतु	शतृ।शानच्	क्त्वा	ल्यप्
अद्	(अद, २ प०, खाना)	जग्धः	जग्धवान्	अदन्	जग्ध्वा	प्रजग्ध्य
अस्	(अस, २ प०, होना)	भूतः	भूतवान्	सन्	भूत्वा	संभूय
आप्	(आप्लृ, ५ प०, पाना)	आप्तः	आप्तवान्	आप्नुवन्	आप्त्वा	प्राप्य
आस्	(आस, २ आ०, बैठना)	आसितः	आसितवान्	आसीनः	आसित्वा	उपास्य
इ	(इण्, २ प०, जाना)	इतः	इतवान्	यन्	इत्वा	प्रेत्य
इष्	(इष, ६ प०, चाहना)	इष्टः	इष्टवान्	इच्छन्	इष्ट्वा	समिष्य
कथ्	(कथ, १० उ०, कहना)	कथितः	कथितवान्	कथयन्	कथयित्वा	संकथ्य
कृ	(डुकृञ्, ८ उ०, करना)	कृतः	कृतवान्	कुर्वन्	कृत्वा	उपकृत्य
क्री	(डुक्रीञ्, ९ उ०, खरीदना)	क्रीतः	क्रीतवान्	क्रीणन्	क्रीत्वा	विक्रीय
गम्	(गम्लृ, १ प०, जाना)	गतः	गतवान्	गच्छन्	गत्वा	आगत्य
ग्रह्	(ग्रह, ९ उ०, लेना)	गृहीतः	गृहीतवान्	गृह्णन्	गृहीत्वा	संगृह्य
घ्रा	(घ्रा, १, प०, सूँघना)	घ्रातः	घ्रातवान्	जिघ्रन्	घ्रात्वा	आघ्राय
चिन्त्	(चिति, १० उ०, सोचना)	चिन्तितः	चिन्तितवान्	चिन्तयन्	चिन्तयित्वा	संचिन्त्य
चुर्	(चुर, १० उ०, चुराना)	चोरितः	चोरितवान्	चोरयन्	चोरयित्वा	संचोर्य
जन्	(जनी, ४ आ०, पैदा होना)	जातः	जातवान्	जायमानः	जनित्वा	संजाय
जि	(जि, १ प०, जीतना)	जितः	जितवान्	जयन्	जित्वा	विजित्य
ज्ञा	(ज्ञा, ९ उ०, जानना)	ज्ञातः	ज्ञातवान्	जानन्	ज्ञात्वा	विज्ञाय
तन्	(तनु, ८ उ०, फैलाना)	ततः	ततवान्	तन्वन्	तनित्वा	वितत्य
तुद्	(तुद, ६ उ०, दुःख देना)	तुन्नः	तुन्नवान्	तुदन्	तुत्त्वा	संतुद्य
दा	(डुदाञ्, ३ उ०, देना)	दत्तः	दत्तवान्	ददत्	दत्त्वा	प्रदाय
दिव्	(दिवु, ४ प०, चमकना)	द्यूतः	द्यूतवान्	दीव्यन्	देवित्वा	संदीव्य
दुह्	(दुह, २ उ०, दुहना)	दुग्धः	दुग्धवान्	दुहन्	दुग्ध्वा	संदुह्य
दृश्	(दृशिर्, १ प०, देखना)	दृष्टः	दृष्टवान्	पश्यन्	दृष्ट्वा	संदृश्य
धा	(डुधाञ्, ३ उ०, धारण०)	हितः	हितवान्	दधत्	हित्वा	विधाय
नम्	(णम, १ प०, झुकना)	नतः	नतवान्	नमन्	नत्वा	प्रणम्य
नश्	(णश, ४ प०, नष्ट होना)	नष्टः	नष्टवान्	नश्यन्	नष्ट्वा	विनश्य
नी	(णीञ्, १ उ०, ले जाना)	नीतः	नीतवान्	नयन्	नीत्वा	आनीय
नृत्	(नृती, ४ प०, नाचना)	नृत्तः	नृत्तवान्	नृत्यन्	नर्तित्वा	प्रनृत्य
पच्	(डुपचष्, १ उ०, पकाना)	पक्वः	पक्ववान्	पचन्	पक्त्वा	सपच्य
पठ्	(पठ, १ प०, पढ़ना)	पठितः	पठितवान्	पठन्	पठित्वा	संपठ्य
पा	(पा, १ प०, पीना)	पीतः	पीतवान्	पिबन्	पीत्वा	निपाय
पृच्छ्	(प्रच्छ, ६ प०, पूछना)	पृष्टः	पृष्टवान्	पृच्छन्	पृष्ट्वा	प्रपृच्छ्य

धातु	अर्थ	क्त	क्तवतु	शतृ।शानच्	क्त्वा	ल्यप्
ब्रू	(ब्रूञ् २ उ०, बोलना)	उक्तः	उक्तवान्	ब्रुवन्	उक्त्वा	प्रोच्य
भक्ष्	(भक्ष, १० उ०, खाना)	भक्षितः	भक्षितवान्	भक्षयन्	भक्षयित्वा	संभक्ष्य
भी	(ञिभी, ३ प०, डरना)	भीतः	भीतवान्	बिभ्यत्	भीत्वा	संभीय
भुज्	(भुज, ७ उ०, पालना, खाना)	भुक्तः	भुक्तवान्	भुञ्जानः	भुक्त्वा	संभुज्य
भू	(भू, १ प०, होना)	भूतः	भूतवान्	भवन्	भूत्वा	संभूय
भ्रम्	(भ्रमु, ४ प०, घूमना)	भ्रान्तः	भ्रान्तवान्	भ्राम्यन्	भ्रान्त्वा	संभ्रम्य
मुच्	(मुच्लृ, ६ उ०, छोड़ना)	मुक्तः	मुक्तवान्	मुञ्चन्	मुक्त्वा	विमुच्य
मुद्	(मुद, १ आ०, प्रसन्न०)	मुदितः	मुदितवान्	मोदमानः	मुदित्वा	प्रमुद्य
मृ	(मृङ्, ६ आ०, मरना)	मृतः	मृतवान्	म्रियमाणः	मृत्वा	प्रमृत्य
याच्	(टुयाचृ, १उ०, माँगना)	याचितः	याचितवान्	याचमानः	याचित्वा	प्रयाच्य
युध्	(युध, ४ आ०, लड़ना)	युद्धः	युद्धवान्	युध्यमानः	युद्ध्वा	प्रयुध्य
रक्ष्	(रक्ष, १ प०, रक्षा०)	रक्षितः	रक्षितवान्	रक्षन्	रक्षित्वा	संरक्ष्य
रुद्	(रुदिर्, २ प०, रोना)	रुदितः	रुदितवान्	रुदन्	रुदित्वा	प्ररुद्य
रुध्	(रुधिर्, ७ उ०, रोकना)	रुद्धः	रुद्धवान्	रुन्धन्	रुद्ध्वा	विरुध्य
लभ्	(डुलभष्, १ आ०, पाना)	लब्धः	लब्धवान्	लभमानः	लब्ध्वा	उपलभ्य
वद्	(वद, १ प०, बोलना)	उदितः	उदितवान्	वदन्	उदित्वा	अनूद्य
वृध्	(वृध, १ आ०, बढ़ना)	वृद्धः	वृद्धवान्	वर्धमानः	वर्धित्वा	संवृध्य
शक्	(शक्लृ, ५ प०, सकना)	शक्तः	शक्तवान्	शक्नुवन्	शक्त्वा	संशक्य
शी	(शीङ् २ आ०, सोना)	शयितः	शयितवान्	शयानः	शयित्वा	संशय्य
श्रु	(श्रु, १ प०, सुनना)	श्रुतः	श्रुतवान्	शृण्वन्	श्रुत्वा	संश्रुत्य
सद्	(षद्लृ, १ प०, बैठना)	सन्नः	सन्नवान्	सीदन्	सत्त्वा	निषद्य
सह्	(षह, १ आ०, सहना)	सोढः	सोढवान्	सहमानः	सोढ्वा	संसह्य
सु	(षुञ्, ५ उ०, निचोड़ना)	सुतः	सुतवान्	सुन्वन्	सुत्वा	प्रसुत्य
सेव्	(षेवृ, १ आ०, सेवा०)	सेवितः	सेवितवान्	सेवमानः	सेवित्वा	संसेव्य
स्था	(ष्ठा, १ प०, रुकना)	स्थितः	स्थितवान्	तिष्ठन्	स्थित्वा	प्रस्थाय
स्पृश्	(स्पृ, ६ प०, छूना)	स्पृष्टः	स्पृष्टवान्	स्पृशन्	स्पृष्ट्वा	संस्पृश्य
स्मृ	(स्मृ, १ प०, स्मरण०)	स्मृतः	स्मृतवान्	स्मरन्	स्मृत्वा	विस्मृत्य
स्वप्	(ञिष्वप्, २प०, सोना)	सुप्तः	सुप्तवान्	स्वपन्	सुप्त्वा	संसुप्य
हन्	(हन, २ प०, मारना)	हतः	हतवान्	हनन्	हत्वा	निहत्य
हस्	(हसे, १ प०, हँसना)	हसितः	हसितवान्	हसन्	हसित्वा	विहस्य
हु	(हु, ३ प०, हवन करना)	हुतः	हुतवान्	जुह्वत्	हुत्वा	आहुत्य
हृ	(हृञ्, १उ०, ले जाना, चुराना)	हृतः	हृतवान्	हरन्	हृत्वा	प्रहृत्य

६४ निर्धारित धातुओं से बने प्रत्ययान्त रूप

तुमुन्	तव्यत्	तृच्	ल्युट्	कर्मवाच्य	णिच्	सन्
अत्तुम्	अत्तव्यम्	अत्ता	अदनम्	अद्यते	आदयति	जिघत्सति
भवितुम्	भवितव्यम्	भविता	भवनम्	भूयते	भावयति	बुभूषति
आप्तुम्	आप्तव्यम्	आप्ता	आपनम्	आप्यते	आपयति	ईप्सति
आसितुम्	आसितव्यम्	आसिता	आसनम्	आस्यते	आसयति	आसिसिषते
एतुम्	एतव्यम्	एता	अयनम्	ईयते	गमयति	जिगमिषति
एषितुम्	एषितव्यम्	एषिता	एषणम्	इष्यते	एषयति	एषिषति
कथयितुम्	कथयितव्यम्	कथयिता	कथनम्	कथ्यते	कथयति	चिकथयिषति
कर्तुम्	कर्तव्यम्	कर्ता	करणम्	क्रियते	कारयति	चिकीर्षति
क्रेतुम्	क्रेतव्यम्	क्रेता	क्रयणम्	क्रीयते	क्रापयति	चिक्रीषति
गन्तुम्	गन्तव्यम्	गन्ता	गमनम्	गम्यते	गमयति	जिगमिषति
ग्रहीतुम्	ग्रहीतव्यम्	ग्रहीता	ग्रहणम्	गृह्यते	ग्राहयति	जिघृक्षति
घ्रातुम्	घ्रातव्यम्	घ्राता	घ्राणम्	घ्रायते	घ्रापयति	जिघ्रासति
चिन्तयितुम्	चिन्तयितव्यम्	चिन्तयिता	चिन्तनम्	चिन्त्यते	चिन्तयति	चिचिन्तयिषति
चोरयितुम्	चोरयितव्यम्	चोरयिता	चोरणम्	चोर्यते	चोरयति	चुचोरयिषति
जनितुम्	जनितव्यम्	जनिता	जननम्	जायते	जनयति	जिजनिषते
जेतुम्	जेतव्यम्	जेता	जयनम्	जीयते	जापयति	जिगीषति
ज्ञातुम्	ज्ञातव्यम्	ज्ञाता	ज्ञानम्	ज्ञायते	ज्ञापयति	जिज्ञासते
तनितुम्	तनितव्यम्	तनिता	तननम्	तन्यते	तानयति	तितंसति
तोत्तुम्	तोत्तव्यम्	तोत्ता	तोदनम्	तुद्यते	तोदयति	तुतुत्सति
दातुम्	दातव्यम्	दाता	दानम्	दीयते	दापयति	दित्सति
देवितुम्	देवितव्यम्	देविता	देवनम्	दीव्यते	देवयति	दिदेविषति
दोग्धुम्	दोग्धव्यम्	दोग्धा	दोहनम्	दुह्यते	दोहयति	दुधुक्षति
द्रष्टुम्	द्रष्टव्यम्	द्रष्टा	दर्शनम्	दृश्यते	दर्शयति	दिदृक्षते
धातुम्	धातव्यम्	धाता	धानम्	धीयते	धापयति	धित्सति
नन्तुम्	नन्तव्यम्	नन्ता	नमनम्	नम्यते	नमयति	निनंसति
नशितुम्	नशितव्यम्	नशिता	नशनम्	नश्यते	नाशयति	निनशिषति
नेतुम्	नेतव्यम्	नेता	नयनम्	नीयते	नाययति	निनीषति
नर्तितुम्	नर्तितव्यम्	नर्तिता	नर्तनम्	नृत्यते	नर्तयति	निनर्तिषति
पक्तुम्	पक्तव्यम्	पक्ता	पचनम्	पच्यते	पाचयति	पिपक्षति
पठितुम्	पठितव्यम्	पठिता	पठनम्	पठ्यते	पाठयति	पिपठिषति
पातुम्	पातव्यम्	पाता	पानम्	पीयते	पापयति	पिपासति
प्रष्टुम्	प्रष्टव्यम्	प्रष्टा	प्रच्छनम्	[illegible]	[illegible]	[illegible]

तुमुन्	तव्यत्	तृच्	ल्युट्	कर्म०	णिच्	सन्
वक्तुम्	वक्तव्यम्	वक्ता	वचनम्	उच्यते	वाचयति	विवक्षति
भक्षयितुम्	भक्षयितव्यम्	भक्षयिता	भक्षणम्	भक्ष्यते	भक्षयति	बिभक्षयिषति
भेतुम्	भेतव्यम्	भेता	भयनम्	भीयते	भाययति	बिभीषति
भोक्तुम्	भोक्तव्यम्	भोक्ता	भोजनम्	भुज्यते	भोजयति	बुभुक्षति-ते
भवितुम्	भवितव्यम्	भविता	भवनम्	भूयते	भावयति	बुभूषति
भ्रमितुम्	भ्रमितव्यम्	भ्रमिता	भ्रमणम्	भ्रम्यते	भ्रमयति	बिभ्रमिषति
मोक्तुम्	मोक्तव्यम्	मोक्ता	मोचनम्	मुच्यते	मोचयति	मुमुक्षते
मोदितुम्	मोदितव्यम्	मोदिता	मोदनम्	मुद्यते	मोदयति	मुमुदिषते
मर्तुम्	मर्तव्यम्	मर्ता	मरणम्	म्रियते	मारयति	मुमूर्षति
याचितुम्	याचितव्यम्	याचिता	याचनम्	याच्यते	याचयति	यियाचिषति
योद्धुम्	योद्धव्यम्	योद्धा	योधनम्	युध्यते	योधयति	युयुत्सते
रक्षितुम्	रक्षितव्यम्	रक्षिता	रक्षणम्	रक्ष्यते	रक्षयति	रिरक्षिषति
रोदितुम्	रोदितव्यम्	रोदिता	रोदनम्	रुद्यते	रोदयति	रुरुदिषति
रोद्धुम्	रोद्धव्यम्	रोद्धा	रोधनम्	रुध्यते	रोधयति	रुरुत्सति
लब्धुम्	लब्धव्यम्	लब्धा	लभनम्	लभ्यते	लम्भयति	लिप्सते
वदितुम्	वदितव्यम्	वदिता	वदनम्	उद्यते	वादयति	विवदिषति
वर्धितुम्	वर्धितव्यम्	वर्धिता	वर्धनम्	वृध्यते	वर्धयति	विवर्धिषते
शक्तुम्	शक्तव्यम्	शक्ता	शकनम्	शक्यते	शाकयति	शिक्षते
शयितुम्	शयितव्यम्	शयिता	शयनम्	शय्यते	शाययति	शिशयिषते
श्रोतुम्	श्रोतव्यम्	श्रोतव्यम्	श्रवणम्	श्रूयते	श्रावयति	शुश्रूषते
सत्तुम्	सत्तव्यम्	सत्ता	सदनम्	सद्यते	सादयति	सिषत्सति
सोढुम्	सोढव्यम्	सोढा	सहनम्	सह्यते	साहयति	सिसहिषते
सोतुम्	सोतव्यम्	सोता	सवनम्	सूयते	सावयति	सुसूषति
सेवितुम्	सेवितव्यम्	सेविता	सेवनम्	सेव्यते	सेवयति	सिसेविषते
स्थातुम्	स्थातव्यम्	स्थाता	स्थानम्	स्थीयते	स्थापयति	तिष्ठासति
स्प्रष्टुम्	स्प्रष्टव्यम्	स्प्रष्टा	स्पर्शनम्	स्पृश्यते	स्पर्शयति	पिस्पृक्षति
स्मर्तुम्	स्मर्तव्यम्	स्मर्ता	स्मरणम्	स्मर्यते	स्मारयति	सुस्मूर्षते
स्वप्तुम्	स्वप्तव्यम्	स्वप्ता	स्वप्नम्	सुप्यते	स्वापयति	सुषुप्सति
हन्तुम्	हन्तव्यम्	हन्ता	हननम्	हन्यते	घातयति	जिघांसति
हसितुम्	हसितव्यम्	हसिता	हसनम्	हस्यते	हासयति	जिहसिषति
होतुम्	होतव्यम्	होता	हवनम्	हूयते	हावयति	जुहूषति
हर्तुम्	हर्तव्यम्	हर्ता	हरणम्	ह्रियते	हारयति	जिहीर्षति

१२. संस्कृत कैसे लिखें ?

सूचना—संस्कृत लिखने और अनुवाद करने के लिए कुछ अत्युपयोगी संकेत नीचे दिए जा रहे हैं। इन पर पूरा ध्यान देने से और इनका अभ्यास करने से संस्कृत में लिखना और अनुवाद करना, जिसको बहुत कठिन समझा जाता है, अत्यन्त सरल हो जायगा और सामान्य त्रुटियाँ न हो सकेंगी।

१. कर्ता का निर्णय—संस्कृत लिखने में या संस्कृत में अनुवाद करने में हिन्दी के दिए हुए वाक्य में सबसे पहले कर्ता को पकड़ना चाहिए। कर्तृवाच्य में कर्ता में प्रथमा होगी, एक के लिए एकवचन, दो के लिए द्विवचन और दो से अधिक के लिए बहुवचन। कर्ता जिस लिंग का होगा, उसी लिंग में उसके रूप चलेंगे। जैसे—बालकः पटति, बालिका पठति, पत्राणि पतन्ति। कर्मवाच्य में कर्ता में तृतीया होती है। जैसे—रामेण पुस्तकं पठ्यते। भाववाच्य में भी कर्ता में तृतीया होती है। जैसे—रामेण हस्यते।

२. क्रिया—कर्ता के बाद क्रिया पर ध्यान दें। कर्तृवाच्य में क्रिया कर्ता के अनुसार होती है। जैसे—सः पटति, त्वं पठसि, वयं पटामः। कर्ता में जो पुरुष और वचन है, वही पुरुष और वचन क्रिया में है। कर्मवाच्य में कर्म के अनुसार क्रिया होती है। उसमें कर्म के अनुसार ही पुरुष, वचन और लिंग होते हैं। भाववाच्य में क्रिया में प्रथम पुरुष एकवचन होता है, या नपुंसक० एकवचन।

३. कर्म—कर्ता और क्रिया के बाद कर्म पर ध्यान दें। कर्तृवाच्य में कर्म में द्वितीया और कर्मवाच्य में कर्म में प्रथमा होती है। भाववाच्य में कर्म होता ही नहीं है।

४. विशेषण—विशेषण सदा विशेष के अनुसार होता है। विशेषण कर्ता या कर्म के ही होते हैं। कर्ता के विशेषण में कर्ता के लिंग, विभक्ति और वचन होते हैं तथा कर्म के विशेषण में कर्म के लिंग, विभक्ति और वचन। जैसे—एकस्मिन् विशाले वृक्षे एकः कृष्णः काकः अवसत्।

५. संस्कृत बनाना—कर्ता, कर्म आदि का निर्णय कर लेने पर उसमें पूर्वोक्त संकेतों के अनुसार लिंग, विभक्ति, वचन आदि लगाना चाहिए।

६. **शब्दावली**—हिन्दी के वाक्य में जो शब्द शुद्ध संस्कृत के हों, उनको उसी रूप में रखते हुए वचन, विभक्ति आदि लगावें। जो शब्द संस्कृत के न हों, उनके लिए संस्कृत का ऐसा शब्द ढूँढ़ें, जिसके रूप सरलता से चला सकते हों।

७. **पर्यायवाची शब्द**—संस्कृत बनाते समय संस्कृत के किसी विशेष शब्द के रूप न आते हों या संदिग्ध हों तो उसका सरल पर्यायवाची ढूँढ़ें और उसका प्रयोग करें। जैसे—शशिन् शब्द का रूप चलाना संभव न हो तो चन्द्र शब्द रखकर उसका रूप लिखें। शशी के उदय होने पर—चन्द्रे उदिते सति। शशिनि के स्थान पर चन्द्रे लिखें।

८. **भूतकाल तथा अन्यकाल**—(क) कर्तृवाच्य में अनुवाद करना अधिक सरल होता है, अतः कर्तृवाच्य में ही अधिकांश अनुवाद करें। वर्तमान और भविष्यत् का प्रयोग कर्तृवाच्य में ही लट् और लृट् के द्वारा करें। भूतकाल के लिए लङ् का प्रयोग करें। (ख) भूतकाल (लङ्, लुङ्) में धातुरूप ठीक स्मरण न हो तो कृत् प्रत्यय क्त (त) या क्तवतु (तवत्) का प्रयोग करें, क्त कर्मवाच्य या भाववाच्य में होता है, क्तवतु कर्तृवाच्य में।

तिङन्त	**(उसने धन दिया)**	**क्त क्तवतु**
स धनम् अददात्,	तेन धनं दत्तम्,	स धनं दत्तवान्।

(ग) लट् लकार के रूप के बाद 'स्म' लगाने से भी भूतकाल का अर्थ हो जाता है। जैसे—अगच्छत् के स्थान पर 'गच्छति स्म' का प्रयोग।

९. **तुमुन् प्रत्यय**—हिन्दी में धातु के साथ लगे 'को, के लिए' का अनुवाद तुमुन् (तुम्) प्रत्यय से होता है। यदि तुम्-प्रत्ययान्त रूप बनाना संभव न हो तो उस धातु से ल्युट् (अन) लगाकर उसके बाद चतुर्थी लगा दें या शब्द के बाद 'अर्थम्' लगावें। जैसे—वह पढ़ने जाता है—१. स पठितुं गच्छति, २. स पठनाय गच्छति। पठनाय के स्थान पर पठनार्थम्, पठनस्य कृते, पठनस्य हेतोः, भी हो सकता है।

१०. **कारक के नियम**—संस्कृत लिखने में कारक के नियमों पर भी पूरा ध्यान दें। जैसे—सह के साथ तृतीया, नमः, स्वस्ति, रुच् धातु के साथ चतुर्थी, ऋते के साथ पंचमी, आदि।

११. **क्रिया-विशेषण**—संस्कृत में क्रिया-विशेषण सदा नपुं० एक० होता है। जैसे—स मधुर गायति। स सुखं शेते।

१२. **तव्य आदि प्रत्यय**—तव्य, अनीय और यत् प्रत्यय वाले स्थानों पर ल्युट् (अन) प्रत्ययान्त के बाद योग्यः, अर्हः आदि लगाकर काम चला सकते हैं। जैसे—दातव्यः, दानीयः, देयः के स्थान पर दानयोग्यः, दानार्हः आदि।

१. कर्तृवाच्य,　　　　२. कर्मवाच्य,　　　　३. भाववाच्य

(1. Active Voice, 2. Passive Voice, 3. Impersonal Voice)

१. कर्तृवाच्य--इसमें कर्ता मुख्य होता है। कर्ता के अनुसार ही क्रिया का रूप होता है, अर्थात् क्रिया का पुरुष, वचन और लिंग कर्ता के पुरुष, वचन और लिंग के अनुसार ही होता है। कर्तृवाच्य में कर्ता में प्रथमा, कर्म में द्वितीया और क्रिया कर्ता के अनुसार। हिन्दी में कर्ता की पहचान है कि उसके बाद कोई चिह्न नहीं लगता है या 'ने' लगता है। जैसे—राम पढ़ता है, कर्ता राम में कोई चिह्न नहीं है—रामः पठति। राम ने पढ़ा, कर्ता में 'ने' चिह्न है—रामः अपठत्। सामान्यतया सभी १० गणों (भ्वादिगण आदि) वाले तिङन्त प्रयोग कर्तृवाच्य में ही होते हैं। भूतकाल-बोधक क्तवतु (तवत्) प्रत्यय भी कर्तृवाच्य में ही होता है। अतः उसके साथ भी कर्ता में प्रथमा, कर्म में द्वितीया, कर्ता के अनुसार ही तवत्-प्रत्ययान्त के लिंग, विभक्ति, वचन होंगे। जैसे—स पुस्तकम् अपठत्—स पुस्तकं पठितवान्। सा पुस्तकम् अपठत्—सा पुस्तकं पठितवती।

२. (क) कर्मवाच्य—सकर्मक धातुओं से ही कर्मवाच्य होता है। इसमें कर्म की प्रधानता होती है। कर्म के अनुसार ही क्रिया के लिंग, विभक्ति और वचन होते हैं। कर्मवाच्य के कर्म में प्रथमा होती है, कर्ता में तृतीया, क्रिया कर्म के अनुसार। कर्मवाच्य में लट् आदि में धातु के अन्त में यक् (य) प्रत्यय लगता है। य लगाकर रूप चलावें। धातु सभी लकारों में आत्मनेपदी होती है।

कर्तृवाच्य (Active Voice)	**कर्मवाच्य** (Passive Voice)
१. (राम पुस्तक पढ़ता है)	(राम के द्वारा पुस्तक पढ़ी जाती है)
रामः पुस्तकं पठति।	रामेण पुस्तकं पठ्यते।
२. (मैं पुस्तकें पढ़ता हूँ)	(मेरे द्वारा पुस्तकें पढ़ी जाती हैं)
अहं पुस्तकानि पठामि।	मया पुस्तकानि पठ्यन्ते।
३. (तू ने लेख लिखा)	(तेरे द्वारा लेख लिखा गया)
त्वं लेखम् अलिखः।	त्वया लेखः अलिख्यत।
४. (बालिका ने फल देखा)	(बालिका के द्वारा फल देखा गया)
बालिका फलम् अपश्यत्।	बालिकया फलम् अदृश्यत।

(ख) कर्मवाच्य क्त प्रत्यय—क्त प्रत्यय सकर्मक धातुओं से कर्मवाच्य में होता है। क्त-प्रत्ययान्त के रूप कर्म के अनुसार होते हैं, अर्थात् कर्म के लिंग, विभक्ति, वचन के अनुसार ही क्त-प्रत्ययान्त के रूप होते हैं। क्तवतु (तवत्) प्रत्यय कर्तृवाच्य में होता है। अतः उसके लिए लिंग, वचन आदि कर्ता के अनुसार होते हैं।

	क्तवतु (तवत्) प्रत्यय (Past Participle)			क्त (त) प्रत्यय (Past Passive Participle)		
१.	बालकः	पुस्तकं	पठितवान्	बालकेन	पुस्तकं	पठितम्
२.	,,	पुस्तकानि	,,	बालकेन	पुस्तकानि	पठितानि
३.	,,	ग्रन्थं	,,	,,	ग्रन्थः	पठितः
४.	,,	विद्यां	,,	,,	विद्या	पठिता
५.	बालिका	पुस्तकं	पठितवती	बालिकया	पुस्तकं	पठितम्
६.	बालिकाः	ग्रन्थान्	पठितवत्यः	बालिकाभिः	ग्रन्थाः	पठिताः
७.	पत्रं	पतितवत्		पत्रेण	पतितम्	
८.	पत्राणि	पतितवन्ति		पत्रैः	पतितम्	

(ग) कर्मवाच्य तवत् आदि प्रत्यय—तव्य, अनीय और यत् (य) प्रत्यय भी कर्मवाच्य या भाववाच्य में होते हैं। जब ये प्रत्यय कर्तृवाच्य में होंगे तो कर्म में प्रथमा, कर्ता में तृतीया और इन प्रत्ययान्तों के रूप कर्म के अनुसार होंगे, अर्थात् कर्म के तुल्य ही लिंग, विभक्ति और वचन। जैसे—मया पुस्तकानि पठितव्यानि, पठनीयानि वा। त्वया लेखाः लेखितव्याः, लेखनीयाः वा। त्वया जलं पेयम्, दानं देयम्, फलानि च चेयानि।

(३) भाववाच्य—अकर्मक धातु से ही भाववाच्य होता है, सकर्मक से नहीं। जैसे—भू, स्था, स्वप्, शी आदि धातुएँ अकर्मक हैं। भाववाच्य में कर्ता में तृतीया होती है, क्रिया में प्रथम पु० एक० या नपुंसक० एक०। भाववाच्य में लट् आदि में धातु के अन्त में यक् (य) लगाकर रूप बनावें। क्त, तव्य, अनीय, यत् (य) भी भाववाच्य में होते हैं। इनमें नपुंसक० एक० ही होगा।

कर्तृवाच्य (Active Voice)	भाववाच्य (So Impersonal Voice)
१. रामः तिष्ठति।	रामेण स्थीयते।
२. बालिकाः सन्ति।	बालिकाभिः भूयते।
३. बालिकाः अहसन्।	बालिकाभिः अहस्यत।
४. त्वं शेष्व, शयीथाः वा।	त्वया शय्यताम्, शय्येत वा।

१३. पारिभाषिक शब्द (Technical Terms)

१. अक्षर–Syllable, वर्ण–Letters, वर्णमाला–Alphabet, स्वर-Vowels, ह्रस्व–Short, दीर्घ–Long, मिश्रित–Diphthongs, व्यंजन-Consonants (कवर्ग), कण्ठ्य–Gutturals, (चवर्ग) तालव्य–Palatals, (टवर्ग) मूर्धन्य–Cerebrals, (तवर्ग) दन्त्य–Dentals, (पवर्ग), ओष्ठ्य–Labials, अन्तःस्थ–Semi-vowels, ऊष्म–Sibilants.

२. वचन–Number, एकवचन–Singular, द्विवचन–Dual, बहुवचन-Plural, लिंग–Gender, पुंलिंग–Masculine, स्त्रीलिंग–Feminine, नपुंसक लिंग–Neuter.

३. कारक–Government, विभक्ति–Case, प्रथमा–Nominative, द्वितीया–Accusative, तृतीया–Instrumental, चतुर्थी–Dative, पंचमी-Ablative, षष्ठी–Genitive, सप्तमी–Locative, संबोधन–Vocative.

४. पुरुष–Person, प्रथमपुरुष–Third Person, मध्यमपुरुष–Second Person, उत्तम पुरुष–First Person.

५. लकार–Tense & Mood, लट्–Present, लोट–Imperative, लङ्–Imperfect, विधिलिङ्–Potential, लृट्–First Future, लुट्-Periphrastic Future, आशीर्लिङ्–Benedictive, लृङ्–Conditional (Second) Future, लिट्–Perfect, लुङ्–Aorist.

६. शब्द या पाद–Word, वाक्य–Sentence, शब्दरूप चलाना–To decline, शब्दरूप–Declension, प्रत्यय–Suffixes, सुप्–Case-endings, धातु–Root, धातुरूप चलाना–To conjugate, धातुरूप–Coniugation, तिङ्–Termination.

७. पद-विभाजन–Parts of Speech, संज्ञाशब्द–Noun, सर्वनाम-Pronoun, विशेषण–Adjective, क्रिया–Verb, क्रियाविशेषण–Adverb, उपसर्ग–Preposition, संयोजक शब्द–Conjunction, विस्मयसूचक शब्द-Interjection.

८. समास–Compounds, अव्ययीभाव समास–Adverbial C., तत्पुरुष-Determinative C., कर्मधारय–Appositional C., द्विगु–Numeral Appositional C., बहुव्रीहि–Attributive C., द्वन्द्व–Copulative C.,

९. कृत् प्रत्यय–Primary Affixes, क्त–Past Passive Participle, क्तवतु–Past Participle, तुमुन्–Infinitive, क्त्वा, ल्यप्–Gerund, शतृ, शानच्–Present Participle, तव्य, अनीय–Potential Participle, तद्धित प्रत्यय–Secondary Affixes.

१०. वाच्य–Voice, कर्तृवाच्य–Active Voice, कर्मवाच्य–Passive Voice, भाववाच्य–Impersonal Voice, सन्धि–Combination, सन्धि करना–To join, सन्धि-विच्छेद करना–To disjoin.

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी व्याकरणाचार्य कृत

संस्कृत व्याकरण की अनुपम पुस्तकें

संस्कृत शिक्षा भाग १ (कक्षा ६ के लिए) १.८०
संस्कृत शिक्षा भाग २ (कक्षा ७ के लिए) २.००
संस्कृत शिक्षा भाग ३ (कक्षा ८ के लिए) २.[illegible]
संस्कृत शिक्षा भाग ४-५ (माध्यमिक कक्षाओं के लिए) प्रत्येक [illegible]
प्रारम्भिक रचनानुवादकौमुदी (प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए) [illegible]
रचनानुवादकौमुदी (उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिए) [illegible]
प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी (बी०ए० तथा एम०ए० कक्षाओं के लिए)
नया परिवर्धित संस्करण १५.००
संस्कृत व्याकरण (बी०ए० तथा एम० ए० के लिए) १२.५०

भारत के अनेक विश्वविद्यालयों में स्वीकृत एवं बहुप्रशसित

संस्कृत-निबन्ध-शतकम्

भाग १

(हाईस्कूल, इन्टरमीडिएट एवं तत्समकक्ष छात्रों के लिए)—इसमें प्राकृतिक (१९), सामाजिक (७), सांस्कृतिक (२३), साहित्यिक (२) शास्त्रीय (३), शैक्षिक (१३), नैतिक (९), आर्थिक (४), राष्ट्रीय (१५) और वैज्ञानिक (५) विषयों पर १०० निबन्ध अत्यन्त सरल सुबोध और प्रवाहयुक्त संस्कृत में लिखे गए हैं। पृष्ठ संख्या १२८, मूल्य २.५०।

भाग २

(बी० ए० के लिए) इसमें प्राकृतिक (८), सामाजिक (४), सांस्कृतिक (१९), साहित्यिक (५), शास्त्रीय (५), नैतिक एवं शैक्षिक (१८), आर्थिक (९), राष्ट्रीय (१८), वैज्ञानिक (५), और व्याख्यात्मक (९) विषयों पर सरल सुन्दर और सुललित संस्कृत में १०० निबन्ध दिए गए हैं। पृष्ठ सं० १६०, मूल्य ३.००।

भाग ३

(एम० ए० एवं आई० ए० एस० आदि के लिए) इसमें वैदिक एवं शास्त्रीय (१०), दार्शनिक (८), काव्य शास्त्रीय ए[illegible] (२७), भाषा वैज्ञानिक (५), सांस्कृतिक (८), सामा[illegible] आर्थिक (५), राष्ट्रीय (१८), शैक्षिक (५), और वि[illegible] विषयों पर प्रौढ़ एवं सुललित संस्कृत में १०० निबन्ध दिए ग[illegible] सभी प्रतियोगिता परीक्षाओं के लिए उपयुक्त है। पृष्ठ [illegible] मूल्य ७.५०।